

हिन्दी के मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य

डॉ० साधना निर्भय

एम० ए०, पी०एच० डी०

साहित्य भवन प्रा. लि.

ई३, के.पी. कक्कड़ रोड

इलाहाबाद-211003

HINDI & MUSALMAN KAVIYON KA
KRISHNA KAVYA

By

Dr. Sadhna Nirbhay

प्रथम संस्करण १९८१

लेखक

मूल्य ११-

साहित्य भवन प्रा० नि०, ८३, के० पी० कवचड रोड, इलाहाबाद द्वारा प्रकाशित
स्टार प्रिण्टर्स, २८७, दरियाबाद, इलाहाबाद द्वारा मुद्रित

शुभाशसा

'कृष्ण' न भारतीय जीवन, साहित्य और सस्कृति को अनेक रूपा म आत्यतिक रूप से प्रभावित किया है। इतना महान् क्रान्तद्रष्टा और विराट् व्यक्तित्व ससार के इतिहास म दूसरा नहीं हुआ। सचमुच भारतीय धर्म, और सस्कृति के इतिहास मे कृष्ण का व्यक्तित्व अत्यंत विलक्षण है।

विश्व के प्राचीनतम साहित्य 'ऋग्वेद' मे 'कृष्ण-आगिरस'—(१, ११६, ६१ ११६, २३, ८, ८५, १-६, ८, ८६, १-५ आदि) का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद मे कृष्ण ऋषि हैं। वहाँ कही के 'कृष्णायु' के पिता है तो कही अपत्यवाचक 'कृष्णिय'।

'कौपीतकी ब्राह्मण' (३०/६) मे 'कृष्ण आगिरस' का वर्णन मिलता है। 'ऐतरेय आरण्यक' मे 'कृष्ण हारीत उपाध्याय' का उल्लेख मिलता है।

'ऋग्वेद' (८/६६/१३-१५ और १/१०-११) म कृष्ण को अपने दस सहस्र सैनिकों के साथ 'अशुमती' (यमुना) तट के प्रदेश का निवासी कहा गया है।

'छान्दोग्य उपनिषद्' म देवकी-पुत्र कृष्ण का उल्लेख मिलता है, के घोर आगिरस के शिष्य थे।

श्री मद्भगवद्गीता और छान्दोग्य उपनिषद् के कृष्ण के विषय मे सर जार्ज ग्रियसन, मजुमदार, राम चौधरी, वान थ्राउडर आदि अनेक विद्वानों का मत है कि वे दोना एक हैं, पर मैक्समूलर, कीच, तिलक आदि का मत है कि वे दोनो एक नहीं हैं। पाटिंजर का मत है कि वे शात्वत-कुल के यदुवशी थे और मनु की ६४वी पीढी म हुए थे। यदुवश म उहे धसुदेव-देवकी का पुत्र कहा गया है।

वस्तुतः वेदा म कृष्ण स्तोता 'मन्त्रद्रष्टा' ऋषि हैं, अवतारी नहीं। 'घट' और 'महा उमगा' जातका मे भी 'कृष्ण'—कृष्ण—धसुदेव पुत्र है और उनम उनको कथा वर्णित है। हरिवंश, विष्णु, भागवत, ब्रह्मवैवर्त आदि अनेक पुराणों मे कृष्ण-कथा के सविस्तर वर्णन मिलने हैं।

वस्तुतः कृष्ण की कथा भारतीय लोकजीवन की एक ख्यात-प्रख्यात कथा रही है। पुराणों मे धीरे-धीरे उसकी रूपक-कथा के रूप मे प्रतिष्ठा हुई। उसमे इतना अवकाश था कि कवियों को अपनी कल्पना के सम्पसार का अवसर मिला है। कल्पना के लिए अत्यंत उच्च क्षेत्र था कृष्ण-कथा का।

कृष्ण यागी योगेश्वर हैं, व ललित मधुर गोपीजन वल्लभ हैं—और वे ५०

घोर राजनीतिज्ञ है। वस्तुतः वे मनुष्य के ज्ञान, राग और क्रम वृत्तियाँ के सर्वोच्च शिखर बने जा सकते हैं। इन सभी रूपा में विलक्षण रूप से एक सूत्रता द्रष्टव्य है।

वस्तुतः वेदों में वृष्ण मंत्रद्रष्टा ऋषि हैं। महाभारत में उनका सहस्रो स्थलो पर उल्लेख मिलता है। वे महाभारत के सूत्रधार हैं। हरिवंश तो महाभारत का खिलपाठ है—

पुराणा की कल्पनात्मकता, रूपकात्मकता, प्रतीकात्मकता आदि दृष्टियों से तटस्थ होकर विचार किया जाय तो वृष्ण पूर्णतः महामानव और ऐतिहासिक महा-पुरुष के रूप में उपस्थित हात हैं।

महाभारत के पश्चात् वृष्ण के साहित्यिक, व्यक्तित्व में अद्भुत परिवर्तन मित्रता है, वे धीरे धीरे पूर्ण अवतार के रूप में प्रतिष्ठित हो जाते हैं। गोपाल रूप में वृष्ण की उपासना पुराणों की ही देन है, पुराणा में वृष्ण के गोपाल एवं अवतारी रूपों का सविस्तार वर्णन मिल जाता है। वगला के प्रख्यात कथाकार बकिमचन्द्र ने अपने ग्रन्थ 'कृष्ण-चरित' में वृष्ण की ऐतिहासिकता की प्रामाणिक रूप से स्थापना की है। वस्तुतः विष्णु, नारायण, वासुदेव और वृष्ण—एक ही विराट् व्यक्तित्व के रूप हैं। भारतीय अवतारवाद में वराह, कूर्म, कच्छप, नृसिंह, परशुराम, राम, वृष्ण आदि में अन्वेषण माना गया है और यह स्थापना की गयी है कि परमतरु स्वरूप विष्णु या परमात्मा ने समाप्त में बार-बार अवतार लिये हैं। गीता में कहा गया है कि—

'यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।

अभ्युत्थानमर्धमस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥'

अर्थात् धर्म की हानि होने पर अधर्म का अभ्युत्थान होने पर ईश्वर स्वयं का सृजन या अवतार करत हैं। वृष्ण न सृजनों के परित्राण के लिये दुष्टों के विनाश के लिए अवतार धारण किया है। भागवत धर्म का प्रचार ईसा की छठी शताब्दी के पूर्व हो चुका था। घोमुष्ठा, वेम नगर, नानाघाट, आदि स्थानों में प्राप्त शिलालेखों में सत्कर्षण-वागुदेव का उल्लेख मिलता है। इससे स्पष्ट है कि भागवत धर्म का प्रचार छठी शताब्दी-दसवीं पूर्व के पहले हो चुका था।

पुल्लेशियन द्वितीय के अभिलेख के गणना के अनुसार महाभारत का काल ३१०२ ईसा पूर्व ठहरता है। जाय भट्ट के अनुसार यही से बलयुग का प्रारम्भ होता है। बराट मिहिर के अनुसार महाभारत का समय २४४६ ईसा पूर्व है—वस्तुतः महाभारत के युद्ध के समय के त्रिपय में बहुत कम मतभेद है। हाँ, यह सही है कि महाभारत का युद्ध ३१०० ईसा पूर्व के आस पास हुआ था, और ३१०० + २००० अर्थात् विगत १००० वर्षों तक वृष्ण के विराट् व्यक्तित्व का विवास होता रहा है।

श्रीकृष्ण के विराट, बहुआयामी और रसमय जीवन ने भारतीय कलाशा को अनेक रूपों में बड़ी गहराई तक प्रभावित किया है।

संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश साहित्य में कृष्ण कथा का उल्लेख भरा पड़ा है। हिन्दी साहित्य के आदिकाल में ही कृष्ण कथा रास और रासक काव्यों में मिलने लगती है। भक्तिकाल में सूरदास, अष्टछाप के अन्य कवि, तुलसीदास के काव्य कृष्ण भक्ति परम्परा के अनमोल रत्न हैं।

कृष्ण कथा में अद्भुत आकर्षण रहा। परिणामतः हिन्दुओं के साथ मुसलमान कवि भी कृष्ण की ओर आकर्षित हुए। मलिक मुहम्मद जायसी, रहीम, रसखान, ताज, कमाल, महाकवि जान, मुबारक आदि सैकड़ों मुसलमान कवियों ने अपने धर्म की सर्वोत्तम अभिव्यक्तियाँ हिन्दी साहित्य में अमर कर दी हैं। भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र ने ठीक ही लिखा है कि—

‘इन मुसलमान हरिजनन पर, कोटिन हिन्दू वारिये।’

वस्तुतः हिन्दी के सभी कृष्ण भक्त मुसलमान कवि मुसलमान होते हुए भी अत्यन्त उदार हृदय हैं, वे सच्चे अर्थों में हिन्दू-मुस्लिम एकता के पावन सगम या सेतु हैं।

डॉ० चैतन्य गोपाल निभय नेह के नाते मेरे अनुज तुल्य हैं और उनकी सुपुत्री श्रीमती साधना निभय मेरी भी सुपुत्री हैं। उसने अत्यन्त परिश्रम के साथ ‘हिन्दी के मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य’-विषय पर शोध काय किया है। उसे इस विषय पर पी-एच० डी० की उपाधि मिली है, उसने ऋग्वेद से लेकर संस्कृत, प्राकृत अपभ्रंश साहित्य में कृष्ण के विकास का अत्यन्त शोधपूर्ण अध्ययन उपस्थित किया है। भक्ति और रीतिनाल के विविध कृष्ण भक्ति सम्प्रदायों का उसने सर्वांगीण, किन्तु पूर्ण परिचय दिया है।

वस्तुतः हिन्दी के मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों पर यह प्रथम शोधपूर्ण उपमायी और प्रामाणिक शोध काय है। इस शोधकाय की एक और बड़ी विशेषता है कि लेखिका ने मूल आकर ग्रंथों का अध्ययन किया है और उसके प्रकाश में यह शोध प्रबंध लिखा है। सामग्री संवर्धन उसके मुक्तु मध्यम और प्रामाणिक निष्कर्षों के कारण यह ग्रंथ उपयोगी बन पड़ा है।

हिन्दी के विकास में मुसलमान कवियों का योगदान अप्रतिम माना गया है और हम यह कह सकते हैं कि हिन्दी के कृष्ण काव्य में मुसलमान कवियों का योगदान भी अप्रतिम और अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। डॉ० साधना निभय ने हिन्दी के मुसलमान कवियों के कृष्ण काव्य के अनुशीलन विषय पर विद्वत्ता पूर्ण ढंग से अत्यन्त महत्त्व-

पूण शोध कार्य किया है । उनका यह शोध वार्य सर्वथा अभिनन्दनीय है । विश्वास है कि यह अपने प्रकाशित रूप में सहृदय और सुधो विद्वाना द्वारा समाहत होगा । मेरी शुभाशसा है कि आयुष्मती साधना और अधिक उत्साह और श्रम के द्वारा इसी प्रकार हिंदी साहित्य को समृद्ध करती रहेगी ।

शिवसहाय पाठक
हिंदी अध्ययनशाला
आचार्य एव अध्यक्ष,
विक्रम विश्वविद्यालय (उज्जैन)

निवेदन

भारतीय साहित्य में वृष्ण-काव्य की एक सुदीर्घ परम्परा है। वेदों में वृष्ण का अनेक विध उल्लेख मिलता है। पद्म, मत्स्य, ब्रह्मवैवर्त, वायु, वामन, विष्णु प्रभृति पुराणों में वृष्ण का आख्यान मिलता है। धीमद्भागवत और महाभारत वृष्ण कथा के आकर ग्रंथ हैं। सस्वृत के साथ ही प्राकृत और अपभ्रंश वाक्यों में भी वृष्ण कथा अनेक रूपों में मिलती है। वल्लभ, चैतन्य आदि अनेक सम्प्रदायों में वृष्ण के विभिन्न स्वरूपों की उपासना मिलती है। वस्तुतः राधा और वृष्ण ने सस्वृत के साथ ही हिन्दी साहित्य को भी बड़ी गहराई से प्रभावित किया है।

आदिकालीन हिन्दी साहित्य में वृष्ण कथा स्फुट रूप में मिल जाती है। भक्तिकाल में भारतवर्ष में वृष्ण-राधा विषयक अनेक सम्प्रदाय प्रवर्तित हुए हैं, इनमें वल्लभ, चैतन्य, राधा स्वामी आदि अनेक सम्प्रदाय प्रख्यात हैं। अष्टछापों के साथ ही मलिक मुहम्मद जायसी, ताज, महाकवि जान, रसखान, जमाल, रहीम, मुबारक प्रभृति कवियों ने वृष्ण-काव्य परम्परा में अपने अंश की श्रेष्ठ भावाभिव्यक्तियाँ उपस्थित की हैं। हिन्दी रीतिकाल में शताधिक मुसलमान कवियों ने श्रीवृष्ण और राधा को अपनी कविता का प्रमुख प्रतिपाद्य बनाया है। आधुनिक युग में भी हिन्दू कवियों के साथ मुसलमान कवियों ने भी राधा-वृष्ण विषयक काव्यों की सर्जना की है। वृष्ण-कथा जाति, धर्म, सम्प्रदाय और धर्म की काराओं में प्रतिबन्धित न रहकर मुक्त रूप से प्रभावित हुई है।

प्रस्तुत ग्रंथ छोटे-बड़े कुल छ अध्यायों में पूरा हुआ है। प्रथम अध्याय में 'हिन्दी वृष्ण काव्य का विकासात्मक अनुशीलन' किया गया है। इसके अंतर्गत भारतीय वाङ्मय में वृष्ण काव्य की सुदीर्घ परम्परा का सर्वाङ्गीण आकलन किया गया है। इसके अंतर्गत वृष्ण वेदा, उपनिषदा, ज्योतिष ग्रंथों, शिलालेखों, पुराणों आदि के साथ ही चैतन्य, निम्बाक, वल्लभ आदि सम्प्रदायों और कवियों के काव्यों में उपलब्ध वृष्ण का सम्यक् परिचय दिया गया है।

द्वितीय अध्याय का प्रतिपाद्य है—'हिन्दी के मुसलमान कवियों का—आदिकालीन भक्तिकालीन—वृष्ण काव्य'। इसके अंतर्गत मलिक मुहम्मद जायसी वृत्त पद्यावत में वृष्ण कथा के सूत्रों का अध्ययन किया गया है, साथ ही उनकी महावृत्ति कथावत की खोज का इतिहास, उसकी शक्ति, उसकी कथा, उसका मूल स्रोत,

कहावत का रूप-सौन्दर्य वर्णन, परमेश्वर का वाग्मयता, कर्तव्य का महावाक्य, मसनवी सौरी आदि का मार्गदर्शन परिणय दिया गया, तथा तानगन, खगान, रहीम, सयफ जिजामुग, जमान काश्मिरिया, अबररशाह, मगमती यम, तान सयफ, शाहजहाँ, ताज, मतररि जात, ताहिर अहम, जहाँगीर, मुगल विजय आदि की कृष्ण विषयक रचनाओं का परिणय दत्त हुए उनकी विशेषताओं का आवलन दिया गया है।

दुतीय अध्याय के अंतगत—'हिन्दी के मुसलमान कवियों के कृष्ण काव्य (संवत् १७०० से १९५० ई० तक का) अनुशीलन' दिया गया है। इसके अंतगत आलम, शेख रगेजा, रहमत, पमी, अशुन जलील, नेयाज, पार अबुल्लाह बिनशामी, रसनीन, पारो माहब, अबुल्लाह मुहम्मद आरिफ, मीरमाधो, पारे घाँ पगीर, आलिल, सतदाना साहेर, रामा नगी, बाबा फजन, बाबा गुलशन, संत यररग, मीरमुगल, तालिबशाह, नवखान, मीरन नजीर अबररावादी, हाकिम, मद्रुखवलो, मुहम्मद ईसा अल्लाह घाँ, शेख भुल्लन, वाहिल, आलम (गुदामा चरित), अलीमन, अनीस, सैय, रोशन सतीफ, हुसेन प्रभृति कवियों की कृष्ण विषयक कविताओं का सम्पत् परिचय दिया गया है।

चतुर्थ अध्याय में हिन्दी के मुसलमान कवियों के कृष्ण-काव्य में अभिव्यक्त 'कृष्ण चरित' का अनुशीलन दिया गया है। इसमें कृष्ण की लीलाएँ—बातलीला, गोचारण लीला, चौरहरण लीला, कुञ्जलीला, रास लीला, मुरली, गोपी विरह, मानिनि प्रसंग, उद्वेग प्रसंग, विरह वर्णन, पञ्चीया भाव आदि का सम्पत् परिचय दत्त हुए एतद् विषयक हिन्दी के मुसलमान कवियों की भावाभिव्यक्तियों की मीमांसा की गई है।

पंचम अध्याय 'भारतीय भावात्मक एकता और हिन्दी के मुसलमान कवियों का कृष्ण-काव्य' के अंतगत इस्लाम और वैष्णव भक्ति भावना जमार सुसरो, हिन्दी मुस्लिम सम्प्रदाय के सेतु जायगी, रहीम आदि कवियों के साथ ही इस्लामी सत्त्वृति के परिणामस्वरूप वास्तुकला, छन्द, काव्यरूप, शब्द, मुहावरे, अलकरण, खान-पात, वेश-भूषा आदि का परिचय दत्त हुए इस तथ्य की स्थापना की गई है कि हिन्दी के मुसलमान कवि सच्चे अर्थों में भारतीय भावनात्मक एकता के समर्थ सेतु हैं। हिन्दी के मुसलमान कवियों का एक ही उद्देश्य था रस, प्रेम और आनन्द की मूर्ति श्रीकृष्ण और राधा की लीला का गायन।

ये सभी कवि भाववता के सच्चे अर्थों में आदर्श थे, वे मानव कल्याण की भावना से सम्प्ररित और हिन्दू-मुस्लिम एकता के उद्घोषक थे।

मनुष्यता की इस उदात्त रसमय भूमि पर आकर लौकिक भेद समाप्त प्राय हो जाते हैं। सोक मगल के आकाश में ऐसे अनेक भेष छण्ड मद्रघ्वनि से गरजे धीर धरती को रससिक्त करते रहे। हिन्दी के इन मुसलमान कवियों ने अपने अन्त का सर्वोत्तम दलित द्राक्षावत निशेष भाव से निचोड़ कर उपस्थित कर दिया है, जो भारतीय भावात्मक एकता का पावन अमृत सगम बन गया है।

पष्ठ अध्याय 'उपसहार' के अंतगत 'हिंदी के मुसलमान कवियों के कृष्ण का प्र—की उन्नति-प्रिया एवं सीमाशा का आकर्षण विधा गया है' और यह सिद्ध किया गया है कि हिन्दी के यह मुसलमान कृष्ण भक्त कवि हिन्दू-मुस्लिम एकता के समन्वय सेतु हैं। ग्रंथ के अंत में परिशिष्ट के अंतर्गत सद्बन ग्रंथा एवं पत्र-पत्रिकाओं की अकारादि क्रम से सूची प्रस्तुत की गई है।

हिन्दी के मुसलमान कवियों के कृष्ण-वाक्या की परम्परा में 'कन्हावत' वह ज्वाज्वल्यमान रत्न है जिसका आलोक शाश्वत रूप से अक्षुण्ण रहेगा। वस्तुतः यह कृष्ण-वाक्य-परम्परा का प्रथम एवं श्रेष्ठ नाटिका महाकाव्य है। आचार्य शुक्ल जी के द्वारा पञ्जावत का सम्पादन एवं डा० शिवसहाय पाठक द्वारा कन्हावत का सम्पादन एवं प्रकाशन युगोत्तम घटनाएँ हैं, जो हिन्दी साहित्य के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित रहेंगी।

परमश्रेष्ठ गुरुवर डॉ० शिवसहाय पाठक प्रोफेसर, अध्यक्ष हिन्दी अध्ययन-शाला, विभ्रम विश्वविद्यालय उज्जैन मेरे बड़े पिताजी हैं, उन्होंने इस शोधग्रंथ में पद-पद पर पूर्ण रूप से निर्देशन दिया। मैं उनके अपने घर के पुस्तकालय का पूरा उपयोग किया है, उन्हीं के स्नेह, प्रेरणा एवं निर्देशन से मैं यह प्रबन्ध पूर्ण कर सकी हूँ। मैं उनके चरणों में श्रद्धांजलि देती हूँ।

गुरुवर डॉ० भागीरथ बडोले 'निर्मल' रोडर हिन्दी अध्ययनशाला के प्रति मैं श्रद्धांजलि देती हूँ।

मैं अपने पूज्य पिता पंडित डॉ० चैतन्य गोपाल 'निभय' के चरणों में प्रतिदिन वे प्रणाम देती हूँ, जिन्होंने सदैव मुझे पढ़ने और लिखने की प्रेरणा दी। पूज्य माता श्रीमती रमादेवी 'निभय' की भी मैं प्रणाम करती हूँ।

मेरे जीवन-साथी श्री प्रवीण जी ने पारिवारिक उत्तरदायित्वों के बहन में मुझे सहायता प्रदान किया है, उनके स्नेह के विषय में कुछ कहना अनुचित होगा।

प्रस्तुत ग्रंथ के लेखन में मुझे जीयाजाराव पुस्तकालय विभ्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन के पुस्तकालयाध्यक्ष और अथर्व कमचारिया से पुस्तकालय और पत्र पत्रिकाओं की बड़ी सहायता मिली है, मैं उन्हें धन्यवाद देती हूँ।

इस ग्रन्थ के लेखन में जिन विद्वानों की कृपया से धनिक भी सहायता मिली है—में उन सभी प्रति कृतज्ञ हूँ ।

अन्त में इतना ही निवेदन है कि इस ग्रन्थ के माध्यम से मैंने हिन्दू मुस्लिम एकता के समर्थन के लिए मुगलमान कृष्ण भक्त कवियों के कृष्ण वाक्य के अनुशीलन का यह प्रथम शोध-प्रयास किया है यदि यह विद्वानों द्वारा समाहित हुआ तो यह बड़ा सौभाग्य होगा, अथवा मैं मानूँगी कि इस शोध-ग्रन्थ के माध्यम से 'राधा-क-हाई मुमिन'—का सुअवगर् तो मिला ही है ।

३ अप्रैल १९६० ई०
रामनवमी
चेत शुक्ल नवमी

निवेदिता
साधना 'निर्भय'

अनुक्रमणिका

अध्याय—एक

हिंदी कृष्ण-काव्य का विकासात्मक अनुशीलन

1 से 91

कृष्ण शब्द की व्युत्पत्ति तथा विकास 1, राधा शब्द की व्युत्पत्ति तथा अर्थ 5, उपनिषदा म राधा 6, ज्योतिष-तत्त्व के रूप में राधा कृष्ण की व्याख्या 6, शिलालेखा में राधा 11, अवतारी कृष्ण 13, बाल लीला 14, ब्रह्मवैवर्ते में कृष्ण 19, माधुर्य भाव का स्वरूप 33, चैतन्य सम्प्रदाय 40, स्वामी निम्बार्काचार्य 41, रूपरसिक 42, महाप्रभु बल्लभाचार्य 43, भक्त शिरोमणि सूरदास 47, नन्ददास 48, कुमनदास 49, परमानन्द दास 49, चतुर्भुज दास 49, छोटस्वामी 49, गोविन्द-दास 49, नरोत्तम दास 53, सखी सम्प्रदाय 54, बाबा तुलसीदास 55, ऐतिहासिक कृष्ण काव्य 63, आधुनिक कृष्ण काव्य (1937-1946) 79, आधुनिक कृष्ण काव्य (1947-1970) 84 ।

अध्याय—दो

हिंदी के मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य

(आदिकालीन एवं भक्तिकालीन)

93 से 181

मलिक मुहम्मद जायसीवृत पदभावत में कृष्ण कथा के सूत्र 95, कहावत 103, कन्हावत की पोज का इतिहास 103, कन्हावत (काव्य का नाम) 104, कहावत की लिपि 105, कहावत का रचनाकाल (947 हिजरी) 105, कहावत की कथा 107, कृष्ण कथा और कहावत का मूल स्रोत—कथा वस्तु का नवीन संघटन 113, रूप सौंदर्य वर्णन—नय-शिख 115, रूप सौंदर्य वर्णन के उपमान 118, पट-ऋतु-वर्णन 121, बारहमासा 124, कन्हावत का महावाक्यत्व 128, उदात्त कथा 129, कथा 130, भसनवी शैली 136, स्तुति 139, तानसन 142, रसखाना 145, रसखान के कृष्ण 148, अब्बर 152, इब्राहीम 153, रहीम 153, रहीम का रचाएँ 155, सैयद निजामुद्दीन (मथनापर) 159, जमाल 161, अब्बर शाह 162, कादिर बहश 163, रूपमती वेगम 163, तान तरग या 166, शाहजहाँ 166, ताज 166, कविजान 171, अहमद 173, जहाँगीर 175, मुखारक बिलग्रामो 175 ।

अध्याय—तीन

हिंदी के मुसलमान कवियों के कृष्ण काव्य अनुशीलन
(संवत् 1700 से 1980 तक)

183 से 224

आलम 183, शेख रगरेजन 185, मीर अब्दुल्लाह विलग्रामी 192, रहमत 192, पेमा 192, अब्दुल जनील 194, नेवाज 195, रसमीन 197, यारी माहब 201, अब्दुल्लाह 202, मुहम्मद आरिफ 204, मीर माया 205, कारंजी फार 206, आदिल 207, तालिबशाह 208, सत दाना साहेब 209, बाबा नबी 209, बाबा फजल 210, सैत हुनेन खाँ 210, बाबा गुलशन 210, सैत यवरग 211, मार मुराद 211, नबखान 212, मोरन 212, नजीर अबबरावादी 213, महबूब 215, हाफिज 216, बली मुहम्मद 216, ईशा बल्ला खा 'ईशा' 216 नवाज विलग्रामी 217, शेख मुल्लन 218, वाहिद 219, आलम (मुदामा चरित्रकार) 219, अलीमन 220, अनौस 220, सैयद रोशन 221, लतीफ हुसैन 221 ।

अध्याय—चार

हिंदी के प्रमुख मुसलमान कवियों के कृष्ण काव्य में
अभिव्यक्त कृष्ण चरित्र

225 से 244

कृष्ण लातार् 226, बाल लाला 229, गाधारण लाला 230 चीरहरण
नीला 230 कुत्रातोला 230, रासलाला 231, गोपी विरह 237,
मानिनि प्रसंग 238, उद्धव प्रसंग 238, विरह वषण 239, परकीया
भाव 240, मुरली 241, निष्कर्ष 243 ।

अध्याय—पाँच

भारतीय भावात्मक एकता और हिंदी मुसलमान कवियों का
कृष्ण-काव्य

245 से 268

इस्लाम और वैष्णव भक्ति-भावना 246, हिंदू-मुस्लिम सम्बन्ध के सन्तु
जायसा 252 ।

अध्याय—छ

उपग्रह

269 से 281

गणम ग्रंथ सूची

282 से 285

संदभ ग्रंथ सूची (अधेजी)

286

गणम ग्रंथ सूची (पत्र-परिचाल)

286

हिन्दी कृष्ण-काव्य का विकासात्मक अनुशीलन

'कृष्ण' शब्द की व्युत्पत्ति तथा विकास

'कृष्ण' शब्द "कृ" धातु से 'ण' प्रत्यय लगाकर बना है। अर्थ है - 'कपति मन' - जो मन को आकृष्ट करे। 'ण' प्रत्यय जान द वाचक है। इस प्रकार सत्ता और जान - दोनों का भाव एतद परब्रह्म कृष्ण कहलाता है। मट्ट भी कहा जाता है कि प्रलय काल में समस्त जीवा का अपनी कुम्भि में स्वीचन वाले को कृष्ण कर्त है।

ऋग्वेद के 8वें मण्डल के 74 वें मंत्र में ऋषि कृष्ण का उल्लेख है। अनु-क्रमणिका लेखक ने उन्हें अगिरस की सत्ता कहा है। छांदोग्य उपनिषद् में देवकी पुत्र कृष्ण का उल्लेख है। त्रीकाकारा के अनुसार 'कार्पायण' गोत्र में होने के कारण वे कृष्ण कहे गये। महाभारत¹ में कृष्ण को वेदात्त का पिता और ऋषिब्रह्म कहा गया है। प्रश्न है कि क्या वैदिक मंत्रों के ऋषि अगिरस और घोर अगिरस के शिष्य देवकी पुत्र कृष्ण एक ही व्यक्ति थे। डॉ. भण्डारकर का मत यह है कि कृष्ण के ऋषि हान की परम्परा ऋग्वेद से लेकर छांदोग्य उपनिषद् तक चली आती है। इसी समय 'कार्पायण' नामक कोई गोत्र भी था जिसके मूल पुरुष कृष्ण थे वासुदेव उसी कार्पायण गोत्र के थे। अतः उनका नाम कृष्ण पड़ गया।²

देवकी पुत्र कृष्ण का अगिरस कृष्ण के साथ सम्बन्ध जोड़ा गया है।³ उन्होंने छांदोग्य उपनिषद् में उनके गुरु अगिरस की जा उपदेश लिये हैं वह परवर्ती काल में कृष्ण द्वारा अर्जुन को लिये गये। जा गीता प्रवचन के कुछ अंगों से ज्यों के त्यों मिल जाते हैं।⁴

1 महाभारत 38 वाँ पत्र।

2 यणविन्म एण्ड शक्तिम पृ 11 12।

3 शास्त्र की सब शाक्त कृष्ण, पृ 17।

4 दण्ड्य छांदोग्य उपनिषद् 34/17 और भाष्य भाष्यत् गीता 16/12।

आशय यह है कि जो उपदेश अगिरस कृष्ण ने अपने गुरु से ग्रहण किये थे, वही उन्होंने अज्ञात को दिये। इस प्रकार ऋषि कृष्ण का वेद गान और देवकी पुत्र का गौरव समाप्त हुआ और वासुदेव के साथ मिलकर कृष्ण के व्यक्तित्व की गरिमा वर्धित हुई।

भारतीय साहित्य में कृष्ण का प्राचीनतम उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। वहाँ व अशुमति व तट पर इन्द्र द्वारा पराभूत होत हैं।¹ वहाँ वे एक ऋषि हैं जो विश्वक विद्यापु को आरोग्य प्रदान करने के लिए अश्विनीजुमारों का आह्वान करते हैं। कृष्ण को अगिरस भी कहा गया है। सम्भवतः उही का उल्लेख 'कीर्ति की ब्राह्मण' में किया गया है। कृष्ण कहते हैं कि - 'त्रिम प्रकार जाया प्रिय का आसिगन करती है उसी प्रकार हमारी गति इन्द्र का आसिगन करती है।'² अथर्ववेद साहित्य में 'केरी' नामक असुर के नाशक के रूप में कृष्ण की कथा दी गयी है। सम्भवतः ये वासुदेव पुत्र हैं।³

स्पष्ट है कि 'कृष्ण' का प्राचीनतम उल्लेख ऋग्वेद में मिलता है। उन्हें ऋषि कहा गया है। 'अनुक्रमणि' में उन्हें "अगिरस" की उपाधी दी गई है। ऋग्वेद की अनेक ऋचाओं में उनका उल्लेख है।⁴ वहाँ तभी "अपर्यवाचक" "वर्णिम" का उल्लेख है तो वहाँ वे "विष्णायु" के पिता हैं।

ऋग्वेद 8/96/13-15 में कृष्ण का अपने दम सहस्र संनिका के साथ अशुमती (यमुना) तट के प्रदेश का निवासी कहा गया है। उनका और इन्द्र का युद्ध भी हुआ था। छांदोग्य उपनिषद् में देवकी पुत्र कृष्ण का उल्लेख है, वे घोर अगिरस के पित्र्य थे। "श्रीमद् भगवद्गीता" और "छांदोग्य" के कृष्ण के संबंध में प्रियसन मज्जमदार राय चौधरी, वान थाइडर प्रभृति विद्वानों का मत है कि - ये दोनों एक ही हैं पर मत्स्यमूलर, तिलक, कीच आदि ने इसे स्वीकार नहीं किया है।⁵ पाण्डित्य ने लिखा है कि वे 'वासुदेव मूल' के यदुवशी थे, व मनु की 94 वीं पीढ़ी में हुए थे। हरिवंश (2/38/35) में उन्हें सुयवशी वासुदेव और (माता) देवकी पुत्र कहा गया है। वेदा में कृष्ण मंत्र प्रवृत्त हैं उस समय वे कृष्ण को हम अवतारों कृष्ण नहीं कह सकते।

1 ऋग्वेद 1/101।

2 वही मण्डल 1 सूक्त 16 में 23 आदि।

3 विष्णुपुराण, 1937 ई (व परभूतम चतुर्वेदी का लेख)।

4 अथर्ववेद कृष्ण चरित पृ 47।

5 ऋग्वेद 8, 85/1 7 1/116/7 1/116/23, 117/7 आदि।

6 इन्द्राय अनासक्तोपीदिया आठ विभिन्न एण्ड श्विक्वस या र पृ 535 538/ अथर्ववेद हासिल भाग इतिहास का 3 पृ 11 12 तथा वैदिक इन्द्राय या 1 पृ 184।

7 गोपट सुव धार इन्द्राय या 1 प 52, गोता रहस्य, प 538, वैदिक इन्द्राय या 7 पृ 184।

महाभारत काल में भागवत धर्म का पुनः उदय हुआ, उसे पाँचरात्र की सजा दी गई है। पाँचरात्र मत की विशेषता है कृष्ण भक्ति। शक्ति पत्र में कृष्ण स्वयं को नारायण कहते हैं, उहाँ हान स्वयं को पृथ्वी, स्वयं एवम अतरिक्ष भी कहा है। महाभारत में कृष्ण श्यामसुन्दर, शान्तिदत्त, कमनिष्ठ, कमयोगी, कुशल सयाजक महान राजनीतिज्ञ, महान विचारक आदि रूपा में आते हैं। गीता में उहाँ को कहा है

‘जन्म कर्म च मे दिव्य मय या वसति तत्स्वतः ।

त्यक्त्वा देहं पुनश्च ममैति मामिति सो अजुतः ।’¹

अर्थात् मेरा जन्मकर्म दिव्य है। इसकी दिव्यता का जानने वाला कराडों में बाँदी बिरला ही होगा। महाभारत काव्य में कृष्ण का पाँचवों का परम हितैषी धर्मप्यारी और वायानुमोदित पथ का आदर्श नेता माना है। वे अर्जुन की प्रेरणा थे, पाण्डवों की शक्ति थे। उहाँ की प्रेरणा से पाण्डव उम महायुद्ध में प्रवृत्त हुए, उहाँ को गत्य नहीं उठाया, वे अर्जुन के शारथी बन। वे अजयतारी थे। मानुषों के परित्राठी दुष्टों के विनाश और धर्म सम्हापन के लिए उहाँ को अवतार धारण किया था। वे साक्षात् भगवान् हैं, योगेश्वर हैं, और कमनिष्ठ हैं।

महाभारत में लीला पुरुष कृष्ण की कलात्मक भूमिमाओ का प्रतिफलन नहीं है। दुष्टों के अत्याचार से प्रताड़ित युग में साधु पुरुषों की वर्याण कामना के लिये ब्रह्म की रूप कल्पना का जो बिराट फलक तयार किया, युग नायक कृष्ण के शीघ्र पूर्व कृत्य और धार्मिक कीर्ति उसे अंकित करने वाले रखाचित्र हैं। उनमें रग भरन का काय पुराणकारों ने पूरा किया।² परिणामस्वरूप कृष्ण की पुराण कल्पना नाना कोमल मधुरभावों से सुसज्जित हावर प्रस्तुत हुई। पुराणों में कृष्ण चरित्र का धार्मिक रूपक के रूप में शान शान प्रतिष्ठापन हुआ। उसका लोक प्रचलित होना सगत ही है। वासुदेव कृष्ण अपने समाज के सागा के द्वारा पूजे जाने लगे। मुषिष्ठिर और अर्जुन के वे भगवान् हैं। वे धर्म और राजनीति के संचालक हैं। महाभारत में कृष्ण का दिव्य रूप की भाँती मिलती है। किंतु उनकी ब्रज सीमाओं का उल्लेख नहीं मिलता।

वकिमचन्द्र ने भी माना है कि महाभारत काल में कृष्ण पर यदि शक्ति का कलक होता तो शिशुपाल वध के सदृश में इस जगत का उल्लेख अवश्य मिलता।³ महाभारत में गोपाल पूतना वध, गोवधन धारण आदि के उचल से गोकुल वाली कथा का आभास मिल जाता है।⁴

1 श्रीमद् भगवद् गीता श्लोक 4/9 ।

2 व पत्रिकर श्री कृष्ण प्राच्यम पृ 7

3 डॉ ब्रजेश्वर वर्मा हिंदी साहित्य कोश पृ 240

4 वकिमचन्द्र कृष्ण चरित्र - पृ 65

5 महाभारत सभा पत्र 64 / 4 7 8 9 10 12/

द्रोपदी चीर हरण के सदम म भी 'गोरी' गोप' जनप्रिय से भी गोकुल लीला का आभास मिलता है। ¹ महाभारत के ही भीष्म पर्व में कृष्ण के अवतार का उल्लेख हुआ है। ² गीता के ग्यारहवें अध्याय में कृष्ण के विराट रूप की भाषी दी गई है। वहाँ वे पूण ब्रह्म के रूप में चित्रित ह।

वासुदेव की उपासना के प्रसार के साथ ही नामो में परिवर्तन होता रहा। उन्हें कोई कशव कोइ जनादन तथा कुछ लोग कृष्ण कहते हैं। पतञ्जलि के यहाँ नाप्य म नामो का प्रयोग पाया जाता है। इसमें कृष्ण नाम सर्वाधिक प्रचलित होता गया।

ऋग्वेद अष्टम मण्डल 74 वें मन्त्र के स्रष्टा ऋषि कृष्ण धताये गये हैं। वे मन्त्र के तीसरे और चौथे छन्दो में अपने को कृष्ण कहते हैं। अनुक्रमणिका लेखक उनको अगिरस की मतान कहते हैं।

दवकी पुत्र कृष्ण का नाम छद्मोपनिषद् में मिलता है यहाँ इन्हें घोर अगिरस ऋषि यज्ञ दशन सुनाते हैं। इससे पता होता है कि अगिरस कृष्ण के गुरु हैं।

गाथा या जातक के टीकाकारों का मन है कि "कृष्ण" एक गोत्र का नाम है, जिससे कार्पायण गोत्र प्रचलित हुआ। आश्वलायन सूत्र के अनुगार यम में धर्मियों का गोत्र उनके पुत्रोहितों के गोत्रों के अनुसार होता है। इस तरह वासुदेव कार्पायण गोत्र के हो गये यद्यपि यह गोत्र ब्राह्मणों का था कार्पायण गोत्र का होने से वासुदेव को कृष्ण कहा गया।

प्राचीन कृष्ण सम्बन्धी समस्त ज्ञान वासुदेव में निहित बताया गया। महाभारत सभा पर्व के 38 वें अध्याय में भीष्म कहते हैं कि कृष्ण को आदर देना चाहिये, क्योंकि वेद वेदांत के ज्ञाता व ऋत्विज हैं।

छद्मोपनिषद् में कृष्ण का उल्लेख दो रूपों में मिलता है यहाँ इन्हें घोर अगिरस ऋषि यज्ञ दशन सुनाते हैं। इससे ज्ञात होता है कि अगिरस कृष्ण के गुरु थे। यदि कृष्ण अगिरस ह तो हम कह सकते हैं कि कृष्ण नामक ऋषियों की परम्परा ऋग्वेद से छद्मोपनिषद् तक चली आई बाद में ऋषि कृष्ण को वासुदेव से मिला दिया गया। गाथा सतमई³ में कृष्ण की ब्रजलीला के सम्बन्ध में कई गाथाएँ हैं। एक में कहा गया है 'आज भी दामोदर बालक है यशोदा जब ऐसा कह रही थी तब कृष्ण के मुख की ओर देखकर ब्रज वनिताएँ और मैं हँस रही थी

1 महाभारत सभा पर्व -- 90/45

2 नैमिष भगवद् गीता -- 4/8 8

“अज्जबि वाला दामो अरोति इह, जम्पिए असो आए ।
कल्म कुह पेसि अच्छणिहुअ हसिअ ब अबहु हि ॥” (2/12)

दूसरी अथ गाथा में किसी गोपी के उत्कृष्ट कृष्ण प्रेम का पूरा परिचय हमें मिलता है — “कोई निपुण गोपी कृष्ण की प्रशंसा करने के लिए किसी अपनी महेली गोपी के पास जाती है और उस गोपी के कपोल पर प्रतिबिम्बित कृष्ण का चम्बन देकर कह रही है —

“पञ्चन सलाहण निहिन पास परिसठिआ जिउण गोपी ।
सरिस गोवि आज चुम्बई कपोल ॥” (12/14)

इस गाथा से प्रकट होता है कि सबसे पहले राधा का नाम और उसके प्रति कृष्ण का आकर्षण प्राकृत साहित्य में उपलब्ध होता है। प बलदेव उपाध्याय का कथन है कि — “राधा विषयक काव्य की उपलब्धि तो दोनों साहित्यों में होती है, परंतु उसके उद्गम स्थल की विवेचना करने पर हम जिस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं, वह अनेक आलोचकों को कुछ विलक्षण सा प्रतीत होगा।”

राधा शब्द की व्युत्पत्ति तथा अर्थ

‘वाचस्पत्यम्’ (बृहत् सङ्घताभिधानम्) में ‘राधा’ शब्द की व्युत्पत्ति ‘राध’ धातु से की गई है जिसमें अर्थ लगने से यह सम्पन्न हुआ है। ‘राधा’ स्त्री राध अर्थ। विशाखा नक्षत्रे रिरसया बमनी देहत्वे नाविधूते गोलोकस्थे परमेश्वरा द्विस्वरूपे।¹ श्री राधा माधव चिन्तन में श्रीकृष्ण चरित्र में गोपी चरित्र का खास करके श्री राधा चरित्र का समावेश अत्यंत आधुनिक है। कुछ लोग तो यहाँ तक कहते हैं कि अधिक से अधिक तीन चार सौ वर्षों से ही इनका प्रचलन हुआ ऐसे लोगों के लिये यह निवेदन है कि श्री राधा नित्य है और राधा का नाम तथा उनकी उपासना सनातन है।²

प बलदेव उपाध्याय कहते हैं कि ‘मेरी दृष्टि में “राध्” तथा “राधा” दोनों की उत्पत्ति “राध ब्रह्” धातु से है, जिसमें “आ” उपसर्ग जोड़ने पर “आराधायनि” धानुपत बनता है। इन दोनों शब्दों का समान अर्थ है, आराधना, अर्चना, अर्चा। राधा वैदिक राध या राध का व्यक्तिकरण है। राधा प्रविण तथा पूणतम आराधना की प्रतीक है। “आराधना” की उदात्तता उसके प्रेमपूण होने में है राधा शब्द के साथ प्रेम के प्राचुर्य का भक्ति की विपुलता का भाव की महनीयता का कालान्तर में जुड़ा गया और धीरे धीरे ‘राधा’ विशाल प्रेम की प्रतिमा के रूप में

1 वाचस्पत्यम् पृष्ठ 4085

2 श्री राधा माधव चिन्तन पृष्ठ 633

साहित्य और धर्म में प्रतिष्ठित हो गयी।³ 1- यथा में राधा नाम नाना विभक्तियों में प्रयुक्त किया गया 2- आकारान्त राधा नाम का प्रयोग भी वेदा में उपलब्ध होता है, 3- परन्तु राधावृष्ण की शृङ्गारिक लीलाओं का वर्णन वेदों में अप्राप्य है यद्यपि नीरुण्ड आदि अर्वाचीन विद्वानों ने कुछ मंत्रों में ऐसे अर्थ विकासने की चप्टा अवस्था की है जो पूर्व परम्परानुरूप और अनुमोक्षित न होने में अप्राप्त है। 4- यथा नाम राधा वृष्ण की शृङ्गारिक लीलाओं के किसी समय में आधार अवश्य बन जाये।⁴

उपनिषदों में राधा

छन्दोग्य उपनिषद् में घोर आग्निस ऋषि के विष्णु के रूप में देवकी पुत्र वृष्ण का नाम अवश्य आया है।

“तद्धेतद् घोर अग्निस वृष्णाय देवकी पुत्रायो व
उवाच जपियास एव स उभूव।

उपनिषदों में राधा का नाम अलभ्य है। पद्मीप्रसाद योगाभ्यासी ने कल्याण में प्रकाशित अपना ग्रन्थ में ‘श्री राधा स व’ में वर्णित किया है कि ऋग्वेद के उपनिषद् भाग में एक राधोपनिषद् है जिसमें स कुछ भाग वहाँ उद्धृत किया है।

‘ॐ अथाध्वमथिन श्रुपय सनकाद्या नगवत्त हिरण्य तम भूपासितरश्चु
देव व परमोत्तव रस ना वाच है।

मुत्र का। ऋषुवेदो वृष्णो ह्य आदि परमोत्तव प्रवृत्ति।

ज्योतिष तत्त्व के रूप में राधावृष्ण की व्याख्या

ज्योतिष तत्त्व है। विष्णु सूत्र है। वेद में सूत्र के अर्थ में विष्णु शब्द का प्रयोग प्रसिद्ध है जैसे यथापि सूक्त में है (10/87) वह सूत्र रूपी विष्णु ही प्रातः भव्या है और साय इत निषादों में परिक्रमण करत है। उस वनन में ही वामना बतार तथा वामन द्वारा तीन पदा में लीला भवना का माया जाना पुराणादि में कल्पित हुआ। वृष्ण विष्णु के अवतार है। अथर्ववेद में राधोविशास यह स्पष्ट कथन है। निशाखा का नामान्तर एव विशाखा नाम राधा ही है। जयवंतद में पुराण विशास नाम का कारण यही है। इसा की 20,00 ई के बाद है। सायन चमक पहल का नाम राधा था। सिद्धिकाल क्रम में राधा और विशाखा एव हो गए हैं। राधा और वृष्ण के मिलन विषय में राधा महान्त्य आगे

3 भारतीय वाङ्मय में श्री राधा प वरुण उपाध्याय प 31

4 विद्यावति और सूर नाथ्य में राधा-भोमती वृष्ण नाम

कहते हैं कि कार्तिक में पूर्णिमा में सूर्य विशाखा की ओर विशाखा में रहता है। राधा से सूर्य का मिलन होता है, लेकिन अदस्य मिलन होता है। गो रश्मि है। "गोप" कृष्ण है, गोपी तारा है। कवि ने कृष्ण रवि को राम मध्यस्थ और गोपी तारा की मण्डलाकार में सजाया है। राधा वयभानु की कन्या है। वयभानु वय राशिप्य भानु, रश्मि है। निष्कप में बुद्ध ज्योतिष तत्व ही कवि कल्पना का आश्रय ग्रहण कर रूपक धर्मा हो गए है परवर्ती काल के लोगो ने पौराणिक युग के इस ज्योतिष तत्व को भूलाकर रूपक को ही सत्य मान लिया है और रूप का प्रिय से बहुपल्लवि राधा कृष्ण - नीला उपख्यान का उद्भव हुआ।⁻¹

हमें वेद में "राघसु शब्द का विपुल प्रयोग मिलता है। दो एक उदाहरण यहाँ दिये जाते हैं—

"सञ्चोदय चित्रमर्वाग् राघ इद्र वरेण्यम् असन्वित् ते विभु प्रभु।"

(1/9/5)

"यस्य ब्रह्मवधन सस्य सोमो यस्यद राघ स जनास इद्र।"

(2/12/14)

"सन्वाय आनिशीदन सविता स्तोभ्यो नुस्त्र दाता राघासि शुम्भति।"

(1/22/8)

इसी प्रकार यह शब्द अपने तृतीया त में अनेकत्र प्रयुक्त है। (1/48/14, 3/30/20 4/55/10, 10/23/1 आदि) चतुर्थ्य त 'राघसे' श्रौ बहुवच उपलब्ध होता है—1/17/7, 3/4/16, 4/20/2, 5/35/4, 10/17/13 आदि। षष्ठ्य त राघस का भी कम प्रयोग नहीं मिलता—1/15/5, 4/20/7, 6/44/5, 10/140/5 आदि "राघसाम्" षष्ठी बहुवचन का प्रयोग एक स्थान पर है (8/90/2) तय सप्तम्यन्त "राघसि" भी एक ही वार ऋग्वेद में प्रयुक्त है। (4/02/21)।

निघण्टु में 'राघ' शब्द घन नाम में पठित है (2/14)। यह शब्द 'राघ' साव ससिद्धो से असुन प्रत्यय जोड़ने से निष्पन्न होता है इसलिए एक द स्वामी न इस पद के अर्थ की धोतना की है—वह वस्तु, जो घन आदि पुरुषार्थों को सिद्ध करता है—सहनुवति, सहनुवन्ति घमादीन् पुरुषार्थानिति स्वद स्वामी सकारात् होने के अतिरिक्त यह अकारात् भी है और इस प्रकार राधा शब्द का प्रयोग दो मात्रों में किया गया उपलब्ध होता है—

(1) स्तोत्र राघाना पते गिर्वाहो वीर यस्त ते विभूरितस्तु सुलता।

यह मात्र ऋग्वेद (1/30/5) में, सामवेद में तथा अथर्ववेद (24/45/2) तीनों वेदों में समान रूप से उपलब्ध होता है।

(2) इदं ह्यमवाजसा मुत राधानां पत्ने पिशात्वस्य निवण ।

यह मन्त्र ऋग्वेद के एक स्थल (3/51/10) पर तथा सामवेद के दो स्थल (165/737) पर प्रयुक्त मिलता है। दोनों मन्त्रों में 'राधाना पत्' इसी रूप में प्रयुक्त है और दोनों जगह यह इन्द्र के विनायक रूप में याद आया है।

वस्तुतः राघ तथा राधा दोनों की उत्पत्ति राघ वद्वी घातु से है जिसमें 'आ उपसग जोड़ने पर आराध्यति घातु पद बनता है। दोनों का अर्थ है आराधना अचना, अर्चा। राधा' शब्द वैदिक 'राघ या राघ का व्यक्तिकरण है। उपर के मन्त्रों में इन्द्र की राधा नापते' कहा गया है अर्थात् इन्द्र राधा पति है। पश्चात् जब इन्द्र के उपर विष्णु का प्राधान्य हुआ तब विष्णु या कृष्ण ही राधापति बने। महाभारत काल में भागवत धर्म का पुन उदय हुआ उस पांचरात्र कहा गया है। इसकी विशेषता कृष्ण भक्ति है। गाति पव में कृष्ण स्वयं को नारायण कहते हैं। निखिल विश्व में व्याप्त होने के कारण स्वयं का वासुदेव कहते हैं, व अतिरिक्त एक पृथ्वी भी है, महाभारत में वे दयाम सुन्दर शातिदूत, कमयागी, कुशल सयोजक महान राजनीतिज्ञ महान विचारक और विराट रूप है। उनका जन्म और कर्म दिव्य है व पाण्डवों व परम हितपी महाभारत व सूत्रधार नेता हैं उहान गस्त्र नहीं उठाया पर उही की प्रेरणा से पाण्डवों को विजयश्री मिली। व अजुन के सारथी थे। दुष्टों के विनाश और धर्म स्थापन हेतु ब्रह्म ने ही कृष्ण रूप में अवतार लिया था। वे भगवान् हैं योगेश्वर हैं। महाभारत का काल ई सन् में 31 सौ 36 वर्ष पूर्व माना गया है। उस समय वे पूज्य बन गये थे, महाभारत में पूतना वध गोवर्धन धारण आदि के उल्लेख (गोकुल वाली कथा से सम्बन्ध) मिलते हैं। द्रोपदी चौर हरण के सदभ में उह गोप गापी जनप्रिय कहा गया है।¹ भीमा के ग्यारहवें अन्वय में कृष्ण के विराटरूप की भांकी दी गई है। महाभारत में लीला पुरुष कृष्ण की कलात्मक भूमिमाओ का प्रतिफलन नहीं है। दुष्टों के अत्याचार से प्रताडित युग में साधु पुरुषों की कल्पना कामना के लिए ब्रह्म की रूप कल्पना का जो विराट फलक तैयार किया। युग नायक कृष्ण का गोप पूर्व कृत्य और धार्मिक कीर्ति उस अकित करने वाले रखाचित्र हैं इनमें रग भरन का काय पुराणकारा ने पूरा किया।² परिणामस्वरूप कृष्ण की पुराण कल्पना माना कामल मधुर भावा में सुमगठित होकर प्रस्तुत हुई किन्तु पुराणों में स्वरूप ग्रहण करन के पूर्व उनका 'नोक' भावन में सचरित होना महत्त्व सम्भव है। अतः पुराणों में कृष्ण चरित का धार्मिक रूपक के रूप में जिनका धन शन प्रतिष्ठापन हुआ।

1 महाभारत रामपर्व 90/45

2 भागवद् भगवत गीता 4/8/8

3 न ह पत्निकर दा इण्य प्राप्स्यत पृ 7

स्वामी अखण्डानन्द सरस्वतीजी का कथन है कि 'भगवान् श्री कृष्ण और उनकी स्वरूप भूता आह्लादायिनी शक्ति श्री राधाजी सवधा अभिन्न और एक ही हैं। श्रीकृष्ण श्री राधा स्वरूप हैं और श्री राधा श्रीकृष्ण स्वरूप। 'कृ' राधा है और ण कृष्ण। यहाँ तक कि 'कृ' में भी 'क' कृष्ण है 'ऋ' राधा। वैसे ही 'राधा' के सम्बन्ध में भी है। किसी भी समय, किसी भी देश में, किसी भी निमित्त से और किसी भी रूप में श्री कृष्ण का पायव्य सम्भव नहीं है। एव ही अर्थ वे दो शब्द हैं, एक ही वस्तु के दो नाम हैं। जब उनमें देश, समय और वस्तुवृत्त भेद ही नहीं है तो यह बात कैसे कही जा सकती है, कि वे दोनों दो हैं? यही कारण है कि श्री कृष्ण की लीला श्री राधा की और श्री राधा की लीला श्रीकृष्ण की। ऐसी स्थिति में यह कहना कि अमुक ग्रन्थ में श्री कृष्ण की लीला है, श्री राधा की नहीं अथवा श्रीराधा की लीला है श्री कृष्ण की नहीं, सवधा असंगत है। श्रीमद्भागवत् के सम्बन्ध में भी ठीक यही बात है।

भगवान् श्री कृष्ण की अथवा भगवती श्री राधा की एवता होन पर भी अनकता है। भेद में अभेद और अभेद में भेद, यही लीला का स्वरूप है परन्तु स्मरण रखना चाहिए कि लीला प्राकृत नहीं है। देश, काल और वस्तुआ के भेद की समाप्ति तो मत के साथ ही हा जाती है। जब विशुद्ध ज्ञान के द्वारा अज्ञान का नाश होता है, तब उसके साथ ही अज्ञान स्वरूप अथवा अज्ञानकाय की प्रकृति का भी आत्यन्तिक लय हो जाता है। उस समय केवल विज्ञान स्वरूप ब्रह्म ही अवशेष रहता है। यद्यपि यह ब्रह्म विशुद्ध तत्त्व है, तथापि प्रकृति के लय के बाद की स्थिति होने के कारण "तुरीय" के नाम से कहा जाता है। जैसे-प्रकृति जाग्रत, स्वप्न सुषुप्ति रूप है वैसे ही ब्रह्म तुरीयस्वरूप है। ब्रह्म में अवस्थाएँ नहीं हैं और अवस्थाएँ ब्रह्म नहीं हैं। वे सदातीत और सवस्वरूप हैं। उनके नाम, धाम, रूप और लीला सब के सब विशुद्ध चेतन हैं। वहाँ किसी भी रूप में जड़ वस्तुओं का प्रवेश नहीं है। वहाँ भगवान् श्री राधाकृष्ण ही विभिन्न नाम, रूप और धाम होकर विभिन्न लीलाएँ बनते रहते हैं। हमारी भाषा में जो एक क्षण श्री राधा है, वही दूसरे क्षण श्री कृष्ण है। जो अब श्री कृष्ण है, वही दूसरे क्षण श्री राधा है। वह अपने स्वरूप में ही दो से बनकर विहार करते रहते हैं।

श्रीमद् भागवत में श्री राधा नाम का उल्लेख क्यों नहीं हुआ? यह प्रश्न उठाने समय राधा कृष्ण के स्वरूप पर विचार कर लेना चाहिए। भला, यह भी कभी सम्भव है कि श्रीमद् भागवत में श्रीकृष्ण की लीलाओं का तो बणन हो और श्रीराधाजी की लीलाओं का न हो? भगवान् श्री कृष्ण सच्चिदानन्द स्वरूप हैं। उनकी सत् शक्ति से ब्रह्म लीला, चित शक्ति से ज्ञान लीला और ज्ञानन्द शक्ति से विहार लीला सम्पन्न होती है। यदि किसी भी ग्रन्थ में भगवान् की विहार लीला का बणन नहीं हाता, तो समझना चाहिए कि उस ग्रन्थ में भगवान् के

आन-दास का वणन नहीं हुआ है। एष नहीं, अनेक अप्नायो म गोपियो वे साथ होने वाली मधुर लीला का अत्यंत सरसता के साथ उल्लेख किया है। वेणुगीत, युगलगीत, कुक्षेत्र का प्रसंग और सबसे बढ़कर रास लीला में तो शाठ प्रधान गोपियो और उनमें एक श्रेष्ठ गोपी का भी सुंदर वणन है।”

इस प्रकार स्पष्ट है कि श्रीमद् भागवत में भगवान् की अप्राकृत मधुर लीला का स्पष्ट उल्लेख और उसमें गोपिया तथा श्री राधाजी का भी वणन है। ‘जब श्रीमद् भागवत् में उनकी लीला का वणन है ही तब उसमें श्री राधा का नाम नहीं है— यह कहकर श्रीमद् भागवत् से श्री राधाजी की लीला उठाई तो नहीं जा सकती।’ और इस तथ्य का खण्डन हो जाता है कि श्रीमद् भागवत् की रचना के समय राधाकृष्ण की आराधना प्रचलित नहीं थी। निष्कल्प रूप में वह सकते हैं कि श्रीमद् भागवत् में श्री राधा तत्व का स्पष्ट वणन है और श्रीमद् भागवत् में ही कयो उपनिषदा में भी गार्धवी आदि विभिन्न नामों से उन्हीं के सुयोग का संकीर्तन है। रास लीला के प्रसंग में श्रीकृष्ण अथ गोपियो को छोड़कर जिस प्रधान गोपी को बेलि ब्रीडा के लिए एकांत में ले गये, अतंत उनका कुछ नाम तो होना ही चाहिये।

इस प्रकार यह सिद्ध हो जाता है कि श्रीमद् भागवत में श्री राधा का वणन है, तब यह प्रश्न रह जाता है कि फिर उनका नाम क्यों नहीं दिया गया? किंतु यह प्रश्न भी निमूल है क्योंकि श्रीमद् भागवत में अथ गोपियो का भी नामोल्लेख नहीं है। भागवतकार जानबूझ कर किसी भी गोपी या श्री राधाजी का नाम नहीं लिखना चाहते थे जब वस्तु का वणन है तब नाम होना और न होना दोनों ही समान हैं। इस प्रकार कोई भी वस्तु का खण्डन तो कर नहीं सकता रही बात नाम क सम्बन्ध में विवरण को, तो वह दूसरे पुराणों से निश्चित हो जाती है।

महात्माओं से ऐसा सुना जाता है कि श्री शुक्लदेवजी श्री राधा के महल में लीला गुरु थे और उनकी लीला के दर्शन में मुग्ध रहते थे। ऐसे श्रीजी के अनन्य लीलाप्रेमी ब्रह्मा थे और परीक्षित भी वैसे ही प्रेमी श्रोता थे यदि उनके कानों में उस समय श्री राधा जी का नाम पड़ जाता तो वे इतने भाव मुग्ध हो जाते की आगे की कथा बंद हो जाती और महिनी तक वे समापित्य रह जाते। परंतु समय सात दिन का ही था। यही साचकर श्री शुक्लदेव मुनि ने श्री राधा नाम का उच्चारण नहीं किया —

‘श्री राधानाम माश्रेण मूर्च्छा पाण्मासिका भवेत् ।

नोच्चास्ति मत स्पष्ट परीक्षित मुनि ॥’

‘पद्म पुराण’ में इस बात का स्पष्ट उल्लेख है कि श्री राधा ही श्री कृष्ण की आत्मा है और उनके साथ बिहार करने का कारण ही श्रीकृष्ण की आत्माराम कहते हैं —

“आत्मानु राधिया सत्तम, तयेव रमणादसतै ।
आत्माराम इति प्रोक्त भेदयभि गुरु वैदभि ॥”

श्री कृष्ण की आत्मा राधिका है और राधिका की आत्मा श्री कृष्ण है ।
एक भेद है । वस्तु रूप में तथा स्वरूप में और इस आत्मरूप में राधा को
भागवत में उपस्थित मानना चाहिए ।

दोनों में राधा

श्रीमद् इसका के बाद चौथी शताब्दी के पश्चात् ही कृष्ण चरित्र लीला सम्बन्धी
लेख एवं प्रस्तर प्रतिमाएँ मिलनी आरम्भ होती हैं ।

शिला प्राचीनतम सकेत मदसौर के मंदिर के द्वार पर बन स्तम्भ से मिलता है ।
प्राप्त है, उसे गोवधन लीला का दृश्य बहा जा सकता है । गोपियों और
शिला की मठबिया का दृश्य इस बात का द्योतक है कि समाज में राधाकृष्ण की
प्रतिष्ठा हो चुकी थी । बंगाल के पहाड़ पूरा की खुदाई में कृष्ण के साथ
जो कुरी गोपी की भी श्री चातुर्ज्या राधा बतते हैं । पाँचवीं शताब्दी तक राधा
माखन म व्यापक स्थान पा चुकी होगी । राधा माने ता, इसकी पूजा का फल
बाफी छे से जाना होगा, और यह असंगत नहीं जान पड़ता । महा बलिपुरम का
प्राप्त प्रस्तर खण्ड उसका प्रतीक है कि गोवधन लीलाएँ पर्याप्त प्रचलित थी ।

समाज-व्यवस्था विनायक वदय के अनुसार छठी सातवीं शताब्दी तक राधा का उदय
बहुत का था । प्रेम लक्षणा भक्ति के बाद ही राधा की भावना में पदार्पण किया,
उत्कीर्ण स मतव्य का कोई ठोस आधार नहीं है जयदेव और विद्यापति के युग
लक्षणा भक्तिका रूप स्थिर नहीं हुआ था उसमें राधा की भावना विद्य-

नहीं हुई । सत नामदेव और तुकाराम का मत है कि पुंडरीक ने ही विट्ठल
की नींव रखी । महाराष्ट्र में आज भी श्री कृष्ण के साथ उनकी विवा
तक प्रेम की रुचिमणी की अचना होती है । उत्तर भारत में राधा की । दक्षिण का
मान थी प्रदाय उत्तर की अपेक्षा कहीं अधिक समय एवं सौम्य भावना लिये हैं
सम्प्रदाय सना की वू नहीं । - " राधा विशुद्ध प्रेम की कल्पलता है । उनका
हित परम है कि वह अपने प्रिय के चरणों में अपने आप को योद्धावर कर देता
वर्णव स कृष्णमयी है । उनके भीतर तथा बाहर सब जगह कृष्ण ही कृष्ण
उसमें वा न है । उनकी सहज भावना इतनी प्रौढ़ है कि जहाँ जहाँ उनकी दृष्टि
प्रेम एसा वहाँ वहाँ कृष्ण ही स्फुरित होते हैं । श्री राधा ही प्रेम की अधिष्ठात्री
है । राधा व किशारी है । वह श्रीकृष्ण की सेवा में रत रहती है । श्रीकृष्ण
विराजमा

पड़ती है ।
पृ 415
श्रीमद्-एण्ड अन्तर रिनिद्रियग तित्स्स धोए हण्डिया, डॉ मन्नाकर ।

के मन में जब भावना जगती है तब ही राधा उसको पूरा करती है ।¹
 श्री राधा गोविन्द के सबविध आनन्द को प्राप्त करती है । श्री राधा अपने रूप
 गुण, सौन्दर्य, माधुर्य से तथा विलास वैदाम्यादि से श्रीकृष्ण को मोहित करती है ।
 श्री राधा गोविन्द की सबस्व है । वे श्रीकृष्ण की कलाओं में सर्वश्रेष्ठ है ।
 श्री कृष्ण की कामनाओं को पूरा करना ही इनकी आराधना है, पुराणों में इनका
 नाम "राधिका" कहा गया है—²

"कृष्ण वाङ्मापूति बरे अवरारधन ।
 अतएव राधिका नाम पुराणे व्याख्यान ॥ "

आनन्दधन श्री कृष्ण की भाँति ही राधिका भाव धन स्वरूपा है । उनकी
 दृष्टि इत्यादि सब कुछ धनीभूत महाभाव द्वारा गठित है ।

श्री राधाजी सबगति गरीयसी एव पूरा शक्ति है—कृष्ण राधा के वरावर्ती
 श्री राधा-कृष्ण गत जीवन्ता है श्री राधा मूल काता शक्ति है । श्री राधा-कृष्ण
 के अभिन है—श्री राधा कृष्ण अभेद रूप में एक ही स्वरूप एक ही आत्मा हैं ।
 उनके लीला रम आस्वादन के हेतु रूप धारण करते हैं । रमण के लिए दो की
 अपेक्षा रहती है । दोनों में भेद नहीं है । जमे कस्तूरी और उसकी गंध में तथा
 अग्नि और उसकी ज्वाला में किसी प्रकार का भेद नहीं है । उसी प्रकार राधा
 और कृष्ण का सम्बन्ध भी अविच्छिन्न है ।

राधा कृष्ण की युगल उपासना का तत्त्व श्री कृष्ण परम स्वतंत्र पुरुष है
 वे प्रेम के वशीभूत है । मन्त्र में प्रेम का जितना विकास होता है श्री कृष्ण उसके
 उतने ही धन में होते हैं । श्री राधा में प्रेम का सर्वाधिक विकास होने के कारण
 श्री कृष्ण उनके सर्वाधिक पास है ।

राधिकादि गोपियाँ जाति कुस, शील, स्वजन, परिजन सबको तिलाजलि दे
 श्री कृष्ण सेवा में रत रहती हैं । निष्काम प्रेम का प्रतिदान श्री कृष्ण भी नहीं दे
 सकते वे उनके चिर श्रेणी हैं ।⁴

- 1 कृष्ण के कसय इनाम रम - मधुपान,
 निरुत्तर पूरा करें इनाम सबकार ॥ श्रेष्ठ चरितामृत 2 2 141
- 2 गोविन्द मन्त्रिणी राधा गोविन्द मोहिनी
 गोविन्द सर्वस्व सबकारिता - किरोमपी ॥ श्रेष्ठ चरितामृत 1 4 61
- 3 श्रेष्ठ चरितामृत 1 4 75
- 4 मूर्ध्नि प्रेक्ष्य मन्त्रिय नापारे मन्त्रिय । अतएव श्रेणी इनाम दे भागवत ॥ ५ ५

भक्तवतारी कृष्ण

कृष्ण के अवतारी रूप विष्णु का नारायण तथा वासुदेव से तादात्म्य कृष्ण के व्यक्तित्व को देवत्व प्रदान करता है कृष्ण विष्णु के आठवें अवतार बनें। कृष्ण को लेकर पौराणिक आभ्यास रचे जाने लगे और उनके चरित्र की अनेक छवियाँ उभरी गयीं। उनके बालरूप और मनोहर रूप को गोपाल कृष्ण कहा जाता है। गोपाल कृष्ण के साथ प्रायः आभीर जाति का उल्लेख किया जाता है। 'गोवधन की कथा में स्पष्ट है - कृष्ण प्राचीन आभीर जाति के नेता थे, जिनकी जीविका गोपासन पर निर्भर थी। कृष्ण का विकास कई चरणों में हुआ है वासुदेव कृष्ण का विष्णु में ऐकाकार होकर वैष्णव धर्म के मूलाधार से जुड़ना कृष्ण के गोपाल रूप की कल्पना, राधा आगमन और अंत में उनके बहुरंगी व्यक्तित्व का भक्तिकाव्य में आकलन किया गया है। बकिमचंद्र इसे हरिवंश पुराण से पहले की रचना मानते हैं।¹ विंसेन के अनुसार इसका रचना काल छठी शताब्दी है। किंतु भारतीय विद्वान इसे ईस्वी सन् के पूर्व या उसके आसपास की कृति मानते हैं।² इसके पंचम अंश में कृष्ण का अलौकिक चरित्र वर्णित है।

कृष्ण विष्णु के अशावतार हैं। देवागनाएँ गोपिया के रूप में विष्णु के विहा-
राय अवतीर्ण हुई हैं। उसके 13 वें अध्याय में कृष्ण का रास वृणन परवर्ती पुराण
भागवत के ढग पर हुआ है। यह अंश ब्रह्मपुराण के 189 वें अध्याय से हूबहू
मिल जाता है। यहाँ गोपियों में कृष्ण की प्रियतमा कृत्त पुण्या मदातसा (श्लोक 33
गोपी का उल्लेख मिलता है।

13 वें अध्याय में रास वृणन है। वशी की ध्वनि से मात्रमुग्ध गोपियाँ रास
मण्डप की ओर खिंची चली आती हैं। किंतु वहाँ पहुँचने पर कृष्ण उन्हें नहीं
मिलते। वह किसी प्राणविका प्रिया गोपी को साथ ले कहीं निकल पड़ते हैं। पद
चिन्हों से वे गोपियाँ यह भलिभाति भोंप लेती हैं कि कृष्ण किसी रमणी के साथ है,
किंतु आग चलकर उस पुण्य शीला के भी त्याग देने का संकेत मिलता है।

यहाँ भगवान कृष्ण के चरित्र को वैष्णव सम्प्रदाय के दायरे से निकाल कर
एक व्यापक धर्म भूमि में प्रस्तुत किया गया है। अध्याय 33 में किया गया कृष्ण
शिव अभेद वृणन इसी सामंजस्य भावना का परिचायक है। श्रीमद्भागवत
कृष्ण लीला का सर्वाधिक सुव्यवस्थित बोध है। इसके अंतर्गत प्रथम चार कृष्ण
की बाल किशोर और यौवन लीलाओं का व्यापक विचार हुआ है। इस प्रकार
इसमें कृष्ण चरित्र के भावात्मक पक्षों का सांगोपांग निदर्शन प्राप्त होता है।
पूर्ववर्ती पुराणों के सक्षिप्त प्रसंगों का यहाँ यथेष्ट विस्तार हुआ है तथा अनेक नये

1 कृष्ण चरित्र पृ 103

2 धाचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी - सूर साहित्य पृष्ठ 6

प्रसंगों की उद्भावना भी हुई है। इस सुव्यवस्थित लीला वणन तथा रस स्निग्धा नीतिमत्ता के ही कारण यह वैष्णव भक्तों का कठहार बना रहता है। इसका तत्त्व विवेचन स्मणीय है और कवित्व विलक्षण है। स्वयं भागवतकार अपने इन गुणों से परिचित हैं। उसने प्रारम्भ में ही भागवत की विशेषताओं का आलोचनात्मक बरतते हुए कहा है कि यह निगम स्त्री कल्पतरु का सुपावरसंगलित फल है जिस शुकदेवजी ने अपने अमृत वचन से समुक्त कर मधुरातिमधुर बना डाला।¹

निगमकल्परोगलित फल शुकमुखाद मतद्रव समुतम् ।

पिवत भागवत रमभालय मुहुरसे रसिका भुवि भावुका ॥

महर्षि व्यास ने बार बार कहा है कि रसिक जो यदि रस का वास्तविक आनंद लेना चाहते हैं तो भागवत रस को चखें। हे भावुक जनो! तुम्हारे भाव की तृप्ति, हृदय को परमानंद की प्राप्ति इसी रस सरिता अवगाहन में करने से होगी।

याल लीला

याल लीला के चित्रण में स्कन्ध 10 अध्याय 6 से लेकर अध्याय 8 तक के वृत्त लिये जा सकते हैं। इसके अंतर्गत आने वाली प्रमुख लीलाओं का विवरण नीचे दिया है

- (1) पूतना वध स्कन्ध-10 अध्याय-6, श्लोक 13
- (2) दावट भग , , -7 9
- (3) तूणावर्तवध , , -7 29
- (4) नामकरण, मुक्तिदा भक्षण, मुख में विश्व रूपदर्शन - 8 वीं अध्याय 37 वंशत स्कन्ध-10 अध्याय-9
- (5) यमलाञ्जनोद्धार , , 10

गोपुर में कृष्ण की उक्त पाँच प्रकार की लीलाएँ ही हुई हैं। इन सभी लीलाओं में उनकी अद्भुत शक्ति का प्रदर्शन हुआ है किंतु यह उनकी माया का ही प्रभाव है कि भोले भावों प्रजवासी उनके प्रह्लादत्व की याद अधुण्य नहीं रस पाते। इसी कारण वे मनुष्य रूप में उनकी इन लीलाओं के प्रति विमूढ़ होकर धर्म विमूढ़ भी नहीं होते। श्रीमद्भागवत की अन्य पदवाचवर्ती लीलाएँ इसी वभावन लीला के अंतर्गत आती हैं। कृष्ण इस समय तक प्रायः पाँच वष के हो गये थे। उनकी यन्त्रावन लीलाएँ इस प्रकार हैं—

(6) बर्यागुर वध स्कन्ध 10 अध्याय 11, श्लोक 43

(7) बर्यागुर वध , , 53

पटरानियों के साथ यथेच्छ रति क्रीडा कर लेते हैं तो नागद का हाथ पकड़ कर सत्यभामा और अर्जुन के साथ सागर में तूट पड़ते हैं। और इस जल क्रीडा का भी हरिवंश "रास" नाम से अभिहित किया गया है।

"रासावसाने वय गृह्य हस्ते महामुनि नागदम् प्रकोप ।
पपात वृष्णो मगना समुद्रे गाताजित आजुनमेव साथ ॥"

(विष्णु पंच अध्याय 89)

इस पुराण में कृष्ण का वन व्रत दिया गया है और इनमें वे सार चित्रण एतनी स्पष्टता के साथ आय है, जितनी स्पष्टता महाभारत में भी नहीं थी। इसमें श्रीकृष्ण की वास्तविक प्रकृति ज मगन परिस्त्रितियों शशव से लेकर योवन बाल की बलियों आदि को एक मूत्र में गिरोकर समुद्रस्नान किया गया है। यहाँ कृष्ण सामान्यत एक वीर सामन्त हैं। यद्यपि श्री कृष्ण को विष्णु क. जन्तार कहा गया है जिसका तात्कालिक प्रयोजन एक प्रशासीटर नामक का अभन करना है किंतु उसकी लीलाओं में किसी प्रकार की अतीतिकता की व्यवना नहीं की गई है। उसके समस्त त्रियाकलाप ऐतिहिक हैं।

हरिवंश में खाला के मोतुल से वदावन विख्यापन का कारण भेड़ियों का प्रवास बतनाया गया है। बाल कृष्ण की आलोचिक गिनियों का प्रति यमि पुराण का र पूणत आश्वस्त होता तो अमुर निवदन कृष्ण का गुणल रोम का सार एव बहाने नहीं रचता। दूसरा प्रसंग गोवधन धारण का है। पद्म पुराण में कई स्थला पर राधा का नाम है। र्ग गोस्वामी आर कविराज कृष्णदास में अपने प्रथों में "लोक उद्घत करते हुए इसकी पुष्टि की है।

इस समय प्राप्त और प्रकाशित पद्म पुराण में राधाष्टमी का उल्लेख है, राधाष्टमी के व्रत का महात्म का भी वर्णन है। गोलाभ वर्णन प्रसंग में राधा का उल्लेख है पाताल गण्ड में गृह दृश्यरूप राधा का अनेक उल्लेख हैं अग्य श्रीधरभा में भी कृष्ण प्रियतमा आध्या प्राणि राधिका का वर्णन है।

पद्म पुराण में एक स्थल पर राधा गोपियों के बीच तथ्य रक्षण प्रभा है। "वसन्तना है। चिन्मयी है, शक्ति रूपा है।" पद्म पुराण की रचना तिथि

1 पद्म पुराण 'तामां तु मये वा श्री मन्वन्तरीरु प्रभा ।
एतन्नामा विन सतां सर्वती विरुद्रक मगना ॥
कथावनेकय माला राधा कापीपुत्रा । ३ ।
नामा विन सतां तु मया माला ॥ ३ ॥

निश्चित करना कठिन है। छठी व आठवीं शताब्दी के आसपास इसकी रचना हुई ऐसा कहा जाता है। इसीलिए विद्वानों की राय है कि राधा विषयक ये उल्लेख परिवर्ती काल में जोड़े गये हैं।

पद्म पुराण के पाताल खण्ड में कृष्ण चरित का विवेचन है। अध्याय 69 से 72 तक तो श्रीकृष्ण के महात्म का वणन है और अध्याय 73 से 83 तक वृन्दावन आदि का महात्मय और श्री कृष्ण की सीला का विवेचन है। गोविन्द के जन्मात्म पक्ष और उनकी उत्पत्ति के विषय में भी विस्तार से वणन किया गया है। इस पुराण में वृन्दावन, द्वारका, गोकुल, मथुरा आदि का बड़ा सुन्दर वणन हुआ है और द्वादश वनों का भी उल्लेख है। श्लोक 82 से 102 तक श्रीकृष्ण के सौंदर्य का वणन है।

मत्स्य पुराण में कहा गया है कि राधा वृन्दावन में है और कृष्णजी द्वारावती में।¹ किन्तु इस उल्लेख को डा. शशीभूषण दास गुप्त ने प्रामाणिक नहीं माना है।² इस प्रकार वायु पुराण³, बराह पुराण⁴, नारदीय पुराण⁵, आदि प्रभृति पुराणों में एक या आठे श्लोक में राधा का उल्लेख मिलता है। ब्रह्म वैवत पुराण में कृष्णलीला का बड़ा ही सुन्दर वणन मिलता है उसमें राधा कृष्ण का ब्याह भी बताया गया है। ब्रह्मा राधा का 'कन्यादान' भी करते हैं।⁶ ब्रह्म वैवत में राधा कृष्ण विषयक उपाख्यानो का विस्तार के साथ वणन है। उनमें राधा के उपाख्यानो का प्राचुर्य और राधा महात्म वणन भरे पड़े हैं। एक स्थल पर राधा का व्युत्पत्ति भी दी गई है।

“रागद्वोच्चारणात्मनो इत्यादि।”⁷

आधुनिक वैष्णव पुराणों में भागवत के बाद सबसे महत्वपूर्ण पुराण ब्रह्मवैवत है। राधावाद का यहाँ धरम प्राधान्य है। इस राधा के आश्रय से शृङ्गारी चरित्रवता अपने पूरे लनावत स्वरूप में यहाँ प्रगट हुई है। यह अपने प्राण रूप में आधुनिक कवि है फिर भी कुछ विद्वान् इसे 12 वीं शताब्दी जयदेव के गीत गोविन्द काव्य का प्रारंभ पुराण मानते हैं। उनका अनुसार—यह ब्रह्मवैवत पुराण उस समय (जयदेव का 12 वां शताब्दी) प्रचलित और अत्यन्त सम्मानित न होता तो गीत गोविन्द कभी न लिखा जाता और इस ब्रह्मवैवत पुराण में श्रीकृष्ण जन्म

1 शशिनी द्वारावती सु राधा वृन्दावती वन । शतनाथय म 13/38

2 डॉ. शशीभूषण दास गुप्त की राधा का वन विचार पृ 111

3 वायु पुराण अतिसाधय म 104/52

4 बराह पुराण बगवती प्रम 163/33/34

5 नारदीय पुराण बगवती प्रम 1/43/44

6 ब्रह्मवैवत पुराण ब्रह्म वैवत 48 40 (बगवती प्रम मं)

7 ब्रह्मवैवत श्रीकृष्णवचन पद्य अध्याय 19 (बगवती प्रम मं)

खण्ड का 15 वाँ अध्याय उस समय प्रचलित न हाता तो गीत गोविन्द का पहला श्लोक "महोर्मदुरमम्बरम्" इत्यादि कभी नहीं बनना।¹

डॉ. शशिभूषण नास गुप्त ने भी इसी सन्देह में अपना राधा तत्वानुसंधान में इस पुराण की उपस्था की है।² किंतु पद्य-व्युत्पत्त्याय न गौडीय शास्त्राधीन विषयक उनका सादर उल्लेख कर भी इस पुराण की उपस्था नहीं की है। उनके दादो में ब्रह्मवैवत पुराण राधा मायत्र की नीला स ओत प्रीत है।³ इन सारी बातों के बावजूद ब्रह्मवैवत पुराण राधा कृष्ण के युगन चरित्र का प्रतिपादक अत्यंत प्रभावशाली पुराण है। कृष्ण नीला और कृष्ण चरित्र के भाग्य तमक स्वरूप का जितना मागोपाग चित्रण हमें मिला है उतना श्रीमद्भागवत को छोड़कर किसी पुराण में नहीं हुआ। यह बात अंगुल है कि गौडीय शास्त्राधीन ने इसका उल्लेख नहीं किया। स्व. शास्त्राधीन का भक्ति समाप्त मिथुन द्वितीया 'माधन भक्ति सहरी' का प्रकरण का अंतगण एकादशी महामा का समाप्त में जो 80 मध्यक श्लोक उद्धृत है, वह ब्रह्मवैवत का है गीता और 'ब्रह्म पुराण' जैसे प्राचीन ग्रंथों का भी यहाँ एक ही द्वार उल्लेख मिला है। इनका 16 वीं शताब्दी के पहले प्रसिद्ध था यह निर्विवाद है।

ब्रह्मवैवत में कृष्ण

ब्रह्मवैवत में राधा मान की चरम परिणति का प्रभाव स्पष्ट रूप से भी पढ़ा है। कृष्ण यहाँ निरकिणोर नित्य विनामी, कामकृष्ण राधाेश्वर है। य विनेपनाएँ उनकी नीला महेश्वरी राधा के अंतर्गत, अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत रति, चेष्टा तथा उद्दामकेति की अतृप्त उक्तों में है।⁴ इन ब्रह्मवैवत का नायक कृष्ण की कति-वीं शताब्दी का अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत तथा कामरास्य की दृष्टि से भी राधा के अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत

वायु पुराण के द्वितीय खण्ड अध्याय 34 में अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत कथा लिखी है और फिर श्रीकृष्ण के जन्म का अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत 16 सहस्र पत्तियों और उनके पुत्रों का अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत नीलाश्री और राधा की कवि का अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत गुरु और कालनेमि के उद्योग की कथा है। अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत

1 बनिमच - कृष्ण चरित्र (1756)
 2 उनके अतिरिक्त वह ब्रह्मवैवत में अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत
 3 श्रीकृष्ण जन्म का अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत
 4 पद्य व्यापार का अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत
 5 यहाँ शास्त्राधीन अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत
 6 अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत अंतर्गत

श्रीकृष्ण द्वारा महादेव की आराधना और श्रीकृष्ण के पुत्रा की कथा है। गूढ पुराण में कृष्ण की लीलाओं का उल्लेख है जो अध्याय 144 में हुआ है। इसमें पूतना वध, यमसार्जुनोद्धार, गोवृद्ध न धारण बेगी चाणूर इत्यादि का वध, वाग्विय दमन और शटवासुर वध का उल्लेख है। कृष्ण का 'सादीपनि' गुरु से शिक्षा प्राप्त करने का भी उल्लेख है। कृष्ण की रुक्मिणी, सत्यभामा आदि आठ पत्नियों का तथा गोपियों का उल्लेख तो है। परन्तु राधा का नाम नहीं है। विष्णु पुराण के चौथे अंश के 1^८ वें अध्याय में शिशुपाल की भुक्ति का कारण बतलाने हुए श्रीकृष्ण जन्म का उल्लेख हुआ है। पाँचवें अंश में कृष्ण का चरित्र विशेष रूप से दिया हुआ है।

महाभारत से लेकर पौराणिक युग तक जितना भी कृष्ण का विवेचन हुआ है, वह सब समन्वित रूप में श्रीमद्भागवत में मिल जाता है। भागवतकार ने अवतारों का वर्णन करते हुए 'एते चागमला पुसा कृष्णस्तु भगवान् सायम्' कहा है। महाभारत में कृष्ण के जिस नारायण रूप का उल्लेख हुआ है, उसी भागवत कार ने इस प्रकार लिखा है कि नारायण के कृष्ण आर शुक्ल स्वरूप असुर मर्दि पृथ्वी का मार उतारने के लिए कृष्ण और बलराम के रूप में आविर्भूत हुए।

श्रीमद् भागवत कृष्ण भक्ति और कृष्ण लीला का आकर ग्रन्थ है। इस महान ग्रन्थ में कृष्ण की विशद प्रणय लीला अत्यन्त भव्य और मनोमय रूप में प्रकृत है। इसके रास पचाध्यायी में उनके उदात्त प्रेम का निरूपण है। परवर्ती कृष्ण भक्ति मूलक वर्णव ग्रंथों में इसी का परिवर्धित संक्षिप्त रूप मिलता है। इसमें कृष्ण के जीवन और उनकी लीलाओं का समग्र चित्र उरेहा गया है।

श्रीमद् भागवत में भगवान् श्रीकृष्ण की लीलाएँ तो हैं, किन्तु कुछ विद्वानों की बड़ा आश्चर्य है कि उसमें राधा का नामोल्लेख तक नहीं है। पद्मदेव उपाध्याय का कथन है कि इसमें राधा का नाम प्रतिपादित है परन्तु वह भी अस्पष्ट रूप से ही है। 'द्वितीय स्कंध के चतुर्थ अध्याय में श्री शुकदेवजी ने कथा आरम्भ करने से पहले जो दिव्य स्तुति की है, उसके एक पद्य में राधा का अस्पष्ट उल्लेख माना सकता है —

नमो नमोऽस्त्वयभाय सात्वता
विभूत काण्डाय मुहु कुयोगिनाम् ।
निरस्त साम्यातिगियन राधासा

स्वाधामीन ब्रह्मणि रस्यके नम ॥ भागवत 2/4/14

स्लाक का तात्पर्य है जो भक्तों के पालक हैं हठपूर्वक भक्तिहीन साधन करने वाले लोग जिनकी श्राया भी नहीं छू सकता, जिनके समान किसी का श्वाप नहीं है, फिर उससे अधिक तो ही हो करे सकता है ? ऐसे ऐश्वर्य से युक्त होकर जो निरन्तर आने ब्रह्मस्वरूप धाम में विहार करते हैं, उन भगवान् श्री शृ ग का मैं बारम्बार प्रमाण करता हूँ ।

इस पद्य में 'राधम' शब्द 'राधिन तथा ऐश्वर्य का वाचक है। राध धातु से "सवधातुभ्योऽसन्" इस औठागिदक सूत्र में अस् प्रत्यय का प्रयोग करने पर "राधस्" शब्द सिद्ध होता है और इसी की तृतीया विभक्ति है 'राधसा'। "राधा" शब्द भी इसी "राध" धातु में सिद्ध होता है। फलतः राधस तथा राधा एक ही अर्थ के वाचक शब्द हैं।

स्पष्ट है कि ये प्रत्यक्ष रूप से "राधा" का नामोल्लेख न मिलने पर भी अप्रत्यक्ष उल्लेख का निषेध नहीं किया जा सकता। फलतः श्रीमद्भागवत को "राधा" से नितांत अपरिचित कहने का साहस किसी भी विज्ञ आलोचक को नहीं होना चाहिये।¹ भागवत में रासनीला के प्रसंग में वृष्णन आता है कि कृष्ण रासमण्डल में से एक अपनी प्रियतमा गोपी को साथ लेकर अतृप्त हो जाते हैं। इस व्यापार से सब गोपियाँ व्याकुल हो उठती हैं, और कृष्ण का दूढ़ निकालने का प्रयत्न करती हैं, खोजते खाजते यमुना के उस विमल बातुकु रागि में उन्हें कृष्ण के पदचिह्न दिखलाई पड़ते हैं वे अकेले नहीं हैं, उसके पाम किसी ब्रज बाला का पद चिह्न दृष्टि गोचर होता है। उसके सीमाग्य की प्रशंसा करती हुई गोपियाँ कह उठती हैं —

अनधाराधितो नून भगवान हरिरीश्वर ।

यत्रो विहाय गोविन्द प्रीतो यामनयदर^२ 11 - भागवत 10/30/24

इस रमणी के द्वारा अवश्य ही भगवान् कृष्ण आराधित हुए हैं। क्योंकि गोविन्द हमको छोड़कर प्रसन्न होकर उसे एकांत में ले गए हैं। धर्या गोपी की प्रशंसा में उच्चारित इस पद्य में राधा का नाम भीने चादर से ढके हुए किसी गूँठे बूँदमूँद रत्न की तरह स्पष्ट झलकता है। - इस श्लोक की टीका में गोडीय वैष्णव गोस्वामियों ने स्पष्ट ही "राधा" का गूँठ सकेत खाज निकाला है। "अनया" "राधित" का पदच्छेद दो प्रकार से किया गया है - अनया+राधित तथा अनया+अराधित दोनों में समान अर्थ की ही अभिव्यक्ति होती है। श्री सनातन गोस्वामी ने अपनी बृहन्नोपिणी" व्याख्या में लिखा है - राधयति अराधयतिश्च श्री राधेति नामकरणञ्च^३ श्री जीव गोस्वामी ने भी यही बात दुहराई है अपनी वैष्णवतापिणी व्याख्या में। विश्वनाथ चक्रवर्ती तथा धनपति सूरि ने भी यहाँ "राधा" का नामकरण गुप्त भाव से स्वीकारा है। 'विष्णु द्विरसदीपिका'^४ १ इस श्लोक की व्याख्या में 'गोविन्द' नाम की महत्ता प्रदर्शित की है। बाराहसूत्र का वचन है कि भगवान् हरि वृंदावन में "गोविन्द" नाम से प्रख्यात होते हैं, अर्थात् वे वृंदावन के ईश्वर हैं। फलतः आराधना के द्वारा उद्य गोविन्द को अपने वश में करने वाली गोपी नि सन्देह 'वृंदावनेश्वरी' है।

इस प्रकार इस श्लोक ने द्वारा प्रधान गोपी का नाम ही संकेतित नहीं होता, प्रत्युत उसकी भूमि महता भी प्रदर्शित होती है —

“सच अनया मह यातया राधिन यगोक्त सन गोविन्द
श्री वृन्दावनश्वरी वाद् अन्या । तस्य च वृन्दावनश्वरत्वादिभिर्भाग
यन्नावनश्वरत्वादिनी भाव । वृन्दावन तु गोविन्द मितिवराहत् प्रोक्त ।

निम्बाक मन के अनुयायी टीकाकार शुकदेव ने अपन 'सिद्धान्त प्रदीप' में राधिन पद की एक विलक्षण व्याख्या की है। “राधिन का अर्थ है राधा से मयुक्त। अर्थात् कृष्ण के विहार में राधा ही हेतु भूत है। उसने त्रिना वृन्दावन में कृष्ण का विहार ही फीका और निष्प्राण है। राधा के कृष्ण का निकृञ्ज विहार नितान्त गापनीय होता है। वह अनुभवैकगम्य दिव्य वस्तु है।

श्री सनातन गोस्वामी की कल्पना है कि जब शुकदेवजी गोपिया के अद्भुत प्रेम की लीला प्रस्तुत कर रहे थे, तब उनकी विरहाग्नि की कणिका से उनका हृदय विकल हो उठा कि वे अपना दहानुसंघान भूल गये। ऐसी विकलता में यदि “राधा” का नाम उनके मुख से बाहर नहीं निकला, तो इसमें आश्चर्य की बात ही क्या है ?

गोपीना वितताद् भुतस्फुटतरप्रेमानलाचिच्छ्रिता
दग्धाना किल नामकीर्तनवृताद् तासां विनोपात् स्मृते ।
स्तोक्षणा ज्वलनच्छिष्याप्र कणिकास्पर्शन सद्योमहा-
वकल्य स भजत् क्वापि न मुने न मुखेनामानिकर्तुर्भ्रुम् ॥

—श्रीमद्भागवतद्वयमृत

रसिकों का कथन है कि राधा का नाम गुप्त रखना शुकदेवजी की चालुरी ही कि उन्होंने अथ लीलाओं का वर्णन तो नहीं के समान उन्मुक्त शली में किया परन्तु राम का वर्णन रूप जल के समान निगूढ शली में किया —

लीलाशुकस्य लीलेय लीला वसावर्णिता ।
कलोलिनी स्वप्नण रास रूपजगोवमम् ॥”

रामका आशय यह है कि जिस प्रकार लीला से कोई प्यासा बिना पान के ही जल पाकर अपनी प्यास बुझा सकता है उसी प्रकार भागवत में श्रीकृष्ण के सहज वास्तव्य आदि लीलाओं का आस्वादन प्रत्येक प्रकार का भक्त कर सकता है किन्तु राम की वर्णन-भंगी हुए व जल के समान है। इसी प्रकार जिस व्यक्ति के पास निष्ठा रूपी दारि तया प्रेम रूपी पान का अभाव है वह चाह कितना भी जिनासु क्यों न हो उस पचाप्यापी का एक अक्षर भी यथाथत नहीं समझ सकता। रास पचाप्यापी के प्राण हैं श्री रघिना। वह समझने के लिए शुकदेव मुनि जिनासु-जनों में विशुद्ध भक्ति का उद्रेक चाहते हैं, तभी तथ्य प्रकट हो सकता है।

अवश्य ही उसने अपने पूर्वजन्म में सर्वात्मा श्री विष्णु भगवान की उपासना की होगी ।

“अत्रोपतिद्य यं तन वाचित् पुष्टरसड्वृता ।

अन्यजन्मनि सर्वात्मा विष्णु रम्य चितस्तया ॥” (5/13/35)

इस श्लोक का “अभ्यचिन्तय” अनयाराधित क समान ही शब्द याजना में है ।” राधित या आराधिता के स्थान पर यहाँ अभ्यचित्त पद का प्रयोग किया गया है । इस प्रकार भागवत नया विष्णुपुराण के रास वतन में भाव तथा भगी की दृष्टि में बहुत कुछ अनुरूपता है । भागवत का पचाध्यायी रास वतन विस्तृत है । विष्णु पुराण का एकाध्यायी वणन संक्षिप्त है । वम अंतर इतना ही है ।

भागवत एक ऐतिहासिक ग्रंथ है । इसके आख्यानों का पृथक कर दिया जाय तो श्रीकृष्ण का मानवीय रूप ही हमारे सामने आता है । उन आख्यानों में भागवत धर्म और उसने तत्त्व का निरूपण बड़ा महत्वपूर्ण है । उसी तत्व का वैज्ञानिक समन्वय श्रीमद् भगवत गीता में हुआ है । श्रीभागवत में भक्ति की इच्छा के लिये उसी तत्व की व्याख्या की गई है ।

भागवत में अनेक अवतारों का वणन है । परन्तु अय अवतारों को ब्रह्म का अश रूप मानकर कृष्ण को ही पूण ब्रह्म माना है ।¹ पुराणों में अवतारों की विस्तृत ध्यायना की गई है और तीन प्रकार के अवतार माने गये हैं (1) पुरुषावतार, (2) गुणावतार (3) लीलावतार । भगवान के चार ब्यूह माने हैं श्री वासुदेव, संकषण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध । गुणावतारों में विष्णु ब्रह्मा और रुद्र माने हैं तथा लीलावतार 25 माने हैं । इसके अतिरिक्त 14 मन्वन्तरावतार होते हैं, जो स्वायम्भुव आदि 14 मन्वन्तरों में प्रकट होते हैं ।

श्री मद् भागवत में श्री कृष्ण का अवतार ही माना है । देवकी श्रीकृष्ण की स्तुति करती हुई कहती है

‘हे माध, जिसके भ्रम (पुरुषावतार) का अश प्रकृति है उसके अश (सत्त्वादि गुण) के भ्रम (परमाणु आदि) द्वारा हम विदेव की सृष्टि स्थिति और प्रलय हुआ करती है मैं आपकी शरण हूँ ।’² गीता में कई स्थलों पर इस प्रकार के वाक्यों को दुहराया गया है ।³ श्री मद् भागवत में कुन्ती द्वारा की गई कृष्ण की स्तुति में कृष्ण का स्वरूप एवम् भगवान के अवतार का प्रयोजन बताया गया है । अंत में कुन्ती कहती है— हे भगवन् ! कोई लोग कहते हैं कि आपन पुण्य श्लोक राजा

1 एते चाशिवना पुस कृष्णास्तु भगवान् स्वयम् । श्रीमद् भागवत 1/3/48

2 श्रीमद् भागवत 14/85/31 ।

3 यथा दिष्टस्याहमिदं कृष्णमेकाशितस्थितो जगत/गीता 20/42

यथा मन्त परतर नाम्बन् विज्जिबदस्ति वनञ्जय 7/7

पुष्पिष्ठर का यश बढ़ान के लिए ही यदुवग म ज म लिया । - "जा मोग बाधनी
 श्रेम तथा भक्ति भावना से भरी हृद अद्भूत सीमाओं का बरसाओ से मुगने है,
 श्रोताओ को मुगते हैं तथा स्वयं गाकर भीर स्मरण करके आनन्दित होते हैं व
 गीत ही इस ज म मरग स्त्री सांसारिक प्रबल प्रयाह को धान करने वान
 आपके श्रीचरण कमलो का शशन प्राप्त करन हैं । 1

"भागवत म कृष्ण के गभी रूप आ गय हैं । जैसे । अद्भूत कर्मा 2 अमुर
 महारक कृष्ण, 3 बालकृष्ण 4 गापीविहारी कृष्ण, 5 राजनीतिज्ञता
 कूटनीति विद्वारद श्री कृष्ण 6 योगे वर श्री कृष्ण 7 परब्रह्म स्वरूप श्रीकृष्ण
 मुख्य रूप स हम कृष्ण क तीन रूप लेत हैं, (1) महाभारत के कृष्ण, (2) गीता
 के कृष्ण तथा (3) भागवत क कृष्ण । भगवान के वीरत्व, विधायक स्वरूप व
 दशन महाभारत में परब्रह्म स्वरूप गीता म और रसिवेश्वर के भागवत में हीन
 है । वैसे ता "भागवत म कृष्ण के प्राय सभी स्त्री का विवेचन हुआ है परंतु
 प्राचाय रामकेशव स्वरूप का ही है । भगवान क अमुर महारक, राजनीतिज्ञता
 तथा कूटनीतिस्वरूप का वणन भागवत के दशम स्कंध क उत्तराद म हुआ है ।
 दशम स्कंध के पूर्वार्द्ध म निवृद्ध कृष्ण के वास्यवान की अतुरा के मध्वद की
 कथाए भगवान के बालरूप की कहानिया होने के कारण उनके अलौकिक चरित्र म
 आती है । कम वय तक की लीलाएँ बाछ लीलाएँ हैं, इनम विश्वरावस्था की भी
 शियाएँ आती हैं । उनके राजा पत्नी प्रतिष्ठा जरासंध के युद्ध के अनंतर द्वारका
 दुग निमाण वान से हुती है जोर यही म गीता की "परिभ्राषण छाधुनाम् बाधी
 लक्ति की चरितायता प्रारम्भ हुती है ।

श्री मद्भागवत म 'कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्' तथा 'जम कर्म च लिख्यम्'
 आदि की चरितायना पूजनया हुँ है ।

वदिक साहित्य में त्रित रूप म कृष्ण का उल्लेख मिलता है उसमें उह न
 ता हम अवतार की ही सत्ता दे सजने है आर न देवता की ही । महाभारत म भी
 कृष्ण का अवतार रूप स अधिका वणन नहीं हुआ है ।

श्री कृष्ण ही भागवत धम क इष्टदेव क रूप में हमारे सामन आय ह
 और भागवत धम का सबप्रथम वणन 'महाभारत' क नारायणीय आख्यान में
 हुआ है ।

'पातञ्जल महाभाष्य' में पातञ्जलि ने स्पष्ट लिखा है कि वाणिनि के सूत्र में उल्लिखित "वासुदेव" केवल दक्षिण वर्गीय राजा ही नहीं, उच्चकोटि के उपास्य भी है। "वासुदेव" के साथ "अर्जुन" शब्द इस बात की पुष्टि करता है कि वासुदेव कृष्ण का ही नाम है।¹

"महामारत" में कृष्ण के ऐतिहासिक व्यक्तित्व की सूचना मिलती है और विदित होता है कि प्रारम्भ में कृष्ण सात्वत जाति के कोई पूज्य पुरुष थे। "धन्जातक" में वर्णित देव गन्धर्वा और उपसागर के पराक्रमी, उद्भूत, क्रीडाप्रिय पुत्र वासुदेव कृष्ण (वासुदेव कृष्ण) की कथा कदाचित् इही ऐतिहासिक कृष्ण की कथा है जो सम्भवतः पर्याप्त साक्ष्य हो चली थी। इस कथा का श्रीमद्भागवत में वर्णित कृष्ण कथा से उद्भूत साम्य है। वासुदेव कृष्ण ने मुष्टिक चातुर और अय वैरियों का नाश करके द्वारका में अपना राज्य स्थापित किया था। "धन्जातक" में वासुदेव कृष्ण पुत्र शोक में दुःखी चित्रित किए गए हैं। "महा उद्योग" जातक में भी वासुदेव कृष्ण का उल्लेख है और कहा गया है कि उन्होंने कामासक्त होकर चांडाल बना जायवती की महिषी बनाया था।

कदाचित् "महाभारत और पुराणा" ने कृष्ण के जिन चरित का विकास किया वह ऐतिहासिक वासुदेव से भिन्न था। इसी कारण उन्हें बारम्बार यह बताने की आवश्यकता हुई हो कि यही कृष्ण वासुदेव है यही द्वितीय वासुदेव है। "महामारत और पुराणा" में कृष्ण द्वारा मिथ्या वासुदेव राज पुण्योत्तम और वीरपुर के राजा शृगाल को मारकर अपना एक मात्र वासुदेवत्व प्रमाणित करने का उल्लेख है। "महाभारत" में कृष्ण सम्बन्धी अनेक वृत्तान्त हैं। भारत युद्ध में कृष्ण का प्रमुख स्थान और उनके व्यक्तित्व में पराक्रम, ऐश्वर्य और शौर्य ही नहीं देवत्व का प्रचुर समन्वय पाया जाता है। सभा पर्व में भीष्म उन्हें समस्त बंद वेदांग के ज्ञाता राजनीति में निपुण, बलवान योद्धा कह कर उनकी प्रशंसा की है। उद्योग पर्व में कहा गया है कि अर्जुन वज्रपाणि इन्द्र की अपेक्षा कृष्ण का अधिक पराक्रमी समझकर उन्हें युद्ध में अपनी ओर करने में अपना सौभाग्य मानते हैं क्योंकि कृष्ण ने दस्युओं का मारा था, भाज राजाओं को नष्ट किया था, पाण्डव का सहार किया था, वाशी नगरी का उद्धार किया था, निपादों के राजा एकलव्य का वध किया था, उपसेन के पुत्र सुनाम को मारा था इत्यादि।

ग्रियसन, केनेडी, वेबर आदि पाश्चात्य विद्वानों ने अनुमान किया था कि गोपाल कृष्ण का वास्तविक चरित जिसे कृष्णभक्तों ने प्रेम भक्ति के आलम्बन रूप में अपनाया क्राइस्ट के बालचरित का अनुकरण है। परन्तु पूतना की वज्रिल तथा प्रसाद की लव फीस्ट मानने का विचार सबथा अमाय्य हो चुका है। सभावना यह है कि गोपाल कृष्ण मूलतः शूरसेन प्रदेश के सात्वत कृष्ण की पशुपालक क्षत्रियों के कुलदेव थे और उनके क्रीडा कौतुक की मनोरञ्जक दशाएँ मौखिक रूप में लोक प्रचलित थीं।

भट्टनारायण ने "विषी सहार" नाटक के नांभी स्तोत्र में राधा के अन्तर्गत राधा के केशिकुपित होने और कृष्ण के अनुनय करा का उल्लेख किया है। प्रसिद्ध है कि भट्टनारायण कायकुब्ज ब्राह्मण थे। उह बंगाल के राजा बालि शूर (राज्यारोहण 715 ई. स. 772 वि.) 7 अर्द्धशतक में प्रचारक किए बन्नोज में गुला भेजा था। गठनी शताब्दी ई. में कायकुब्ज के राजा योगेश्वर के सभा कवि वाग्भतिराज द्वारा लिखित प्राकृत महाकाव्य "गण्डवहो" में, सम्प्रीपति, विष्णुस्वम्प होने के साथ साथ योगेश्वर के वास्तव्य भाजन यालरूप और राधा तथा गोपियों के द्वारा नव्य दत्तयुक्त किशोर कृष्ण का पूज्य भाव से उन्प्रेत किया गया है।¹ यह पद्य दसवीं शताब्दी ईस्वी के कविद्रवचन समुच्चय में भी पाया जाता है।² 'ध्वयालोक' में उद्धृत एक अन्य स्तोत्र में मधुरिपु कृष्ण के द्वारावती चले जाने के बाद राधा के विरह का वर्णन किया गया है। निदचय ही यह दोना श्लोक नवीं शताब्दी ईस्वी के पहले के है? सट्टगि 'वर्णमिन' में सक्लित कृष्ण तीला सयधी दलोकी में दो श्लोक अभिनद नामक कवि के हैं जो अनुमानत नवीं शताब्दी ईस्वी के पहले के हैं। जो अनुमानत नवीं शताब्दी का था। 'कवीद्रवचन समुच्चय' नामक कविता संग्रह भी दसवीं शताब्दी ईस्वी का माना गया है। इसमें सक्लित कविताएँ निदचय ही उससे पहले की होगी। इनमें कई कविताएँ कृष्ण की गोपी और राधा सम्बन्धी लीला विषयक हैं।³

दसवीं शताब्दी ईस्वी (स. 1031 भाद्रपक्ष सुदि 14) के मासवाधोग वाग्भति मुज परमार के एक अभिलेख में श्रीकृष्ण की स्तुति में कहा गया है कि जिह लक्ष्मी के वदन दु सं सुख नहा मिलता जो धरिधि के जल से आद्रित नहीं हात जिहें अपनी नाभि के कमल से शान्ति नहीं मिलती, जो गेपनाग के सहस्र फणों के मधुर दवाग से आश्वस्त नहीं हात, उा राधा विरहातुर मुररिपु का कपित वपु तुम्हारी रक्षा करें।⁴

बारहवीं शताब्दी में हेमचन्द्र ने अपने प्राकृत व्याकरण में राधा कृष्ण सम्बन्धी दो पद्य उद्धृत किए हैं तथा 'द्वयाधयकाव्य' में गोपनीत का उल्लेख किया है। बारहवीं शताब्दी के पहले भी राधा कृष्ण सम्बन्धी सम्पूर्ण ग्रंथ रचे गए थे। इसका प्रमाण रामचन्द्र गुणचन्द्र (बारहवीं शताब्दी) के 'नाटय दण' में उल्लि-

1 गण्डवहो - मंगलाचरण देवनागस्तुतय 20 23

2 कवीन्द्रवचन समुच्चय 501

3 श्री राधा का क्रम विनास शशीभूषण दास गुप्त प. 119 पर उद्धृत।

4 श्री राधा का क्रम विनास शशीभूषण दास गुप्त प. 119 पर उद्धृत।

5 कवीन्द्रवचन समुच्चय 21 22 14 41 42 512।

6 इतिवन् एडिम्बरी 5 प. 51 तथा एपिपाकिडा इडिडा 23, 108 1

वित राधा विप्रलम्भ तथा शारदातनय (वारहवीं शताब्दी ई) के भाव प्रकाशन में उल्लिखित "रामाराधा" नामक नाटकों से मिलता है। इसी प्रकार कवि कणभूषण ने अलङ्कार कौस्तुभ" में "वदप मजरी" नामक नाटक का उल्लेख किया है। यह नाटक भी राधा कृष्ण विषयक बताया गया है।¹ वारहवीं शताब्दी में कृष्ण-काव्य अपेक्षाकृत अधिक परिमाण में लिखा गया। साथ ही उसकी प्रकृति भी जो "गाहा सतसई" में नितान्त श्रुति गारिक थी, उत्तरात्तर धार्मिक हात होते वारहवीं शताब्दी तक और अधिक भक्ति भाव समाविष्ट हो गई। लीला शुक का "कृष्ण-वर्णामृत" स्तोत्र उसी शताब्दी की रचना मानी जाती है। कहा जाता है कि चन्द्रमहाप्रभु उसे दक्षिण से अपने साथ लाए थे और अत्यंत प्रेमाभाव से उसे सुना करते थे। श्रीधरपुरी द्वारा रचित "श्री कृष्ण लीलामृत" का शृंगार रस विभिन्न रूप में माधुर्य भक्ति है इसी प्रकार महाकवि जयदेव का 'गीत गोविंद' राधा माधव के उद्दाम शृंगार का वर्णन करते हुए भी एक धार्मिक काव्य है। स्वयं कवि ने उस हरि स्मरण के द्वारा मन को सरस रत्न तथा विलास कलाओं के प्रति नीतूहल की तृप्ति करने के दुहरे उद्देश्य से रचा था। वस्तुतः कृष्णकाव्य की यह विलक्षणता न्यूनाधिक रूप में निरन्तर देखी जा सकती है, कि जहाँ एक ओर वह लोक रजन की रस पेशवा, ललित सामग्री जुटाता रहा। वहाँ दूसरी ओर पूजा और भक्ति की लोक भावना को भी आबद्ध करता आया है।

मसूक्त साहित्य में 'गीत गोविन्द' एक बड़ी काव्य कृति है। आधुनिक आलोचकों ने उस गीतिकाव्य, गीतिनाट्य संगीत रूपक यात्रा काव्य आदि विविध नामों से अभिहित किया है। उसमें राधा कृष्ण की निकुंजलीला का विस्तारपूर्वक वर्णन किया गया है। वसंत के मनोरम वातावरण में बिरहाकुल राधा गोपीवल्लभ केशव की मुख माधुरी के ध्यान में लीन हैं। वे अपनी सखी के द्वारा कृष्ण के पास सन्देश भेजती हैं। उधर श्री कृष्ण भी राधा से मिलने को आतुर हैं, और इसी के द्वारा उनका पास सन्देश भेजते हैं। कवि विप्रलम्भा राधा को क्रमशः वासक सज्जा, खण्डिता, कलहांतरिता, मानिनी और अभिसारिका के रूप में चित्रित करता हुआ अंत में उनके कृष्ण मिलन और केलिविलास का वर्णन करता है। 'गीत गोविंद' सगवद् काव्य है। उसके वारह सर्गों के नाम ही सामोद दामोदर, मुख मधुमदन साकांक्ष पुढरीकाक्ष विलक्ष्म लदमो, सुप्रीति पीताम्बर आदि कवि की भाव कल्पना और ललित पदावली का परिचय देते हैं।

'सदुक्खिन्वर्णामृत' का उल्लेख किया जा चुका है। यह मुक्तक मग्न श्रीधरराज ने वारहवीं और तरहवीं शताब्दियों की सखी में तैयार किया था, जिसमें बागह दीपकों में गोपालकृष्ण की लीला के साथ दर्शक हैं मग्न में स्वयं राजा लक्ष्मणसेन उनके पुत्र केशवसेन और जयदेव की तरह सदमणमेन के सभा कवि थे। वैष्णव

मतानुयायी सेन राजाओं की काव्य रसिकता के फलस्वरूप कृष्ण काव्य को जो प्रगति मिली वह अदाचित्त अभूतपूर्व थी। समसामयिक कवियों की कविताओं के अतिरिक्त 'एदुक्ति वर्णामृत' में अनेक श्लोक पूणवर्ती सग्रह 'कबीर द्रव्यन समुच्चय' के भी पाए जाते हैं, जिससे उनकी प्राचीनता प्रमाणित होती है।

बारहवीं शताब्दी ई के बाद कृष्णकाव्य प्रबन्धों के रूप में भी रचा गया प्रतीत होता है। बोध देव की "हरिलीला" तथा वेदांतदेशि की "यादवाम्बुदय" रचनाएँ तेहरवीं चौदहवीं शताब्दी ई की हैं।

पन्द्रहवीं शताब्दी ई की जिन रचनाओं की सूचना मिली है, वे हैं - ब्रज बिहारी (श्रीधर स्वामी) गोपलीता, (रामचन्द्र भट्ट) "हरिचरित काव्य" (बतुभुज) 'हरिविलास काव्य' (श्रजलोलिम्बराज), गोपाल चरित" (पद्मनाभ) 'मुरारिविजय नाटक" (कृष्ण भट्ट) और कस निघन महाकाव्य (श्री राम)। सोलहवीं शताब्दी में गोविन्द कृष्णव भवत के विद्वान रूपगोस्वामी ने नाटक चंद्रिका में केशवचरित और 'हरिविलास' के तथा उज्ज्वल नीलमणी में 'गोविन्दविलास' के नामोत्प्रेषण सहित उदाहरण दिए हैं। सम्भवत ये रचनाएँ उनसे पहले की कम से कम पन्द्रहवीं शताब्दी ई की होंगी। रूपगोस्वामी ने ही अपनी "पद्यावली" में अनेक पूर्ववर्ती संस्कृत कवियों की कृष्णलीला सम्बन्ध कविताओं को संकलित किया था।

इस प्रकार आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं में कृष्ण भक्ति साहित्य की रचना होने से पहले प्राकृत और संस्कृत साहित्य की एक लम्बी परम्परा थी। इस साहित्य का लोकगीतों और लोक कथाओं से घनिष्ठ सम्बन्ध था तथा वह अधिकतर गीतों और मुक्तक के रूप में था जो रचनाएँ प्रबन्ध काव्य और नाट्य के रूप में हुईं उनमें भी कदाचित्त गीतों भावना प्रधान रही होंगी। सम्भवत इसी कारण संस्कृत साहित्य में उन्हें अधिक गौरव का स्थान नहीं मिल सका। परन्तु आगे चलकर परिस्थितियाँ बदल गईं जिनके फलस्वरूप काव्य की प्रेरणा भावना रूप और भाषा में आमूल परिवर्तन हो गया। इसी परिवर्तन क्रम में हिन्दी कृष्ण काव्य को जन्म मिला जिसकी प्रकृति मूलतः धार्मिक है।

बारहवीं शताब्दी के लगभग दो शताब्दियों की साहित्यिक गतिविधि की जानकारी कम से कम जहाँ तक हिन्दी प्रदेश का सम्बन्ध है अपेक्षाकृत बहुत कम है। इस बीच देश की राजनीतिक और सांस्कृतिक परिस्थितियों में जो अभूतपूर्व परिवर्तन घटित हुए उनके कारण नई समस्याएँ एक महान् चुनौती के रूप में आईं। उस चुनौती का सामना करने के लिए समाज की जीवनी गति जिन विविध रूपों में प्रकट हुई, उनमें सबसे प्रमुख भक्ति धर्म का वह प्रबल आन्दोलन था

जिसने सम्पूर्ण उत्तर भारत के जन-जीवन को नई आस्था और नई स्फूर्ति से अनु-प्रमाणित कर दिया।

कृष्ण भक्ति के विविध सम्प्रदायों का इस आन्दोलन को देशव्यापी बनाने में कलाचित सबसे अधिक हाथ है। अतः हिंदी कृष्ण काव्य के पयवेक्षण से पहले उसके प्रेरणा स्रोत कृष्ण भक्ति का सामान्य परिचय प्राप्त कर लेना आवश्यक है।

भारतीय धर्म साधना में दस अवतार प्रसिद्ध हैं। मत्स्य, कच्छप, वराह, नसिह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि। अवतारों के रूप में सृष्टि प्रक्रिया का वैज्ञानिक इतिहास प्रस्तुत किया गया है। पहले जलचर, फिर उभयवासी फिर थलचर में पशु, फिर अत्र पशु, अर्ध मानव फिर अपूर्णमानव और अन्त में पूर्ण मानव। यही सृष्टि रचना का विकास क्रम है। इन अवतारों में भी अर्ध असावतार हैं, किंतु कृष्ण पूर्णावतार—

“अयं चांगला प्रोक्ता कृष्णस्तु भगवान् स्वयम्।”

भारतीय वाङ्मय में श्रीकृष्ण के स्वरूप विकास के पांच सोपान मिलते हैं— वैदिक युग के कृष्ण, उपनिषदों के कृष्ण और श्रीमद् भागवत के कृष्ण, लोक जीवन के कृष्ण महाभारत के कृष्ण और श्रीमद् भागवत के कृष्ण ऋग्वेद के अष्टम तथा दशम मण्डल में ऋषि कृष्ण का उल्लेख मिलता है। वैदिकी ब्राह्मण में अगिरस ऋषि के एक शिष्य का नाम कृष्ण का उल्लेख है। इससे यह संकेत मिलता है कि वैदिक वाङ्मय में भी कृष्ण का अस्तित्व विद्यमान था।

आगे चलकर महाभारत, भागवत आदि के द्वारा श्रीकृष्ण के जिस स्वरूप का विकास हुआ उसका सम्बन्ध वैदिक साहित्य से है अथवा नहीं इस पर विद्वानों में मतभेद है। डॉ. भडारकर और लोकमान्य तिलक आदि ने अगिरस कृष्ण और महाभारत कालीन कृष्ण को पृथक् पृथक् माना है योरोप के कुछ विद्वानों ने तो गोपालकृष्ण का सम्बन्ध आभीर जाति से जोड़ने का प्रयत्न किया है। प्रसिद्ध वेबर आदि विद्वानों ने कृष्ण की बाल लीलाओं पर क्राइस्ट के बाल रूप का प्रभाव बताया है। किंतु इस प्रकार की कल्पनाएँ निराधार हैं। वस्तुतः श्रीकृष्ण एक ही थे और क्राइस्ट के जन्म के कई शताब्दियों पूर्व ही उनके चरित्र का विकास हो चुका था। पौराणिक कृष्ण और महाभारत के कृष्ण भी दो भिन्न व्यक्ति नहीं हैं? कृष्ण के चरित्र के दो पक्ष हैं— एक ऐश्वर्य, रूप दूसरा माधुर्य। महाभारत में कृष्ण के ऐश्वर्यरूप का प्रतिपादन है। वह ज्ञान, शक्ति, बल ऐश्वर्य, वीर्य और तज इन छह गुणों से सम्पन्न हैं। जबकि पुराणों में उनका माधुर्य रूप की स्तुति है। लेकिन महाभारत में भी श्रीकृष्ण के गोपाल रूप के संकेत मिलते हैं। सभा पूर्व में राजसूय की समाप्ति पर अग्रपूजा के अवसर पर शिशुपाल ने श्रीकृष्ण की निन्दा की है। उन निन्दात्मक वाक्यों में कृष्ण की ब्रज और मथुरा लीला के उल्लेख हैं। उस अंश से यह स्पष्ट ध्वनित होता है कि महाभारत के कृष्ण वही हैं जिन्होंने

वाल्मीकीय काल में पूतना, बेगी आदि रागसा का वध किया था, गावधन पवत उठाया और कस का वध भी उही के हाथ हुआ था। यमुना कण की लीलाया का सम्बंध तीन स्थानों से है - ब्रजलीला, मथुरा लीला और द्वारिका लीला। इस त्रिविध लीला में भाग्यन तथा अथ पुराणों में वृंशयन लीला और मथुरा लीला की घटनाओं का वर्णन है। गौराजिप साहित्य में अनिर्दिष्ट मन्तुत भाषा में काव्य और नाटकों में माध्यम से कण चरित्र पर विस्तार से किया गया है। इस दृष्टि से भास का नाम नवप्रथम आता है। यह कालिदास के पूर्ववर्ती नाटककार हैं। भास के बाद भट्टनारायण के "वैष्णोसंहार" में महाभास न अष्टादश दिन के युद्ध का चित्रण है। इस ग्रंथ में श्रीकृष्ण को अनन्त आचर्य और परब्रह्म के रूप में दिखाया गया है। भट्टनारायण के कृष्ण समय पूर्व माधन विशुपाल वध नामक काव्य की सातवीं शताब्दी में रचना की थी। इस काव्य में श्रीकृष्ण को ब्रह्मा का अवतार बताया गया है और उनसे राजनीतिज्ञ और वीर रूप का परिचय दिया गया है इस काव्य में सर्वप्रथम उद्वेग को कण के अभिनय तथा और मन्त्री न रूप में उपस्थित किया गया है।

परवर्ती कवियों ने कृष्ण की बाल लीला और यौवन लीला का मुख्य रूप में काव्य का विषय बनाया। गांधी कण विशेष रूप से राधा कण की प्रेममयी लीलाओं को सर्वोपरि स्थान दिया गया। पुराणों तथा ज्योतिष साहित्य के अतिरिक्त लौकिक भाषाओं में श्रीराधा कण के प्रणय की चर्चा पहली शताब्दी से ही मिलने लगती है। इस दृष्टि से हाल की गाथा सप्तशती का सर्वप्रथम उल्लेख आता है। हाल का वास्तविक नाम गालिवाहन था और ये इसा की प्रथम शताब्दी में प्रतिष्ठानपुर के राजा थे। इन्होंने गाथा सप्तशती में प्राकृत भाषा के कवियों की श्रु गारपरव रचनाओं का संप्रह कराया था। इनमें एक गाथा में कहा गया है कि हे कृष्ण। तुम मुख के पवन के द्वारा राधा न मुह में लगे गोरज को हटा रहे हो। अपने इस काय से तुम अथ गोपियों के गौरव का हरण कर रहे हो।

मुह मारुण त गौरव राहियाएँ अकण तो ।
एताण बलवीण भणगाण वि गोरज हरमि ॥ 1-29

हाल के बाद पाँचवीं शताब्दी में लिखित पञ्चतन्त्र में राधा का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। भट्टनारायण ने (छठी शताब्दी) वैष्णोसंहार में नादीरलोक में केलिकुविता राधा और उसे अनुनय करते हुए कण का उल्लेख किया है। 9वीं शताब्दी में आनन्दवदन न 'ध्वजा लाक' में राधा की चर्चा की है इस प्रकार सातवीं शताब्दी के त्रिविध भट्ट रचिन "नल चपू काय" में और बल्लभ देव की रचनाओं में राधा कण के मनोविनाश और उत्तर प्रत्युत्तर के रोचक चित्र मिलते हैं। जयदेव के गीत गोविन्द और लीलागुरु किल्ल मगल की कण कणा नामक रचनाओं के द्वारा राजा और कण की प्रेमलीला का स्पष्ट विस्तार

मिला। 12वीं, 13वीं, शताब्दी में अनेकानेक सूक्ति मुक्तककार हुए जिन्होंने राधा कृष्ण की रूप माधुरी के विविध चित्र उरेहे हैं। इन सूक्तिकारों में अभिनन्द उपरस तिघर, उद्भट, धनमाली, गद्दीघर, शतानन्द, मूमकर बेशवदेव सेन, सधमण सेन, योगेश्वर आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इनकी स्फुट रचनाओं में वृंदावन लीला और युगल मूर्ति के दिव्य प्रेम के अनुपम चित्र मिलते हैं।

प्राकृत अपभ्रंश में मुख्य रूप से जन कवियों की रचनाएँ मिलती हैं। कृष्ण की दिव्य लीलाका न उट भी आकृष्ट किया और इन भाषाओं में भी कई ग्रंथों की सृष्टि हुई। इस दृष्टि से प्राकृत भाषा में लिखित 'राम पाणिगद का कसवधो' "नामक चार सर्गों में लिखित काव्य महत्वपूर्ण है। इसके कवि केरल के नम्बियार सम्प्रदाय से सम्बद्ध थे। यह 18 वीं शताब्दी में कई राजाओं के आश्रित रहे थे। कसवधो की कथा वस्तु का मुख्य केन्द्र कसवध का वध है। वैसे इसके प्रारम्भिक सर्गों में कृष्ण के बाल जीवन की भी भाँकी मिलती है। इसी प्रकार कृष्ण लीला मुख निरित्त सिरिचम् कथ्यवम् (श्री चिह्न काव्यम्) का भी पता चलता है। इसमें 8 सर्ग हैं। कृष्ण लीला सुख भी केरल के निवासी थे। उनका समय तेरहवीं शताब्दी बताया गया है। इसके पश्चात् केरल के ही एष अय कवि श्रीकठ रचित "सौरिचरित्तम" नाम एक अन्य प्राकृत भाषा काव्य का उल्लेख मिलता है। उसमें भी मुख्य रूप से कसवध की कथा लिपिबद्ध है।

जैन धर्मानुयायियों ने अतिरिक्त बौद्धों ने भी कृष्ण चरित्र पर काव्य रचना की है। उनके जानका म कन्होपायन (कृष्ण द्वैपायन) का उल्लेख मिलता है। बौद्ध और जैन दोनों परम्पराओं में कृष्ण के जीवन की अपनी अपनी मान्यतानुसार परिवर्तित भी किया गया है। तेरहवीं शताब्दी में देवेन्द्रसूरि नामक जैन लेखक द्वारा लिखित कन्हचरिया (कृष्ण चरित) नामक ग्रंथ मिलता है। इसमें एक हजार एक सौ तिरसठ गाथाएँ हैं जिनमें कृष्ण का लगभग पूरा जीवन चरित उचित है। अष्टमागधी प्राकृत के नियमशास्त्र के कई अंगों में कृष्ण विषयक जानकारी मिलती है।

अपभ्रंश भाषा में राम और कृष्ण को लेकर जैन कवियों द्वारा कई काव्य लिखे गये, किंतु जन मान्यता के अनुसार कृष्ण न तो कोई दिव्य पुरुष थे और न ईश्वर वह असाधारण शक्ति सम्पन्न वीर पुरुष थे। जन धर्म में तिरसठ महापुरुषों के चरित्रों का उल्लेख है। उनमें कृष्ण का भी नाम है। उनका चरित्र साइबेन तीर्थकर अरिष्टोमि के साथ जुड़ा हुआ है। अरिष्टोमि और कृष्ण का चचेरा भाई बताया गया है और कृष्ण को देवकी को सातवाँ पुत्र माना गया है जो भाद्रपद शुक्ल द्वादशी को पैदा हुए थे। उन्हें जैन धर्म का अनुयायी भी बताया गया है।

अपभ्रंश में कृष्ण काव्य लेखकों में स्वयंभू, पुष्पदन्त, हरिभद्र और घवल प्रमुख थे, किन्तु इनके पूर्ववर्ती कवियों में चतुर्मुख और गोविन्द नामक कवियों का भी पता चला है। चतुर्भुज जनोत्तर कवि थे और उन्होंने महाभारत के आधार पर अपभ्रंश में एक महाकाव्य की रचना की थी। इसका उल्लेख बडोदा के एक जनरल में मिलता है। उसी प्रकार गोविन्द कवि के 6 छंद मिले हैं जिनमें कृष्ण की बाल और यौवन लीलाओं का गान है।

स्वयंभू नवीं शताब्दी के कवि थे। अपभ्रंश भाषा में इनके दो महाकाव्य मिलते हैं। उनके कृष्णकाव्य का नाम है—हरिवंश पुराण अथवा अरिष्टनेमि चरित्र। यह चार काण्डों में विभक्त विशालकाय ग्रंथ है। इसकी कथा कुछ ब्राह्मण परम्परा के अनुरूप है।

पुष्पदन्त ने दसवीं शताब्दी में 'महापुराण' की रचना की थी। इसमें कृष्ण की बाल लीला को प्रमुखता दी गयी है। पुष्पदन्त के बाद अपभ्रंश परम्परा में हरिभद्र और घवल नामक कवियों का नाम आता है। हरिभद्र ने बारहवीं शताब्दी में लगभग तीन हजार छंदों में नेमिनाहचिरउ नामक महाकाव्य की रचना की थी। इसमें भी कृष्ण के वीर रस की भाँवी मिलती है। कवि घवल की कृति का नाम है—हरिवंश पुराण यह भी लगभग उसी समय की रचना है। इसकी तीन सधियों में कृष्ण के जन्म से लेकर कसब तक की कथा दी गयी है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने ठीक ही लिखा है "चौदहवीं शताब्दी तक आते आते जब कि भागवत सम्प्रदाय अपने नये रूप में विकसित हो रहा था राधा कृष्ण इतिहास के व्यक्ति नहीं थे। वे सम्पूर्ण भाव जगत के प्राणी हो गये थे।"

आधुनिक भारतीय भाषाओं विशेष रूप से हिंदी में लिखित कृष्ण काव्य उपयुक्त परम्परा का रिश्ता है। इनके अतिरिक्त उसे नया स्वरूप प्रदान करने में दक्षिण के आचार्यों का भी महत्वपूर्ण योगदान है। दक्षिण में भक्ति के त्रिनचार सम्प्रदायों का उदय हुआ उनमें सनकादि सम्प्रदाय और रुद्र सम्प्रदाय में श्रीकृष्ण की उपासना का प्राधान्य था। इनके अतिरिक्त माधव सम्प्रदाय से सम्बद्ध गौड़ीय शैल्य सम्प्रदाय में भी श्रीकृष्ण को परमत्व माना गया—कृष्णात् परं परमत्त्वं महं न जाने"। इन आचार्यों के प्रयत्न और प्रचार से कृष्ण भक्ति सम्बन्धित कई सम्प्रदायों का गठन हुआ और उपनिषद् गीता, ब्रह्मसूत्र भागवत आदि के आधार पर दार्शनिक सिद्धान्तों का प्रणयन हुआ तथा कृष्ण भक्ति का प्रचार प्रसार पूरे देश में हो गया।

द्वय मण्डल में कृष्ण भक्ति के स्वरूप विकास में निम्बाकविाय और विष्णु स्वामी का विशेष योग है। विष्णु स्वामी की ही परम्परा का यत्न आचार्य हुए। ये सर्वत्र ब्राह्मण थे, किन्तु द्वय में जाकर बस गए थे। यही पर उन्होंने सन् 1556 के आग ताग सम्बासा के गठ पुरनमन द्वारा प्रथम धनराजि से श्रीनाथजी

के मंदिर का निर्माण कराया तथा "शुद्धार्द्धत दशन" एवं 'पुष्टिभाग' पर आधारित कृष्ण भक्ति का प्रचार किया। श्रीवल्लभ अत्यन्त मेधावी और प्रखर प्रतिभा सम्पन्न विद्वान् थे। उन्होंने चौरासी प्रथो की रचना की जिनमें तत्त्वदीप निबन्ध अनुभाष्य और भागवत की सुबोधिनी टीका प्रमुख हैं। उनके दार्शनिक सिद्धांत और भक्ति सम्बन्धी भाष्यताएँ तत्त्वदीप निबन्ध और अनुभाष्य में लिपिबद्ध हैं।

वल्लभाचार्य द्वारा प्रवर्तित पुष्टिमार्गीय भक्ति के प्रचार-प्रसार का श्रेय अष्टछाप के कवियों को है। इनके अंतर्गत आठ भक्त कवि आते हैं। उनके नाम हैं— कुमनदास, मूरदास, परमानन्ददास, कृष्णदास, गोविन्दस्वामी, छीतस्वामी, नन्ददास और चतुर्भुजदास। इनमें से प्रथम चार वल्लभाचार्य के शिष्य थे और दोष चार उनके पुत्र विट्ठलनाथ के शिष्य थे। 'छाप' का अर्थ है— आगीवादि।

माधुय भाव का स्वरूप

माधुय भाव के स्वरूप और विस्तार के सम्बन्ध में विभिन्न सम्प्रदायों में कुछ अंतर पाए जाते हैं। निंबाक सम्प्रदाय में यद्यपि कृष्ण के लक्ष्य रूप की अपेक्षा उनके माधुय रूप का ही अधिक महत्त्व है और उसका उद्घाटन के लिए वदावन की नित्य लीला में राधा तथा गोपिया के काता भाव का विशद चित्रण दिया गया है, परन्तु निंबाक सम्प्रदाय का राधा या गोपीभाव स्वकीया प्रेम तक ही सीमित है तथा उसमें मयाग को ही महत्त्व दिया गया है।

राधावल्लभी मत की एक और विशेषता यह है कि उसमें राधा प्रेम का आलम्बन है और कृष्ण उसके आश्रय। द नित्य विहार की परिस्वर, सहचरीगण भी बिना किसी ईर्ष्या अथवा स्पष्टा के 'तत्सुखीभाव' में उनकी रासत्रीडा में सहायता देने के लिए परिचया में रत रहती हैं। इन सहचरियों में आठ विशिष्ट हैं, जिन्हें अष्टसखी कहते हैं। भक्त इन्हीं सहचारियों के सीभाग्य की कामना करता हुआ, उन्हीं के समान आचरण करने की चेष्टा करता है। चैतन्य सम्प्रदाय में भी अष्ट सखियों की गणना की गई है तथा वल्लभ सम्प्रदाय के अष्ट सखाओं के बारे में कहा गया है कि उन्हें निकुंज लीला भी सिद्ध थी। सखी भाव से अष्ट सखाओं के नाम भी गोस्वामी हरिराय ने गिनाए हैं। चैतन्य सम्प्रदाय में सखियों के अनिरिक्त परिचारिका (मजरियों) का भी उल्लेख है, तथा प्रत्येक सखी को सुन्दररी बहकर उसके अलग अलग युद्ध गिनाए गए हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होना है कि निकुंज लीला की सखीभाव की भक्ति केवल राधावल्लभी मत की ऐसी विशेषता नहीं थी, जो यथा कृष्ण भक्ति सम्प्रदायों में न पाई जाती हो। अतः केवल विवरण और अवधान का है। कृष्ण के प्रति सखा भाव और वास्तव्य भाव की भक्ति अवश्य वल्लभ सम्प्रदाय की निजी विशेषता कही जा सकती है। प्रेमानुभूति की अनुरज्वता, विविधता तथा नित्य नवीनता के लिए भी परकीया भाव में ही स्वाभाविक परिस्थितियाँ प्राप्त हो सकती हैं। वस्तुतः माधुय भाव का

इसी के द्वारा इतना विस्तार हो सका है। वल्लभ सम्प्रदाय के कवियों ने भी इसी कारण माधुय भाव के अतगत राधा और गोपिया के प्रेम में परकीया का आदर्श सम्मिलित किया है।

यह परकीया भाव प्रेम के आदर्श का प्रतीक मात्र है। वास्तव में न तो राधा कृष्ण से भिन्न है और न अन्य गोपियाँ, वे तबत अद्वय और एक ही हैं। साथ ही परकीया भाव केवल प्रेम विकास की स्थिति के लिए है प्रेम की परिपूणता तो उस स्थिति में है जब स्वकीया और परकीया का लौकिक भेदाभेद मिट जाता है। यदि लौकिक दृष्टि से वरण किया भी जाए तो उसे वास्तविक स्वकीया की स्थिति ही कहेंगे, क्योंकि माधुय भक्ति में वस्तुतः पति तो एक मात्र कृष्ण ही हैं उनसे भिन्न जो भी है - जाहूँ वे लीला हेतु स्वयम् राधा या गोपियाँ हो या माधुय भाव को अपनाते वाले उनके अक्षरूप स्त्री पुष्ट भक्तगण, वे सभी उही प्रियतम कृष्ण की प्रेमिकाएँ हैं। स्पष्ट है कि प्रेम का यह स्वरूप सबका अतीन्द्रिय और अलौकिक है।

वाता भाव प्रेम में विरह की महिमा सभी सम्प्रदाय स्वीकार करते हैं। परकीय भाव वस्तुतः विरहानुभूति की तीव्रता के कारण ही इतना प्रशंसित रहा है। विरह, म प्रेम की अति प्रियता सहज सुलभ है। काव्य की भाँति यहाँ भी विरह पूर्वराग मान और प्रवास के रूप में होता है परन्तु राधा वल्लभी सम्प्रदाय की स्थिति इस सम्बन्ध में भी भिन्न है। उनमें न तो परकीया भाव की स्वीकृति है और न विरह भाव की। वहाँ निकुंज लीला का वृंदावन रस नित्य मित्रन के रूप में बलिप्त किया गया है। निर्गुण निराकार और निर्विकार ब्रह्म को सगुण और साकार रूप में अवतरित करना स्वतः एक विररीत कल्पना है। भक्ति के प्रतिपादकों ने इस विरोध का समाधान श्री कृष्ण ब्रह्म को विरुद्ध धर्माश्रय बनाकर किया है। चतुर्थ और वल्लभ मतों के अनुसार पात्र आनंदरूप श्रीकृष्ण गालोक के नित्य वृंदावनधाम में गोप गोपियाँ व साथ नित्य विहार करते हैं तथा अवतार दशा में वही आनंद लीला ब्रज में प्रकट हो जाती है। राधावल्लभी मत में वृंदावन को ही नित्य माना है और उसके प्रेम तथा आनंद की ब्रीडा को निकुंज लीला कहा गया है। हम कह सकते हैं कि भक्ति के आराध्य कृष्ण और राधा तथा आदर्श भक्त गोप गोपी आदि वस्तुतः भाव रूप में कल्पित है, वे भावों का ही मूल प्रतीक हैं। मानवीय मनोविकारा की यह आलौकिक रूप कल्पना एक प्रकार से उनका परिष्करण अथवा उदात्तीकरण कही जा सकती है।

हिंदी साहित्य की कृष्ण काव्य परम्परा के मूल में महामारत श्रीमद् भागवत और श्रीमद् भगवत् गीता आकर स्रोत प्रथम में रहते हैं साथ ही लोक विद्यान कथा तथा भी उसके मूल में रहती है। इन प्रथमों में कृष्ण योद्धा, कुशल रण संचालन दूरदर्शी राजनीतिज्ञ, योग्य सारथी महापानी और साक्षात् ब्रह्म

रूप में चित्रित हैं। हिन्दी के कवियों ने कृष्ण के माधुर्य गुण और उनकी विविध लीलाओं को अपना प्रिय विषय माना है। उनका मधुर रूप शील और सौंदर्य समन्वित है। हिन्दी कवियों ने कृष्ण के वस निबन्धन, दानव दस भजन भक्त-भय भजन रूप को अपनाकर यगोदा न दन गोपी बल्लभ, मुरली मनोहर लीला बिहारी रूप को भक्ति के लिये चुना और उनके स्व-मोदय हास-विलास, बेनि-रति क्रीडा विनोद, रागरग, सयाग, वियोग आदि का चित्रण किया है। प्रेम, रति और भक्ति की तरंग में बहुत से हिन्दी के कवि मर्यादा के बंधन का भी त्याग गये और उनका ऐसा विलासपूर्ण चित्रण किया कि रीतिकाल में तो राधा कृष्ण आराध्य न रहकर सामान्य नायक नायिका बना दिये गये और उनका जाश्रय लेकर कवि गण अपनी वासनामयी कुत्सित मनारत्तिषा का व्यक्त करन लगे। कृष्ण के लाल रथक रूप ने स्थान पर प्रायः चार लाख रजक रूप की अभिव्यक्ति ही हिन्दी साहित्य में हुई है। वैष्णव भक्ति का समावेश कृष्ण काव्य परम्परा में गीत गोविन्द में हुई था। कृष्ण की मथुरा लीला का गायन जयदेव ने किया।

चन्दवरदाई के "पृथ्वीराज रासा" में 'दशम के जनमत कृष्णवतार का उल्लेख है। भगवान् के धर्म स्वरूप को इस प्रकार विचार रखने से उसकी और आकर्षित होने और आर्क्षित करने की प्रवृत्ति का विकास कृष्ण भक्तों में न हो पाया। फल यह हुआ कि कृष्ण भक्त कवि अधिकतर फुटवल पदा की रचना में ही लग रहे। श्री कृष्ण का इतना चरित ही उहाने न लिखा जा खण्ड काव्य, महाकाव्य आदि के लिये पर्याप्त होता। राधा कृष्ण की प्रेम लीला ही मयन गायी।¹

भागवत् धर्म का उदय महाभारत काल में ही हो चुका था और अवतार भावना इस देश में बहुत प्राचीन काल से ही चली आ रही थी पर वैष्णव धर्म के सांप्रदायिक स्वरूप का संगठन दक्षिण में ही हुआ। वैदिक परम्परा के अनुरूप अनेक संहिताएँ उपनिषद, सूत्र पद्य आदि का। श्रीमद्भागवत" में श्री कृष्ण के मधुर रूप का विशेष बणन होने में भक्ति क्षेत्र में गोपियों के प्रेम तथा माधुर्य भाव का रास्ता खुला। इसके प्रचार में दक्षिण के मंदिरों की परदासी प्रथा विशेष रूप से सहायक बनी। माना पिता सृष्टिक्रिया का मंदिरों में चढ़ा आत थे, वहाँ उनका विवाह भी ठापुरजी के साथ होता था। वे पति रूप में मन्दिर के भगवान् की उपासना करती थीं। इस देवदासिया में कुछ प्रसिद्ध भक्तियों हुईं हैं अन्तर्गत इसी प्रकार की एक प्रसिद्ध भक्तिन हो गई है (जन्म सवत् 773)। उसके पद इतिहास भाषा में 'तीरुप्पायल नामक' पुस्तक में मिलते हैं। उसने एक स्थल पर लिखा है कि — 'अब मैं पूजा योग्य को प्राप्त हूँ और स्वामी कृष्ण के अतिरिक्त और किसी को अपना पति नहीं बना सकती।

1 दुष्प्रसंग पर सप्तपद रूप, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 153-154

प रामचन्द्र शुक्ल ने अन्दाज के इसी वक्तव्य को दृष्टि में रखकर कहा है कि "इस प्रकार की उपासना यदि कुछ दिन चले तो उसमें गुहा और रहस्य की प्रवृत्ति हो ही जायेगी। रहस्यवादी सूफियों की उपासना भी गुहा या माधुसूक्त की ही थी। मुसलमानों के जमाने में सूफियों का प्रभाव देश की भक्तिभावना के स्वरूप पर बहुत कुछ पड़ा। माधुसूक्त का प्रोत्साहन मिला। माधुसूक्त की जो उपासना चली आ रही थी उसमें सूफियों के प्रभाव से अभ्यन्तर मिलन सूत्रों, उमाद, आदि की विषय व्यञ्जना की है। उनके लोकोपदेश का समावेश उसमें नहीं है। इन कृष्ण भक्तों के कृष्ण प्रेम में मतवाली गोपिकाओं से घिरे हुए गोपुल के कृष्ण, बड़े बड़े भूपालों के बीच लोक व्यवस्था की रक्षा करते हुए द्वारका के श्रीकृष्ण हैं, कृष्ण के जिस मधुरास को लेकर ये भक्त कवि चले हैं वह हास विलास की तरफ से परिपूर्ण अनंत सौन्दर्य का समुद्र है। उस सावनीम प्रेमालोक के सम्मुख मनुष्य का हृदय निराले प्रेमालोक में फूला फूला फिरता है। अतः इन कृष्ण भक्त कवियों के सम्बन्ध में यह कह देना आवश्यक है कि ये अपने रंग में मस्त रहने वाले जीव थे, तुलसीदास जी के समान लोक सद्गुरु का भाव इनमें न था। समाज किंघर जा रहा है इस बात की परवाह य नहीं रखते थे, यहाँ तक कि अपने भगवत्प्रेम की दृष्टि के लिए जिस शृङ्गारमयी लोकोत्तर छटा और आत्मोत्सव की अभिव्यञ्जना से इन्होंने जनता को रसोन्मत्त किया, उस पर लौकिक स्थूल दृष्टि रखने वाले विषय वास्तवपूर्ण जीवों पर ईसा प्रभाव पड़ेगा इसकी ओर इन्होंने ध्यान न दिया। जिस राधा और कृष्ण के प्रेम को इन भक्तों ने अपनी गूढातिगूढ चरम भक्ति का व्यञ्जक बनाया, उसको लेकर आगे के कवियों ने शृङ्गार की उमादकारिणी उक्तिमें से हिन्दी काव्य को भर दिया।"

'कृष्ण चरित के मान में गीतकाव्य की जो धारा पूरव में जयदेव और विद्यापति ने बहाई उसी का अवलम्बन ब्रज के भक्त कवियों ने किया। आगे चलकर अलंकारकाल के कवियों ने अपनी शृङ्गारमयी मुक्तक कविता के लिये राधा और कृष्ण का ही प्रेम लिया। इस प्रकार कृष्ण सबधिनी कविता का स्फुरण मुक्तक के क्षेत्र में ही हुआ, प्रबन्ध क्षेत्र में नहीं। बहुत पीछे सन् 1809 में ब्रजवासीदास ने रामचरित मानस के ढंग पर दोहा-चौपाइयों में प्रबन्ध काव्य के रूप में कृष्ण चरित-वर्णन किया परन्तु बहुत साधारण बोटिंग का हुआ और उसका क्या प्रसार नहीं हो सका। कारण स्पष्ट है। कृष्ण भक्त कवियों ने श्रीकृष्ण भगवान् के चरित का जितना अर्थ लिया, वह एक अच्छे प्रबन्ध काव्य के लिए पर्याप्त न था। उसमें मानव जीवन की वह अनेकरूपता न थी, जो एक अच्छे प्रबन्ध काव्य के लिए आवश्यक है। प्रायः सभी कृष्ण सम्प्रदायों में कृष्ण के निम्नलिखित तीनों स्वरूपों का वर्णन मिलता है

- (1) वृंदावन बिहारी कृष्ण,
 - (2) मथुरावासी कृष्ण,
- और (3) द्वारकावासी कृष्ण ।

वृंदावन बिहारी कृष्ण प्रेम भाषुयें के साक्षात् जीवन्त विग्रह हैं । व गोप-गोपी, नन्द-यशोदा आदि के साथ लीलारत हैं । राधा के प्रियतम अथवा पति रूप में वे रस राज शृंगार को चरम उभेय प्रदान करते हैं । इसलिए यह भावना चल पड़ी कि कृष्ण का जो रूप वृंदावन में रहा वह "नित्य बिहारी" का है ।

ऐसे कई सम्प्रदाय हैं जिनमें राधा कृष्ण की शत्रु सहस्र बेलि-त्रीढाओ का यणन मिलता है, वहाँ कृष्ण प्रेम ही स्वस्व है । इन सम्प्रदायों में कृष्ण को प्रेम काम, शृंगार, सयोग, सभोग और वियोग—की जीवन्त मति, प्रियतम, पति, परमेश्वर या भगवान् माना गया है । हिंदी साहित्य के आदिवाक्य में कृष्ण प्रायः उपेक्षित ही रहे । वही वही उनका उत्तरेण भाग मिल जाता है । चंद बलदिय्य 'वे महाकाव्य में दशावतार के अन्तगत कृष्ण का संक्षिप्त उत्तरेण मिलता है । विद्यापति के अनंतर 'कहावत' में जायसी ने कृष्ण के जन्म से लेकर मृत्यु तक की कथा का प्रवृत्तात्मक रूप में वर्णन किया है इसकी सम्भव विवेचना इसी प्रबंध में अन्यत्र की गई है ।

यत्न और विद्वल गोस्वामी के शिष्यों (अष्टछाप के कवियों) "सूरदास, कुम्भनदास, परमानन्ददास, कृष्णदास, छोटस्वामी गोविंदस्वामी, चतुभजदास और नन्ददास" ने श्री कृष्ण की सौलिक-अलौकिक प्रेममयी मूर्ति को ही लेकर प्रेमतरंग का मूल माना है । जयदेव, विद्यापति और चण्डीदास ने राधा को शृंगारी रूप प्रदान किया, उनकी प्रेरणा का मूल स्रोत में विभिन्न पुराण ही हैं । हिंदी साहित्य में सूर ने राधा के शृंगारी और भक्ति रस पगी रूप की जो प्रतिष्ठा की है उसका मूल स्रोत भी श्रीमद् भागवत पुराण ही है । जयदेव ने 11 वीं शताब्दी में ही राधा का धार्म्यात्मिक व्यक्तित्व विसुप्त कर उसे कृष्ण की सहचरी, काम क्रीडा प्रवीण तथा मानिनी के रूप में चित्रित किया है । जयदेव की राधिका कृष्ण की एक निष्ठ प्रेमिका है । विद्यापति की राधिका किंगोरी, मोहन तथा शशीम रूप-सौंदर्य से सम्पन्न है । यह भावुक नारी है । यह प्रीति में "क्षण क्षणे नवता" का अनुभव करती है । चण्डीदास की राधा भोली, सरल, प्रेम में आकर्षण डूबी हुई है । चण्डीदास की राधा ने कृष्ण के प्रति आत्म-समर्पण करके ही समाधिगायिनी का पद प्राप्त किया है । विद्यापति की राधा कला का भव्य और सुन्दर रूप है, चण्डीदास की राधा रसमूर्ति है ।

राधा का यही विशिष्ट रूप भारतीय साहित्य में कृष्ण के साथ जोड़ा जाये तथा । राधा और कृष्ण भक्त कवियों के आराध्य और आराध्या, रीतिबानीत रसिक कवियों के लिए नायक-नायिका तथा धार्मिक कवियों के लिए कल्या

राष्ट्र नन्दा तथा राधा समाज सेविका के रूप में प्रतिष्ठित हुईं। निम्बाक सम्प्रदाय राधा धत्तभी सम्प्रदाय और अष्टछाप के कवियों ने राधा की रसिक मूर्ति के रूप में प्रस्थापना की है। आचार्य निम्बाक ने राधा प्रथम राधा कृष्ण की युगल मूर्ति की उपासना की। अष्टछाप के कवियों ने इस अपनाया। इस प्रकार राधा कृष्ण युगल रूप में पूज्य बन गये।

प्रायः सभी हिन्दी कृष्ण भक्त कवियों ने कृष्ण की विविध लीलाओं को ही अपना काव्य का वष्य विषय बनाया। सूर सुनसी, नन्ददास, कुम्भनदास, परमानन्ददास चतुर्भुज स्वामी आदि भक्तों ने कृष्ण के नित्य लीला विहारी रूप में ही अयन किया है। जायसी ने कृष्ण जीवन पर 'महावत' नामक एक महाकाव्य की रचना की है। डाक्टर रामकुमार वर्मा लिखते हैं कि सोलहवीं शताब्दी में चतुर्थ सम्प्रदाय की स्थापना हुई। विदम्बर मिश्र (श्रीकृष्ण चैतन्य) ने ईश्वरपुरी सिद्धांतों के अनुसार भागवत पुराण की भक्ति का आदर्श स्वीकार किया। जयदेव चंडीदास और विद्यापति के कृष्ण विषयक पदा का गाकर उन्होंने कृष्ण भक्ति का विशेष प्रचार किया। कृष्ण भक्ति में चैतन्य महाप्रभु ने राधा को विधेय स्थान दिया। चैतन्य महाप्रभु का कायधेय बंगाल में था। उनकी भक्ति सौंदर्य और प्रेम समर्पित है। बंगाल के चंडीदास ने भी राधा कृष्ण का अपूर्व सम्म किया है। कृष्ण और राधा की प्रणय लीला विलास विदग्ध और नित नूतन है। इसलिए कवि इस प्रणय लीला का गायन करते समय आत्मस्फूर्ति अनुभव करता है। लेकिन इनके पदा में कामवासना की भाँष नहीं है। अपनी सकीर्तन प्रणाली से चतुर्थ महाप्रभु ने मगध उत्तर भारत को आप्लावित कर दिया।

'विद्यापति की कृष्ण लीला गान की परम्परा के प्रचार का सबसे बड़ा कारण चतुर्थ महाप्रभु हुए। बंगाल में वैष्णव सम्प्रदाय के सबसे बड़े नेता हुए। इन पर लोगों की इतनी श्रद्धा थी कि ये विष्णु के अवतार समझे जाते थे। विद्यापति के ललित और पवित्र भावनाओं से पूज्य पदों को गाकर ये इस प्रकार भाव में निमग्न हो जाते थे कि उन्हें मूर्च्छा सी आ जाती थी। इनका हाथा विद्यापति के पदों की ऐसी प्रतिष्ठा होने के कारण लोगों में विद्यापति के प्रति आदर का भाव बहुत बढ़ गया। इसलिए बंगाल में विद्यापति का आश्चर्यजनक प्रचार हुआ।

विद्यापति ने जयदेव की मधुर वाणी का सम्प्रसार किया। उन्होंने राधा कृष्ण की प्रणयलीला का चित्रावन अत्यन्त मनोमुग्धकारी ढंग में प्रस्तुत किया। विद्यापति के पद पर स्थूल श्रुतार के ही विभिन्न अंगों की विवचना करते हैं।

1 डॉ. रामकुमार वर्मा हिन्दी साहित्य का आलाचकारक इतिहास पृष्ठ 606

2 विद्यापति श्री जनान मिश्र पृष्ठ 32

विद्यापति शृंगार रस के रस सिद्धवाक् कवि थे। जयदेव के "गीत गोविन्द" का अनुसरण करते हुए विद्यापति ने अपनी पदावली में अनेक मौलिक उद्भावनाएँ की हैं। अभिसार, कौतुक प्रबोधन, मिलन, मान भंग विरह स्वप्न आदि का प्रसंग निश्चय ही राधा नवीन और भव्य मल्पना का प्रतीक है। कवि ने राधा को स्वकीया माना है। तथा उसे मुग्धा अभिसारिका गडित्य कलहान्तरिणा, विप्रलम्भा और प्रोपितपतिना के रूप में अंकित कर साहित्य का नवीन उपलब्धि प्रदान की है, जबकि भागवत् में राधा का नाम भी वही नहीं आया है।

डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी ने लिखा है कि — "विद्यापति शृंगार रस के सिद्धवाक् कवि थे। उनकी पदावली में राधा और कृष्ण की जिस प्रेम लीला का चित्रण है वह अमूर्त है। इस वर्णन में प्रेम के शरीर पक्ष की प्रधानता अवश्य है पर भावों की सादृता और अभिव्यक्ति की प्रेयणीय गुणिता के कारण वह बहुत आकर्षक हो गया है।" ¹

विद्यापति प्रेम और सौन्दर्य के कवि हैं। परवर्ती कवियों ने प्रेम और सौन्दर्य को अपने साहित्य में महत्वपूर्ण स्थान प्रदान किया है। कवि ने विरह व्यथित मनोभावों को भी अत्यन्त सूक्ष्मता के साथ चित्रित किया है। यही विरह विरग्ध तत्सौन्दर्य अनेक भवन कवियों में दृष्टिगोचर होती है।

बगल के चैतन्य महाप्रभु पर विद्यापति के गेयता इतना प्रभाव था कि वे भाव विह्वल होकर इन पदों को गाते-गाते मूर्च्छित हो जाते थे। चैतन्य महाप्रभु ने एक संप्रदाय का प्रारम्भ किया, जिसे चैतन्य संप्रदाय कहा जाता है।

"श्री वल्लभाचार्यजी की आज्ञा से सूरदासजी ने "श्रीमद्भागवत" की कथा को पदों में गाया। इनके "सूरसागर" में वास्तव में भागवत के दशम स्कन्ध की कथा ही ली गई है। उसी को इन्होंने विस्तार से गाया है। दश स्कन्धों की कथा संक्षेपत इति वृत्त के रूप में छोड़े से पदों में कह दी गई है। "सूरसागर" में कृष्ण जन्म से लेकर श्री कृष्ण के मथुरा जान तब की कथा अत्यन्त विस्तार से फूटकल पदों में गाई गई है। भिन्न भिन्न लीलाओं के प्रसंग लेकर इस सच्चे रसमग्न कवि ने अत्यन्त मधुर और मनोहर पदों की भंडी सी बाँध दी है। इन पदों के सम्बन्ध में सबसे पहली बात ध्यान देने की यह है कि चलती हुई ब्रजभाषा में सबसे पहली साहित्यिक रचना होने पर भी यह अत्यन्त सुंदर सुगठित और परिमार्जित है। यह रचना इतनी प्रबल आर काव्यांग पूर्ण है कि आगे आने वाले कवियों को शृंगार और वात्सल्य की उक्तियाँ सूर की जूठी सी जान पड़ती हैं। इसी कारण प. रामचन्द्र शुक्ल ने स्पष्ट लिखा है कि 'सूरसागर' किसी चली आती हुई गीत काव्य परम्परा का चाहे वह मौखिक ही रही हो पूर्ण विनाश का प्रतीक

होना है ।¹ सूरसागर का सबसे ममस्पर्शी और यादवैश्वर्यपूर्ण प्रसंग 'भ्रमरगीत' है, जिसमें गोपियों की वचनव्यवृत्ता अत्यंत मनोहारिणी है । ऐसा सुंदर उपालम्भ काव्य और कहीं नहीं मिलता । उद्वय तो अपने निगुण ब्रह्मज्ञान और योग कृपा द्वारा गोपियों को प्रेम से विरत करना चाहते हैं और गोपियाँ उन्हें कभी पटमर बनाती हैं, कभी उनसे अपनी विद्यमता और दीनता का नियेदन करती हैं ।²

इस भ्रमरगीत का महत्व एक बात से और बढ़ गया है । भक्त सिंगेमणि सूर ने इसमें सगुणोपासना का निरूपण बड़े ही मार्मिक ढंग से, हृदय की अनुभूति के आधार पर, तक पद्धति पर नहीं किया है । सगुण निर्गुण का यह प्रसंग सूर अपनी ओर से लाए हैं ; सूर के समय में निर्गुण सत संप्रदाय की बातें जोर जोर से चल रही थीं । इसी से उपयुक्त स्थल को देखकर सूर ने इस प्रसंग का समावेश कर दिया..... ।³

चैतन्य सम्प्रदाय

इसके प्रवक्तक महाप्रभु चैतन्य हैं । भक्तमाल में नित्यानन्द, अर्द्धताचाय रूप गोस्वामी, सनातन स्वामी और जीव गोस्वामी इनके शिष्यों का उल्लेख है । गोपाल भट्ट, ईश्वरपुरी गोस्वामी भागवतद्रपुरी गोस्वामी आदि शिष्यों का उल्लेख भी भक्तमाल में है । रूप गोस्वामी ने 'भक्ति रसामृत सिंधु', लघुभागवतामृत तथा 'उज्ज्वल नीलमणि' ग्रंथों में भक्ति का अत्यन्त सूक्ष्म विश्लेषण प्रस्तुत किया है । सनातन गोस्वामी ने 'श्रीमद्भागवत्' दशमस्कन्ध की टीका तथा 'बृहत भागवत' मृत नामक ग्रंथों का रचना की है ।

वस्तुतः चैतन्यमत का मत की ही गौडीय शाखा है परन्तु दोनों के दार्शनिक सिद्धांतों में महान् प्रायश्चय है । माध्वमत द्वैतवाद का पक्षपाती है और चैतन्यमत "अचित्तय भेदा भेद सिद्धांत का अनुयायी है । यह वृत्तवदन की सरस प्रेमल भूमि पर फलवित हुआ । श्री कृष्ण परमत्त्व हैं । स्वयं, तदेकात्म और आवेश उनके तीन रूप हैं । जगत सत्य है । इस मत के अनुयायी प्रेम को पंचम पुरुषाय मानते हैं । भक्ति, साध्य और साधन दोनों ही हैं । साहित्य जगत् में गौडीय वैष्णवों के द्वारा भक्ति रस को स्थापना एक अपूर्व व्यापार है । भक्ति रस का सागोपाग विवचन ग्रंथ 'भक्तिरसमृतसिंधु' तथा उज्ज्वल नीलमणि" श्री रूप गोस्वामी की सर्वमान्य रचनाएँ हैं ।

1 इच्छय - प रामचन्द्र धुवन हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 160

2 बरी / पृष्ठ 160-67

3 प रामचन्द्र धुवन हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 167

हिन्दी साहित्य में चैतन्य मतानुयायी अनेक कवि हो गए हैं, परन्तु उनके प्रायः अभी तक अप्रकाशित ही हैं। यही कारण है कि इस विशिष्ट मत के साहित्यिक प्रभुत्व का पूर्ण पन्चिष्य अभी तक हिन्दी के आलोचकों को विशेष रूप से उपलब्ध नहीं है। यह विषय विशेष अनुशीलन की अपेक्षा रखता है। कतिपय कवियों का यहाँ केवल संकेत किया जा रहा है।¹

सुप्रसिद्ध कृष्णव कवि प्रियादास चैतन्य मत के अनुयायी कृष्णव थे, इसका परिचय भक्तमाल की टीका के मंगलाचरण से भली भाँति मिलता है। इनके प्रयोगों में कृष्ण लीला का विषय बहुधा वर्णित है। इनके प्रधान ग्रन्थ ये हैं—

- (1) रसिक मोदिनी (राधाकृष्ण का वर्णन),
- (2) संगीतरत्नाकर — राग रागिनियों का विवेचन,
- (3) संगीतमाला सग्रह (कृष्ण लीला के विषय में पद),
- (4) भक्तमाल टीका — 1712 ई में रचित।

नरोत्तमदास का "नामकीर्तन" कृष्ण चैतन्य की प्रायना से आरम्भ होता है। गोविन्द प्रभु की "गीत चिन्तामणि" का काव्य की दृष्टि से बहुत ही मधुर तथा शलित रचना है।

स्वामी निम्बार्काचार्य

बारहवीं शताब्दी के आसपास स्वामी निम्बार्काचार्य ने निम्बार्क सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया था, उन्होंने वेदान्त, पारिजात, सौरभ, दशश्लोकी आदि ग्रन्थों की सृष्टि की है। इन ग्रन्थों में उपास्य और उपासक का रूप कृपा वा फल, भक्ति रस, जीव-जगत, मोक्ष आदि का सूक्ष्म विवेचन हुआ है और इसमें उनके साधनों का भी उल्लेख किया गया है। निम्बार्काचार्य के अनुसार श्री कृष्ण ही परम ग्रहण हैं। निम्बार्क सम्प्रदाय के दार्शनिक आधार का प्रतिपादन आचार्य निम्बार्क की रचनाओं में मिलता है। इस सम्प्रदाय के अनुयायी भक्त कवि भट्टजी प्रसिद्ध पेशव कश्मीरी के प्रधान शिष्य कहे जाते हैं। उनके युगल शतक के आधार पर आचार्य निम्बार्क के द्वैताद्वैतवाद का सम्यक् ज्ञान सम्भव नहीं है। उनके "युगल शतक" में भक्ति भावना व ला सिद्धांतवाद ही मिलता है।

हरिदास स्वामी का सखी सम्प्रदाय भी आना सम्यग् निम्बार्क से जाड़ता है। उनके अनुयायी भगवत रसिक अधिक सिद्धांतवादी हैं। उन्होंने तो द्वैत, अद्वैत, विशिष्टा द्वैत आदि शब्दों का प्रयोग भी किया है।

1— इन कवियों के वर्णन के लिए भिन्न भिन्न वर्षों के खोज विवरण देचना चाहिए।

रूप रसिक

रूप रसिक निम्बाक सम्प्रदाय के अत्यन्त प्रसिद्ध भक्त व श्रेष्ठ कवियों में से एक हैं। माधुय भक्ति के अन्तर्गत उन्होंने राधा कृष्ण की प्रणय लीलाओं का प्रतिपादन करते हुए राधाकृष्ण को सबव्यापी ब्रह्म माना है। भक्त उनकी सेवा से परम ज्ञान वर प्राप्त कर सकता है। उन्होंने "लीला विगन्ति" नामक काव्य में अपनी भावताओं को व्यक्त किया है। उनके अनुसार सती भाव ही सर्वोपरि प्रेम और भक्ति राधा कृष्ण की सयोग समोग और प्रेम लीलाओं को केवल सही भाव से ही परया जाता है।

सत नामदेव ने कृष्ण भक्ति प्रचार-प्रसार में दक्षिण भारत में अपार योगदान प्रदान किया। अनेक अन्य सत कवियों ने भी श्रीकृष्ण की भक्ति में छूट-पूट पदों की रचना की। मालचदास हलवाई ने "भागवत भाषा" का "दशम स्वर्ग" लिखकर कृष्ण काव्य विकास परम्परा को और एक बरत आगे बढ़ाया। केशव वादमोरी हरिव्यास मुनि गदाधर भट्ट इस सम्प्रदाय के प्रसिद्ध भक्त कवि हुए हैं। इनकी रचनाओं में भी श्रीकृष्ण भक्ति का विशेष प्रचार किया। इनकी भक्ति प्रणाली चैतन्य महाप्रभु की सकीर्तन प्रधान प्रणाली के समान ही थी। निम्बाक सम्प्रदाय के आचार्य गदाधर भट्ट ने 'युगल गतक' ग्रन्थ का सृजन कर एक बार राधा कृष्ण की प्रणय लीला, दूसरी ओर श्रीकृष्ण की उपासना पद्धति का सिद्धांतिक पक्ष प्रस्तुत किया इस आदि यानी भी सम्बोधित किया जाता है। सौ दोहों में लिखी गई इस पुस्तिका में सिद्धांत सुख, ब्रजलीला सुख, सेवा सुख, सहज सुख और उत्साह सुख का वर्णन है। अनेक भक्तिवादी कवियों ने इस ग्रन्थ का अनुसरण किया।

विष्णु स्वामी सम्प्रदाय का भी इस काव्य धारा पर विशिष्ट प्रभाव है। इस सम्प्रदाय के प्रवक्ता विष्णुस्वामी थे। विष्णुस्वामी के सकडा शिष्य थे, जिनमें से एक बिल्वमगल भी थे। महाप्रभु बल्लभाचार्य पर बिल्वमगल के सिद्धान्तों का अत्यन्त प्रभाव था। बिल्वमगल स्वामी ने कृष्ण वर्णामृत नामक कविता में राधा कृष्ण का यग गाकर इस मन का विशेष प्रचार किया। बिब्रम की सत्रहवीं शताब्दी के अन्त में यह सम्प्रदाय बल्लभ सम्प्रदाय में मिल गया क्योंकि महाप्रभु बल्लभाचार्य ने विष्णु स्वामी के सिद्धांतों को लेकर पुष्टि माय की स्थापना की थी।¹

मध्याचार्य ने "भक्ति रत्नावली" नामक पुस्तक लिखी जिसमें भक्ति सिद्धांतों का निरूपण किया। ईश्वरपुरी ने श्रीकृष्ण भक्ति का अत्यधिक प्रसार किया।

महाराष्ट्र प्रदेश में एक अन्य सम्प्रदाय 'दत्तात्रेय' विकसित हुआ। इसके अनुयायी दत्तात्रेय को इन सम्प्रदाय का प्रवक्तृ मानते हैं। दत्तात्रेय को कृष्ण का अवतार माना जाता है। "श्रीमद् भागवत गीता" को ही इस सम्प्रदाय के अनुयायी धर्म पुस्तक मानते हैं।

स्वामी हरिदास ने टट्टी सम्प्रदाय की स्थापना की थी। इस सम्प्रदाय पर चैतन्य महाप्रभु का अत्यधिक प्रभाव है, इसमें कृष्ण की उपासना सखी भाव से की जाती है। सहचरि चरण इस सम्प्रदाय में सर्वाधिक प्रतिष्ठित सत है। सकीर्तन का इस सम्प्रदाय में बहुत महत्व है।

हितहरिवंश राधावल्लभ सम्प्रदाय के प्रस्थापक थे। "राधा" इस सम्प्रदाय में अधिष्ठात्री रूप में पूज्य है। इसमें विधि निषेध और अनन्य दास्य भाव मिलता है हितहरिवंश ने "राधा सुधा निधि" नामक संस्कृत ग्रंथ की रचना की। उन्होंने "हित चोरासी" नामक 84 श्लोक पदों की एक रचना भी लिखी है। इस सम्प्रदाय में राधा का स्थान कृष्ण से बहुत ऊँचा माना गया है।

रूप गोस्वामी द्वारा विरचित "उज्ज्वल नीलमणि" नामक ग्रंथ अत्यंत महत्वपूर्ण है। इसमें भागवत में विवक्षित गोप पत्नियों की प्रतिष्ठा एवं सम्मान दिलाने के लिए स्वकीया भाव में भक्ति का आसन्न्यन अंगीकार किया गया है। इन गोप-पत्नियों में कृष्णा विधियो, वनो, ताताबो आदि पर सामाजिक बंधन से मुक्त होकर कृष्ण के साथ केलि और रास-क्रीडाएँ की हैं। गोपियों को कृष्ण भक्ति में जीवात्मा माना गया है।

रामानुज के सगुण साकार से सम्पूर्ण उत्तर भारत में तोग प्रभावित हुए। निम्बार्क ने रामानुज से सगुण राम के स्थान पर कृष्ण की प्रतिष्ठापना की, इसे चैतन्य महाप्रभु और यत्नभाचार्य ने उत्तर भारत में सर्वत्र प्रचारित किया। तदनन्तर कृष्ण भक्ति काव्य द्वारा अत्यन्त तीव्र गति से प्रवाहित होने लगी।

महाप्रभु यत्नभाचार्य

यत्नभाचार्य ने यत्नभ सम्प्रदाय का प्रवर्तन किया। उन्होंने गोवर्धन पर्व पर श्रीनाथजी की मूर्ति प्रतिष्ठित की। उन्होंने कृष्ण को ही परम ब्रह्म माना। यही समप्रवृत्ति में, अज्ञ रूप जीवा को रक्षकर विभिन्न प्रकार की लीलाएँ सम्पादित करते हैं। सत् चित्त तथा आनन्द का अविर्भाव व तिरोभाव स्वयं ब्रह्म रूप कृष्ण ही करते हैं। अतएव श्री कृष्ण लीला नित्य है, विकार शून्य है। कृष्ण लीला का वर्णन और गायन यत्नभ सम्प्रदाय के कवियों का परम धर्म माना गया है।

शंकराचार्य ने ब्रह्म का पारमार्थिक या वास्तविक रूप व्यक्त किया था। यत्नभ ने सगुण रूप को ही असली पारमार्थिक रूप बताया और निर्गुण को उसका तिरोभावरूप कहा। भक्ति की साधना के लिए यत्नभाचार्य ने उनके श्रद्धावानों

अवयव को छोड़कर केवल प्रेम तथा अर्थात् उर्होने 'प्रेम लक्षणा भक्ति' को स्वीकार किया। उनके यहाँ प्रेम ही मुख्य और श्रद्धा आनुगमिक या सहायक है।

वल्लभाचार्य की प्रेमलक्षणा भक्ति की शोर जीव की प्रवृत्ति तभी होती है जब भगवान का अनुग्रह होता है। इसे वे 'पोषण' या 'पुष्टि' कहते हैं। इसी से वल्लभाचार्य ने अपने माग को पुष्टिमाग कहा है। कृष्ण परब्रह्म हैं, दिव्य गुण सम्पन्न हैं, पुरुषोत्तम हैं सीला पुरुष हैं, इसी रूप में मान्य का पूजा अविर्भाव रहता है, उनकी सब सीलाएँ नित्य हैं। वे अपने भवना के लिए 'ध्यापी वैकुण्ठ में' अनेक प्रकार की कलि और सीलाएँ नित्य हैं। गोलोक इसी ध्यापी वैकुण्ठ का एक स्थल है, जिसमें नित्य रूप में यमुना, घुंदावन, निर्जुंज और कृष्ण की गोपियों के साथ रति आदि सब वृद्ध हैं। उसकी इस नित्य सीला में प्रवृत्त करना ही जीव की सबसे उत्तम गति है।¹

वल्लभाचार्य ने जीव को तीन प्रकार का माना है —

- (1) पुष्टि जीव, जो भगवान के अनुग्रह का ही भरोसा रखते हैं और नित्य सीला में प्रवेश पाते हैं।
- (2) मर्यादा जीव, जो वेद की विधियों का अनुसरण करते हैं और स्वयं प्रादि लोक प्राप्त करते हैं और
- (3) प्रवाह जीव, जो ससार के प्रवाह में पड़े सासारिक सुखों की प्राप्ति में लगे रहते हैं।

वल्लभाचार्यजी के 1 पूर्वमीमांसा भाष्य, 2 श्रीमद् भागवत की सुबोधिनी टीका, 3 तत्त्वदीप निघण्टु, 4 ब्रह्मसूत्र भाष्य 5 सोलह छोटे छोटे प्रकरण ग्रन्थ। मलच्छान्नातेपु देवोपु श्रीकृष्ण कारण मम। मुसलमानों से आब्राहम देश की विषम स्थिति में वल्लभ की दृष्टि में श्रीकृष्ण की कारण के अतिरिक्त कोई अन्य माग दृष्टिपोचर नहीं हुआ। उनके सम्प्रदाय में उपासना या सेवा पद्धति ने भोग, राग तथा विलास की प्रभृति सामग्री के प्रदर्शन की प्रधानता रही। आचार्य शुबल ने ठीक ही लिखा है कि 'भोग विलास के आकषण का प्रभाव सेवक-सेविकाओं पर कहीं तक अच्छा पड़ सकता था। अनन्ता पर चाह जो प्रभाव पड़ा हो, पर उक्त गद्दी के भक्त सिष्यो ने सुन्दर सुन्दर पदों द्वारा जो मनोहर प्रेम संगीत धारा बहाई, उसने मुर्झति हुए हिंदू जीवन को सरस और प्रफुल्ल बना दिया। इन संगीत धारा में दूसरे सम्प्रदायों के कृष्ण भक्तों ने भी पूरा योग दिया।'

¹ व रामचन्द्र शुबल, हिंदी साहित्य का इतिहास पृ 151

वल्लभाचार्य के दार्शनिक सिद्धान्त उपात हैं। इसमें एक ओर तो रामानुज की विशिष्टता दूर की गई है और दूसरी ओर शंकर का मायावाद अस्वीकृत किया गया है। वे शंकर के ज्ञान के बदले में भक्ति को ग्रहण करते हैं। भक्ति की साधना तथा साध्य भी बतलाई जाती है। भक्ति ज्ञान से बढ़कर है, क्योंकि वह ईश्वर की कृपा से मिलती है। ईश्वर की दया के लिये पुष्टि शब्द का व्यवहार किया गया है जो भागवत के आधार पर है। इसीलिये वल्लभाचार्य का भक्तिमाग पुष्टि कहलाता है।

पुष्टिमाग के अनुसार कृष्ण ही ब्रह्म हैं जो सत् चित् और आनन्द स्वरूप है। जिस प्रकार अग्नि से चिनगारियाँ निबलती हैं, उसी प्रकार ब्रह्म से जीव और जगत् निकलते हैं। ये उससे भिन्न नहीं हैं। अन्तर इतना ही है कि आनन्द को खोना केवल सत् और चित् को अशत धारण किए रहना है मुक्त होकर जीव आनन्द स्वरूप हो जाता है और कृष्ण के साथ एकाकार रहता है।

वल्लभाचार्य जगत् को मिथ्या नहीं मानते। माया भी ब्रह्म की ही शक्ति है, अतः यह मायात्मक जगत् मिथ्या नहीं है। हाँ, माया में फसा रहने के कारण जीव अपना शुद्ध स्वरूप नहीं पहचान सकता। जब ईश्वर का अनुग्रह होता है तब जीव माया से मुक्त होकर अपना शुद्ध स्वरूप पहचानता है और तब वह भी सत्, चित् और आनन्द स्वरूप हो जाता है।

यहाँ जिन दार्शनिक सिद्धान्तों का विवरण दिया गया है उनके अतिरिक्त वल्लभाचार्य ने कुछ व्यवहारिक नियम भी प्रचलित किये थे जिनका उनके संप्रदाय में अब तक पालन होता है। इन व्यवहारिक नियमों में सबसे अधिक उल्लेखनीय गुरु शिष्य संबंध है, जिसका आगे चलकर बड़ा अनिष्टकर परिणाम हुआ। वल्लभाचार्य की शिष्य-परम्परा में यह नियम है कि गुरु की गद्दी का उत्तराधिकारी प्रत्येक शिष्य नहीं हो सकता, गुरु का पुत्र ही हो सकता है। गोसाईं विठ्ठलनाथ भी इसी नियम के अनुसार गद्दी के उत्तराधिकारी हुए थे। आगे चलकर अयोग्य व्यक्तियों को भी गद्दी का अधिकार मिलने लगा, क्योंकि पिता की सदैव योग्य सतान नहीं हुआ करती। परन्तु इन अयोग्य गुरुओं की पूजा बराबर विधिपूर्वक होती रही, इसका परिणाम अच्छा नहीं हुआ। गुरु घर्मोपदेशक और साधु न बनकर धनलोभुष तथा विलास प्रिय बन बैठे। उनका वैभव इतना बढ़ा कि वे राजाओं की भाँति सपत्तिसाली हो गए और महाराज की उपाधि भी उ होने धारण कर ली। महाराज मंदिर के सर्वोत्कर्ष होते हैं। भक्तजन उनकी प्रसाद प्राप्ति के लिए बड़ी बड़ी रकमें दान करते हैं। धीरे धीरे भक्त भी वे ही होने लगे जो विशेष जनवान हो। इससे राधा कृष्ण के स्वर्गीय प्रेम को लौकिक विलास वासना का रूप मिला और सम्प्रदाय अद्य पतित हो गया।

वल्लभाचार्य के सम्प्रदाय का तत्कालीन उत्तर भारत पर अभूतपूर्व प्रभाव पड़ा। कृष्ण भक्ति के अनेक छाट-बड़े संप्रदाय इसका वेग में विलीन हो गए। वज्र भाषा के अधिकांश कवि हमारे अनुयायी थे और कविता ने इससे अलग रहकर रचना की है उन पर भी इसका स्पष्ट प्रभाव दोष पड़ा है। निम्बार्क और विष्णु स्वामी आदि के सम्प्रदाय वल्लभ सम्प्रदाय के आगे दब गये। उत्तर भारत में वल्लभ संप्रदाय और बंगाल में चैतन्य सम्प्रदाय के कवियों की ही धूम रही। अन्य सभी मत या सम्प्रदाय फीके पड़ गये। राधा और कृष्ण की उपासना वाणी सारे उत्तर भारत के एक कोने से दूसरे कोने तक गूँज उठी। जनता उस सरस वाणी में सब कुछ भूलकर बह चली। वल्लभाचार्य की दृष्टि से भगवत् अनुग्रह ही जीव का असली पोषण या पुष्टि है, 'पोषण तदनुग्रह' अर्थात् पोषण ही उसका अनुग्रह है इसी से हृदय में भक्ति का संचार होता है। पुष्टिमात्र स्त्री, पुरुष, द्विज और शुद्र सबके लिये खुला है, मनुष्यमान इसका अधिकारी है। बिना प्रेम की जा आराधना होगी वह सेवा न होगी। स्वयं को भगवत् चरणों में अर्पित कर देना आवश्यक है। इसी समर्पण से यह मांग प्रारम्भ होता है। और पुरुषात्तम के स्वरूप का अनुभव तथा लीला सृष्टि से प्रवेश हो जाने पर भगवान् के स्वरूप अनुभव की क्षमता प्राप्त होती है।

पुष्टिमात्र के उपास्य लीला पुरुषात्तम भगवान् कृष्ण हैं। भक्तता ने इसमें प्रकट लीला का गान ही किया है और इसी माध्यम में नित्य गोलोक प्राप्ति की कामना की है। ऐश्वर्य धींदा, बर्गो विरह की चारों माधुरियों के रसास्वादन में भक्त मस्त रहता है। इस भक्ति में प्रेम ही प्रेम है। जीव गोस्वामी न गोपियों की रति को मधुरा रति कहा है।

कृष्ण भक्ति में अन्तर्गत मधुर भाव स उपासना करने वाले भक्तों पर बालांतर में सूफियाँ के मान्य भाव का प्रभाव पड़ा। बालांतर रति की भक्ति की पराकाष्ठा भी प्रदर्शित होने लगी। मिलन के लिए भाति भाति के शृङ्गार अष्टयाम राधना, मूर्च्छा आदि का भी आगमन हुआ। चतन्य महाप्रभु तो इस प्रेम में चरम मूर्च्छा प्राप्त किया करने थे।

वल्लभाचार्यजी के ज्येष्ठ पुत्र गोपीनाथ थे। उनके तिरोधाम के पश्चात् गोपीनाथ ही उत्तराधिकारी हुए। 'गायन दीपिका' नामक इनका एक ग्रंथ प्रसिद्ध है।

गोस्वामी विद्वतनाथ शंकर निबिन्ध अनेक ग्रंथों निम्न प्रकाश टीका भक्त्याच्य का अंतिम अंश, भक्तिभंग भक्त हनु भक्त निर्णय, शृंगार रस मंगल टीका आदि का ज्येष्ठ गिनता है। इनकी भक्ति की परम्परा के अनेक गिणियों में दो ही जीवन प्रत्यात् हैं। इन्होंने ही अष्टयाम की स्थापना की थी जिसमें आठ कवि हैं - महाप्रभु वरसभाचार्य के चार गिण्य कुम्भनदास, सूरदास

परमानन्ददास और कृष्णदास थे, तथा गोविन्द स्वामी नन्ददास, छोट्ट स्वामी चतुर्भुज स्वयं इनके शिष्य थे।

वल्लभ सम्प्रदाय में श्रीकृष्ण, श्रीनाथ, उन्नीत प्रिय, मथुरानाथ, विट्ठलनाथ द्वारकाधीश, गोकुलनाथ और मदनमोहन आठ रूपों में प्रतिष्ठित हैं। अष्टयामी पूजन विधान में विट्ठलनाथ ने कौतूहल को भी सम्मिलित कर दिया।

गोस्वामी विट्ठलनाथ के चतुर्थ पुत्र गोकुलनाथ थे। उन्होंने पुष्टिमार्ग का प्रचार किया। उनके पहले विट्ठलनाथ के ज्येष्ठ पुत्र गिरधरजी उत्तराधिकारी हुए थे। वार्ता साहित्य का प्रवर्तन सबसे पहले इन्होंने ही किया। कल्याणराय और हरिराय ने इस सम्प्रदाय के प्रवर्तन में बड़ा योग दिया। वल्लभाचार्य ने मधुर और सङ्गभाव भक्ति-पद्धति की अवतारणा की। सूरदास ने इस भक्ति-पद्धति में भक्ति रस की पावन मदाकिनी प्रवाहित की। कृष्ण भक्तों में सूर ही गिरमौर हैं। सूर सागर में उनकी अद्भुत कविता प्रतिभा और भक्ति की पावन धारा के दर्शन होते हैं। सूर सागर के राधा और कृष्ण की लीलाएँ अप्रतिम हैं। सूर सागर के श्री कृष्ण निखिलानन्द, सदीह, सब देवोपरि पूण सौ दय विग्रह और भक्तों के प्रेमास्पद विग्रह लीला प्रभु हैं।

भक्त शिरोमणि सूरदास

ब्रज साहित्य के कवियों में महात्मा सूरदास सर्वश्रेष्ठ हैं। विद्वानों की राय में उन्हें अनेक ग्रन्थों की रचना की, किन्तु उनके तीन ग्रन्थ ही उपलब्ध हैं। सूरसागर, सूर-सरावली, साहित्यलहरी।

सूर सागर उनकी अक्षय कीर्ति का भण्डार है। उनका सूर सागर वात्सल्य और शृंगार रस का रत्नाकर है। वे इन दोनों का कोना-कोना भाव आये हैं। इस क्षेत्र में उनका काव्य बेजोड़ है। कृष्ण के मथुरा प्रस्थान करने पर विधुरा राधा और गोपियों की दशा का मार्मिक और विशद वर्णन उनके अनुभूति प्रवण हृदय ने ही किया है। विरहानुभूति का विश्लेषण उन्होंने अत्यन्त मनो-वैज्ञानिक ढंग से चित्रित किया है। उनके कृष्ण का व्यक्तित्व प्रेम प्लावित है। उन्होंने चित्तवृत्तियों का चातुम पूण चित्रण, वायानन्द की माधुरी, निर्मल भावों की अनवरत धारा का अपूर्व रसमय प्रवाह उपस्थित किया है। उनकी ब्रज भाषा अलंकार सौन्दर्य सम्पन्न, मणीतात्मक और रसात्मक है। उन्होंने हिन्दी साहित्य को अन्तही काव्यात्मक संयोजन, कलात्मक वृत्ति, व्यञ्जना की प्रौढ प्रेयणीयता और अभिव्यक्ति की सलिल तरंगमयता प्रदान कर अमर बना दिया। सूरदास महान् कलाकार हैं, संयोजन, संगठन और शब्द निर्माण के शिल्पी हैं।

सूरदास न केवल ब्रज भाषा के प्रथम कवि हैं वे गीतिकाव्य के भी अप्रतिम आख्याता हैं। उनके पदों की स्वर लहरियाँ सदियों से मानव हृदय को उद्वेलित कर रही हैं।

“कृष्ण चरित के गान में गीतिकाव्य की जो धारा पुरव में जयदेव और विद्यापति ने बहाई, उसी का अवसम्भवन व्रज के भक्त कवियों ने किया।” इससे निश्चित मात्र भी सदेह नहीं है, कि तु यह भी निर्विवाद है कि गीतिकाव्य ने सूरदास के हाथों का सहारा पाकर चरम उत्कर्ष प्राप्त कर लिया।¹

गीतिकाव्य और व्रजभाषा दोनों ही सूरदास के आश्रय से उत्पत्ति के अन्तिम शिखर पर जा पहुँचे। स्वानुभूतिपरक गीत हो चाहे परानुभूतिपरक, दोनों ही क्षेत्रों में सूरदास के समक्ष खड़ा करने योग्य तुलसीदास के अतिरिक्त दूसरा कोई भी कवि नहीं हुआ। स्वानुभूतिपरक गीतकारों में गोस्वामी तुलसीदास अपनी “विनय पत्रिका” के कारण अवश्य सूरदास से बीस पड़ते हैं, किंतु परोक्षानुभूतिपरक गीतियों में सूरदास अप्रतिम हैं।²

सूरदास में पुष्टिभाग की पारिभाषिक शब्दावली का प्रयोग नहीं मिलता। वह शकर अर्द्धत के विरोधी थे। कृष्ण के लीलावर्णन में उन्होंने पुष्टि भाग सम्मत् बाल लीलाओं का आत्मत्व और सध्य परक जो चित्रण किया है वह “न भूता न भविष्यति” कहा जा सकता है। इन लीलाओं में स्वकीयभाव, परकीयभाव, निकुञ्ज, बेलि, राधा और गोपियों के साथ रति ब्रीडा, निय विहार, सखीभाव, युगल उपासना आदि कृष्ण भक्ति के वे सभी पक्ष स्वाभाविक रूप में समन्वित मिलते हैं जिन पर गिम्बाक, चैतन्य, हरिवंश और हरिदास के सम्प्रदायों में जोर दिया गया है।

नन्ददास

दो सौ धारण बरगवो की धार्ता में नन्ददासजी तुलसीदास के भाई कह गये हैं और कहा गया है कि तुलसी ने जो कृष्ण काव्य लिखा है वह अपने भाई नन्ददास के ही प्रभाव से किन्तु यह सम्भव सम्भव नहीं है और यह बात निश्चय ही धुकी है रूपवती सत्रानी की आसक्ति ही कृष्ण भक्ति में परिणत हो गई और बिटठलनाथजी से दीक्षा प्राप्त करके यह कृष्ण के अन्तर्गत भक्त हो गये। रोला छंदा में लिखित इनकी रासप चाध्यायी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक है। इसमें कृष्ण की रासलीला का अत्यन्त सरस और मधुर आश्रय है। भागवत दशमस्कन्ध रुक्मिणी मगत, सिद्धांत पचाध्यायी रस मजरी निरह मजरी, नाम चिन्तामणि माला अनेका यमाला, दानलीला, मानलीला, अनेकाय मजरी, जान मजरी, श्याम सगई, भ्रमरगीत और सुदामा चरित इनके ग्रंथ हैं। इनके दो सौ से अधिक पुस्तक पद भी मिले हैं। इन्होंने अपने भवर्गीत में योग के ऊपर प्रेम की प्रतिष्ठापना

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास पं रामचन्द्र गुप्त पृष्ठ 199

2. लालधर त्रिपाठी द्वैप्रभासी गीतिकाव्य का विकास पृष्ठ 429

की है और बड़ी ही सुंदर सरप और तार्किक पद्धति पर इनका निरूपण किया है। इनकी गोपिकाएँ दशन शास्त्र में निष्णात और तकप्रवण हैं।

कुमनदास

वल्लभाचार्य के गिष्य थे, शूद्र होने पर भी आचार्य के शिष्य थे शूद्र होने पर भी आचार्यजी की कृपा से ये मंदिर के मुखिया हो गये थे। ये बड़े दुर्वात एव बूट बुद्धि वाले थे। इन्होंने अथ कृष्ण भक्तो के समाग राधा कृष्ण के प्रेम को लेकर शृ गार रस के पद गाये हैं। जुगलभान चरित्र, भ्रमरगीत, प्रेमतत्त्व निरूपण नामक ग्रन्थों के साथ ही इनके प्रेमलीला एव बाल लीला के पद भी मिलते हैं।

परमानन्द दास

व वल्लभाचार्य के शिष्य थे। इनके फुटकल पद मिलते हैं परमानन्द सागर में इनके आठ सौ पन्नीस पद हैं।

चतुर्भुजदास

ये तुम्हानदासजी के पुत्र और विठठलनाथजी के शिष्य थे। द्वादशवयस, भविष्यप्रताप तथा हितजूकोमगल इनके तीन ग्रंथ हैं। इनके फुटकल पदा के सप्रह भी मिले हैं। इनका विषय कृष्ण की बाल लीला एव प्रेमलीला है।

द्योतस्वामी

ये विठठलनाथजी के शिष्य थे, मथुरा के पण्डा होने के कारण पहले व बड़े अवलम्ब थे। गोस्वामी से दीक्षित हान पर शान्त, विनम्र और भक्त हो गये। इनके स्फुटपद ही मिलते हैं। कृष्ण की बाल लीला, प्रेमलीला का गायन इन्होंने बड़े सरस, मधुर और ललित रूप में किया है। ब्रजपति और ब्रजभूमि के प्रति इनके हृदय में अक्षर अतुराग था 'ह विघना तो सो अचरा पसारि मांगो, जनम जनम दीजौ याही ब्रजवगिदो'।

गोविन्ददास

ये विठठलनाथजी के गिष्य थे। कहा जाता है कि प्रख्यात वृष्ण भक्त कवि होने के साथ ही वे एक श्रेष्ठ गायक भी थे। तानसेन कभी कभी इनका गीत सुनने के लिये आया करता था। इनके कुछ स्फुट पद मिलते हैं जिनमें श्रावण हाता है कि ये पद किसी बड़े ग्रंथ के अंग हैं।

सुरनाम को छोड़कर अथ अष्टादशवीय कवियों में साम्प्रदायिक सजगता अधिक थी और उन्होंने पुष्टिमार्गीय सिद्धान्त सम्मन कथन भी यत्र तत्र किये हैं। उन्होंने वल्लभ विट्ठल और उनके पुत्रों का नामोल्लेख भी किया है, उनकी

प्रदास्तिर्वा और बयाद्वा भी गाई है। इसी कारण उनके काव्य में आनुपातिक रूप में कवित्व कम हो गया है। नन्ददास ने भँवरगीत में सुदार्ढ्य परक दार्शनिक शब्दावली का भी प्रयोग किया है। अष्टछाप के सभी कविधों का कव्य विषय श्री कृष्ण की रूप मापुरी और प्रेम सीलाओं का आख्यान ही है। यही इन कवियों की सीमा है। अष्टछापीय कवियों के पदों में भरपूर प्रीति और परिमार्जित व्रज भाषा के दर्शन होते हैं। "इन भक्ति भावों की रचनाओं में प्रचार के बाद लौकिक रूप की परम्परा फीकी पड़कर निर्जीव हो गई। इन कवियों ने उसमें नया पाण सन्धारित किया और नया तेज भर दिया। परवर्ती काल की श्रमभाषा को सीला निकेतन भगवान श्री कृष्ण के गुणगात्र के साथ एकान भाव से बाँध देने का श्रेय इही कवियों को प्राप्त है।"¹

इन कवियों ने व्रजभाषा काव्य को गीत काव्य की अत्यन्त निधि दी है। उसे अनेक विध व्यञ्जनाओं और असकृत्तियों से सम्मिलित किया है, उनका काव्य कृष्ण भक्ति परम्परा का अमरकोष है। हिन्दी की परवर्ती कृष्ण काव्य परम्परा पर उनकी अमिट छाप दृष्टव्य है। वास्तव्य, सत्य सयोग विवोग एव भक्ति रसों की दृष्टि से अष्टछापीय कवियों का काव्य सही अर्थों में रत्नाकर है।

वरतुत अष्टछाप की रचनाओं का निबन्धन बीतन के लिये हुआ था। मूर आदि कवि कीर्तनिका भी थे। इसी कारण उनके पदों में राग, तात, लय, मात्रा आदि का ध्यान रखकर समीतात्मकता के गुणों का पूरणरूप से समन्वय हुआ है।"

अष्टछापीय कवियों का काव्य व्रज भाषा में ही रचा गया है। गुणलजी ने मूर को व्रज भाषा का प्रथम कवि मानकर सवश्रेष्ठ कवि की सना दी है। परमानन्ददास की भाषा में भावात्मकता आलंकारिकता, सजीवता प्रवाहमयता, सपता आदि उत्कृष्ट गुण उपलब्ध हैं। नन्ददास का गद्द चमन भी अत्यन्त सुन्दर है, उसमें तक प्रवणता, भावानुकूल पद्ययोजना, चित्रोपमता आदि उपलब्ध हैं। इन कवियों ने कृष्ण चरित पर कोई प्रबन्ध काव्य नहीं लिखा। वे पुस्तक काव्य के गुलदन्ते में ही पद पुद्गों को सजाते रहे। 'शक्ति सील और सी दय साकपक्ष के तीन अवशेष है। कृष्णश्री साखा के कवियों ने कृष्ण व सौन्दर्य को ही अपनाया। इसी पक्ष को ही उन्होंने काव्य में स्थान दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि वे योग माधुय पक्ष से अति प्रीत मुक्तक रचना ही लिख सके। यदि वे चाहते तो श्रीकृष्ण के लोक पक्ष को जो शक्ति सील और सौन्दर्य से अति प्रीत एव अति मुष्ट और उदात्त भाषा महाकाव्य के लिये उपयुक्त भी था, ग्रहण कर सकते थे किन्तु उन्होंने ऐसा नहीं किया। उन्होंने उनके आकषण स्वरूप को स्वीकार किया। इस

1 हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास व इत्यादीप्रकाश डिपेंसी, पृष्ठ 192।

प्रकार सूर, नन्ददास आदि अष्टादश के कवि मुक्तक रचना करने में ही समर्थ हो सके। जाई महाकाव्य को उ प्रदान कर सके।¹

बल्लभ सम्प्रदाय के दूसरे कवियों में ब्रजनासीदास महत्वपूर्ण है, उनके द्वारा रचित ब्रज विलास (स 1770 ई) कृष्ण भक्ति की एक महत्वपूर्ण रचना है। इस काव्य में प्रबन्धात्मक रूप में दोहा चौपाई छंदों में राधाकृष्ण की लीलाओं का आचयान किया गया है। कृष्ण जन्म से लेकर गोपियों के प्रेम और बिरह तक के वर्णन अत्यन्त भावप्रवण हैं। यन्तु इस प्रबन्ध काव्य का आधार सूरसागर है। उद्भव के मथुरा गमन तक की लीलाएँ इसमें वर्णित हैं।

गौडीय सम्प्रदाय के गदादर भट्ट ने "युगल गतक" की रचना की इस ग्रन्थ में "वन्दशविनि विलासी" राधा और कृष्ण की प्रणय लीला का वर्णन किया गया है। उन्हीं कृष्ण ब्रजराज, भक्त रसिक, मोहनि सूरत देवताओं द्वारा वर्णित हैं। वृंदावन कृष्ण की विहार स्थली होने का कारण उन्हें प्रिय है।²

गौडीय सम्प्रदाय के दूसरे कवि श्री वरनभ रसिक हैं। य गदादर भट्ट के द्वितीय पुत्र थे बल्लभरसिक ने समार के सार नाते चूठ माने। केवल श्री कृष्ण का युगलरूप ही अपना आराध्य माना। उन्होंने घोषित किया।

"हम तो युगल रूप रसमात, नात ही के मान।"

राधा कृष्ण की विविध लीलाओं का वर्णन उन्होंने कविता सवैया, दोहा, पं आदि स्फुट रूप में किया है।

माधुरीदास गौडीय सम्प्रदाय के उत्कृष्ट कवि माने जाते हैं। राधाकृष्णदास ने इनके दोहा का सम्पादन किया है। माधुरीदास ने राधा कृष्ण लीला विषयक पद्यों का सङ्कलन "माधुरी वाणी" में किया है। इनके पद सात माधुरियों में विभक्त किये गये हैं - उत्कठा, वशीवट, केलि वृंदावनदान, मानत तथा होली। माधुर्य भक्ति के सिद्धान्त पक्ष की दृष्टि से इनकी वाणी महत्वपूर्ण है।

इनने उपास्य राधा और कृष्ण समवयस्क हैं और इनमें प्रगाढ़ प्रेम है कृष्ण रतिनिधि, रसनिधि, प्रेमनिधि तथा उल्लासनिधि है राधा बड़ा विपिनश्वरी, नवल, विचोरी एवम् गगनयमी है। दोनों की आराधना से व्यक्ति भवसागर पार हो जाता है। सयोग वियोग पक्षों का वर्णन उत्तम हुआ है। ये भारत कवि नहीं रससिद्ध कवि भी हैं।

1 डॉ प्रतिपालसिंह बीसवीं शताब्दी (पूर्वाह्न) के महाकाव्य पृष्ठ 33।

2 आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास, प 199

हिंदी के मुत्तलमान कवियों का कृष्ण काव्य

“महावाणी” के रचयिता हरिदेव व्यास हैं।¹ जिसका चलेन बियोगी हरि ने ‘ब्रज माधुरी सार’ में किया है। महावाणी ग्रंथ में उरसाह, रोया मुत्तल मरुज तथा सिद्धान्त गुणो का वणन है।

महावाणीकार के आराध्य सदैव प्रणयलीला में सलतन रहते हैं। दोनों एक प्राण हैं केवला लीला के लिए विग्रह धारण किए हैं। आनन्दगामिनी की स्वरूपा राधा का स्थान वृष्ण से भी विशिष्ट माना गया है। महावाणी भाव, भाषा और शैली का सौंदर्य स्थल है। कवि ने उस सिद्ध काव्य का सजन किया है।

सूरदास मदनमोहन का वास्तविक नाम ‘सूरध्वज’ था। बल्लभ सम्प्रदाय के सूरदास से इनके पदा की विलग करना बड़ी टेढ़ी खीर है, फिर भी जहाँ मदन मोहन नाम की छाप मिलती है वहाँ पद पहचाने जा सकते हैं।

गोस्वामी हितहरिवंश राधा बल्लभ सम्प्रदाय के प्रतिष्ठापक थे। इस सम्प्रदाय वाले ने राधा कृष्ण की युगल जोड़ी की भक्ति करते हुए भी राधा को प्रमुखता प्रदान की है।

हित हरिवंशजी विरचित चार ग्रंथ राधा सुधा निधि, यमुनाष्क हित चौरासी तथा स्फुट वाणी उपलब्ध हैं। “राधा सुधानिधि” संस्कृत भाषा में रचा गया है। ग्रंथ में रचयिता ने राधा बदना, उपासना, प्रशस्ति, भक्ति सौंदर्य आदि का वणन किया है। “हित चौरासी” में चौरासी पद रचे गये हैं। स्फुटवाणी में फुटकर पद संकलित किये गये हैं।²

स्वामी हितहरिवंश पहले मध्वानुयायी थे, बाद में इन्हें स्वप्न में राधिकान्ती ने मंत्र दिया और उ होने अपना अलग सम्प्रदाय चलाया। इसलिए धाचाय शुक्ल ने हितहरिवंश द्वारा प्रवर्तित राधा बल्लभ सम्प्रदाय को माध्व सम्प्रदाय के अन्तर्गत माना है।³

‘हित चौरासी’ नाम से इनके ब्रजभाषा पदों का संग्रह मिलता है। यह कृति अत्यंत सरस और हृदयग्राहिणी है। इन्होंने ब्रजभाषा काय श्रुति के प्रसार में बड़ा योग दिया है। इनके अनेक शिष्य अच्छे कवि हुए हैं। हितहरिवंशजी की रचना इतनी रसमयी रही है कि उन्हें वशी का अवतार तक कहा जाता है। उनकी कुछ फुटकर वाणी भी मिलती है।

इसी सम्प्रदाय का एक अग्रणी सम्प्रदाय भी है। इस सम्प्रदाय ने चतुर्पय प्रमुख वैशिष्ट्य इन प्रकार है

- 1 बियोगी हरि ब्रज माधुरी सार, पृष्ठ 75
- 2 धाचाय रामचन्द्र गुप्त हिंदी साहित्य का इतिहास पृ 180 181
- 3 व रामचन्द्र गुप्त हिंदी साहित्य का इतिहास पृ 174।

1- श्री राधा चरण की प्रधानता, 2- कुंज के लिए दम्पति का सखी भाव, 3- महाप्रसाद में निष्ठा, 4- विधि निषेध का सवथा त्याग, 5- अनन्य दास भाव से भक्ति ।

हितहरिवंश का स्थान भक्तिकाल के आचार्य कवियों में महत्वपूर्ण है । वस्तुतः इस सम्प्रदाय में राधा ही परम इष्ट है, कृष्ण प्रियतम हैं, अतः माय हैं परन्तु इष्ट नहीं हैं । कृष्णजी राधा की दासियों से चाटुकारिता करते रहते हैं ।

दामोदर दास सेवक कृत 'सेवक बाणी' ग्रंथ में प्रारम्भ से अंत तक श्री कृष्ण भक्ति विषयक पद मिलते हैं, इनके गुरु हित हरिवंशदास थे । हरिराम व्यास कृत "व्यासबाणी" में राधा कृष्ण की निवृज लीला का वर्णन माधुय भक्ति के रूप में मिलता है । ध्रुवदास ने हित हरिवंशदास को अपना गुरु माना था । उन्होंने वृंदावन में रहकर राधा कृष्ण प्रणय लीला सम्बन्धी पदों की रचना की । इनके काव्यों में सुन्दरस्थित कला पक्ष का सीन्धु इष्टव्य है ।

नागरीदास ने इस पदावली में कृष्ण भक्ति विषयक पद रचे हैं । इनके काव्य में भाग का परिष्कृत, अलंकृत रूप मिलता है ।

भगवानदास अनन्य अली - कहते हैं कि उन्होंने राधा के दशन के पश्चात् अपना नाम अनन्यअली रख लिया ।

गोविन्द स्वामी - इनके रचे हुए किसी बड़े ग्रंथ के कुछ फुटबल पद मिलते हैं । ये भक्त कवि होने के साथ साथ उत्तम कोटि के गायक भी थे । कहते हैं, इनके सुष्ठु गायन और स्वर लहरी से प्रभावित होकर कई बार तानसेन इनके गीत सुनने आया था ।

नरोत्तमदास

नरोत्तमदास द्वारा विरचित "सुदामा चरित" में सुदामा के घर की दरिद्रता का बड़ा ही सुन्दर और रसमय वर्णन है । सुदामा उनकी पत्नी और श्री कृष्ण रविमणी के सद्म अत्यन्त सवेदन प्लावित बन पड़े हैं । इसकी वस्तु और भाषा अत्यन्त सरस और हृदयसाहिणी हैं । सवेदन शील कथा में कवि की भावुकता ने सोने में सुहागे का काम किया है । उसकी भाषा परिमार्जित, व्यवस्थित और भाव-प्रयण है । इनका सिखा हुआ "ध्रुव चरित" नामक एक काव्य भी कहा जाता है, पर अभी तक यह शोध के आलोक में नहीं आ सका । इनका एक तीसरा ग्रंथ 'विचार मासा' उपलब्ध है । कवि की अक्षय अमर कीर्ति का स्थायी आलोक स्तम्भ "सुदामा चरित" ही है । "सुदामा चरित" की सैकड़ों पत्तियाँ सहृदयों को कठस्थ है । यह ग्रंथ अपनी निमलता, सहजता और हृदय की मामिकभाव प्रयण अनुभूतियों की सच्चाई, गहराई, भाव शक्तता और साक्षणिक अभिव्यजना

के लिये प्रख्यात है। इसमें कृष्ण सुदामा की मित्रता की कहानी का वचन अत्यंत रोचक, मनोवैज्ञानिक और प्रभविष्णु रूप में उपलब्ध है। इसमें नाटकीयता, कल्पना, हृद्य, विस्मय आदि भावों की अभिव्यंजना अत्यंत सहज रूप में मिलती है। सहज सरल कविता और गेयता ने इस काव्य की प्रसिद्धि में चार चौद लगा दिये हैं। भक्तिकाल के स्वर्णिम युग में इस काव्य को एक हीरक नग माना गया है।

सखी सम्प्रदाय

स्वामी हरिदास इस सम्प्रदाय के प्रवर्तक हैं। (शु गार रस के उद्दीपन विभाव के अंतगत "शक्ती" अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है)। यह सम्प्रदाय निम्बाक मन की एक अवान्तर शाखा है। हरिदासजी प्रारम्भ में निम्बाक मत के अनुयायी थे, परंतु कालांतर में गोपी भाव को उपयुक्त मानकर उन्होंने इस स्वतंत्र शाखा की स्थापना की। हरिदास का जन्म भाद्रपुत्र अष्टमी 1441 ई।

नामादास जी ने "भक्तमाल" में लिखा कि सखी सम्प्रदाय में राधा कृष्ण की उपासना और वाराघनाओं की लीलाओं का अवलोकन साधक सखी भाव से करता है। इस सम्प्रदाय में प्रेम की गम्भीरता और निमलता का दर्शन होते हैं। प्रेम इस सम्प्रदाय का प्रमुख तत्त्व है। हरिदास के पदों में प्रेम को ही प्रधानता दी गई है। कृष्ण की प्रेमानुगा भक्ति में दिव्य शक्ति है। भक्त सखी रूप में कृष्ण का चरणों में अपना को योद्धावर कर लेना अपनी साधकता मानता है। मधुर रस और प्रेम की गम्भीरता सखी सम्प्रदाय की विशेषताएँ हैं।

हरिदास का प्रमुख कवि विट्ठल, विष्णु सरसदेव नर हरिदेव, रसिकदेव ललित किशोरी, ललित मोहिनी चतुरदाम, ठाकुरदास, राधिकादास राधाप्रसाद, भगवान दास आदि हैं। ये सभी प्रायः अच्छे कवि हुए हैं। इनकी रचनाओं में ब्रजभाषा का सुंदर और परिष्कृत रूप मिलता है।

हरिदास की विहार विषयक पदावली 'केलिमाला' के नाम से प्रसिद्ध है। इनकी रस प्लावित कान्ठी में माधुर्य और हृदय के भाव और प्रेम का भव्यरूप दशनीय है।

"गगनवत् रसिक की बानी" नाम से भगवन्तरसिक का काव्य समूह प्रकाशित हुआ है। सहचरि चरण और गलीचरण की सुष्ठु रचनाएँ और दो अन्य पुस्तकें भी मिलती हैं—ललित प्रवाण और सरस भजायली में सम्प्रदाय के इतिहास और साधना पदा पर अच्छा प्रकाश मिलता है। राधा कृष्ण की युगल उपासना में गली भाव की प्रधानता दी गई है। हरिदास स्वयं संगीत में निष्णात थे और रससिद्ध भक्त कवि थे।

भक्ति काव्य में कृष्ण काव्य परम्परा के अनेक भक्त कवियों ने इस काव्य-धारा के उत्तरोत्तर विकास में अमूल्य योगदान दिया है। इन सभी कवियों के यहाँ कृष्ण परम ब्रह्म हैं। उपनिषद महाभारत और पुराणों में किसी न किसी रूप में कृष्ण कथा के सूत्र उपलब्ध होने हैं। सरकृत में जयशंकर ने शृ गारित कृष्ण काव्य परम्परा का प्रवर्तन किया। हिन्दी में विद्यापति ने उसे आगे बढ़ाया। लालदास, गोविन्ददास, गिपट निरजन, लक्ष्मीनारायण, बलभद्र मिश्र, मोहन भीष्म अतर्वेदी चतुरदास, धर्मदास, सुखदेव मिश्र आदि कवियों ने भी परम्परा को आगे बढ़ाने में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। "रत्नाशेय सम्प्रदाय", "माधव सम्प्रदाय", "विष्णु स्वामी सम्प्रदाय" "हरिदासी सम्प्रदाय", निम्बाक सम्प्रदाय, वल्लभ सम्प्रदाय, राधा वल्लभ और चैतन्य सम्प्रदाय का मूल स्वर कृष्ण की भक्ति ही रहा है।¹

पद्महवी शतान्दी में जिस प्रेमाभक्ति का उदय हुआ उसने सैकड़ों वर्ष तक भक्तों को काव्यस्थाना की प्रेरणा दी और अपने प्रेमभक्ति के गीत अमृत से कोटि-कोटि जन के मन को मुग्ध किया। 16वीं शतान्दी के पश्चात् कृष्ण भक्ति काव्य में सखी भाव की साधना की प्रधानता हो गई। महाप्रभु चैतन्य के गिण्ठों द्वारा प्रवर्तित "गौडीय वैष्णव सम्प्रदाय, गोस्वामी हित हरिवंश द्वारा स्थापित राधा वल्लभोय सम्प्रदाय और स्वामी हरिदास द्वारा घोषित टटटी सम्प्रदाय इन सम्प्रदायों के भक्ति सिद्धांतों में आत्म समर्पण" का प्रबल वेग है और यह आत्म-समर्पण स्त्री रूप में सबसे अधिक अभिव्यक्त होता है। "वृन्दावन" की भाँति "अयोध्या" भी सखी सम्प्रदाय के भक्तों का केन्द्र बन गया।

बाबा तुलसीदास

बाबा तुलसी ने भी कृष्ण भक्ति परम्परा के अंतर्गत 'कृष्ण गीतावली' नामक एक ग्रंथ रचा है। इसमें कुल 61 पद रचे गये हैं। 'कृष्ण गीतावली' में भ्रमरगीत से सम्बद्ध गोपी और उद्धव संवाद के भी 26 पद पाये जाते हैं। तुलसी की गोपिकाएँ सूर की भाँति मुखर नहीं हैं पर तु संवेदाशील विरह दग्धा आर वृल मर्यादा से दबी डबी सकोचगील हैं। 'कृष्ण गीतावली' के पद गेयता और मधुर शब्दावली से सम्पृक्त हैं। कवि ने अपने स्वभावानुसार दास्य मधुर और वात्सल्य भाव से आप्लावित इस ग्रंथ का उपस्थापन किया है।

श्रीकृष्ण भक्ति का साहित्य मनुष्य की सबसे प्रबल भूल का समाधान करता है। यह मनुष्य को बाह्य विषयों की आसक्ति से तो अलग कर देता है, लेकिन उसे शुष्क तत्त्ववादों और प्रेमहीन कथनों का उपासक नहीं बनाता। वह मनुष्य को सरसता को उदबुद्ध करता है उसकी अन्तर्निहित रससिक्त अनुराग लासता को ऊष्णमूर्खी करता है और उसे निरन्तर रससिक्त बनाता रहता है।

1 डॉ. प्रताप नारायण टण्डन हिन्दी साहित्य का प्रवर्तितमय इतिहास, पृ. 201

भक्तिकासीन कृष्ण काव्य का एक महत् वशिष्ट्य यह है कि कृष्ण की वात्सल्य और प्रेम लीलाओं का ऐसा उत्तम कोटि का सरस, मनोहर साहित्य अयत्र दुर्लभ है। वात्सल्य और प्रेम के इतने सूक्ष्म चित्रण सम्पूर्ण हिंदी साहित्य में अयत्र नहीं मिलते। ब्रज को एक श्रेष्ठ कोटि की काव्य भाषा बनाने में इन कृष्ण भक्त कवियों का अनुपम योग है। इन कवियों में ही वस्तुतः गीति काव्य का उत्तम विकास और परिपाक मिलता है। इन भक्तों के एकांतिक आत्म समर्पण ने मधुर रस की पावन मदाकिनी कोटि-कोटि जन के लिए सुलभ कर दी है। भाव, भाषा अलंकार आदि दृष्टियों से इस काल का साहित्य अनूठा है। राधा कृष्ण की पावन लीला को इन कवियों ने उत्तर भारतीय जनता के लिये सहज ही उपस्थित कर दिया है। लोकभाषा के साहित्यिक उत्थान की दृष्टि से भी कृष्ण भक्त कवियों का योगदान महाधर्म है, लोक प्रचलित काव्य रूपों के साथ जीवन के महत् लक्ष्य और आदर्श का योग ही जान के कारण इस साहित्य में एक अपूर्व तेजस्विता आ गई है। इनके छंदों, गीतों, पदा में कृत्रिमता नहीं है। भाषा और भाव के आहम्वर का वहन करने में वह पूर्ण रूप से समर्थ है। शुद्ध सात्विक जीवन भगवत् भक्ति, भगवान् के निमल पावन चरित्र का गान और भक्ति इस साहित्य को प्रेरणा देने वाले अंग हैं। कृष्ण भक्ति के अनेक सम्प्रदायों ने तत्कालीन जनता के मन में एक महान् लक्ष्य और महान् आदर्श का सम्बल दिया।

अथर्व श का य से विकसित होती हुई कृष्ण काव्य परम्परा प्रवाहित होती रही। इस काव्य का उपजीव्य प्राकृत की 'गाथा सप्तशती', 'सिद्ध हेम प्राकृत शब्दानुशासन' आदि थे। इन युग में जाकर यह धारा लोक तत्त्वा से विमुक्त होकर अभिजात तत्त्वा से सम्पृक्त हो गई। यह धारा जिसमें काव्य को लक्षण ग्रन्थों से सम्पृक्त रखा गया, रीतिबद्ध काव्य धारा कहा गया, इसमें नायिका के सौंदर्य नायक-नायिका के लक्षण आदि का विवेचन किया गया। हिंदी रीतिकाल में रीति बद्ध धारा के अतिरिक्त रीति मुक्त स्वच्छंद काव्य धारा भी प्रभावित हुई। इस धारा का प्रतिपाद्य भी कृष्ण प्रेम ही है। इनके काव्य का मूल स्वर प्रेम-विरह ही है। इन कवियों ने भूमियों की प्रेम व्यंजना की तरह निराकार ब्रह्म की आराधना न करके सगुण साकार कृष्ण को ही आराध्य माना। धनानन्द स्वच्छंद काव्य धारा के प्रतिनिधि कवि मान जाते हैं, इन्होंने परम्परा से आते हुए शृंगार के विनास का चित्रावन किया है, परन्तु यहाँ शारीरिक व्यापार वणन का स्थान सूक्ष्म भाव चित्रों ने ग्रहण कर लिया है। केवल धनानन्द ही नहीं, धरन् सभी रीति मुक्त धारा के कवियों में समीप की अपेक्षा वियोग भावना की प्रमुखता पायी जाती है। ठाकुर आलम, बोधा, रसनिधि सभी कवि विरह के गायक हैं। रीतिबद्ध कवियों की भक्ति भावना सही सांस्कृतिक थी, परन्तु रीति मुक्त कृष्ण भक्ति काव्य परम्परा में उन्मुक्तता, व्यापकता एवम् औदार्य के दर्शन होते हैं।

रीतिबद्ध और रीतिमुक्त दोनों धाराओं के कवियों ने कृष्ण भक्ति प्रेम की उपजीव्य बनाया, लेकिन दोनों के रास्ते पृथक् थे। रीति बद्ध कविता का लक्ष्य कवित्व प्रदधान था, इसलिये वे काव्य प्रसाधन पर बल देकर अपने आश्रयदाता को प्रसन करने में जुटे थे। शृंगार का न्यूनतम रूप सकीर्ण नायिका भेद, नग्न शिख-सौन्दर्य चित्रण बरन में उनकी तथा उनके आश्रयदाता की सन्तुष्टि थी परन्तु रीति मुक्त कवियों ने राधा कृष्ण को दूसरे रूप में प्रस्तुत किया। इन कवियों ने अपनी आत्मा का सम्पूर्ण एकनिष्ठ प्रेम कृष्ण को समर्पित किया, परन्तु वे भक्ति से वंचित रहे। अतः इनकी मूल प्रेरणा "प्रेम लक्षणा" भक्ति ही है।

इस प्रकार रीतिकालीन कृष्ण काव्य धारा एक विस्तृत धरातल पर उत्तर कर भक्तियुगीन दाशनिकता से ऊँचे हुए जनमानस के हास विलास एक अनुरजन को सहज ही उत्तेजित करने लगी ¹

यद्यपि भक्तिकाल की तुलना में रीतिकालीन स्वानुभूति परक काव्य नहीं कहा जा सकता, किन्तु लोक-जीवन के मामिक स्वरूप की व्यजना में इसका महत्त्व अप्रतिम है। सम्भृत वे विद्वान् हाल कृष्ण "भाषा सतशली" के सौंदर्य की दलाधा करत अधात नहीं, उसमें लोक जीवन की सहज रमणीयता नहीं आ सकी है। इसे प्राकृत के अर्थ में लोक साहित्य (फोक लिटरेचर) नहीं कहा जा सकता। इस तथ्य को डाक्टर एस के डे ने भी स्वीकार किया है। अन लोक तत्त्व की दृष्टि से रीतिकालीन में एक विशिष्ट सीमा में ही सही ऐसा वैविध्य है और पारिवारिक जीवन के ऐसे अनुरजन चित्र हैं जो रीतिकाल की पूर्ववर्ती काव्य धाराओं में हमें कम मिल पाते हैं। जो भिन्न हैं वे कलात्मकता व सौन्दर्य से रहित और व्यजना के अनठे विधान से अलग भक्ति काव्य स्वात्मवैशिष्ट्य निरूपण की दृष्टि से भले ही उच्च धरातल पर प्रतिष्ठित किया जा सके, लेकिन उसके स्वर में ऐसी तीव्रता नहीं है, जो हमारे व्यवहारिक जीवन की शिराओं में शक्तिमत्ता का रक्त संचार कर सके। ²

रीतिकाल में शुद्ध कृष्ण भक्ति काव्य भी रचे गये हैं। पुष्कर निवासी हित वृन्दावनदास ने कृष्ण भक्ति के सवा लाख पद रचे थे परन्तु प्राप्त पदों की संख्या 20,000 है। अनुभूति प्रवणता इनके काव्य का विशिष्ट गुण है, जिसमें सिधिलता का नाम नहीं। भाषा पर इनका अपूर्व अधिकार था।

भगवत रसिक कृष्ण भक्ति में लीन परम योगी कवि थे। इनका और गुमान मिथ का नाम भक्त कवियों में सम्मान पूर्वक लिया जाता है। इसी युग में ब्रज-वासी दास ने 'विलास' नामक महाकाव्य लिखा, इसे बड़ी प्रख्याति मिली।

1 डॉ. विशोदीयास रीति कवियों की मौलिक देन, पृ 252।

2 देव सपाण्य व बालस्त मिथ मुच्चसागर तरंग पृ 1 सन् 1898।

गोकुलदेव, गोपीनाथ और मण्डिदेव ने "महाभारत" और हितहरिवंश का अनुवाद अत्यन्त भावपूर्ण और मनोहर रूप में किया है। इसमें लगभग 2000 पृष्ठ हैं। इस ग्रंथ के निर्माण में पूरे पचास वर्ष लगे थे।

रीतिकाल में "महाभारत" के कथानक को उपजीवी बनाकर अनेक महाकाव्य लिखे गये। "महाभारत" के कृष्ण महान "राजनीतिष", 'योगेश्वर' और उस युद्ध के प्रमुख सूत्रधार थे।

1711 विश्वमी में शाहजहाँ के शासन काल में धर्मधारा ने महाभारत नामक महाकाव्य की रचना की। 1719 ई "श्रीपति" ने "कणपूर्व" की रचना की। सन् 1718 से 21 में सज्जतिधन "महाभारत" नामक प्रख्यात काव्य की रचना की। 1737 में कुलरति मिश्र ने "सग्राम सार महाभारत" के द्रोणपर्व को आधार बनाकर लिखा। सन् 1757 को 'विजय मुक्तावली' महाभारत सम्बन्धी एक विशिष्ट ग्रंथ है। इसके रचयिता धर्मसिंह कामरूप हैं। सन् 1760 में "पाण्डव योद्धु चंद्रिका" नामक सुन्दर ग्रंथ की रचना श्री केशवराय मिश्र ने की।

सन् 1766 में निगज कवि ने 'भारत विकास' और हेमराज ने सन् 1789 में महाभारत की रचना की। सन् 1814 में श्री मुरलीधर मिश्र ने "नलोपाख्यान" नामक काव्य का प्रणयन किया, जिसमें 16 सर्गों में कथानक को सुगुम्फित किया गया है। सन् 1827 में लक्ष्मीधर साल ने भारत सार तथा 1830 में मण्डन भट्ट ने 'भारत चरित' की सज्जा की। सन् 1842 का देवीदास कृत पाण्डव 'चरितार्णव' नामक अपूर्ण ग्रंथ मिला है। निवदास और लखन सेन ने सन् 1857 और 1870 में 'महाभारत' की रचना की। नारायणसिंह कामरूप ने 'पाण्डवाश्वमेध' काव्य की रचना की। स्वर्णदास ने सन् 1892 में 'पाण्डव योद्धु चंद्रिका' नामक काव्य ग्रंथ रचा। 1830-84 में गोकुलनाथ गोपीनाथ और मण्डिदेव ने महाभारत का अनुवाद किया। सन् 1898 में राम कवि ने 'नल चरित' नामक महाकाव्य की रचना की। यह 22 सर्गों का उत्कृष्ट शोर्टि का महाकाव्य है। यह अवश्य है कि कृष्ण भक्ति की पावन मन्दाकिनी रीतिकालीन कवियों के निकट आकर 'राधा-ब-हार्द-सुमिरन का बहाना' बन गई और तत्कालीन कवियों (मगवान् प्रीत्यथ के स्थान पर आश्रयदाता प्रीत्यथ काव्य-सज्जा करके उसमें रजत् तथा लसस का सन्निवेश कर दिया।

इस प्रकार कृष्ण भक्त कवियों का विषय अत्यन्त साक्षिप्त (राधा कृष्ण की प्रेम क्षीमा) था, फिर भी उसमें इतनी अधिक गहराई रही कि परवर्ती काल में कोई कवि उस गहराई का स्पर्श नहीं कर सका।

विभिन्न प्रकार के सूत्र से-सूत्रम भावों, रागों, रागिनियों, पदों सर्वों की बाढ़ सी मिलती है। भक्तिकाल के कृष्ण भक्त कवि राधा-कृष्ण के ही आराधक थे, किन्तु अनेक सम्प्रदायों के थे। धीरे धीरे कालांतर में विज्ञान-शास्त्र और

रस के लिए वे शायद से राधा और कृष्ण की भक्ति को समेट लिया गया। भक्ति-पाठ के कवियों ने अपने को केवल रति (धारसम्प और दाम्पत्य) तक ही सीमित रखा। इस कारण मानव जीवन के अन्य क्षेत्र उनकी परिधि से बाहर रह गये।

भक्तिवाद में एक नयी कवि हुए हैं जो लोकिक रस की कविता के लिए प्रसिद्ध हैं। जाम भी कही-नही भक्ति की प्रवसधारा मिलती है। हरि चरित और श्रीमद्भागवत दाम स्वध भाषा के लेखक सातदास (सन् 1528 ई) ने दोहा चौपाई गौली और अवधी भाषा में कृष्ण विषयक लोकिक रस की कविताएँ लिखी हैं।

'भुगत शतक' के तामसीभाव की कविता के कवि श्री भट्ट के लिए नामा-दासजी ने लिखा है कि वे मधुरभाव सम्बन्धित ललित लीला का 'निरखन हार' हैं। कवि व्यासजी (16वीं शताब्दी) वृन्दावन आकर "राधा-वल्लभी सम्प्रदाय" में शीक्षित हुए थे, वे पहले ओरछा नरग महाराज मधुकर के राज गुरु थे और बाद में हित हरियण के गिष्य हो गये। उनकी राधा भाव की कविताएँ मधुर और प्रभावशालिनी हैं। उनके द्वारा रचित "रास पचाध्यायी की गनती से लोगों ने "सूर सागर" में मिला दिया है।

ध्रुवदासजी ने पद, दोहा, चौपाई, सर्वथा, कवस्त आदि छन्दों में लगभग पालिन ग्रन्थ लिखे हैं। उनकी 'भक्त नामावली', 'भक्तमाल' के अनुकरण पर लिखी गयी महत्वपूर्ण कृति है। लक्ष्मीनारायण (प्रेम तरंगिणी के लेखक), हनुमन् नाटक, गोवर्धन सतसई की टीका, भूषण विचार और 'नल शिल' के लेखक भगवदास के बड़े भाई बलमद्र मिश्र, "कलि बज्जोल" के कवि मोहन (जन्म 1617 ई) मुबारक (अलखगतक, तिलक शतक के गणस्वी लेखक), जोनपुर निवासी जनारसीनाम (जन्म सन् 1586 ई) - "अद कथा" के लेखक के साथ ही सुंदरदास, चतुरदास, भुवाल धमदास, शुक्लदेव मिश्र, रसिकदास आदि कृष्ण भक्त कवि हुए हैं।

भारतीय साहित्य में श्रीकृष्ण घोड़ा कला अवतार या पूर्णावतार प्रह्ला माने गये हैं। उन्हें निष्काम कामयोग का प्रतीक माना गया है। वे साक्षात् योगेश्वर महाभारत युद्ध के सूत्रधार महान् कामयोगी महान् पराक्रमी महान् राजनीतिज्ञ पुरुषोत्तम, रसेश्वर सभी रूपों में महान् हैं। कृष्ण का महिमा मण्डित और वैभवाय त्रैलोक्यों से समन्वित विराट व्यक्तित्व भारतीय मनीषा की एक महान् उपलब्धि है - गोपी जनक-लभ, राधा माधव, राजा, नेता, कामयोगी, भोगी - सभी रूपों में वे महत् और दिव्य हैं।

वे रसज्ञ, रसिक और रसस्वरूप हैं। राधा उनकी आदि शक्ति है। वे उनकी जीवन सगिनी रूप में प्रतिष्ठित हैं। कृष्ण बाल लीला, रासलीला, प्रेमलीला दल हैं।

रीतिपाल में कृष्ण का महाभारत एव धीमद् भगवत गीता का योगेश्वर रूप प्रायः समाप्त हो हो गया है। कृष्ण रसिक शिरोमणि, राधा रमण, गोपी रमण भोगविलास-वृत्ति के प्रधान देवत नायक, रसिण, आनन्द मूर्ति और छैला ही रहे। वे शृ गार रस के प्रधान नायक बने और रीतिपाल के कवि राधा कृष्ण की भक्ति के नाम की सुर सरिता में अपनी शृ गारिक प्रवृत्ति का दिग्दर्शन कराते रहे। य कविगण राजा और सामन्तों को रिझाने के लिए उनकी वासना-तृप्ति के लिए कविता का सजन करते थे। राधा और कृष्ण का स्मरण तो केवल मात्र बहाना था। कवि भिखारीदास ने स्पष्ट स्वीकार किया और डबे की चोट घोषित किया।

“आगे के सुकवि रीझि है तो ता कविताई
न तु राधिका कन्हूई, सुमिरन को बहानो है।”¹

रीति युगीन कृष्ण भक्ति-काव्य धारा की सर्वोच्च विनेयता है शृ गारिकता और रसिकता, जो इस काल की प्रधान प्रवृत्ति बही जा सकती है।

डॉ भागीरथ मिश्र का कथन है कि इस युग के भक्तिकाव्य में भी शृ गारिक भावना का ही प्राधान्य है। इसलिये इस माधुय भाव की अभिव्यक्ति के लिए अनेक सम्प्रदाय निर्मित हुए जो कृष्ण लीला और विलास को अनेक रूपों में सम्पादित करते थे। अनेक पुण्य कवि स्वयं को राधा और मखी मानकर आचरण करने लगे। उन्होंने अपने नामकरण में भी स्त्री वाचक परिवर्तन किया अलबेली, अम्बि ललित किशोरी आदि।

भगवान कृष्ण के लीला स्वरूप का वर्णन करने के लिए कवियों ने काव्य को संगीतात्मकता और नारी सौंदर्य से अलंकृत किया। राधा-कृष्ण और गायियों के प्रतीकों के माध्यम से उन्होंने दादो में मूर्तिकला और नृत्यकला के चित्र अंकित किये हैं। कृष्ण चरित का प्रभाव सर्वत्र व्याप्त था। इस युग की शायद ही ऐसी कोई कृति हो जहाँ राधा कृष्ण का उल्लेख न हुआ हो।

जहाँ तक शृ गार रस की अभिव्यक्ति का प्रश्न है, वहाँ तक तो ठीक है लेकिन रीतियुग में यह शृ गारिकता, अदलीलता और नग्नता में भी परिणत हो गई। राधा कृष्ण का यह ईश्वरावतार और शक्ति रूप समाप्त हो गया और राधा-कृष्ण इसी लोक-जीवन के साधारण नायक नायिका बनकर बनों में, वीधियों में, महलों और गौशाला में अपनी जल-क्रीडा, वन विहार, मानलीला, प्लात्तीला दर्शाने लगे।

रीतिकाल में राधा को रूपसागर, तन्वगी, रति, अप्सरा तो बताया गया, कविगण उसको नारी रूप के नित नूतन सौंदर्य को अभिव्यक्त करने के लिए

¹ आचार्य भिखारीदास काव्य निष्पत्ति, पृ 5

कल्पना लोक में बिचरण करने लगे। राधा विलास मूर्ति बना दी गई। कवियों की सारी प्रतिभा का वेद्रीकरण नारी सौंदर्य को चित्रित करने में होन लगा। वह कोमलता, ममता, वात्सल्य, लज्जा की पूजाभूत मूर्त रूप न रहकर विलास का उपकरण मात्र बन गई। युगों से संचित उसका गरिमामय रूप क्षण में नष्ट हो गया और वह रह गई केवल रंगरेनियों और अठसैलियाँ करने वाली इसलिए अनेक विद्वान आलोचकों का कथन है कि इस युग की रचनाएँ जीवन में उत्तम भावनाएँ प्रदीप्त नहीं करती, बरन् विकार उत्पन्न करती हैं।

रीतियुगीन कवियों ने जीवन में अपूर्व उल्लास, आनन्द, सरसता और मनो विनोद का संचार किया है। मिलन और विरह शृंगार के दृश्य चित्रावन करने में इन कवियों ने अपनी असाधारण कल्पना और प्रतिभा का परिचय दिया है। रूप सुषमा, यौवन और चपलता की देवी राधा और रूप माधुर्य सौंदर्य सम्पन्न कृष्ण के मिलन-सयोग के उरसाह वधक एवं आनन्द वधक चित्र कवियों ने प्रस्तुत किये हैं। राधा कृष्ण के सयोग मभोग के एक से एक मनोमुग्धकारी चित्र रीतिकालीन कवियों ने उरेहे हैं, कवि बिहारीलाल का एक ऐसा ही चित्र दृष्टव्य है

“धतरस सालख लाल की, मुरसी धरी फाइ।

सोह करे भौहनि हँसे, देन कहै नदि जाइ ॥

कितना आनन्दकारी और रोमाञ्चकारी दृष्य है यह।

राधा साधारण नायिका की तरह विलासप्रिय, विनोदी, रति अवतार के रूप में चित्रित की गई है। इतना ही नहीं, वह “विपरीत रति” में अत्यन्त पटु है। ‘विपरीत-रति’ करके भी वह कृष्ण को नहीं छोड़ती, आलिंगन में बधि रखती है।

राधा और कृष्ण का सम अनुराग चित्रण त्रिवेच्य काव्य का प्रतिपाद्य है। राधा और गायियों की अत्यन्त भक्ति कृष्ण के प्रेम में धनीभूत हो उठी है।

कृष्ण भी राधा के प्रेम निरन्तर निमग्न रहते हैं। नायक और नायिका प्रेमाकुर रूप में दृष्टाये गये हैं। उनमें समान तमयता, लीनता, रस मग्नता, मुग्धता और आत्म विस्मृति पाई जाती है, यद्यपि इस प्रेम में “काम प्राधान्य है, तथापि प्रेम का अत्यन्त, निश्चल उत्कट, मासल रूप भी इस में मिलता है। राधा कृष्ण का यह प्रेम प्रवण रूप बिहारी, भक्तिराम देव, पद्माकर ठाकुर आदि कवियों के काव्यों में दृष्टव्य है।

“जिस प्रकार भक्तिकालीन कवियों ने राधा कृष्ण के मधुर व्यक्तित्व का आधार लेकर उसे अपनी निगूढतम भक्ति भावना का व्यञ्जक बनाया था, उसी प्रकार शृंगार काल के कवि उसे ऐसा सुन्दर और पवित्र रूप नहीं दे सके।

उनसे राधा कृष्ण के मधुरतम व्यक्तित्व में निहित सूक्ष्म भक्ति भावना का निवाह न हो सका। १८ गार काल के कवियों ने राधा कृष्ण की अलौकिक प्रेम लीलाओं को स्थूल रूप में ग्रहण किया, जिसके परिणाम स्वरूप राधा और कृष्ण जो अलौकिक प्रेम की साक्षात् मूर्ति समझे जाते थे, साधारण लौकिक प्रेमी प्रेमिका के रूप में प्रदर्शित किए जाने लगे।¹

अतएव रीतिकालीन कवियों ने राधाकृष्ण का आलम्बन ग्रहण कर अस्लील भाव भंगिमा पूर्ण साहित्य का सृजन कर उन्मादित करने वाली उक्तियों से भर दिया। 18 वीं सताब्दी के अंत तक इस प्रवृत्ति में काव्य सृजन होता रहा। परंतु 19 वीं शती के प्रारम्भ से ही राधा-कृष्ण व रीतिकालीन परिवेग में परिवर्तन प्रारम्भ हो गया। राधा बुद्धिगोला, मुखरा, समाज सेविका, और कृष्ण लोक नायक, प्रजारक्षक और गीता उद्घोषक रूप में भारतीय साहित्य में प्रतिष्ठित हुए। पूर्व में कहा जा चुका है कि रीतिकालीन कवि कलापक्ष को सुन्दरतम बनाने में सचेतक का काम करते रहे।

मन-मोहन, मुरली मनोहर, रसिकराज, वणुवादक पीयूषवर्षी कृष्ण ब्रजभूमि को निज बनाने पर मथुरा प्रस्थान करते हैं। उनकी रासक्रीडा और गोप गोपियों के पायल की भाँवार बंद हो गयी, उनके विलास खानद और रत्न वर्षा के दिन तिरोहित हो गये। राधा पर दूट पडा विरह का पहाड़, गोपियाँ उन्मत्त रहने लगी कृष्ण विरह में विधाता भी निष्ठुर और कठोर हो गया, कृष्ण मथुरा गये, राधा और गोपियाँ कृष्ण के आगमन की प्रतीक्षा में पलक पाँवों पर विछाने लगीं।

बामाली विश्वासघात कर गया। क्षण भर को भी चन नहीं आता। मन विक्षिप्तों की भाँति इधर उधर दौड़ा फिरता है, वही तो विलासी प्रियतम के दशन मिल जाय —

“मेर मन आसी का विशासी धनमानी विन,
बावरे लों दीरि दीरि परं सब ओर को।”²

राधिका जब-जब यमुना तट की ओर निहारती है उसे धीरे धीरे जीवन की सुगन्ध स्मृति मकभोर देती है। अथुधारा उसके नेत्रों से अविरल बह निकलती है—

‘स्याम मुरति बरि राधिका सकति तराजिा तीरू।
असुवनु वरनि तरीस कौ खिनुव सरीहा नीरू।’³

1 डॉ. जयकिशण प्रसाद एम. ए. हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियाँ पृ. 109-210

2 धनानं- मुद्रानरित पृ. 126 पं. 144 मुद्रान सागर से कर्ण

3 बिहारी सप्तशई दोहा-282

इस युग के कृष्ण चरित विषयक काव्यों की सभी सूची है

(1)	बलीराम	सुदामा-चरित	विक्रम सवत्	1731
(2)	देवीदास	अनूप कृष्ण चन्द्रिका	"	1731
(3)	राजसिध	बाहुबिलास	"	1763
(4)	क्षेमकरण मिश्र	कृष्ण चरितामृत	"	1777
(5)	वीरवर कायस्थ	कृष्ण चन्द्रिका	"	1777
(6)	रामप्रसाद	कृष्ण चन्द्रिका	"	1779
(7)	जगदीश	गिणुपाल यथ	"	1780
(8)	मेदिनीमल्ल	श्रीकृष्ण प्रकाश काव्य	"	1790
(9)	मण्डन कायस्थ	सुदामा चरित	"	1790
(10)	सूरनि मिश्र	कृष्ण चरित	"	1794
(11)	चन्द्रहास	कृष्ण विनोद	"	1807
(12)	माहबसिंह	कृष्ण विलास	"	1808
(13)	अक्षराम	कृष्ण चन्द्रिका	"	1811
(14)	विभ्रमादित्य	हरिभक्ति विलास	"	1828
(15)	गणेशदास	सुदामा चरित	"	1827
(16)	मण्डन द्विज	कृष्णायन	"	1828
(17)	देवस्त	वीरविलास	"	1818
(18)	गुमान मिश्र	कृष्ण चन्द्रिका	"	
(19)	मोहनदास	कृष्ण चन्द्रिका	"	1839-62
(20)	जगन्नाथ	कृष्णायन	"	1845
(21)	अमरसिंह कामस्थ	सुदामा चरित	"	1845
(22)	राधा कृष्ण	कृष्ण चन्द्रिका	"	1850
(23)	गोपालराम	सुदामा चरित	"	1853
(24)	प्राणनाथ	सुदामा चरित	"	1858
(25)	देवीदास	सुदामा चरित	"	1865
(26)	जयसिंह	कृष्ण तरंगिणी	"	1873
(27)	राम विनोदीशाल	कृष्ण विनोद	"	1879
(28)	रघुनाथ दाम	कृष्ण चरितामृत गीता	"	1890
(29)	हलधर दास	सुदामा चरित	"	
(30)	गगकवि	सुदामा चरित	"	

इन रीतियुगीन कवियों ने कृष्ण की रूप माधुरी का वर्णन और कृष्ण चरित का आच्यान ब्रज भाषा में ही किया है। ब्रज भाषा का पूर्ण सौंदर्य इसी युग में निखरकर चरम उत्कर्ष पर पहुँचा। कवियों ने जडाई, पञ्चीवारी, अल-कृति, शब्द शक्ति आदि का बड़ा सुन्दर और मोहक रूप प्रस्तुत किया है। शब्दों

यो काव्य मे नगों की तरह जडकर अद्भुत जलात्मकता का परिचाय दिया है । इनमें सदेह नहीं कि भाव सौन्दर्य की अपेक्षा भाषा सौन्दर्य पर ही कवियों की रुचि केन्द्रित रही । भाषा स्निग्ध और स्वाभाविक है, सर्गात्मकता और ध्वन्यात्मकता के गुणों से ओत प्रीत है, उसमें चित्रमयता भी है । बिहारी में नाद सौन्दर्य और चित्रमयता की प्रधानता है, तो घनानन्द में नाद व्यञ्जना, प्रयोग विचित्रता है । नागरीदाम सरसता की मूर्ति हैं तो हसराम सरसता और स्वाभाविकता की । बाग दोनमाल गिरि अपनी मधुर और रसीली भाषा में अथ यत्ना के लिए प्रसिद्ध हैं । तरवारी सम्मता के कारण उर्विनया और वाक्पटुता ने भाषा सौन्दर्य में चार चाद लगा दिये हैं । यमक अनुप्रास उपमा, उल्लेख, अतिशयोक्ति प्रभृति प्रलंबारों ने भाषा मोन्दर्य का प्रभावविष्णु बनाया है । छन्दों की विविधता इस युग के इन कवियों की एक अन्य विशेषता है । दोहा चौपाई, सवैया कवित्त घनाक्षरी रूपमाला आदि का प्रयोग बड़े मुग्ध और सुशुचि पूण रूप में हुआ है ।

हिंदी के समीक्षकों ने रीति युगीन इन काव्यों में जीवन की विविधता का अभाव देखा है और कहा है कि इन कवियों में धन की नवीनता नहीं है, उन्होंने केवल काव्यांगों के प्रदर्शन में ही धमाल उपस्थित करने का प्रयत्न किया है । ये कवि यथाथ से दूर और कल्पनाओं में विचरते रहने वाले प्राणी हैं । इनके काव्यों में लोक मंगल की भावना का अभाव है । इनमें विद्व जनीत भावनाओं का स्पष्ट नहीं मिलता । ये कवि सामाजिक व राजनीतिक परिवर्तितियों और समस्याओं से दूर होकर राजा, महाराजा अथवा आश्रयदाताओं की राधा कृष्ण गोपी के माध्यम में उछाड़ने में अपने कतव्य को इतिथी मानते थे ।

रीति युगीन अधिकांश कवियों ने भक्ति सम्बन्धी पदों की रचना की है, किंतु इन्हें भी भक्तिकालीन आत्म सौन्दर्य, आध्यात्मिकता, धार्मिकता और कृष्ण भक्ति का उत्तराधिकार नहीं मिला । इसी कारण यह नाथ्य मनोविलास और मनोरंजन की वस्तु बनकर रह गया ।

रीतिकाल का कृष्ण भक्ति काव्य हमारी सांस्कृतिक निरामत की महा-मूल्यवान् साहित्यिक विधि है । बिहारी के दाह का देव के छन्दों का, मतिराम की ललित रचनाओं का, भूषण के कवित्तों का घनानन्द के कवित्त और सर्वयो का सम्मान केवल इसलिए नहीं है, कि वह हमारी वैभवशाही विधि है वरन् इसलिये है कि उसमें जीवन का शृंगार मूलक मनोरंजक और ललित रूप प्रस्तुत किया गया है यह कहना भी सही है कि यदि हम बड़े तो उसमें सामाजिकता का नितात अभाव नहीं मिलेगा ।

वस्तुतः कृष्ण काव्य के अभाव में रीतिकाल के कल्पना ही नहीं की जा सकती । पद्यवर्ती युगों की पारलौकिकता और परवर्ती युगों की स्वलोकिता

सांस्कृतिक चेतना के बीच में हेतु की तरह कृष्ण काव्य हमारे सामने आता है, उसमें हमारी इन्द्रिय गति चेतना को अध्यात्म उ मुख बनाया गया है। सूक्तियों के प्रेम की पीर की भारस्वता को कृष्ण नाय्य में अपने सद्भावों में आत्मसात किया है। इस युग में अनेक मुसलमान कवि भी कृष्ण भक्ति की ओर आकर्षित हुए। इन कृष्ण प्रेमी मुसलमान भक्तों या कवियों ने सौन्दर्य, शृंगार, माधुर्य और प्रेम की अत्यन्त भाव-प्रयण, मन मोहक, आकर्षक और स्रित अभिव्यक्तियों से हमें आन्तरिक स्वास्थ्य प्रदान किया है। उसमें नैतिक और खोन्नमन विधायक आदर्शों का समावेश मले ही नहीं था, किन्तु मादय के भीतर से एक नये प्रकार की सकल्प बढ़ता - जो राम काव्य की मर्णा वाणी सकल्प बढ़ता की पूरक है हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। वस्तुतः मध्ययुग में मादय तथा कलात्मक चेतनाओं के पीछे कृष्ण काव्य का अस्तित्व महाध है।

“वैष्णव सत्सृति का भीतरी माधुरी एवम् जन्त सौन्दर्य में सम्बन्धित कर काव्य चेतना को नई मामिकता देने वाला कृष्ण काव्य मध्ययुगीन राम काव्य की देन का पूरक है।”¹

इस परम्परा का पालन भारतेन्दु युग के कवियों ने किया है। उस युग में रची गई कुछ प्रसिद्ध रचनाएँ इस प्रकार हैं - दीनदयाल गिरि द्वारा विरचित - “अनुराग रग”, घनयाम दाम द्वारा लिखित - “श्री गौरी रागेशीमि विद्वारण्यतीय कृत “युगलसुधा”, महान् दीनदयाल रचित “गुलजारचमन” ‘आनन्द चमन’, ‘विहारचमन’ आदि। कुछ कवियों ने कृष्ण स्तुति पद रचे। इन कवियों ने भारतेन्दु की भूमिका की पृष्ठभूमि तैयार की।

इस काल में बहुत से ऐसे कवि हुए जिनका सम्बन्ध किसी सम्प्रदाय विशेष से नहीं था और इस प्रकार के कवियों ने सामान्य वैष्णव होने के नाते राधा-कृष्ण विषयक रचनाएँ की हैं, मुक्तक या प्रबंध के रूप में कृष्ण की प्रकृत कथा का संक्षेप में वर्णन किया है।

सुन्दर कुविरिवाई रसिक गोविन्दबाल पद्माकर, दीनदयाल गिरि ब्रजनिधि कृष्णदास गिरधरदास आदि कवियों की रचनाएँ इसी प्रकार की हैं। इन कवियों ने प्रायः परम्परा का ही पालन किया है।

गीबी रतन कुशिर के काव्य “प्रेमरतन” में रीतिकालीन कवियों की शृंगारिक पद्धति का प्रभाव मिलता है। गिरधरदास के “दशकवामत” में भी यह प्रभाव देखा जा सकता है।

बाबा दीनदयाल गिरि कृत ‘अनुराग बाग’ (1831 ई) में कृष्ण जन्म से लेकर मयुरागमन तक की कथा वर्णित है। कृष्ण की लीलाओं का वर्णन इसमें

अत्यंत ललित कवितो म हुआ है। इसमें मालिनी छन्द का बड़ा मधुर प्रयोग हुआ है। 'बाबाजी की भाषा पर बड़ा ही अच्छा अधिकार था। इनकी ही परिष्कृत स्वच्छ व सुव्यवस्थित भाषा बोहे कवियों की है।' अजुप्राम और मोमन पदावली का व्यवहार परापर हुआ है।"

महाराज प्रतापसिंह प्रजनिधि की रचनाएँ "आनन्दगन्धु निधि (1853 ई.) और रत्नमयी परिणम' श्रीमद्भागवत पर आधारित हैं। बाबा गधुनाथदास रामसन्दी कृत 'विश्राम सागर' में भी कृष्ण कथा का ही वर्णन है। कुन्दनलाल दाह कृत 'अष्टयाम और 'रसकविता' में राधा कृष्ण के प्रतिदिन के पांच कलापों और लीलाओं के सविस्तार वर्णन मिलते हैं। राधावल्लभी सम्प्रदाय के कवियों के काव्यों में वादावन हितहरिवंश राधाकृष्ण और उनकी लीलाओं के वर्णन मिलते हैं। इनकी कृतियों में राधा को प्राधान्य दिया गया है, श्री हठीजी कृत राधा-मुग्धा वनक (1880 ई.) में रीतिवादी कवियों की शृंगारमूक कविताओं का प्रभाव मिलता है। वादावन दास के सत्रह कृष्ण काव्य मिलते हैं। यों इसके द्वारा रचित व्यक्तित्व प्रायः कहे जाते हैं, कृष्ण काव्य की इन रचनाओं का आधार प्रायः श्रीमद्भागवत है। इन कवियों ने अपने काव्यों में भागवत, गुर-सागर तथा अष्टछाप्य ग्रन्थों में वर्णित प्रमुख लीलाओं का ही वर्णन किया है। इन कवियों ने राधा लीलाओं के साथ ही अपनी भक्ति की अभिव्यक्ति के लिए अनेक कल्पित लीलाओं का भी वर्णन किया है। जैसे चितैरिन लीला, सुगानि लीला कुटिहारि लीला मालिनी लीला, विमातिन लीला, रगरेजिन लीला, तम्बोलिन लीला पंगनालीला योगिन लीला कीतु लीला आदि। हित वादावन दास के 'छद्म पौडशी' और 'छद्म अष्टपदी' तथा प्रियादास कृत 'पचरत्न गौदीलान' (1858) आदि काव्यों में ऐसी ही लीलाओं का वर्णन मिलता है।

कृष्ण लीलाओं में प्रायः छद्म वेश धारण कर राधा के निकट पहुँचते हैं और अन्त में राधा उन्हें पहचान ही जाती है। कृष्ण का रहस्य खुल जाता है, दोनों मिल जाते हैं और राधा का स्थान ऊँचा ही बना रहता है।-

जागतिकी भावना के कारण राधा कृष्ण जासेवक रूप में भी उभरे गये हैं। राष्ट्र प्रेम भी उतना प्रकृत है। रघुनाथदास सन्दी कृत "विश्राम सागर" में हिन्दू मुस्लिम सभ्यों का विवाह मिलता है। महाराज रघुराजसिंह ललित कविारी मन्दीत चौम जिस अनेक कवियों ने पुरानी परम्परा की कृष्ण भक्ति विषयक रचनाएँ की हैं, किन्तु इन रचनाओं का प्रभाव भारतीय जनमानस पर बहुत कम पड़ा आग्रह सत्ता के अधीन पराभूत जनता पर कवियों की 'मधुर्विद्ध कवियों का प्रभाव बड़ा सीमित रहा। रीतिवादी काल, वासना, सुरा और मुन्दरी का युग प्रायः समाप्त हो चुका था। रीतिकाल की इस अति के कारण

जनमानस में ऐसी कविताओं के प्रति अहर्षि भर उठी थी। इसी पीठिका पर भारतेन्दु का अविभाव हुआ। उन्होंने भक्तिकाल से प्रेरणा ग्रहण की स्वयं को "सखा प्यारे कृष्ण के और गुलाम राधा रानी के" घोषित किया। उनके कृष्ण काव्य में एक प्रेमी सहृदय और निश्चल मस्त हृदय के दर्शन होते हैं।

कृष्ण काव्य परम्परा में भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र एक महान कवि हैं उनके काव्य में प्राचीन और नवीन का पावन गंगा जमुनी सागम मिलता है। प्रेम माधुरी प्रेम तरंग, प्रेम फुलबारी, जयदेव, वल्लभाचार्य, सूरदास वल्लभीय स्वस्व प्रेम जोगिनी, चद्रावली, प्रेममानिका, गीत गोविन्दानन्द, वर्णा विनोद, विनय प्रेम पचासा, कृष्ण चरित, उरहना तमम लीला, दानलीला वेणुगीत, श्रीनाथ स्तुति, मानलीला फलबूझ भयले, प्रभूति ग्रन्थो पत्रो मे उ होने अपने अन्त की श्रीकृष्ण विषयक प्रेम भक्ति भावना की अभिव्यक्ति की है। भारतेन्दु ने कृष्ण विषयक कई सहस्र पदा की रचना की हैं नाटकों की रचनाएँ की हैं नैव लिल ह आदि। इनमें कृष्ण की लीलाओं को अत्यन्त प्रभुविष्णु रूप में अभिव्यक्ति दी गई है।

भारतेन्दु को हम आधुनिक कृष्ण काव्य का सर्वश्रेष्ठ कवि कह सकते हैं। उनके राधा कृष्ण प्रेम भक्ति विषयक पद आदि अत्यन्त रमिले 'मधुर' प्रवाहपूर्ण और व्यङ्गनात्मक बन पड़े हैं। उनके पत्रों की कुछ कविताएँ तो 'धिसराई' ही नहीं जा सकती यथा

"जुगल छवि नैनह सो लख लहु'
हरि भारि काह सुधि धिसराई
मेरो हठ राखो हठिले लाल
प्यारी छवि कि रासीबनी
अहो प्रिया पलक पे धरि पांव
सखी री देखहु बाल विनोद
नैन भरि देखो - गोकुल नद
नन भरि देखो श्री राधा बाल
तु मिली जा मेरे प्यारे
छाडो मोरि बइयाँ लाल
अहो हरि ऐसी तो नहिं बीजै
सुंदर इयाम कमलदल लोचन
नैना वह छवि नाहिन भूल
उधव जो उनेक मन होते
मखि ए नैना बहुत सुरे।
नाथ तुम प्रीति निवाहत्त साँची
जमुना तट ठाडे नदन, बोल्यहानन पावै

हम तो मदिरा प्रेम पिए ।
सखी मा मोहन मेरे मीत,
घोले भाई गोवधन पर मारे”

प्रेम माधुरी के एक से एक अच्छे पद एक से एक अच्छे कवित्त और सर्वथा “उतराद्ध भक्तमाल” के पद अरि सखि मोहि मिलाऊ मुरारी’, इत मोहन प्यार उत राधा प्यारी अखियाँ मद सी भरी”, “लाल मेरो अँचरा खोले री”, “बाबु हरि बिहरत जमना तोर”, जपजय श्री व दावन देवी’, ‘प्रेम मे मीन-मेघ फल्ल नहीं”, “राध भई आपुषाश्याम” ‘राध राध कवहो कबहों तुम का ह काह मुहरावति हो’ बँसुगिआ मेरे बँर परी’—प्रभुति पदो मे भारतेदु की राधा कृष्ण विषयक भक्ति प्रेम के एक से एक अनमोल महाप रत्न भागतेदु प्रपादली मे भरे पंे है, इनम उनका कृष्ण भक्त हृदय पूण रूप से प्रकृतित हो उठा है ।

पिय प्य रे तिहार-निहार विना, दुखिया अँखिया नही मानती हैं’ जसी उनक सवयो की पवितर्याँ महूदयो के हृदय को मोह लेती है, इनसे स्पष्ट है कि हिंदी काव्य म नवयुग के क्रांतिकृत भारतेदु बाबू महान् कवि के साथ ही महान् कृष्णभक्त भी थे । सखा प्यार कृष्ण के गुलाम राधा रानी के” कहने वाले भारतेदु बाबू की भक्ति असीमित थी । उनके पद और सवये वरुणव कवियों की शाली पर रचे गये ह और वैसे ही अत्यन्त भाव प्रवण और रममय है । सच्ची अनुभूति भावावेश भारतेदु का प्रेमी और मक्त हृदय इनमे दृग्ग्य हैं ।

भारतेदु युग मे भारतेदु हरिश्चंद्र ने तो अत्यन्त सरस मधुर भक्ति प्रम प्रवण रचनाएँ लिखी साथ ही भारतेदु मण्डल के अन्य कवियों ने भी कृष्ण भक्ति की पावन गंगा से जनमानस को अभिसिक्न किया ।

ठाकुर जगमोहनसिंह कृत ‘श्यामा स्वप्न’ और ‘श्याम सरोजिनी’ मे भी कृष्ण प्रेम से सम्बद्ध सवये मिलते हैं । भारतेदु मण्डल के अनेक लेखक और कवियों ने कृष्ण भक्ति विषयक एक से एक अनठ पद लिखे हैं ।

आधुनिक युग म 1850 ई के पश्चात् हिंदी काव्य मे भारतेदु युग में राधा-कृष्ण विषयक पर्याप्त रचनाएँ हुई है । इनमे गोविंद गिल्लाभाई द्विज बेनी अंसनी क लाल कवि, गार्ह कुन्दनलाल, ललित किशोरी गोकुलनाथ और जग र्नाथनाथ रत्नाकर आदि उल्लेखनीय हैं । इन कवियों ने पुरानी परिनाटी की राधा-कृष्ण मूनक शृङ्गार रचनाएँ की हैं । बाबू जगनाथदास ‘रत्नाकर’ कत 2 उद्धवगतक आधुनिक कृष्ण काव्य परम्परा की पुरानी परम्परा की (श्रजभाषा) भक्ति एव रीतिकालीन मायनाआ मे समचित सशक्त बड़ी है ।

शृ गारिक कवियों म शृ गार भावनाओं को प्रधानता दी । भक्त कवियों ने राधा कृष्ण के स्वरूप का वर्णन पौराणिक कथाओं को लेकर मयुरा और वदावन

के मन्दिरों में अभिनीत लीलाओं के अनुकरण पर किया है। कृष्ण भक्ति के रूप का इतना प्रचार था कि अनेक कवियों ने राम की क हैया बनाकर अयोध्या की गलियों में घुमा दिया, गोपियों का स्थान सीता तथा अय राज वधुओं और उनकी सखी सहेलियों ने ले लिया है। उदाहरणार्थ महाराज रघुराज सिंह कृत "रघुविलास" ग्रंथ में राम और कृष्ण में कोई भेद नहीं रखा गया है। उसमें झूलना, हिंशला, वाललीला, नक्षत्रिण आदि विषय प्रमुख हैं। उनका भ्रमरगीत भागवत् के दशम स्कंध के अनुवाद 'आनन्दाम्बुनिधी' का एक भाग है।

ऐसा लीलाओं का वणन चाहे कितना भी सुन्दर क्या न हो, उसमें आध्यात्मिकता और उदारस भावनाओं का निरिचत रूप से आभाव मिलता है। अनेक रचनाओं में तो काव्य और भी निवृत्त कोटि का है। इस प्रकार की काल्पनिक लीलाओं का उल्लेख भागवत में नहीं मिलता, हाँ, एक दृष्टि से इन लीलाओं का महत्व अवश्य माना जा सकता है, और वह यह है कि हमें उनसे आसौच्य वाली सामाजिक व्यवस्था के विभिन्न व्यावसायिक वर्गों का परिचय प्राप्त होता है।²

कृष्ण काव्य से सम्बन्धित प्रबन्ध काव्यात्मक रचनाओं में महाराज रघुराज-सिंह कृत 'रुक्मिणी परिणय' (1850) महत्वपूर्ण है। महाराज रघुराजसिंह ने इसकी रचना महाकाव्य के रूप में की। इसकी कथा का आधार श्रीमद् भागवत पुराण है। इस महाकाव्य का प्रतिपाद्य श्रीकृष्ण जन्म से लेकर रुक्मिणी परिणय तक की कथा है। इसमें राधा कृष्ण के विविध विलासों, लीलाओं विहारों आदि के साथ नव शिख, होली, शरदश्रुतु विरह आदि का भी वणन किया गया है। इसमें रौद्र, भयानक, शृंगार, शांत, और धीर रसों का सुन्दर परिपाक हुआ है।

इस काल में भक्ति के प्राचीन रूप का माधुर्य और प्रावत्य न रह गया था। मुस्लिम सत्कृति और शिष्टाचार के नियम भी इस काल के काव्यों में मिलते हैं। रुक्मिणी परिणय के कृष्ण रुक्मिणी विलास के सप्तम में कभरे की सजावट का शाही शयनागारा जैसी है। प्रायः कृष्ण भक्त कवियों ने कृष्ण की सरस लीलाओं का मुक्त-काम वणन ही अधिक किया है।

इस काल में कृष्ण भक्ति काव्य के अधिकांश कवि ऐसे हैं जिनका किसी सम्प्रदाय विशेष से सम्बन्ध नहीं था। जिन्होंने सामान्य वैष्णव मत के अन्तर्गत राधा कृष्ण के प्रति अपना प्रेम प्रकट किया है। इनके काव्यों में कृष्ण की लीलाओं में श्रद्धाधान आदि का वणन मिलता है। यह सही है कि इस काल के पहले भी इस प्रकार की रचनाएँ हुई थीं किन्तु इस काल के कवियों में पहले के कवियों के सद्गुण भक्ति भाव और काव्यात्मकता नहीं है। इनके स्थान पर इनमें वर्णनात्मकता का प्राधान्य मिलता है। हम कह सकते हैं कि इनके यहाँ साहित्यिक पक्ष गौण है।

इन रचनाओं पर वैष्णवों के कमराण्ड का प्रभाव पड़ा। धार्मिक समुदायों की अपनी स्थितियाँ थी। इस काल में यह प्रभाव अति के रूप में परिणत हो जाना है।¹

इस युग में कुछ ऐसे काव्य भी लिखे गये, जिनका उद्देश्य सेवा का वर्णन करना था। राधा की लीलाओं के अतिरिक्त इस काल के कृष्ण भक्त कवियों ने स्तुतियाँ भक्तों आदि की भी रचना की। इन कवियों के 'वचन' से कलियुग की बहुत सी बुराइयाँ राधा कृष्ण के प्रति भक्ति भाव का अभाव के कारण हैं।

हैं वाष्णव लिखते हैं — भारते-दु कालीन कृष्ण भक्त कवियों ने छद्मवेषी तथा अन्य लीलाओं का अनुसरण करके दानलीला, मानलीला, पतिहारिन मनिहारिन आदि लीलाओं की भक्ति रस सम्बन्धित रचनाएँ की। इन्हीं रचनाओं में मंदिर की पूजा विधि, अभिषेक, भोज एवम् वस्त्र आदि के पद भी मिलते हैं। रीवा के महाराज रघुराजसिंह के द्वारा विरचित "आनन्दाम्बुनिधि" में भागवत का दशम स्कन्ध की कथा मिलती है तथा टीही का 'रविमणी परिणय' भी भागवत पर ही आधारित ग्रन्थ है। राजा लक्ष्मीनारायणसिंह जू के "लक्ष्मी विलास" काव्य ग्रन्थ में रीतिवालीन नायिका भेद और छंदों का बाहुल्य है। भारते-दु युग के सभी कवि प्रायः पुष्टिमाग के अनुयायी थे। उनकी प्रेरणा भक्ति कालीन कृष्ण भक्त कवियों से प्रस्फुटित हुई थी। उनकी भक्ति की उच्चता और हृदयग्रहिता उसमें मिलती है। भारते-दुकाल के कृष्ण भक्त कविमान प्रणयलीला के सहस्रा पद लिखे हैं जिनमें शृंगारिकता ने भक्ति को दूँप लिया है, उनका नायिका भेद अष्टयाम नव शिखर वर्णन रीति परम्परा से प्रभावित है। यह सही है कि उनकी रचनाएँ सरस एवम् हृदयग्राही हैं।

द्वितीय युग (प्रारम्भ 1900 ई. से) मूलतः सांस्कृतिक पुनरुत्थान का युग है। आधुनिक युग में आकर रामकृष्ण के ईश्वरावतार की प्रतिष्ठापना का बनाये रखते हुए कवियों ने उनकी कथाओं के अद्यविरासा को ध्वस्त किया। अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिओघ' और रामचरित उपाध्याय ने रामकृष्ण को ब्रह्म अवतार न मानकर महामानव और इतिहास पुरुष माना। उपाध्यायजी ने प्रिय यास में कृष्ण को आदम महामानव, समाजसेवक और प्रजापालक के रूप में चित्रित किया — मैंने श्रीकृष्णचरणों को इस ग्रन्थ (प्रिय प्रवाम) में पुरुष को भक्ति अर्पित किया है।²

द्वितीय युगीन कृष्ण काव्य में मौलिकता का आभाव है। प्राचीन का विष्ट वर्णन गूँब हुआ है — हाँ कृष्ण ईश्वर या ब्रह्म नहीं रह गये, वे महावीरय कमयागी

1 डा. श्रीरामचन्द्र चरणों का आधुनिक साहित्य की कृषि, पृ. 212

2 वि. वा. चरणों का

रूप में चित्रित हुए, इसलिए कवियों ने उर्दू महायोगी व तत्त्व ज्ञानी रूप में प्रस्तुत किया। "प्रियप्रवास" के कवि ने कृष्ण के देवत्व को मनुष्यत्व में परिणत करके दिखाया है। मैथिलीशरण गुप्त के 'जयद्रथ वध' में आधुनिक बुद्धिवाद का प्रभाव कम है। उन्होंने राम को ईश्वर तो माना है परंतु कृष्ण व अतिमानुषिक और अलौकिक चरित्र का चित्रण नहीं किया।¹

हरिऔध और गुप्तजी ने अपने कृष्ण काव्यों में खड़ी बोली का प्रयोग किया। छंदों में दाहा, कविन, सर्वथा के स्थान पर गीतिका हरिगीतिका सार, राधिका रूपमाला आदि का प्रयोग किया गया।

द्विदेदी युगीन कृष्ण काव्यों की एक सक्षिप्त तालिका इस प्रकार है

काव्य	कवि	सन्
(1) कृष्णायन	विमादूराम	1903
(2) सगमसार	कुलपति मिश्र	1905
(3) वीर विनोद	पद्मसिंह	1907
(4) प्रेम शतक प्रेम पथिक	वियोगी हरि	1909
(5) जयद्रथ वध	मैथिलीशरण गुप्त	1910
(6) हिमतरंगिनी	माखनलाल चतुर्वेदी	1911
(7) द्रोपदी चीरहरण	लोधरवर त्रिपाठी	1914
(8) प्रिय प्रवास	अयोध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध'	1914
(9) भ्रमरदूत	सत्यनारायण 'कविरत्न'	1916
(10) उदक शतक	जगन्नाथ दास 'रत्नावर'	1920

विमादूरदास का 'कृष्णायन' श्रीमद् भागवत से प्रभावित भक्ति परक काव्य है। कुलपति मिश्र के 'सगमसार' को मूलतः 'द्रोण पत्र' का सक्षिप्त रूपांतर कहा जा सकता है। यह वीर रस पूर्व रचना है। पद्मसिंह कृत 'वीर विनोद' में महाभारत के एक पत्र की कथा वर्णित है। इसमें वर्ण की स्वामी भक्ति, मंत्री वीरता, उदारता आदि का अकन सरस एवं सुन्दर रूप में किया गया है। आधुनिक युग के भक्त कवियों में वियोगी हरि ज्योत हैं। उनकी 'प्रेम शतक' 'प्रेम-पथिक' और 'प्रमाजलि' नामक रचनाएँ हैं। वे ब्रजभाषा और ब्रजपति के अन्त्य उपासक हैं। ऐसे प्रेमी, रसिक जीव, इस रूपे जमाने में कम ही दिखाई पटते हैं। इन्होंने पुराने कृष्ण भक्त कवियों की पद्धति पर बहुत रसीले तथा भक्ति भाव पूर्ण पंदा की रचना की है, जिन्हें सुनकर आजकल के रसिक भक्त भी बलिहारी हैं। बिना कहे नहीं रह सकते।²

1 हिन्दी साहित्य का इतिहास ५ रामचन्द्र शुक्ल, पृ 561

2 डॉ हरदेव बाहरी हिन्दी की काव्य शैलियों का विकास पृ 118-119

मैथिलीशरण गुप्त कृत "जयद्रथवध" की कथा का मूल स्रोत महाभारत का द्रोण पर्व है। इसमें सात सर्गों में क्रमशः अभिमन्युवध, पाण्डवों का शोक कृष्ण द्वारा अर्जुन व पाण्डवों को मातृवना प्रदान करना, पान्धवों का अस्त्र प्राप्ति, कौरवों-पाण्डवों का भयकर युद्ध, जयद्रथ वध की घटना और विजयी पाण्डवों का शिविर की ओर लौटने की कथा वर्णित है। गुप्तजी ने जयद्रथ वध में परम्परागत प्रचलित काव्य रूप में अपनी मौलिक प्रतिभा का सम्मिश्रण कर एक अनूठे काव्य की रचना की है।¹ काव्य रूप की दृष्टि से यह एक स्रष्टव्य काव्य है। इसे घोर रस पूर्ण करुणा प्रधान काव्य कहना उपयुक्त है।

तुलसीराम "गर्भा दिने" का 'पुरवोत्तम" महाकाव्य रूप में रचित है। यगोना के लक्ष्य की ममता, दयनी के हृदय की पीड़ा, वसुदेव की व्यथा, वस वध, उद्धव गोपी सवाद आदि बड़े सरल सरस और प्रवाह भिक्त रूप में अभिव्यक्त हैं। यह सामान्य कोटि का काव्य है, क्योंकि माया प्रौढ चलती और आकषय नहीं है।²

माखनलाल चतुर्वेदी कृत 'हिमतरंगिणी' (1911 ई) में वृष्णवो की माधुर्य भावना का परिचय मिलता है उनकी रचनाएँ भक्त कविता की सी मधुर और सरस हैं।

दयाम साचन मन बस गय री

'मधुर बँन कर सन नैन मो छीन लीन मन चपल ऐन सो
कछु न सोहायत, मुधि न रैन सा जब हरि हँस गये री।'

माखनलालजी का भक्त इस उपरान्त का श्रद्धापूर्वक पालन करते हुए अपनी भावना के फूलों को कृष्णापण कर देता है।

'नारुँ जरा मनेह नरी म, मिलू महामागर के जो म
पालगनी के पागलपन मे, तुदा गूष दू कृष्णापण मे।

सच्चे भक्त की भाँति कवि अपने इष्टदेव की सावली सूरत को अपने प्राणा की भीमत् पर भी नहीं भूलना चाहता।³

इस प्रकार माखनलालजी का कृष्ण के प्रति अटूट प्रेम दृष्टिगोचर होता है। सायदवर त्रिपाठा का 'द्रापदी कीरधरण' (1914 ई) में आल्हा रासी में एतद् विषयक कथा विनिर्दिष्ट है। यह स्रष्टव्य काव्य सरस और प्रवाहमय है।

अवाध्यामिष्ठ उवाध्याय 'हरिऔध कृत प्रिय प्रवाग' (1914 ई) आधुनिक युग का सही जाती का प्रथम महाकाव्य कहा जाता है। भाव, भाषा शक्ति

1 डॉ. श्रीकृष्णराज कापतिक हिन्दी साहित्य का विकास कृष्ण 102-103

2 डॉ. राधकान्त शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास कृष्ण 667

3 डॉ. रामविश्वनाथ त्रिपाठी माखनलाल चतुर्वेदी काव्य और काल पृष्ठ 256

निष्ठता, कथावस्तु आदि दृष्टियों से यह एक अनूठा काव्य है। इसमें भक्तिकाल की भाव विह्वलता और रीतिकालीन अश्लीलता व स्थान पर आधुनिक युगीन बौद्धिकता के दशन होते हैं। 'प्रिय प्रवाम' में कृष्ण जन नायक, लोव नायक, समाजसेवी एवं प्रजापालक रूपा में प्रस्तुत किये गये हैं। इसमें राधा और गोपियाँ लोक सेविकाएँ बन गयी हैं। राधा विरह में अपने आँसुआ की राकबर समाज का नवनिर्माण करती है, दुःखी समाज की सेवा में स्वयं के दुःख की चिन्ता नहीं करती। इसकी कथा का मूल उत्स भी यह महाभारत है। इसमें कृष्ण उद्धव सवाद, उद्धव का गोकुल प्रस्थान ब्रज वासियों को सावना प्रदान करना, मथुरा लौटना और अंत में कृष्ण का मथुरा से द्वारका गमन और वही रहने का निश्चय और इधर राधा का विश्व प्राणियों की सेवा करके प्रेम योगिनी रूप धारण करने की कथा वर्णित है।

महाभारत पर आधारित होने के बावजूद इस काव्य में कवि ने अपनी विराट् प्रतिभा द्वारा अनेक मौलिक उद्भावनाएँ की हैं गोपी-उद्धव-सवाद की अभिनवता अत्यन्त भाव प्रवण बन पड़ी है। महाभारत के अलौकिक शक्ति सम्पन्न कृष्ण को कवि ने लौकिक महापुरुष के रूप में चित्रित किया है। कृष्ण दवानल का पान नहीं करते बल्कि दावानल से म्वाल बालों की रक्षा करते हैं। गोवधन धारण करने की घटना को पूणत लौकिक बनाने का कवि न सराहनीय प्रयास किया।

ब्रज— "सख अपार प्रसार गिरीन्द्र मे,
 ब्रज धराधिय के प्रिय पुत्र का।
 सबल सोग सग कहने उह,
 रख लिया ऊंगली पर श्याम ने॥"

कवि ने अपने युग की ज्वलंत आवश्यकताओं का सम वय करने वाला कथानक चुना है। अग्ने जी शासन के विरुद्ध सघपरत जन मानस और जन नेताओं ने भारत माता की मुक्ति के लिए अनेक त्याग और बलिदान देकर अपनी कतव्य परायणता का परिचय दिया। इसी त्याग और तपस्या से भारत आजाद हुआ, राधा कृष्ण ने भी त्याग और तपस्या का परिचय दिया। चरित्राकन म कवि ने अद्भुत सफलता प्राप्त की है। नायक श्री कृष्ण में कवि ने शील शक्ति और सौन्दर्य का समन्वय किया है, प्रिय प्रवास के श्री कृष्ण ललित कला प्रिय बरूणासागर वीर, पराक्रमी लोक सेवा निरत महापुरुष हैं। वे देयता नहीं, महामानव हैं। विश्व से प्रेम करके राष्ट्रहित को ही जीवन का उद्देश्य मानते हैं।

राधा प्रिय प्रवास की अमर सृष्टि है वह सौन्दर्य सम्पन्न, बुद्धि शीला, प्रेम समपण शीला नारी और प्रेमयोगिनी है। विरह व्याकुल राधा उद्दिग्ग, उदास मौन और अश्रुगर्मा है परंतु वह सच्ची प्रणयिनी की भाँति अपने उदात्त और

महान प्रेमी वृष्ण के सेवा और सृजन कार्यों को दागे बढ़ाने में योगदान देकर शिष्टता, शालीनता और सतत पवित्र प्रेम का परिचय देकर हिन्दी साहित्य की अमर निधि बन जाती है—

वे छाया थीं सृजन सार की, दामिनी थीं खलों की
फगालों की परम निधि थी, औषधि थी पीड़ितों की ।
दीनों की थी बहिः, जननी थी अनाथाश्रितों की,
आराध्या थी ब्रज-अवनि की प्रेमिणी विद्वय की थी ॥ ¹

भाषा सौन्दर्य की दृष्टि से प्रिय प्रवास अपन युग की अभिनव कृति है। प्रिय प्रवास की सजना सस्कृतनिष्ठ खड़ी बोली में की गई है। कवि न एक ओर सरल और बोधगम्य खड़ी बोली को अरनाया है तो दूसरी ओर सस्कृतनिष्ठ भाषा का प्रयोग किया है। सस्कृत वण वत्ता को रचने के लिए कवि ने द्रुतबिलम्बित, मालिनी, वसन्त तिलका वशस्य म दात्रा ता आदि छन्दों का सहारा लिया है। इसी सस्कृतमयी शैली के कारण इस काव्य में कहीं कहीं अस्पष्टता, दुरुहता और जटिलता का समावेश हो गया है—काव्य की स्वाभाविकता को आघात पहुँचा है—

“सद्वस्त्रा-सदलकृता गुणयुता सवण सम्मानिता,
रोगी बहुजनोपकारनिरता सच्छास्त्र चिन्तापरा
सद्भावातिरता अनयहृदया सस्त्रेम, सम्भोषिका
राधा थी सुमता प्रसन्नवदना स्त्री जाति रत्नोपमा ॥”

इस काव्य में ऐसे स्थलों की भी बहुलता है जहाँ सरसता और स्वाभाविकता की मनोरम भाँकिया मिलती हैं। इस काव्य की भाषा परिष्कृत प्रौढ प्रान्तीय और भावानुगामिनी है। उद्धव संवाद में भक्ति मानव सेवा के रूप में चित्रित है। यगोदा और राधा के वियोग मिलाप सहृदयों को भी रलाने वाले हैं। वस्तुतः इस काव्य में ईश्वरवाद नहीं, अपितु मानववाद की प्रतिष्ठा मिलती है।

सत्यनारायण कविरत्न श्रुत ‘अमरदूत’ काव्य ग्रन्थ का अनुमानित रचना-काल सन् 1910 से 1916 ई तक का होना चाहिए। कवि की उत्कृष्ट पक्ष प्रवणता का नमूना ‘अमरदूत’ है। हृदय पक्ष की प्रधानता के कारण कला भाव गौण हो गया है। इस ग्रन्थ में कवि न पूर्व प्रचलित अमरदूत काव्य परम्परा से भिन्न रूप में कल्पना की है। इस काव्य में यगोदा अमर को दूत बनाकर वृष्ण के पास संदेश भजती है। माँ का संदेश वृष्ण के पास अत्यन्त सुरीली और भाविक भाषा में प्रस्तुत किया गया है। कोमल वात पदावली अत्यन्त मधुर बन पती है। ब्रजभाषा के शब्दों का सप्रह काव्य में किया गया है। अमरदूत पर मेघ दूत का प्रभाव सदात होता है, क्योंकि कवि ने प्रकृति के भिन्न उपादानों को

सदेश वाहक का काम सी पा है। भ्रमरदूत काव्य में युगीन परिस्थितियों की स्त्रीकी दशनीय है। यशोदा स्वयं के अनपढ़ होने पर दुःख प्रकट करती है इसलिए वह समाज की अन्य नारियों के लिए शिक्षा आवश्यक समझती है। उस समय समाज सुधार की लहर देशव्यापी थी, नैतिकता का आग्रह, विधवा, पुन-विवाह, स्त्री शिक्षा उस युग में अपेक्षित थी, अतः यशोदा के मुह से निःसृतवाणी का अव-सोक्त कीजिए

‘नारी शिक्षा अनादर जे लोग थारी
वे स्वदेश अवनति प्रचण्ड पातक अधिकारी
निरन्नी हाल मेरा प्रथम समझि सब कोई
विचारत लहि मति परम् अवसा होई ॥
तथी अजमाई वे ॥’¹

सम्पूर्ण काव्य में उद्धव अस्वयं हैं, केवल भ्रमर को ही गोपियों द्वारा उपा-सम्भ दिलाया गया है। खड़ी वाली के युग में अज्ञानता के प्रति उनका प्रेम अनु-वर्णीय था। उन्होंने अज्ञानता को युगानुकूल बनाने का स्तुत्य प्रयास किया। भ्रमरदूत वास्तव्य रम की कृति है, विप्रसम्भ की नहीं। सक्षेप में हम कह सकते हैं कि भ्रमरदूत काव्य भव्य राष्ट्रीय भावना से ओत-प्रोत, भाव प्रवण, नवीन उद्-भावनाओं से सम्बलित और बला व्यजना का सुन्दर उदाहरण है।

प रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि— ‘सत्यनारायणजी की खड़ी कविताओं में प्रेमकली’ और ‘भ्रमरदूत’ विशेष उल्लेखनीय हैं। यशोदा ने द्वारका में जा बसे हुए कृष्ण के पास सदा भेजा है। उनकी रचना नन्ददास के भ्रमरगीत के ढंग पर की गई है। पर अतः में देग में वर्तमान दशा का भी हल्का सा आभास कवि ने दिया है।² कविरत्न’ ने कृष्ण को आराध्य माना है प्रेमकली’ काव्य में कृष्ण के प्रति उनके प्रेम और उनकी आराधना के गीत हैं। उनकी भक्ति भावना में उनके अन्त का देशप्रेम भरा हुआ है। भक्ति भाव की अभिव्यक्ति में भी वे आधु-निकता और मानवता को नहीं भूलते

माधव तुमहू भये वे साख,
वही ढाक के तीन पात है करो न कोई लाख ॥
जैने खीर पवार्य तुमको वैसे सीग दिलाये ।
वे पैंदी के लोटा के सम तब मति गति बरसावै ॥
यह कछु को कछु काज काज में तुमहि लाज नहि आव ।³

स्पष्ट ही वे लोग मंगल की भावना को ध्यान में रखते हैं ॥

- 1 सत्यनारायण कविरत्न, भ्रमरदूत
- 2 प रामचन्द्र शुक्ल हिंदी साहित्य का इतिहास पृ 637
- 3 सत्यनारायण कविरत्न प्रेमकली पृ

जगन्नाथदास 'रत्नाकर' का "उदय शतक" (1919-20) भाव एवं कला की दृष्टि से अत्यंत मोहक हृदयग्राही और सुसंगठित बन पड़ा है। उसमें एक ही अटठारह कवित्तो में प्रवाह रूप में कृष्ण कथा संप्रहित है। उदय का मयूरा से भ्रम जाना, उदय की श्रम यात्रा, श्रम पहुँचना उदय का श्रमजागनाओ की उदबोधन, गोपियों का उदय से तप विश्लेषण, उदय का मयूरा प्रस्थान, और उदय का श्रीकृष्ण को गोपियों का स्मृति सन्देश केना इसके कथा सूत्र हैं। 'रत्नाकर' जी का मूल प्रतिपाद्य निगुण पर प्रेम प्रवण सगुण भक्ति की विजय है।

इस काव्य में कर्ण विप्रलम्भ शृंगार का बड़ा उगत और भव्य चित्रण किया गया है। भावात्मकता, मनोवैज्ञानिकता एवं बलादशता का इस काव्य में उत्तम संगम दृश्य है। भाव व्यञ्जना, याकचातुय, आलंकारिकता, चमत्कारिकता आदि स समवित 'उदय शतक' का रचना शिल्प श्रमभाषा काव्य की आज तक की अतिम श्रेष्ठ उपलब्धि है। घनाक्षरी छन्दो का प्रयोग बड़े चमत्कार और कौशल से साथ कवि ने किया है।

वस्तुतः द्वितीय युग सांस्कृतिक पुनर्स्थापन का काल है। इस युग के कृष्ण काव्यों का यह वैशिष्ट्य ही माना जायेगा कि इन काव्यों में रीतिकालीन राधा कृष्ण वाली शृंगार परम्परा से हिंदी को छुटकारा दिलाया और राधा कृष्ण कथा को आधुनिक युगानुरूप राष्ट्रीय चेतना धारा से जोड़ लिया।

छायावाद युग में छायावादों गिल्प में नवचेतना स्फूर्ति और प्रेरणा प्रदान करने वाले कृष्ण काव्य लिखे गये। इन काव्यों में छायावादी प्रवृत्तियों और विरोधताओं का प्रभाव मिलता है। छायावाद युग में रचित कतिपय कृष्ण काव्य निम्नलिखित हैं

क्र	काव्य	लेखक	सन्
1	अभिमान्यु का आत्म बलिदान	बमला प्रसाद वर्मा	1918
2	बक सहार	मैथिलीशरण गुप्त	1921
3	बम बध	श्यामलाल पाठक	1921
4	कृष्ण जन्मोत्सव	देवीप्रसाद शीतल	1922
5	संगीत महाभारत	नत्थाराम शर्मा गौड़	1924
6	अभिमान्यु बध	रघुनन्दनलाल मिश्र	1925
7	दुर्योधन बध	जगदीश नारायण तिवारी	1926
8	वन वैभव	मैथिलीशरण गुप्त	1927
9	संरमो	,	1927
10	पांडव जन्म	रामनारायण पाठक	1928
11	पांडवों का बाल्यकाल	" "	1933

12	अभिमन्यु वध	रामचन्द्र शुक्ल 'सरस'	1932
13	श्रीकृष्ण वचनमृत	जगन्नाथ वर्मा	1933
14	विरहिणी भ्रजागता	माइकेल मधुसूदन दत्त	1933
15	पांडव यज्ञोद्धार चंद्रिका	स्वरूप दास	1933
16	भ्रजराज	रायकृष्णदास	1936
17	मधुवन	आनन्दकुमार	1936

कमलाप्रसाद दत्त "अभिमन्यु का आत्म बलिदान" काव्य में वीर एव वरुण रस की सुन्दर भाँवियाँ मिलती हैं। यह सामान्य कोटि का काव्य है। भाषा सहज, सरस और प्रसाद गुण युक्त है। मैथिलीशरण गुप्त दत्त 'बक सहार' म रासस बक के सहार की कथा वर्णित है। भीमसेन की वीरता का आद्यान ओजस्वी रूप में अंकित है। यह एक सरस और श्रेष्ठ काव्य कृति है। दयामलाल पाठक दत्त "कस वध" एक सामान्य कोटि का लण्डकाव्य है। इसमें कृष्ण के जन्म से बस के वध तक की कथा सहज सरल भाषा में वर्णित है। 'कृष्ण जन्मोत्सव' नामक लघु काव्य में देवी प्रसाद प्रीतम के अन्त की अगाध कृष्ण भक्ति के दर्शन होते हैं। कवि ने स्वयं लिखा है कि इस काव्य की रचना उन्होंने अपनी भ्रजभाषा में की थी

है धन्य जन धो "प्रीतम" जिन दिव्य दृष्टि दिखाई ।

सीसा ललित ये लखकर औरो को फिर दिखाई ।

उत्तीस सौ तिरैसठ सम्बत प्रभावशाली ।

भ्रज यात्रा समय में विरधी कथा निराली ।

ये कृष्ण जन्म उत्सव जो सुने सुनावे ।

भगवत कृपालुता से चारो पदाथ पावें ॥ ¹

इस काव्य में कवि ने कृष्ण को पूण ब्रह्म माना है और उनके जन्म के समय से लेकर नन्दगृह में पहुँचने और उत्सव आदि का भक्तिभाव पूण चित्रण किया है। इसकी कथावस्तु सुगठित और शैली व्यञ्जक है। इसमें कृष्ण कथा के अनेक सजीव चित्र अंकित हैं।

गीतशैली में नरधारायण शर्मा शौड ने सगीत महाभारत की रचना की है। इसमें सम्पूर्ण महाभारत को लोकगीतो में उपस्थित करने का सुन्दर प्रयास किया गया है। लाला रघुनन्दन मिश्र दत्त 'अभिमन्यु वध' नामक काव्य में अभिमन्यु वध की कथा का वर्णन है। इसमें वीर और वरुण रस का परिपाक मिलता है। जगदीशनारायण तियारी दत्त 'दुर्योधन-वध' एक सामान्य कोटि की कृति है। मैथिलीशरण गुप्त दत्त "सैरधी" में द्यूत-श्रीका में हारने के पश्चात् द्रौपदी के,

राजा विराट् के यहाँ सैरिणी छद्म नाम से रहने और कीचक वध की कथा का आशयान किया गया है। गुप्तजी का उपदेशात्मक रूप इसका स्थान-स्थान पर गुरार हुआ है और अंत में कवि ने सत्य की विजय और असत्य की पराजय का उद्देश्य रखा है। इस काव्य की भाषा खड़ी बोली है, कीचक के सडम में किंचित् वीर रस के यणन भी मिलते हैं। प रामनारायण पाठक कृत "पाण्डव जन्म" और पाण्डवा का बाल्यकाल" शीपक काव्या में एतद् विषयक बयाएँ वर्णित हैं।

रामचन्द्र शुक्ल सरस कृत "अभिमयु वध" में एतद् विषयक घटना का मामिक अवन मिलता है। अभिमयु क शौर्य और अभिमयु व प्रति द्रोणाचार्य के अतद्ध द्व के चित्रण इसमें अत्यन्त भाव प्रयण उन पडे ह।

जगन्नाथ यर्मा कृत 'श्रीकृष्ण वचनामृत' में गीता का सरल अध्यानुवाद है। बानू मैथिलीकरण गुप्त ने 'मधुप' उपनाम से बंगला कवि मादनेन मधुसूदन दत्त कृत 'विरहिणी प्रजागना का मु दूर अनुवाद किया है। यह एक सफल सरस और अच्छा पद्यानुवाद है। 'पाण्डवयज्ञेन चद्रिवा (स्वरूपदास कृत) मूलतः जलवार और पिठमत्त ग्रन्थ है। 'त्रजरञ' (राय कृष्णदास कृत) में कवि के समय समय पर रचे गये व्रजभाषा के पदों का साग्रह मिलता है। इसमें पद दोहे, भजन, कवित्त आदि छन्दों का प्रयोग मिलता है। यह एक अलङ्कार और सुन्दर मक्ति परक काव्य है इस युग में रचे गये काव्यों में कुछ काव्य उरगृष्ट कोटि के हैं और कुछ काव्य सामान्य कोटि के हैं। 'अभिमयु का आत्म वलिदान', 'बकसाहार' 'विरहिणी प्रजागना' श्रीकृष्ण वचनामृत और मधुवन" इस युग के श्रेष्ठ कृष्ण काव्य हैं। मधुवन काव्य में कृष्ण से सम्बन्धित केवल पाँच कविताएँ हैं यह काव्य हमें रसस्नान का स्मरण करा देता है। हिन्दी का प्रगतिवादी आन्दोलन द्व द्वात्मक भौतिकवाद अथवा मावसवाद दर्शन से प्रभावित है। छायावादोत्तर युग में अनेक कृष्ण काव्य लिखे गये। इनमें प्रगतिवादी काव्य के अनेक तत्व मिलते हैं भवितकालीन परिवेश प्रगतिशील भूमिका पर प्रतिष्ठित हुआ। कृष्ण अवतार नही रहे, उन्हें कवियों ने राष्ट्रनायक, प्रजापालक और धर्मरक्षक बनाया। राधा कृष्ण की ऐशान्तिक प्रेमिका होने हुए भी आधुनिक युगीन नारी का रूप प्राप्त कर लेती है। दिनकर का धुरुदोत्र शुद्ध प्रगतिवादी काव्यधारा की सशक्त वृत्ति है। उसमें कवि की मायता है कि समाज की सुख एवं शान्ति, माय और धन के समान वितरण से ही सम्भव है। कृष्ण चरित मानस" में कृष्ण राष्ट्र नायक राष्ट्र उद्धारक नेता के रूप में अवतरित हुए हैं। 'कृष्णायन' में कृष्ण का व्यक्तित्व विराट् राज में व्यक्त हुआ है। उह राष्ट्ररक्षक एवं गोपी बल्लभ दोनों ही बताया गया है।

काव्य की आत्म सत्पात्मक गति नाट्य टोली अत्यंत मनोमय बन पडी है। युग प्रद्युम्न रचित "कृष्ण चरित मानस" (1941 ई.) महाकाव्य सात काण्डों में विभक्त अवधी भाषा का एक महाकाव्य है। इसमें और कृष्णायन में दोहा चौपाई व सोरठा छंदों को गृहीत किया गया है। श्रीमद् भागवत, महाभारत, सूर-मागर आदि के सूत्रों को लेकर इस महाकाव्य में कृष्ण के सम्पूर्ण जीवन वक्त का उपस्थायन किया गया है और कृष्ण को आदश महापुरुष असुर निन्दन, गोपीजन बल्लभ, प्रजारजक, वीर योद्धा, युद्ध संचालक सुस्थ नेता, आदि रूपों में चित्रित किया गया है। कवि की इतिवत्तात्मक और वस्तु परिगणनात्मक शैली के कारण इस काव्य में पर्याप्त शुद्धता और रसता आ गई। भाषा भी प्रौढ़ और परिमार्जित नहीं है। अवधी के इस काव्य में स्थल स्थल पर ब्रज और खड़ी बोली के प्रयोग भी खूब मिलते हैं।

प द्वारका प्रसाद मिश्र द्वारा रचित 'कृष्णायन' (1945 ई.) आधुनिक युगीन कृष्ण काव्य परम्परा का सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है। सूर आदि कवियों ने कृष्ण के जीवन के सभी पक्षों को नहीं लिया था। 'कृष्णायन' में मिश्रजी ने कृष्ण के सम्पूर्ण जीवन की महनीय और भव्य मौकी प्रस्तुत की है। गरिमायों, भाषा उदात्त भाव अभिव्यजना उदात्त चरित्राकन और अनुपम कथा गल्प आदि से सम्बन्धित यह महाकाव्य हिंदी की एक वैभववन्त कृति है। मिश्रजी ने तुलसी के मानस के आदश पर इस महाकाव्य की कथा को सप्त काण्डों में विभक्त किया है। मानस की ही भांति इसमें दोहा-चौपाई (कहो सोरठा भी) का विन्यास किया गया है। इसकी भी भाषा अवधी है। सामग्री के चयन सतिवेश, विनिन काण्डों के भीतर का कथा भाग आदि से पाठक को तुरंत मानस और उसके रचयिता की याद आ जाती है। प्रथम (अवनरण) काण्ड में कृष्ण के पूव की मथुरा की स्थितियां, असुरों के अत्याचारों के साथ ही अत्याचार निर्वाणनाथ कृष्ण जन्म उनकी बालशैलीओं और अलौकिक कार्यों के वर्णन में मुरदास का प्रभाव लक्ष्य है। द्वितीय (मथुरा) काण्ड का मुख्य विषय से सम्बंध वसुदेव देवकी और यदुवतियों का उद्धार है। द्वारिका के सौंदर्य का भी बड़ा सुंदर वर्णन किया गया है। युवा कृष्ण के 'रुकमणी-परिणय' जामवन्त कन्या का परिणय' स्वमतक मणि की कथा' कालिंदी कृष्ण विवाह, सुभद्राहरण' आदि कितने ही कथानक इस काण्ड को माला में मोतिया की भांति पिरोय मिलते हैं।

चतुर्थ (पूजा) काण्ड की कथा पाण्डवों से सम्बद्ध है। पाण्डवों के राजसूय यज्ञ में सवपूज्य होने के कारण कृष्ण की प्रथम पूजा की गई है। गिणुपाल की आपत्ति पर कृष्ण ने उसका वध किया, जरासंध वध भी हुआ कृष्ण द्वारा का लोट आये इसी कारण इस काण्ड का नाम पूजा काण्ड रखा गया है। इसी काण्ड में गुण्डिच्छर और दुष्योधन की द्यूतक्रीडा, शकुनि की कुटिलता, पाण्डवों का सब कुछ

गंवाना, द्रोपदी चीरहरण व उसकी लाज की रक्षा का वणन भी अत्यन्त चित्त-रूपक है। पंचम (गीता) काण्ड में दुर्योधन और अर्जुन का एक साथ वृष्ण से युद्ध में सहायता के लिये प्रार्थना करने, कृष्ण के दूतत्व में कुक्षेत्र में सूयप्रहण का मेला पाण्डव और द्रोपदी का कुक्षेत्र में आने की कथा और गीता के सम्पूर्ण सुन्दर अनुवाद इस काण्ड के आकर्षण के केन्द्र हैं। ५६५ (जय) काण्ड में महाभारत व सम्पूर्ण युद्ध का वणन है। इसमें भी आदि से अन्त तक कृष्ण का महाकाव्यत्व ही व्याप्त है। सप्तम (आरोहण) काण्ड में युधिष्ठिर का विजयी होकर नगर में प्रवेश, युधिष्ठिर की आरम्भ ग्लानि कृष्ण का हस्तिनापुर से द्वारिका जाना वहाँ के लोगों की विलास प्रियता और कलह स्वेककर स्वगारोहण का निश्चय युधिष्ठिर के 'अश्वमेध' का वणन मंत्रेय की उपदेश करते करते कृष्ण का योग द्वारा सदा के लिये आँखें मंद लेना प्रमुख कथा सूत्र है।

'कृष्णायन' का कथा फलक अत्यन्त विस्तृत है। कवि ने इसमें कथा का सूत्रा का अत्यन्त कोमल के साथ सुनिर्वाचन किया है। कवि ने कृष्ण के बाल-गोपाल मयुराधिपति, द्वारकाधीश और महाभारतीय चरित्र का अपूर्व सामञ्जस्य प्रस्तुत किया है जो सम्पूर्ण भारतीय साहित्य में अत्यन्त है। कृष्ण द्वारा भारत में सुदृढ़ कर्त्रीय शासन की स्थापना की परिकल्पना, भीष्म का राजनीतिक उपदेश, मंत्रेय वाला जीवन दणन, विजयश्री के पश्चात् युधिष्ठिर में आत्मभ्रान्ति व वैराग्य उत्पन्न होना राजसूय यज्ञ में कृष्ण की पूजा आदि प्रसंगों में कवि ने अपनी भव्य कल्पना कवि द्वारा मौलिक उद्भव बनाएँ उपस्थित की हैं।

कृष्णायन के प्राक्कथन में देशरत्न डॉ राजेन्द्र प्रसाद ने लिखा है कि श्री कृष्णचंद्र की जीवन कथा इस प्रकार एकत्र नहीं मिलती। वह भाषिक रूप में संस्कृत साहित्य में बिखरी पड़ी है। महाभारत और श्रीमद् भागवत दो मुख्य ग्रंथ हैं, जिनमें कृष्ण चरित का अधिक से अधिक मसाला मिलता है। पर इन दोनों में भी इसके हर पहलु पर न तो समान प्रकाश ही डाला गया है और न दोनों एक उद्देश्य अथवा दृष्टि से लिखे गए हैं। जब संस्कृत साहित्य में ही इस पूणवतार की पूण कथा एकत्र नहीं मिलती तो हिंदी साहित्य में उसका अभाव आश्चर्यजनक नहीं है। प्रस्तुत ग्रंथ में श्री द्वारकाप्रसाद मिश्र ने हिंदी साहित्य की इस कमी को दूर करने का जयंत विवाद और सफल प्रयत्न किया है। कृष्णायन में जन्म से स्वगारोहण तक की सभी घटनाओं का प्रमत्त करके दर्शाया गया है। यह स्तुत्य प्रयत्न प्रबंध काव्य द्वारा ही सफल हो सकता था। मिश्रजी ने शील सौन्दर्य और शक्ति तत्वों के चित्रण में असाधारण प्रतिभा प्रदर्शित की है, यदि बच्चे के प्रति माता और मात सदृश्य गोपियों के मृदुल प्रेम के स्निग्ध स्पर्श का हम एक स्थान पर अनुभव कर सकते हैं तो दूसरे स्थान पर निकट विवरात् युद्ध का भयावह प्रदर्शन भी देखने को मिलता है, यदि वसंत का सुन्दर सुख और मभीरवक वणन मिलता है, तो अत्यन्त भयानक जगल से होकर भी

हमें गुज़रना पड़ता है, गीता के चान के साथ-साथ चर्चा की चटपटी फ़िलासफी और उस मिस के आधुनिक प्रचलित भौतिकवाद का भी दिग्दर्शन हो जाता है। पर सर्वोपरि कृष्णायन कृष्ण चरित को आज के जीवन और आज की समस्याओं को सामने रखकर चित्रित करता है। उसमें हम यीदित प्रथा द्वारा द्वैतत्व का चित्र मिलता है। युद्ध से बचने के असफल प्रयत्न और बाध्य होकर धर्म स्थापन के लिए उसमें प्रवृत्त होने की मजबूरी और उसके अन्त में जीवन की समस्याओं को हल करने में युद्ध की असफलता और असमर्थता का प्रमाण मिलता है। भगवत भक्ति को श्रीकृष्ण चंद्र की अनेक भावियाँ मिलती हैं और देशभक्तों को अखण्ड भारत का दर्शन मिलता है। हमारी सभ्यता और संस्कृति में बास्था रखने वाले को प्रोत्साहन मिलता है और कविता प्रेमियों को रसास्वादन। यह प्रथम प्रवृत्तक होने और राम चरित मानस की भाँति घर घर में प्रवेश करने की शक्ति रखता है।¹

नारी पात्रों में राधा की प्रणयाभिन्न्यक्ति का अत्यन्त सात्त्विक रूप, प्रेम निष्ठा तथा यगोदा का वात्सल्यमयी माँ का रूप दशनि में कवि की लेखनी ने अपने अभिव्यक्ति कौशल का परिचय दिया है किन्तु कृष्णायन की प्रमुख विशेषता है कि इसमें कृष्ण चरित्र की समग्रता और उसकी सम्पूर्ण विशेषताओं की इसमें सूक्ष्म अभिव्यक्ति मिली है। हिंदी का कोई भी कवि कृष्ण चरित के जन्म से मृत्यु तक के आख्यान और उनके शील, शक्ति और सौंदर्य की पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं कर सका था। कृष्णायन में पहली बार सम्पूर्ण कृष्णचरित का सविस्तार आख्यान मिलता है। बालकृष्ण की लीलाओं गोपीजन बल्लभ की रसिकेतिह्यो कमयांगी कृष्ण का विराट रूप भी इसमें अंकित है। कथा, शिल्प, महानियता चरित्राङ्गन का जोदात्य विचार वैभव का विशाल आधार फलक, अनूठा काव्य सौंदर्य भाषागत भयान उत्तम अलङ्कित रसप्रवणता तुलसीदास की अवधि का उत्तम आदर्श उसका माधुर्य प्रसाद और ओज राधाकृष्ण प्रसंग की माधुरी, उसके काव्य में मुहावरों व कहावतों के सुष्ठु प्रयोग आदि कृष्णायन के वैभववत् जाक्षयण कद्र है। मिथ्याजी की भाषा सुसाम्बद्ध प्रौढ और साहित्यिक बोधगम्य व सरल है मिथ्याजी का अवधि भाषा पर असाधारण अधिकार है।

कृष्णायन की शैली समास प्रधान है, इसमें शृंगार और शान्त भयानक और रोद्र रस का अत्यन्त गुंथन परिपाक मिलता है। इस काव्य में चार रस की सर्वोत्तम अभिव्यक्ति मिलती है और इसी का कारण विभास, रोद्र और भयानक रसों की भी सुंदर व्यंजना हुई है। हिंदी साहित्य का यह एक उत्तम कोटि का महाकाव्य है।

1. डॉ. राम प्रसाद कृष्णायन, प्रास्ताविक पृष्ठ 3

रामधारीसिंह दिनकर कृत कुरुक्षेत्र (1946) विचार प्रधान ओजपूर्ण काव्य है। इसमें कवि ने भारत के कषाण को प्रतिपाद्य बनाते हुए आधुनिक युग की एक ज्वलंत समस्या युद्ध और शान्ति पर विचार किया है। युद्ध के ही सदभ में कवि ने अधिकार, कृतव्य, शान्ति, क्रान्ति मानवता आदि पर भी विचार किया है। इस काव्य में कवि ने श्रीमद् भगवद् गीता के कमवाद को दृष्टिपथ में रख कर कठिन कम को अपरिहाय माना है और उसका महत्व अंकित किया है। युधिष्ठिर को उत्तम अक्रमण्य और शिथिल चरित्र वाला कहा है। कवि का मून उद्देश्य ही जैसे कौरवों का सात्त्विक और पांडवों का अधम और विदूत रूप में चित्रित करने का है। यह पूरा काव्य इतिवृत्तात्मक शैली में लिखा गया है।

कवि ने भीष्म पितामह द्वारा यह कहलवाया है कि जब अयाचार जनानार और जन उत्पीडन बढ़ जाता है, जनता गरीबी व अभावों में जीवन व्यतीत करती है तब सघष प्रवल होता है और युद्ध अनियाय हो जाता है। अय सामाजिक समस्याओं पर विचार अभिव्यक्त करते हुए भी युद्ध समस्या ही उसका मुख्य प्रतिपाद्य है। "कुरुक्षेत्र क कवि ने युद्ध के नामयिद्ध रूप को न लेकर उसके चिरन्तन रूप को ही अपनाया है, युद्ध को उन्होंने मानवतावादी दृष्टि से देखा है, राजनतिक या सैद्धान्तिक दृष्टि से नहीं। युद्ध जसी एक विश्वजनीत समस्या को कुरुक्षेत्र में एक सुंदर प्रबध काव्य का रूप दिया है। इसकी रचना प्राचीन पृष्ठभूमि पर आधारित अवश्य है, पर साथ ही इसमें त्रयुग क प्रश्ना और जीवन दर्शन को पर्याप्त स्वान मिला है। महाभारत के युधिष्ठिर और भीष्म जैसे पात्रों को कवि ने आज के युग की नवदृष्टि से देखा है।¹

कवि का मानवीय दृष्टिकोण इस काय में चरम उच्च के साथ प्रस्फुटित हुआ है

"मानवता की राह राककर पवत अड हुए है।

न्यायोचित सुख सुलभ नहीं जब तक मानव मानव को।

चन वहाँ धरती पर तब तक, शांति कहीं इस भव को ॥²

¹ कुरुक्षेत्र में साहित्यिक खडों वाली का प्रयाग किया गया है। उसकी भाषा के स्वरूप निर्माण में सुंदर शब्द चयन लोकोवितयाँ एवं मुहावरों का प्रयोग, चित्रोपमता, साक्षात्कता प्रसंगानुसूल कोमल एवं कठार शब्दावली आदि का विशेष योगदान रहा है।³

1 गोविन्दराम शर्मा हिन्दी के आधुनिक महाकाव्य, कुरुक्षेत्र, पृष्ठ

2 कुरुक्षेत्र दिनकर, पृ 103 (सप्तमसर्ग)

3 डॉ. दत्तात्रेयराव गृष्ण भाषुनित प्रतिनिधि हिन्दी महाकाव्य पृ 257

विशेष रूप में कहा जा सकता है कि काव्य की विचार प्रकृति युद्ध के परिणाम से उत्पन्न भयकर समस्याओं की ओर इंगित करती है और वाति स्थापना के प्रयास दृढ़ती है यह काव्य युद्ध समस्या का हल खूबने का प्रयत्न कर आधुनिक राजनीतियों की चेतना जागृत करने का प्रयास है। अतः इसे विचार प्रधान काव्य ही कहा जा सकता है।

“यह काव्य रामधारीविह स्तनकर रचित सात सर्गों में विभाजित है। इसमें युधिष्ठिर की आत्मग्लानि, भीष्म का प्रबोध, अतृप्तिया का काव्यांचित आकलन, राजनीति में वाति अवाति का उपयोग, ज्ञान वराण्य कम का योग, मानवीय सिद्धान्त की नूतनता का आनन्द और प्रयोग एवं कोमल मानवीय भाषा का सुन्दर चित्रण हुआ है। इसमें आत्रपूण भाषा और तीव्र मर्मवेदना जगाने वाली वाक्ति के दर्शन होते हैं कि नु पारिभाषिक अर्थ में महाकाव्य का प्रवर्धामक कथानक के आधार पर अव्यवस्थित होना अनिवाय है। इसमें न तो इस प्रकार का कोई कथानक है न गायक नायिका और सवियाँ। केवल युद्ध दर्शन को सगर्व देखकर महाकाव्य कहना अनुचित ही होगा, इसे उच्च कोटि का सफ़ेद काव्य कह सकते हैं मुख्यतः विचार काव्य कहना ही उचित है।”¹

हिन्दी में सन् 1934-36 के आसपास से प्रगतिशील काव्यधारा का प्रारम्भ होने लगा है। मानव के द्विद्वैतमक भौतिकवाद को दृष्टिपथ में रखते हुए प्रगतिवादिओं ने नये समाज के निर्माण के लिए शोषित, दलितों और सबहारा लोगों को वाति के लिए आह्वान किया और वर्ग जाति तथा धर्म रहित समाज रचना के आधार को आवश्यकता पर बल दिया है। फलतः कवियों की सवेदना शोषित वर्गों के स्वर को मुखर करने में सलग्न हुई। उन्होंने कल्पना लोक से वास्तविक संसार का सघन भूमि पर अपने काव्य का नय्य इमारत खड़ी की वह दानि शापितों का उद्धारक बना।

आधुनिक कृष्णकाव्य 1947-1970

क्र	कृत	कृतिकार	सन्
1	रुक्मिणी ज म	मदनमोहन लाल शर्मा	1949
2	रुक्मिणी का कृष्णप्रेम	— —	1950
3	रुक्मिणी की सगाई	—”—	1950
4	रुक्मिणी का पत्रलेखन	—”—	1951
5	रुक्मिणी का विरजापूजन	— , —	1950
6	रुक्मिणी का मातृ स्नेह	—”—	1950

1 प्रविनाशविह बीतवीरतायी पूर्वदि के महाकाव्य, पृ 56

7	रुक्मिणी का विवाह	—, —	1958
8	स्याम सन्देश	अमृतलाल चतुर्वेदी	1950
9	हिडिम्बा (हिडिम्बा)	मैथिलीशरण गुप्त	1950
10	द्रोण	स्यामगोपाल रूद्र	1950
11	अगराज	भानूदकुमार	1950
12	कर्ण	केशरनाथ मिश्र 'प्रभात'	1951
13	युद्ध	मैथिलीशरण गुप्त	1952
14	जयभारत	—, —	1952
15	रामरथी	रामधारीसिंह दिनकर'	1952
16	सावित्री	गौरीशंकर मिश्र	1953
17	शात्यवध	उग्रनारायण मिश्र	1954
18	शकुन्तला	भगवानदास शास्त्री	1954
19	पाचाली	डॉ. रामेय राघव	1955
20	अधायुग	डॉ. धमवीर भारती	1955
21	प्रयाण	गिरिजाशंकर गिरीश	1955
22	विदुलोपाख्यान	भगवतशरण चतुर्वेदी	1956
23	वीरांगना	माइकेल मधुसूदन दत्त (अनुवादक 'मधुप')	1956
24	चक्रव्यूह	कुवर नारायण	1956
25	मीरा	परमेश्वर द्विरेफ	1956
26	दमयन्ती	ताराचंद्र हारीत	1957
27	सती सावित्री	श्री गोपाल क्षेत्रीय	1957
28	सनापति जण	लक्ष्मीनारायण मिश्र	1958
29	रघु देवयानी	रामचंद्र	1958
30	एकलव्य	डॉ. रामकुमार वर्मा	1958
31	दाशवीर कण	गुरुपदम समवाल	1959
32	कुप्रिया	धमवीर भारती	1959
33	देवयानी	वासुदेव	1960
34	अभियान	राशि भूषण	1960
35	सत्रि सन्देश	किंकर	1960
36	द्रोणदी	प. नरेन्द्र शर्मा	1960
37	शत्रुचंद्र विनोद	किशोरचंद्र कपूर किशोर	1962
38	गोपिका	सियाराम शरण गुप्त	1962
39	गुरु दक्षिणा	विनोदचन्द्र पाण्डेय	1962
40	पान्तेय रघु	उदयशंकर भट्ट	1962

41	प्रिय मिलन	नन्दकिशोर भ्वा	1964
42	प्रवासी पाव	नटवरलाल हाही	1964
43	बुबरी	रामनारायण जप्रवाल	1965
44	अज्ञातवास	सरपुप्रसाद त्रिपाठी	1965
45	जननीता एव नारगीता	हरिवशराय बच्चन'	1966
46	योगनिद्रा	कृष्णान दन पीरूप	1967
47	प्राचीना	जनादाकर जोषी	1968
	(अनुवादक मालाभाई पटेल, और रघुवीर चौधरी)		
48	दक्की	समाजगत मालवीय	1970

प मदनमोहन धर्मा कृत "रुमिमणी जन्म" (1949 ई) रुमिमणी का कृष्ण प्रेम (1950 ई) रुमिमणी की सगाई (1950 ई) रुमिमणी का पत्रलक्षण (1951 ई) रुमिमणी का गिरजा पूजन 1950 रुमिमणी का मातृ प्रेम (1950 ई) रुमिमणी विवाह (1958ई) नाव्या म रुमिमणी क जन्म स लेकर श्रीकृष्ण क साथ विवाह तक की सम्पूर्ण कथा को प्रस्तुत किया गया है ये काव्य मूलन इतिवृत्त प्रधान और कथात्मक है । इनम रुमिमणी और कृष्ण के माध्यम से कृष्ण भक्ति का ही प्रतिपादन किया गया है । इन काव्या म शृंगार रस की सहज सुंदर व्यञ्जना मिलती है । युद्ध प्रसंग में रस भी मिलता है और इन काव्यों का पद्यवस्त्र शांत रस म हुआ है ।

'श्याम सदेशो (1950 ई) रचयिता अमृतलाल चतुर्वेदी यगोदा की सामिक बदना का बर्णन बड़ा व्याकृत्रन पडा है । कृष्ण की सुधी मात्र से यगोदा क आवल से दुध चून लगना है ।

मधिलीशरण गुप्त न 'जयभारत' (1952 ई) म महाभारत के आदि पव से महाप्रस्थान पव की रहद् कथा को सतानिस खण्डा र्म प्रस्तुत किया है । वस्तुत गुप्तजी का उद्देश्य महाभारत की सम्पूर्ण कथा को नवीन रूप में खडी बोली म उपस्थित करना प्रदान होता है । हम कह सकत है कि यह प्रयत्न नाव्य के रूप म सुवि यस्त न हाकर भी जाण्यानो और कथा प्रसंगो के रूप म सकलित है इसक सतानिस शीपक घटनाओ द्वारा व्यक्तियो और स्थानो के नाम पर है । इसम युधिष्ठिर नायक है, कवि न भारतीय सरशृति का यगोगान और अनेक महा भारतीय पात्रो क उदात्त चरित्र अकन को दृष्टिपथ म रखा है । धम सस्थापना की बात इस का नेत्रीय बिन्दु है । महाभारत की विशाल कथा का जयभारत मे गुप्तजी न महाकाव्योचित गरिमा के साथ उपस्थित करके अपनी प्रबध दमता का परिचय दिया है । यह सही है कि इसमे गुप्तजी की शली का दोष, इतिवृत्तात्मकता प्राय विद्यमान है । कथा वस्तु भी निचिल है । महाभारत के पौराणिक और अति मानवीय आण्यानों को कवि ने अपनी कल्पना, कला और आधुनिक युग की भावना के अधीन ग्राह्य बनाकर प्रस्तुत किया है ।

“रश्मिरेषी” (1952 ई) कण को केन्द्र में रखकर तिनकरजी का श्रेष्ठ काव्य है। सात सर्गों की इस कथा में कण के दया दानधर्म पालन, वीरता और विश्वास, अटूट मंत्री, त्याग बलिदान को आकर्षण का केन्द्र बनाया गया है, सामाजिक जीवन की अनेक दुबलताओं और व्यक्तिक जीवन की अनेक विशेषताओं पर प्रकाश डाला गया है, इसमें कण और कुन्ती संवाद अत्यंत कठोरता से चलाया गया है। स्वामी की मनोवृत्तियों, दलितों और उपेक्षितों के उद्धार आश्वासन, सघप, दान, त्याग, बलिदान आदि की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट काव्य बन पाया है। दलितों, और उपेक्षितों की समस्या जानि पाति की समस्या विद्वान् बुद्ध और मंत्री की समस्या, रुद्धिवादी समाज के प्रति विद्रोह, युद्ध, शान्ति और मानवतावादी दृष्टिकोण इस काव्य के आकर्षण बिंदु हैं।

राजेश्वर राधक कृत “पांचाली” (1955 ई) द्रौपदी के जीवन पर आधारित काव्य है। जयद्रथ की द्रौपदी से प्रणय याचना, द्रौपदी की प्रताड़ना द्रौपदीहरण, आदि सूत्रों के द्वारा कथा वस्तु का सघटन किया गया है। राजेश्वर राधक की प्रगतिशील दृष्टि चेतना का यह ज्वलंत उदाहरण है।

धर्मवीर भारती कृत “अध्याय” (1955 ई) भी महाभारत के अन्तिम अध्याय से सम्बद्ध काव्य नाटक है। पाँच अंकों में विभाजित यह रण्य काव्य संवत्सा अभिनेय है। कवि ने इसमें महाभारत युद्धांतराल की विषमताओं का आधुनिक युग के परिपेक्ष्य में बड़े सुंदर रूप में उपस्थित किया है। इसमें प्राचीन नाट्य-परम्परा, ग्रीक नाट्य परम्परा, काव्य आदि का उत्तम समन्वित रूप प्रस्तुत किया है। महाभारत की परिस्थितियों पात्रों और घटनाओं के प्रतीक से कवि ने वर्तमान युग की कुण्ठा, अनास्था, त्रासदी, घुटन, मर्यादाहीनता और शक्तियों पर गहन प्रकाश किया है। युद्ध के बाद की स्थितियों का भागी न बड़ा जीवन्त चित्रण किया है। हिंदी साहित्य में यह एक अभिनव प्रयाग है। काव्य और नाटक का इसमें अद्भुत समन्वय मिलता है।

“प्रयाण” में (1955 ई) गिरिजाशंकर गिरिश कृत सुदामा और वृष्ण का आख्यान वर्णित है। कुंवर नारायण द्वारा रचित “चक्रव्यूह” (1956 ई) में आधुनिक युग की समस्याओं को पलक पर महाभारत की चक्रव्यूह विषयक कथा वर्णित है।

डॉ. धर्मवीर भारती द्वारा रचित मनु प्रिया (1959 ई) में राधा के ऐकान्तिक प्रेम का आधुनिक युगीन मनोवैज्ञानिक भूमिका पर प्रतिष्ठित चरित्र का प्रकाश किया गया है। राधा के जीवन में प्रेम और युद्ध का द्वन्द्व प्रस्तुत कर उस एक अभिनव रूप में उपस्थित किया गया है। पूर्वानुराग मन्त्री, परिणय दृष्टि संकल्प, इतिहास और समापन सीपों को मिलाकर कृष्ण की जन्म-मरण की तीला सहचरी राधा की अन्तःस्था को अभिव्यक्ति दी गई है। वह कृष्ण की महा रक्ति है।

राधा के हृदयोद्गारों को कवि न आधुनिक जोर आध्यात्मिक धरातलों पर संप्रेषित कर उसे उदात्त रूप प्रदान किया है। शृंगार की अनूठी भंगिमाएँ इसमें पदे पदे मिलती हैं।

नरेन्द्रशर्मा की "द्रौपदी" (1960 ई) उच्च कोटि का प्रतीकात्मक और विचारपूर्ण खण्डकाव्य है। महाभारत की कथा में ज्योति शिखा-सी जसती होमकुमारी द्रौपदी को वेद्र बनाकर कवि ने आधुनिक देवकाल और मनस्थिति के अनुरूप इस काव्य की सजना की। इसमें द्रौपदी जीवन शक्ति की प्रतीक है। पाँच पांडवों पांच महातत्व के प्रतीक और द्रौपदी प्रज्ञा और चतय ज्वाला है। पुरातन होने पर भी इसकी भूमि और पात्र सनातन है। स्रष्टा कवि की प्रतीमा से मडिट होकर इसका सभी पात्र सवथा नूतन तेज से दीप्त है। द्रौपदी रूपी जीवन शक्ति पाँच महातत्वों से सश्लिष्ट करती है उनमें चतय की ज्वाला भरती है। शत्रु शत्रु कामना रूप दुर्योधन और दुःशासन के पशुबल से सनस है। नग्न वासना की प्रेरणा से वह निवसना की जाती है शूरवीर पांडव देखते रह जाते हैं उसके अपमान के फलस्वरूप बृहक्षेत्र का धर्मयुद्ध होता है उसका परिणामस्वरूप विश्व कल्याण पशुबलि की माहुति दी जाती है। नरेन्द्रशर्मा न प्रतीक पद्धति, नूतन विचारणा और सशक्त अभिव्यक्ति के द्वारा इस आधुनिक युग के एक श्रेष्ठ काव्य के रूप में प्रस्तुत किया है।

किशोर चन्द नरूर द्वारा विरचित "कृष्ण चन्द विनाद" (1962 ई) कृष्ण जीवन के विस्तृत आधार पर सस्थित है। सियारामशरण कृत "गोपिका" (1962 ई) में गोकुल से द्वाारावती जान वाला श्रीकृष्ण के विरह में गोपिया विदोष रूप में इन्दुमती की कथा कही गई है। सत्रह सर्गों वाली इस कथा में कृष्ण विषयक जनक धार्यानों का नुमम्फन किया गया है। नन्द किशोर भा कृत "प्रियमिलन" (1964 ई) इक्कीस सर्गों वाला महाकाव्य है।

नव सर्गों वाले कुबरी (1956 रामनारायण अग्रवाल कृत) काव्य में कुबरी के सम्पूर्ण चरित्र को बड़े ही मनोवैज्ञानिक जोर भव्य रूप में उपस्थित किया गया है। वृणानन्द पीयूष के काव्य 'योगनिद्रा' (1967 ई) में द्वापर युग की बिदाई और कृष्ण के अवसान की कथा मुक्त छन्द में बड़े बौद्धिक धरातल पर उपस्थित की गई है।

उमावन्त मालवीय कृत 'देवकी' (1970 ई) में कृष्ण माता देवकी की कथा कही गयी है। कृष्ण चरित्र सम्बद्ध पात्रों में देवकी का जवन प्रायः उपेक्षित ही रह गया है। उमावन्त मालवीय ने इसमें काव्य की इस उपमित भाग्य महान माता के वात्सल्य और त्याग की कृष्ण गाथा का यगन किया है। देवकी यगोत्त के भाग्य का सराहती है कि उसे वात्सल्य का जाश्रय आलम्बन रूप में श्री कृष्ण मिले, किन्तु उस दुःख है कि उसका वात्सल्य और आश्रय के दूध का स्रोत ही नहीं रहा।

कस के अत्याचार, अनेक पुत्रों के वध और कृष्ण के यशोदा के यहाँ चले जाने आदि को दृष्टिपथ में रखकर उमाकांत मालवीय ने 'देवकी' की इस कृष्ण कलित कथा का संप्रथन किया है।

बीसवीं शताब्दी में (1900 से लेकर आज तक) हिंदी में कृष्ण विषयक दो सौ से अधिक काव्य लिखे गए हैं, इनमें अधिकांश सामान्य कोटि के काव्य हैं, साथ ही अनेक सुसंगठित काव्या की भी सजना हुई है। इनमें जयद्रथ वध, प्रियप्रवाह, भ्रमर दूत, उड्डव घतक कस वध, विरहिणी व्रजागना, झापर, कृष्णायन, कुक्षेत्र, श्विमणी मंगल (सात खण्ड) जयभारत, अघायुग, मीरा, कन्तुप्रिया, द्रोपदी, गोपिका, देवकी जैसे श्रेष्ठ काव्य उल्लेखनीय हैं। 1900 ई के पूर्व के कृष्ण काव्यों में रीतिवादी कवियों ने श्री कृष्ण को प्रायः उद्दाम शृंगारी रूप में चित्रित किया था। आधुनिक युग में कृष्ण केवल गोपी जन वल्लभ न रहकर राष्ट्रीय नेता और लोक नायक रूप में प्रतिष्ठित हुए। राधा आधुनिक युग चेतना की सनाहिका नारी बन गयी। प्राचीन कृष्ण काव्यों की आलौकिक घटनाओं को विज्ञान के प्रभाव से बुद्धि और तर्क के परिप्रेष्य में युगीन कसौटी पर कसा गया। कृष्ण इश्वरावतार और परमब्रह्म नहीं बरन् महान शक्तिशाली और अद्भुत बुद्धि सम्पन्न महामानव के रूप में प्रतिष्ठित किये गये। कृष्ण जीवन की अलौकिकता को बौद्धिक रूप में लौकिक बताकर लोक मंगलकारी रूप में प्रस्तुत किया गया। इन काव्यों की भाषा ब्रज की स्थान पर खड़ी बोली बनी। अनेक काव्या में दोहा, चौपाई, अद्वैत और संस्कृत के वर्णित वृत्त का प्रयोग किया गया, साथ ही आधुनिक कृष्ण काव्या में भाषा को छन्दों के बंधन से मुक्त भी किया गया। अनेक कृष्ण काव्य प्रगीत शैली में भी लिखे गये। राष्ट्रीय चेतना का स्वर भी आधुनिक कृष्ण काव्य में मुखरित हुआ है।

1900 ई के बाद की कृष्ण काव्य परम्परा गुप्तजी के जयद्रथ वध में प्रारम्भ होती है। गुप्तजी ने कृष्ण का भगवान, हरि विष्णु, अच्युत, रमापति भी माना है। साथ ही परम आश्रयान में तर्क एवं बुद्धि तर्कों के समीप से नये युग का श्री गणेश भी किया है।

बाबू जगन्नाथ दास 'रत्नाकर' आधुनिक युगीन कृष्ण काव्य परम्परा की महापथ मणि है। इसमें प्राचीन परम्परा का प्रायः हीन पर भी कवि ने इसमें युगीन चेतना को दृष्टिपथ में रखा है, भक्तिवादी सरसता आत्मनिष्ठा रीतिवादी शृंगारिकता और आधुनिक युगीन तर्क शक्ति के साथ ही उत्कृष्ट भाषा अलङ्कार पदावली और वैचित्र्य प्रभृति आशय सूत्रों के कारण ब्रज भाषा काव्या में उड्डव-घतक का अप्रतिम स्थान है। 'सत्यनारायण कविरत्न' का 'भ्रमरदूत' भी इसी बड़ी का संगत मधुवेष्टित और श्रेष्ठ कृति है। इसमें आधुनिक युगानुरूप राधा को साक सेविका और यशोदा को राष्ट्रमाता रूप में अंकित किया गया है।

य द्वात्रिंशत्प्रसाद मिथ्य त्वन "कृष्णायन" आनुनिता युग व तुलसी की परम्परा का श्रेष्ठ कवि का महाकाव्य है। इसमें कृष्ण का व्रज, मथुरा, द्वात्रिंशत्, महाभारत आदि में सम्बद्ध सम्पूर्ण जीवन परितः को अत्यन्त विपद् और भय रूप में अंकित किया गया है। भागवत पुराण, महाभारत, सूर आदि में कृष्ण को कृष्णायन ने धर्म सम्यापक, अनुर सहारक, राष्ट्रनायक प्रसाधारण बुद्धि सम्पन्न आदि रूपों में चित्रित किया गया है। भाषा शक्ती भाव, अभिव्यक्ति आदि की गरिमा उदात्त विचार अभिव्यक्ति की गौल जादि दृष्टिया से यह हिन्दी साहित्य का एक श्रेष्ठ महाकाव्य बन गया है।

धर्मवीर भारती की 'कनुप्रिया' अपन मूख्य भाव बोध और आधुनिकता के ने लिय गया है।

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि हिन्दी कृष्णकाव्य व्रज न समृद्ध है इसकी समृद्धि में वैष्णव भक्तों से लेकर आज तक के कवियों ने अपने अन्त में सर्वात्म्य को देकर समृद्ध बनाया है। यह सहम धारा विभिन्न रूप धारण कर हिन्दी साहित्य में निरन्तर प्रवाहमान रही है। हिन्दू भक्ता कवियों के साथ ही अनेक मुसलमान कवियों ने भी इस धारा में अपने अन्त की उदारता का परिचय देते हुए समृद्ध बनाने में अपना महाव्ययदान दिया है।

बड़े प्राचीनकाल से आज तक भारतीय जन-जीवन और साहित्य में कृष्ण के लौकिक तथा अलौकिक दोनों रूप समानान्तर स्थिति में विद्यमान रहे हैं। महाभारत, जातक कथाओं, जन आगम ग्रन्थों गाथा सप्तमती प्रगति संस्कृत प्राकृत के प्राचीन ग्रन्थों में श्रीकृष्ण का लोक चरित और लौकिक शृंगारी रूप ही अभिव्यक्त हुआ। श्रीमद् भगवद्गीता हरिवंश, भागवत, पद्म, वामन वायु कूर्म ब्रह्मवैवर्त, शिव, विष्णु पुराणों में कृष्ण के अवतारी रूप का बार-बार उल्लेख मिलता है। कृष्ण की अलौकिक लोक लीलाओं का इनमें बड़ा ही मनोमय रूप उपलब्ध है।

नारद पाचरात्र जैसे संस्कृत ग्रन्थों में भी उनके अवतारी रूप और अलौकिक लीलाओं का वर्णन हुआ है। भास के नाटकों और शिशुपाल वय, वेणीसंहार, कवीन्द्र वचन समुच्चय, गीतगोविंद, सद्भक्तिकर्णामृत आदि में कृष्ण जीवन के कार्यों के बड़े प्रभविष्णु वर्णन मिलते हैं। माधुय विग्रह भक्त रक्षक-रजक, व्रज रजक, असुर निकहन बास गोपाल आदि रूपों में उनकी लौकिक अलौकिक लीलाओं के सीकड़ों आख्यान मिलते हैं।

श्री कृष्ण चरित को लोकव्यापी बनाने में कृष्ण भक्ति के विविध सम्प्रदायों का सर्वाधिक योग है। सभ्यत सोलहवीं शताब्दी में ही उत्तर भारत में कृष्ण भक्ति का प्रचार करने वाले सम्प्रदायों का सागठन हो सका, उसका केन्द्र मथुरा, म्दावन हुआ। इन भक्त सम्प्रदायों का सम्बन्ध निम्बाक मद्भव, विष्णु स्वामी से जाता है। बल्लभाचार्य का पुष्टिमाग चतुर्थ का गौडीय, हितहरीवंश का

राधावल्लभी तथा हरिदास का सखी या टट्टी सम्प्रदाय सोलहवीं शताब्दी के प्रमुख कृष्ण भक्ति सम्प्रदाय है। भक्ति और दान की इसी पावन पीठिका पर हिंदी में कृष्ण भक्ति साहित्य का अविर्भाव हुआ। भक्तों ने सम्पूर्ण देश को कृष्ण भक्ति सुधा से आप्पायित और अभिषिक्त किया। भक्ति युगीन हिंदी कृष्ण नाव्य भक्ति भाव की पवित्रता और उदस्तता से परिपूर्ण है।

रीतिवाले कवियों ने अपनी कविताओं के बहाने से 'राधा-कहाई' का 'सुमिरन' किया। रीतिवाले के बहुत से कवियों ने इसी बहाने से अपने अन्त के शृंगारी भावों को खुलकर अभिव्यक्त भी किया। उन्होंने अपने आश्रयदाताओं की काम वासना को सतृप्त करने के लिए इसी राधा-कहाई के माध्यम से भाति भाति की शृंगारी कविताओं की रचना की।

भारत-दु युग में भारत-दु बाबू हरिश्चंद्र ने अपने अन्त की भक्ति प्रेम-भावना को अत्यन्त सरस और मनोमय रूप में व्यक्त किया। भारत-दु कृष्ण के परम भक्त थे, वे स्वयं को कृष्ण का सखा और स्वामिनी 'राधा रानी का गुलाम' मानते थे, उन्होंने रीतिवालीन मासलता और वासनात्मकता की भूमिकाओं से उठाकर कृष्ण साहित्य को पुनः प्राज्वल प्रेम की दिव्य पीठिका पर प्रतिष्ठित किया और कृष्ण के अवतारी रूप को अधुष्ण भी रखा।

द्विवेदी युग के कवियों ने कृष्ण चरित का आख्यान करते हुए उनकी अलौकिक कथाओं को बौद्धिक रूप में लौकिक बनाने का प्रयास किया। विरहिणी कथा ही राधा को लोक सेविका रूप में भी उपस्थित किया। यह रूप "प्रिय प्रवास" में व्यक्त हुआ है। "प्रियप्रवास" के कृष्ण लोकोपकार निरत, लोकसेवक, लोकरजक और राष्ट्रनायक के रूप में उपस्थित किये गये हैं।

बीसवीं शताब्दी के विगत पचासी वर्षों में लिखे गये कृष्ण काव्यों में ऐसे भी काव्य हैं जिनमें कृष्ण की अवतारी और अतिमानवीय लीलाओं का वर्णन मिलता है, किन्तु आधुनिक युग की श्रेष्ठ कोटि की कृष्ण विषयक रचनाओं में उनके अलौकिक अवतारी और अति मानवीय रूपों को तक सगत और बुद्धिमत् मानवीय रूपों में प्रस्तुत किया गया है और कृष्ण को युग दृष्टा, राष्ट्र नेता तथा लोक नायक रूप में प्रतिष्ठित किया गया।

हिन्दी के मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य (आदिकालीन एव भक्तिकालीन)

इस्लाम मे अल्लाह को प्रायः सगुण-निराकार और कही कही सगुण साकार के रूप में स्वीकार किया गया है। इस्लाम का तो मूर्ति पूजा और देवी देवतावाद से विरोध है। इस्लाम के एकेश्वरवाद में इसे अनुचित माना गया है। अल्लाह एक है, उसका अतिरिक्त कोई शक्ति नहीं है। सिद्धांत इस्लाम मूर्ति पूजा (बुतपरस्ती) से नफरत करता है, लेकिन हिन्दुओं के साथ रहते रहते उसका यह उसूल भी नरमा गया है ऐसा प्रतीत होता है।

सन् 1911 ई. की संयुक्त प्रांत की 'सेन्सस रिपोर्ट' से ज्ञात होता है कि बहुत से मुसलमान (चुरिहार) "कालका माई, के पूजक हैं और हिन्दुओं की तरह श्राद्ध करते हैं।" ¹ पूव पंजाब की मुस्लिम महिलाएँ बच्चों को चेचक निकलने पर "श्रीतला मंदिर" में शीतला देवी से प्राणरक्षा की प्रार्थना करती हैं। ² कच्छ (गुजरात) के मोमिन अपने को 'शिया' लिखते हैं, लेकिन वे मुसलमानों में नहीं मिलते व माताहार नहीं करते, मस्जिद के नियम नहीं मानते और न रमजान का व्रत रखते हैं। "राम राम" कहकर उनमें अभिवादन की प्रथा है। वे "त्रिमूर्ति" (ब्रह्मा विष्णु शिव) के उपासक हैं तथा अपन पीर इमामाह को ब्रह्मा का अवतार मानते हैं। ³

अवतारवाद की तरह इस्लाम में एक कल्पना पगम्बरवाद की है। पगम्बर का भाष्य है - वह धर्माचार्य जो मानव को ईश्वरीय संदेश देता है। इसे 'रसूल' भी कहते हैं। अरबी में पगम्बर का पर्याय 'नबी' है। नबी वह है जिसे जनसाधारण ईश्वर का दूत समझते हों। व्यापक अर्थों में पगम्बर, रसूल या नबी मात्र

- 1 The Census of India Report — XV Pt 1 (United provinces P 141 (1911)
- 2 C I R (Punjab) pt 1 174 (1911)
- 3 C I R (Bombay) pt. VII 59 (1911)

ईश्वर का सन्देश ही नहीं सुनाता प्रयुक्त वह मनुष्य के आत्म रूप है। वह अपन आदर्शों और आचरणों से ईश्वरीय सिद्धान्तों का व्यवहारिक पक्ष उपस्थित करता है।¹

भारतीय पुनर्जन्मवाद को ईरान के भावुक कवियों ने स्वीकार किया है। रूमी के एक शेर में "रूह" कहती है कि मैं सात सौ-सत्तर शरीर बदलकर (बन) इस काया में बधी (आयी) हूँ। मैं सज्जे (घास) की भाँति सँकड़ा दफा उगी और मिटी हूँ।² यह निरन्तर उगने मिटने का अविच्छिन्न क्रम ही पुनर्जन्म सिद्धान्त का मूल स्थापन है।

भक्ति के आराध्यों में कृष्ण सर्वाधिक महत्वपूर्ण हैं। पुराणों में सबसे उनका माहात्म्य मिलता है। वे बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न एवं लीला पुरुष हैं। वे महाभारत युद्ध के सूत्रधार, कर्मयोगी, पराक्रमी और महान राजनीतिज्ञ हैं। वे योगेश्वर, पुरुषोत्तम, रसेश्वर सभी रूपों में महान हैं। वे गोपी बल्लभ, राधा माधव राजा, नेता, भोगी सभी रूपों में दिव्य हैं। कृष्ण ने भारतीय संस्कृति और साहित्य को बहुत प्रभावित किया है। सत्संग के इतिहास में इतना व्यापक व्यक्तित्व शायद ही कहीं प्राप्त हो।

वैदिक साहित्य में कृष्ण अवतारी नहीं हैं। ऋग्वेद पुराण, पद्मपुराण, वायु पुराण विष्णु पुराण, वैवत पुराण आदि में कृष्ण के जीवन के किमी न किसी पक्ष का चित्रण अवश्य हुआ है। महाभारत काल में कृष्ण की अवतारी रूप में प्रतिष्ठा हुई। श्रीमद्भागवत वह मानसरोवर है जिससे कृष्ण भक्ति की गेसी सरिता प्रवाहित हुई, जो प्रत्येक युग में साहित्य उद्यान को सिंचित करती हुई आधुनिक काल तक चली आई है।

भक्तों को उनका नित्य लीला विहारी रूप अत्यन्त आकर्षक लगा है। भक्त कवि उही लीलाओं में रम गए हैं। हिंदी के भक्ति काल में सर्वप्रथम 'कहावत' में ही कृष्ण के जन्म से लेकर उनकी मृत्यु तक की कथाओं को महाकाव्यात्मक रूप में प्रस्तुत किया गया है। 'कहावत' हिंदी कृष्ण काव्य परम्परा का प्रथम प्रवर्ध काव्य है। यह सूर से भी पूर्व की रचना है। इस प्रवर्ध काव्य में राधापति कृष्ण के रूप को बड़ी मोहकता के साथ प्रस्तुत किया गया है। प्रेम के चित्तरे जायसी का इसमें पर्याप्त अवकाश प्राप्त हुआ है। 'कहावत' की कथा के सम्बन्ध में उन्होंने स्वयं लिखा है —

हरि अनत हरि कथा अनता । गावहि वे, भागवतु सता ॥
विस्तु पदुम, सिउ, अग्नि पुराना । नारथ सिरि हरियस बखाना ॥

1 इत्तामी चरित्र कि मध्ययुगीन हिन्दी साहित्य में योगदान—जगदीश कुरमी पृ 107

2 दफ्तर सर दफ्तर कविता संग्रह ।

सुनेउ पढ़ेउ भागवत पुराना । पाएउ प्रेम पथ सधाना ॥
 जोग, भोग, तप और सिगारन । धरम, करम, सत के वेवहारन ॥
 ज्ञान-भगति रस-नवल विगासा । भीर दूर सौ आवहि पासा ॥
 सुमिरो वेद बिआस क चरना । जिह हरि चरित सहस्तर वरना ॥
 कहू के कथा लोव मह ऐसी । सरग नखत तराइन्ह जेती ॥
 अइस प्रेम कहानी, दासरि जग मह नाहि ।
 तुरुकी, अरबी, फारसी सब देखउ अब गाहि ॥¹

कृष्ण कथा का प्रभाव जायसी पर बहुत अधिक था । महाकाव्य पदमावत में भी उन्होंने स्थान स्थान पर कृष्ण के विभिन्न प्रसंगों का सदभ और रूपकों के रूप में प्रयोग किया है ।

मलिक मुहम्मद जायसी कृत पदमावत में कृष्ण कथा के सूत्र

मलिक मुहम्मद जायसी ने कृष्ण के जीवन चरित्र को केन्द्र बनाकर "वृद्धावत" नामक महाकाव्य (मसनवी) की रचना की है । उनके पदमावत का गभीर अनुशीलन करने पर मिलता है कि उपमान रूप में उत्प्रेक्षाओं और दृष्टान्तों के रूप में अथवा किसी वस्तुव्य को अपेक्षाकृत अधिक प्रभु विष्णु बनाने के लिए जायसी ने कृष्ण और उनके चरित्र के साथ ही कृष्ण से सम्बद्ध अनेक पात्रों का अनेकस उल्लेख किया है । कृष्ण विषयक उल्लेख वाली पक्तियों में से कुछ इस प्रकार है —

“ले वान्हूहि भा अकरूर अलोपी ।
 कठिन विछोह जिऊ किमि गोपी ॥²

नागमती वियोग बणन के सदभ म नागमती कहती है — कृष्ण को लेकर अकरूर वृंदावन से मथुरा चले गये, आर कृष्ण गोपियों से दूर हो गये । स्वभावतः उन कठिन विछोह में कृष्ण की प्रेमिकाएँ गोपियाँ कमे जीवित रहती । कृष्ण कथा में अकरूर द्वारा कृष्ण व बलराम का मथुरा कस के गहाँ ले जान का उल्लेख मिलता है । श्री कृष्ण वहाँ कस को मारकर कुबजा के साथ रहने लगे । भना इस विरह वेदना को गोपियाँ कैसे सहें ?

अकरूर की ही तरह हीरामन सुआ राजा रत्नसेन को लेकर सिंहल द्वीप चला गया, नागमती स्वयं के कठिन विरह को गोपियाँ के विरह से उपमिन करती है । पदमावत में कृष्ण कथा का एक अन्य सुंदर उल्लेख दृष्टव्य है

1 कथावत छन्द 217, स वा शिवसहाय पाठक, 1982

2 पदमावत 371/7

'बनी भारी पुत्रुप की बिबसी यमुना प्राद ।
पूजा नद अनद सो, संदुर सीस चदाद ।
बेनी कालिया नाग फूल सार यमुना स बाहर निकला और उसन आनद
से कृष्ण की पूजा की जि होन यमुना क सिर पर मंदूर चदाया, और भी अथ
दृष्टव्य है

- (1) नद का अर्थ कृष्ण है ।
- (2) कालिय की सगिनी न अपन सिर पर मंदूर चदाया ।
- (3) उन कमलों में उसन राजा की पूजा की ।
- (4) मोनिपर बिलियम्स न 'नद' का एक अर्थ विष्णु दिया है ।
- (5) 'कृष्ण (अर्थात् विष्णु) न यमुना क सिर पर सि दूर चदाया और
यमुना कृष्ण का विवाह हुआ आदि ।

यहाँ पूण विनय के साथ इतना ही कहना है कि इम एक दाह पर डॉक्टर
अप्रवाल न अपने प्रथम म (पृ 27-28 और पृ 489-90) जो 60 पक्तियाँ
लिखी है वे सबकी सब जनगल प्रलाप हैं — यह सारा वक्तव्य गलत है ।

कहावत म नाग — प्रसंग बड़े विस्तार के साथ दिया गया है । उस पदने
पर डॉ अप्रवाल की 60 पक्तियों की व्याख्या पर ट्या आती है । वस्तुतः नद का
सीसा और सहज जय "नद (कृष्ण के पिता यशदा क पति) ही है । यह
सबको गान है ।

पद्मावती की बेनी काली है उसी के लिए जायसी ने कहा कि — मानो
नाग (जिसे कवि ने वासुकि और शेषनाग भी कहा है) यमुना स निकला, नद ने
उसके सिर पर सि दूर चदाकर उसकी मानद पूजा की । भारतवर्ष में नाग देवता
की पूजा की जाती है उनके सिर पर सि दूर नगाया जाता है । कस न कमल
भगाया या, कृष्ण यमुना म कूद गए थे और जल में बठकर वे पाताल म गए
वहाँ महादेव की फुलवारी से वे नाग के सिर पर कमल लाद कर ले आए ।
इस सन्दर्भ में कहावत की कुछ पक्तियाँ दृष्टव्य हैं —

'जानु मुरग कहें रचे विवाना । सेस नाग जाव उतिराना ॥
सब घर बूडि पानि मँह आवे । माथ जइस सिरि मेख दिखाव
जून परवत मो आव चला ।" × < > × ×
सोइ मुरारि दई गर गढ़ा । आव सेस नाग पर चडा ॥
जाई कहा मिलि सबही जहाँ जसोदा नद ।
आवा कहकुसल सौं, अब घर करहु अनद ।

कृष्ण यमुना में डूब पड़े - 'डूब गए' - सारा गोकुल शोक सतप्त हो गया, पर तब कृष्ण नाग पर कमल लाद कर ले आए ता नद अत्यंत हर्षित हुए उन्होंने आनन्दपूर्वक नाग की पूजा की ।

ऊपर कहावत के दोह में प्रयुक्त "नद" और "अनद" शब्द और पद्मावत के दोहे में प्रयुक्त "नद" और "अनद" शब्द मिला कर देखे जा सकते हैं । वस्तुतः पद्मावत में कालियनाग कृष्ण का यमुना से निकलना, नद का कालि नाग की पूजा करना, पद्मावत के उपयुक्त दाहे में अभिव्यक्त है । रूप सौंदर्य वणन की योजना के सन्दर्भ में पद्मावत का यह उल्लेख अत्यन्त महत्वपूर्ण है । इससे जायसी के पद्मावत में कृष्ण कथा विषयक एक विशिष्ट सन्दर्भ का पता चलता है ।

"क्रिस्न कै चुरा चढा ओहि मार्ये । तब सो घूट अब छूट न नार्ये ।

बारी कवल गहे मुख देखा । ससि पाछे जस राहु बिसखा ।

को देखे पाव वह नागू । सो देखे माये मनि भागू ।"

पानग पकज मुख गहे । खजन तहाँ बईठ ।

छात सिघासन राजधन ता कहै होई जो उठि ॥ 1

पद्मावत में जायसी ने पद्मावती की 'केश राशि' का वर्णन करते हुए लिखा है कि-उस पद्मावती के माथे के ऊपर कृष्ण अपनी कलाओं सहित बिराजमान है, 'सूरी और उसकी केश राशि काली कलावती है, केश के लिए 'कृष्ण-कला' की उपमा साथक सुख प्रयुक्त है । कृष्णावतार में कृष्ण ने कालीय नाग को नागा या दाद में उसे छोड़ दिया था । जायसी का अर्थ है कि कृष्णावतार में कृष्ण ने कालिय को छोड़ दिया है किंतु अब यह सुगुम्फित केश राशि नागने पर भी छूटेगी नहीं—

क्रिस्न कै करी चढा ओहि मार्ये । तब तो छूट, अब छूट न नार्ये ।

बारी कवल गहे मुख देखा । ससि पाछे जस राहु बिसखा ॥

को देखो पावें वह नागू । सो देखे माये मनि भागू ॥

वस्तुतः अतः 'पद्मावत' में जायसी ने कृष्ण कथा से सम्बद्ध 'कालिय-नाग नयन' विषयक कथा को उपमान रूप में गृहीत किया है । कृष्ण ने यमुना में डूबकर कालिया नाग का मान मदन किया था, उस नाथा था, उस पर कमल लाया था और वे उसके साथ बाहर आए थे दाद में उसे मुक्त कर दिया था । "कहावत" में इस कथा का सविस्तार वर्णन मिलता है, उसे ही यहाँ जायसी ने संक्षेप में उपमान रूप में उपस्थित किया है ।

जायसी ने अपने 'बहावन' महाकाव्य में कालीय नाग प्रसंग का स्तरीय वर्णन किया है। उस प्रसंग को निम्नलिखित पंक्तियों के आलोक में पदमावत की उपयुक्त पंक्तियाँ और उनके अर्थ भास्वर हो उठते हैं

चला कटु सँवरि कुलदवा । समुद्र माँझि बोहित अस (सेवा) ॥
 जानु सुरग कह रचे ययाना । सेस नाग आवैं उति (रानी) ॥
 सब घर बूडि पानि महुँ आव । माथ जइस गिरि मेघ (देखावे) ॥
 फुल्लवारि जउन होइ गएउ । कहैं काँदौ सब जलहर भएऊ ॥
 जनु परवत सा आवे चला । मछ कच्छ (गा सरि जल हला) ॥¹

× × × ×

तहि ऊपर मानुम एब आवैं । जनु तखवर पर पाखि देखाव ॥
 जो नियरान कहहि रे दया । सेजमान जनु बाल कहैया ॥
 कोई मुरारि दई कर गढा । आव सेस नाग पर चढा ॥
 नाव बवल दुह दिमि सोई । ओहि छाडे कोड आन न होई ॥²

जब लागे कालिदिरी बरासी । पुनि सुरसरि होई समुद्र गरासी ।
 जोवन भवैर फल बन तोरा । विरिध पोछ जम हाथ मरोरा ।
 त्रिस्न जो जावन करत तन माया गुनन नाहि माथ ।
 छरि क जाइहि वान ले घनुक छाडि तोहि हाथ ।³

डा वानुदव कारण अग्रवाल ने पदमावत के सजीवनी भाष्य में कालिदेह (यमुना) और कृष्ण के विवाह का उल्लेख किया है।⁴

प्रस्तुत प्रसंग में जायसी ने कृष्ण और कालिदी की उसी कथा को उपमान रूप में ग्रहण किया है, जायसी का कथन है कि— 'जब तक सरिता (नारी) कालि दी (कृष्ण के गो वाली) रहती है वह विलासवती होती है, और तदनन्तर वह नुर सरिता (श्वेत के गो वाली) होकर समुद्र द्वारा ग्रसित हो जाती है। तेरे फूल जैसे शरीर पर अमर जभा यौवन (आया हुआ) है बड़ावस्था में तो मनुष्य पृथ्वी (दुप) जमे हाथों को ही मलना रहता है। जो यौवन शरीर को कृष्ण करता है (उसे बण प्रदान करता है) वह साथ में होने हुए भी माया (स्नेह पूष कृपा) का विचार नहीं करता है। वह तुम्हें छलकर तुम्हारा वण रूपी बाण लेकर श्रीर तुम्हारे हाथों में घनुष (शरीर का टेढ़ापन कमर का झुकाना) छोड़कर चला जाएगा।'⁵

1 बहावन 81/2 3 4 5 6

2 वही 82/4 5, 6 7

3 पदमावत (सं. भा. प्र. भा. पृ. 593/6)

4 पदमावत भाष्य पृ. 585

5 पदमावत " 593 6 7 8 9

उहै धनुक किरतुन पह बहा । उहै धनुक राधो नर गहा ।
 उहै धनुक रावन सधारा । उहै धनुक रुतासुर मारा ।
 उहै धनुक रेधा हुत राह । मारा गीही सरस्वर गहू ।
 उहै धनुक मँ ओपह ची हा । धान्च आपू रेभ जग कीन्हा ।
 उह भौहहि सीर बेउ न जीना । जाधरि छपी छपी गोपीना ।

जायसी ने पद्मावती की भौहों का सौंदर्य वर्णन करते हुए उह धनुष से उपमित किया है। सनास्रोक्त पद्धति और लौकिकता में अलौकिकता का आनंदन और उपस्थापन की प्रवृत्ति से सम्प्रेरित हाथर भौहा का धनुष से उपमति करते हुए उस धनुष को विराट सद्भ प्रदान किया है - बड़ी धनुष कृष्ण के पास था, राम के हाथों में था, उसी से कृष्ण ने बंस का और राम ने रावण का सहार किया था। 'बड़ी धनुष कृष्ण के पास था और उसी धनुष को राघव ने हाथा में ग्रहण किया था। (राम ने) उसी धनुष में रावण का सहार किया था और कृष्ण ने उसी धनुष से असुर बंस को मारा था। (अजुन के द्वारा) उसी धनुष में राधा बध किया गया था और (परशुराम के द्वारा) उसी धनुष से सद्रथबाहु मांग गया था। उसी धनुष को मने उसके पास पहिचाना है और (उसी धनुष के साथ) वह स्वयं दानुष्क बनी है और उसने जगत् की वेध किया (पनाया) है उन भौहों की समानता में कोई नहीं जीत सका इसलिए जमराएँ छिप गई और (मृत्यु की) गोपियाँ भी छिप गईं। उन धया (स्त्री) धानुष्क की भू धनुषों की अथ कोई (अस्त्र अथवा पदाथ) समानता नहीं कर सकता है इसी (कारण) गगन में जा धनुष उन्ति होता है, वह लज्जावग छिप जाता है।"

'चारिउ मुजा चतुरभुज जात्रू । कछ न रहा और का सात्रू ॥
 हौं हाइ भीम आनू रन गाजा । पाछ धानि दुगव राजा ॥
 हाइ हनुषत जमकातर दाहौ । माजु स्वामि साँवने निवाही ॥

जायसी ने गौरा बाइल युद्ध क्षण में गौरा के शीघ्र प्रदर्शन के सद्भ में लिखा है कि - गौरा ने ललकारने हुए कहा कि आज में युद्ध में खेल खेलूंगा और साका करूंगा जैसे अगतम्य तारा आवाग में भास्त्रण रहता है वम ही मुने देयकर गत्रू सेना में घटा की तरह बिलीन हो जायगी।¹ डा माताप्रमान गुप्त ने पद्मावती की इन पंक्तियों का अर्थ करने हुए चतुर्भुज का अर्थ नागयण या विष्णु किया है किन्तु कन्हावत की उपलब्धि से यह अर्थ उचित नहीं रह गया, कन्हावत में जायसी ने कस बध के अवसर पर कृष्ण के चतुर्भुज रूप धारण करने का उल्लेख किया है। कन्हावत में जायसी ने लिखा है

आपु रूप भा कन्ह मुरारी । उठा चतुरभुज कला सवारी ॥
 चारिहूँ भुजा कोपि बर किन्हीं । ओ कर ब्रज क मुसल तोहीं ॥
 चक्र फिराइ गुजा तन पारा । सब पूरि क धनुक सम्भारा ॥
 आजु बीजु भाइसँ बड़ि लाँचो । हह नचाओ हहैं सो नाचो ॥
 हहै आजु मारो चानूरो । हहैं सो वाधि चलौ गिर मउरो ॥
 हही आजु मारो हो बरो । हहै भगन सय आपुन करो ॥
 हही खेल आजु नौ निधि खेलौ आपुन खेल ।
 हही मारि बिचलाजै जा गज गिनी अपल ॥ 1

डॉ मुप्त ने लिखा है कि— मैं आज चारो भुजाओ से युक्त चतुर्भुज (नारायण) हूँ मेरे सामने कस नहीं रह सकता, (तब) और कौन राजा है (जो टिक सकता है)? आज मैं भीम होकर रण में गजन कर रहा हूँ और मने दगवँ राजा को अपने पीछे (अपनी रक्षा में) डाल लिया है। मैं हनुमान हाकर यम कत्तरी को बाह रहा हूँ और स्वामी को सकट में से निवाह (निबाल रहा हूँ) आज मैं नल नील होकर समुद्र में मेड दे रहा हूँ (सेतुबन्ध की रचना कर रहा हूँ) मैं बादशाह की सेना के रण मसुमेरू (सदृश्य अटल) बड़ा बनकर टेक (रोक) रहा हूँ। 2

'कन्हावत' में जायसी ने कस बध के अवसर पर कृष्ण का चतुर्भुज रूप में उपस्थित किया है। उसी चतुर्भुज रूप का उल्लेख पदमावत में किया गया है —

चारिड भुजा चतुर्भुज आजू । कस न रहा ओर को राजू ॥”

“काहावत” के आलोक में अब प्रस्तुत पक्तियों का अर्थ और प्रसंग पूर्णत स्पष्ट हो गया है।

‘इद्र डर निति नावै माया । जानत क्रसन सेस जेइ नाया ॥”

रत्नसेन सूली खण्ड के अतगत भाट ने गधव सेन को वाँया हाथ उठाकर आशीर्वाद दिया था। भाट के इस अभव्य काय पर राजा अत्यंत स्तब्ध हुआ और उसने कहा कि इद्र मुझसे डरने है मुझे माय झुका कर प्रणाम करते हैं मुझे धोप नाथ ने वाँये कृष्ण भी जानते हैं चतुर्भुज ब्रह्मा भी डरते हैं पाताल निवासी बलि भी डरता है आदि। भाट ने कहा कि— हे राजा गव किसी को धोभा नहीं देता रावण न गव किया और उसका विनाश हुआ।

पदमावत की प्रस्तुत पक्ति से स्पष्ट है कि जायसी यहाँ कृष्ण द्वारा ‘कालिय नाग’ को नाथन की कथा की ओर इंगित कर रहे हैं। जायसी न काहावत के कडबक 73 से लेकर 85 तक के अतगत इसी कथा का उल्लेख किया है।

1 कन्हावत पृ 199/28

2 पदमावती [डॉ माताप्रसाद गुप्त] 629

'तुम्ह बलबीर जाज जग दोऊँ तुम्ह मुष्टिक औ माल कडेऊ ॥
तुम्ह अरजुन औ भीव भुआरा । तुम्ह नल नील मेड दोनि हार ॥' ¹

पदमावत के इस सन्दर्भ का अर्थ डाठ गुप्त ने इस प्रकार किया है - तुम बलशाली वीर जाला और जगदेव हो, तुम मुष्टिक मल के देव हो (?) तुम अर्जुन और भूपाल भीम हो, और (समुद्र में) मेड (सेतु) बाधने वाले नल नील हो। मुष्टिक/मुष्टिक कस का एक बलशाली मल्ल था जिसको बलशिव ने परास्त किया था। माल कदेड अमीर सुसरो न तारीख ए अलाई ओर "आशिका" म एक मलकदेव का उल्लेख किया है (दे इलियट जिल्द 2, पृ 76 558)। असंभव नहीं कि जायसी का माल कदेड वही हो। अर्जुन और भीम महाभारत के प्रसिद्ध योद्धा अथवा मन्वयुग के अर्जुन वग देव और भीम चौलुक्य।²

पदमावत की प्रस्तुत पवित्र म कृष्ण कथा का उल्लेख है। कृष्ण ने कस के मल्लो का मल्ल युद्ध में मारा था उन मल्लों में मुष्टिक और चाणूर प्रमुख थे। इस पवित्र का मुष्टिक तो स्पष्ट रूप कस का बलशाली मल्ल मुष्टिक ही है। किन्तु "माल कदेड" जिस शुकलजी ने 'माल कदेड' लिखकर उसके आगे प्रश्न का चिह्न लगा दिया है और आज भी पदमावत के अध्येताओं के लिये यह 'कदेड' या कदेड या माल कडेऊ समस्या ही बना हुआ है। हमें लगता है कि इस माल का अर्थ तो स्पष्ट रूप में मल्ल अर्थात् योद्धा है, किन्तु करक अथवा कडेऊ पाठ उचित नहीं है, संभव है कि पदमावत का सुन्दर सम्पादन हान पर यह अष्ट पाठ उपयुक्त पाठ के रूप में आ जाय।

को माहि सौह होइ मैमत्ता । फारों कुम्भ उचारो दता ॥
जावो स्वाम सँ कर जस टारा । बल्लभ जस जुस्जोधन मारा ॥
हनिवत सरिस ऊ ग बर ओरों । धँसों समुद्र स्वामि बँदि ओरी ।
जो तुम्ह मात जसोवै का ह न जानहु बार ।
जहँ राजा बलि बाँध छोरी पैठि पहार । ³

बादल ने माँ से कहा कि मैं रणवादी सिंह बादल हूँ। भला कहीं सिंह की जाति छिपी रहती है। नौनसा मदमस्त हाथी मेरे सामने हो सकता है मैं उसका कुम्भ फाड़ डालूंगा और दाँत उखाड़ डालूंगा। यादव स्वाम (कृष्ण) ने जिस प्रकार (कस के द्वारा प्रेरित) शकटासुर को टाला (पछाड़ा) था और जिस प्रकार बल्लभ (भीम ने दुर्योधन को मारा था) मैं भी उसी प्रकार उनके लिए प्रमाणित हूँ। मैं हनुमान के सदृश जाँघो म बल जोडूंगा (वरूँगा) और (उनकी भाँति) समुद्र में

1 पदमावत (स डा माताप्रसाद गुप्त) पद्य 611/3-4

2 पदमावत 611/2-3 पृ 570-71

3 पदमावत (स डा माताप्रसाद गुप्त) पद्य 614/6, 7, 8, 9

धूमकर स्वामी का बंधन खोलूंगा। यदि तुम माना यशोवती (यशोदा) हो तो अपने (इम) का हृदय वासक न समझो, जहाँ पर मेरा राजा बसि (के सखा) बैधा हुआ है उग पाताल में प्रविष्ट होकर न उसे मुक्त करूँगा।

शुक्लजी न जायसी श्रियावली में निम्नलिखित पाठ किया है -

जुरी स्वामि सँकर जस द्वारा। पेला जम दुरजाधन मारा ॥

अगद कापि पयि जस रावा। टका कटक छली सो लाखा ॥

हनुवेंत सरिस अध बर जागो। दहौं समुद्र, स्वामि बँदि छोगो ॥

सो तुम, मानु जसायें। माहि न जानु वार।

जह राजा बलि बाँधा छारों पैठि पतार ॥¹

इस गुप्त और शुक्लजी के पाठ में बड़ा अन्तर है और इस गुप्त ने जायसी के मूल पाठ में संधान का यहाँ सुन्दर प्रयास किया है। वस्तुतः उपर्युक्त पंक्तियों में जायसी के ब्रह्मावत की रथा का संकेत मिलता है। कृष्ण ने भी यशोदा का धीरज बँधाते हुए कहा था कि मैं ही राम परशुराम, नारायण आदि हूँ -

नागमती तू पहिलि विवाहा। का ह गिरीति डही ऊषि राही।

जायसी ने पदमावत में लिखा है कि रत्नमेन न नागमती की समन्वित रूप रहा कि मेरी प्रिय नागमती तू मेरी प्रथम विवाहित है। (इसलिये अवश्य ही तू उभी प्रकार मेरे बिरह में दग्ध हुई) जिस प्रकार कृष्ण की प्रीति से राधिका दग्ध हुई थी -

म राधिका - प्रा। अय - राधिका - राही।

राही - (राधिका वाचक शब्द) का मूल मसृज - शब्द "राधिका है प्राकृत - अपभ्रंश में 'राधिका' शब्द व्युत्पन्न हुआ है। अन्त्य 'जा' के लोप और 'धातिपूरक' दीर्घाकरण के नियम के अनुसार हिन्दी में 'राधिका' (प्र/अय) का राही" बना है।

प्रस्तुत (पदमावत के) प्रसंग से यक्त है कि जायसी को कृष्ण और राधा की विवाह व्यथा का सम्पन्न परिज्ञान था। उसी की अभिव्यक्ति हेतु जायसी ने यह पंक्ति उपस्थित की है। यह पंक्ति तो मूलतः सूत्र रूप में बयित है और इसका भाष्य अथवा सविस्तर अनिवृत्तात्मक बंधन ब्रह्मावत में गोपिया और राधा के बारह मास - बिरह बणन में प्राप्त होता है। वहाँ (कन्हावत में) राधा का बारह महिन का विवाह बणन मिलता है।

¹ पदमावत (श्री बाताप्रसाद गुप्त) 428/1

लंकाहृदि भा अकर अलोपी । कठिन ब्रिछोह जिअं किमि गापी ।

मारस जोरी किमि हरी मारि गएउ किन खागि ।

चुरि चुरि पाजर घनि भई विरह कै लागी अगि ॥ १

कृष्ण को लेकर अकर अलुप्त हो गया (मयुरा चला गया) (स्वभावतः) उस कठिन ब्रिछोह म (कृष्ण की प्रेमिकाएँ) व गोपियाँ कैसे जीवित रहती ? (वे कृष्ण के प्रियागनि में जल मरी (1) ऐ व्याध अधिक सदस हुए) तूने मरी सारस की जोड़ी (मेरे प्रिय) को क्या हर लिया / त इस खगी को क्या न मार गया ? विरह की आग लगने के कारण यह स्त्री पजर हो गयी ।

जायसी के पदमावत से स्पष्ट है कि उ ह कृष्ण कथा का पूरा ज्ञान था गोपियाँ कृष्ण की दारुण वियोग व्यथा में कालांत थी और इसका मूल कारण यह था कि कस के दरबारी अकर या अकर कृष्ण को लेकर अलुप्त हो गये थे अर्थात् अकर ने कस के आदेश पर कृष्ण का आमंत्रित किया वे कृष्ण को कस के यहाँ ले गये । बेचारी गोपियो से उ ह दूर कर दिया, इस वियोग व्यथा में गोपियाँ दग्ध हुई । जायसी ने पदमावत में यह सूत्र दिया है और इसका भाष्य "कहावत" में सविस्तार रूप में राधा और गोपियों के विरह वर्णन के अंतगत प्रस्तुत किया है ।

कस राज जीता जाँ कोपी । काह न दी ह हाहु कहें गापी ॥²

इस प्रकार हम देखते हैं कि पदमावत महाकाव्य में कृष्ण कथा के पर्याप्त दृष्टान्त और सन्दर्भ उपलब्ध हैं । इससे यह स्पष्ट होता है कि महाकाव्य जायसी कृष्ण कथा के मगन थे और कृष्ण लीला ने उ ह प्रभावित भी किया था ।

कहावत

जायसी का सद्य प्रकाशित प्रबंध नाव्य कहावत है । पदमावत व पश्चात जायसी का यह दूसरा महाकाव्य है जिनमें 'कह कथा' है । भगीरथ प्ररत्न करन के पश्चात सूफी काव्य के ममज्ञ विद्वान हिंदी अध्ययनशाला विक्रम विश्वविद्यालय क प्रा डाँ शिवसहाय पाठक ने इसका संपादन किया है । यह कृति सन् 1980 में ही प्रकाशित हुई है ।

कहावत की खोज का इतिहास

जायसी और उनके काव्य व विद्वान गोधक डाँ शिवसहाय पाठक को 1958 ई में जायसीकृत चित्ररेखा की एक सुंदर हस्तलिखित प्रति थी चंद्रबली

1 पदमावत (स प मासाप्रसाद मुख) प 358 नंबर 341/7 8 9

2 जायसी प्रपावली, (ना प्र स) पृ 18 प 1/6

सिंह से प्राप्त हुई थी। उस प्रति में कहावत भी था। उमम कहावत वाला जस 132 पृष्ठों का है। कहावत की यह प्रति खण्डित है और फारसी अक्षरों में सुलिखित है। 'चित्ररेखा' का प्रकाशन डॉ. पाठक ने 1959 ई.¹ में कर दिया था।

डा. पाठक को 'कहावत' की एक और प्रति श्री सोमनाथ पाण्डेय से प्राप्त हुई थी² जिसमें कुल 92 हस्तलिखित पत्र थे। यह प्रति भी फारसी अक्षरों में है।

डा. पाठक को विश्वास हो गया कि 'कहावत' की और भी प्रतियाँ देश विदेश में मिलेंगी। उन्होंने खोज करते हुए जमनी के राष्ट्रीय संग्रहालय से 'कहावत' की एक और प्रति मगवाई। इसमें कुल 266 पृष्ठ हैं। इन पृष्ठों के साथ ही इस प्रति के आरम्भ में 17 पृष्ठ बहरनामा के हैं। 19 वें पृष्ठ से कहावत प्रारम्भ होता है। यह प्रति भी फारसी लिपि में है व सुलिखित है। इस प्रति की पुष्पिका इस प्रकार है

'तमाम शुद क़िताब कहावत मिन तसनीफ मलिक मुहम्मद जायसी बोज़ चहार शबह तारीख 23 शबाब् अल मुअज्जम् सन् 3। जुलस साहब कुरान तानी साह जहा बादशाह गाजी मुवाफिक सन 1067 (हिजरी) कितह बदेह फकीर। जरह हकीर संयद अ० अरा रहीम (अब्दुल रहीम) हुसेनी साकिन कानोज बजहत। बारखुरदार आत अत्तार राजाराम बल्द समदत्त इसकलिया काम कायस्थ सकसेनह मौजा कासिमपुर दाजरह मिन आभाल परगनह गाम सरकार कानोज नकारतह आयद।'³

हर कि प्वात्त दजा तमज दारम् ।

जोंकि मिन बदेहुनहगारम् ॥'

इस पुष्पिका से ज्ञात होता कि मलिक मुहम्मद जायसी कृत कहावत की यह प्रति सन् 1067 हिजरी अर्थात् 1556-57 ई. में शहजहाँ बादशाह के शासन काल में तयार की गई थी।⁴

कहावत (काव्य का नाम)

जायसी ने इस काव्य का नाम "कहावत" रखा है।

मुहम्मद कवि कहावत गाए। रस भाखा क सभी मुहाए।⁵

1 कहावत - डॉ. निरसहाय पाठक पृ 1

2 कहावत - डॉ. निरसहाय पाठक पृ 1

3 कहावत - डॉ. निरसहाय पाठक पृ 2

4 कहावत - डॉ. निरसहाय पाठक पृ 2

5 कहावत - डॉ. निरसहाय पाठक पृ 3

जमनी से प्राप्त हस्तलिखित प्रति की पुष्पिका में भी इस काव्य का नाम कहावत है। इसके प्रारम्भ में भी जायसी ने कहावत में 'कह कया' गाने का उल्लेख किया है।

तो मैं कहा अमिय खड गाऊँ । कह कया करि सबहि सुनाऊ ॥¹

गासा द तासी ने अपने ग्रंथ 'इस्त्वार' द ल लितरंत्युर ऐदुई ऐं 'ऐंतुस्तानी' में जायसी के सद्म में डॉ ए स्प्रेंगर की जायसी की 'धनावत' की जिस हस्तलिखित प्रति का विवरण दिया है वह जमनी वाली ही प्रति है। जमनी वाली प्रति डॉ ए स्प्रेंगर वाली प्रति ही है। गासा द तासी ने भूल से इसे 'धनावत' कहा है। वस्तुतः पुरानी फारसी में 'क' और 'घ' में कोई अंतर नहीं है। उन्होंने कहावत को धनावत पढ़ा था।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि इस ग्रंथ का नाम 'कहावत' है और इसमें कन्हू कृष्ण कथा का सविस्तार आख्यान किया गया है।

कहावत की लिपि

जायसी ने अपने काव्यों की रचना किस लिपि में की थी? यह प्रश्न विद्वानों के विवाद का विषय बना हुआ है।

सौभाग्य से अभी तक "कहावत" की जो तीन हस्तलिखित प्रतियाँ मिली हैं वे सब फारसी अक्षरों में लिखित हैं। अतः हम कह सकते हैं कि "कहावत" की रचना फारसी अक्षरों में ही की गई थी। यहाँ यह भी ज्ञानव्य है कि जायसी कृत चित्ररेखा कहरानामा, पदमावत जादि की देश विदेश में जो प्रतियाँ मिली हैं उनमें बहुलाक्ष फारसी अक्षरों में ही है।²

कहावत का रचनाकाल (947 हिजरी)

कहावत की रचना विधि के विषय में कवि ने लिखा है

"सन् नौ से सैतारिस अहई । तहिया सरस धचन बवि कहई ॥"

'वार्तिक मह जो परत देवारी । गावहि आहर खटक तारी ॥"

अर्थात् कहावत की रचना विधि 947 हिजरी अर्थात् 1541-42 ई है। कवि ने

- 1 "आखिरी क्लाम" की रचना बाबर के शासन काल में की थी।
- 2 उसने 'कहावत' की रचना हुमायूँ के जमाने में की थी।
- 3 उसने 'पदमावत' की रचना शेरशाह के जमाने में की थी।

1 कहावत - डॉ चित्तसहाय पाठक, पृ 3

2 कहावत - डॉ चित्तसहाय पाठक, पृ -4

3 वही पृ -12

उनके प्रमाण त्रमण इस प्रकार है—

- 1 बाबर साह छत्रपति राज । ¹
- 2 “नोसे बरस छतीस जब भए तब एहि कथा क आखर कह” ²
- 3 “देहली कही छत्रपति नाऊँ । बादशाह बड साह हुमायू ।” ³
- 4 ‘सरसाह दिल्ली सुलतानू’ ⁴

सन नौ से सतालिस अहई । कथा आरम्भ बँन कवि कहई ॥ ⁵

इन पंक्तियों में त्रमण आखिरी कलाप, कहावत और पद्मावत की रचना तिथियाँ और साह वक्त का भी उल्लेख है ।

हुमायू के राज्यारोहण की तिथि 936 हिजरी है, चौसा में शेरशाह द्वारा उसकी हार 945 हिजरी में कानोज में शेरशाह की उस पूरा विजय 947 हिजरी में और फिर शेरशाह का दिल्ली में राज्यारोहण 948 में सबमा में तिथियाँ हैं ।

उपर्युक्त विवरण के आधार पर हम निष्कण रूप में कह सकते हैं कि कहावत की रचना तिथि 947 हिजरी ही है ।”

बादशाह बाबर की मृत्यु के बाद हुमायू 1530 ई में अर्थात् 936 हिजरी में दिल्ली की गद्दी पर बैठा । चौसा की लड़ाई में (945 हिजरी) शेरशाह से वह हार गया । कानोज में शेरशाह ने 947 हिजरी में विजय प्राप्त की । 946 हिजरी में दिल्ली के तख्त पर शेरशाह बैठा । हुमायू भाग कर राजस्थान की ओर गया । वही 948 हिजरी में अकबर का जन्म हुआ और हुमायू अफगानिस्तान की ओर चला गया । वहाँ में वह 1555 ई में पुन जाया ।

स्पष्ट है कि 947 हिजरी में हुमायू ही दिल्ली का बादशाह था और जायसी ने कहावत की रचना 947 हिजरी में शुरू की । अहई और कहई से भी यही तथ्य प्राप्त है ।

947-49 में हुमायू की पराजय और शेरशाह के बादशाह हा जाने के बाद जायसी ने पद्मावत नामक काव्य लिखना शुरू किया उसके प्रारम्भ में जायसी ने रचना तिथि दी ।

‘सन नौ से सतालिस अहई ।

कथा आरम्भ बँन कवि कहई ॥”

1 जायसी प्रयाग-अपराध पृ 296

2 वही पृ 298

3 कहावत-कडक

4 कहावत-कडक

5 पद्मावत-स्तुति पद्य

अर्थात् इस समय हिजरी 947 है जबकि पदमावती कथा का आरम्भ ब्रह्म कवि कर रहा है। उसने शाहे वनत के रूप में शेरशाह की प्रशंसा की।

निष्कण यह है कि 'कहावत' की रचना कवि ने 947 हि में की और उस पूरा कर लने के बाद उसने पदमावत का 'बिस्मिल्ला अह रहमान रहीम' किया। इस समय शेरशाह 947 में दिल्ली सल्तनत का मालिक बन गया था।¹

कहावत की कथा

पदमावत महाकाव्य के अनुरूप ही महाकवि जायसी ने कहावत के प्रारम्भ में प्रस्तावना का स्वरूप प्रस्तुत किया है। प्रारम्भ में ही कवि ने ससार को नन्दर रहा है। षूठा तब निरम्ब है क्योंकि मृत्यु के पश्चात् मुह में छार पड़ेगी तो पश्चात्ताप ही गेय रह जायेगा।

सृष्टि में रचयिता का वणन नहीं किया जा सकता। दो सहस्रत्रिंशत्वा वाला शेष नाग भी करतार ने गुणमान में असमथ है। यह जगत निर्मित हुआ है और विलीन हो जायेगा। चिरतन दान के उपरांत भी उसका भण्डार अक्षुण्ण बना हुआ है। कवि ने मुहम्मद साहब को करतार का "नूर" कहते हुए कहा है कि उन्होंने ससार का सजाया है। जायसी ने इसी प्रसंग में आगे मुहम्मद साहब के चार मित्रों का भी वणन किया है।

तत्कालीन दिल्ली के बादशाह हुमायूँ सैयद अय्यरफ और जायस नगर का वणन भी कवि ने मनोयोग से किया है। काव्य में 'कहावत' के रचनाकाल 947 हिजरी का भी उल्लेख किया गया है तथा कवि ने अपने एक नेतृत्व को शुक के समान भास्वर बताया है। इस प्रस्तावना में पश्चात् 'कहावत' की मूल कथा प्रारम्भ होती है।

मथुरा नगरी में कस राजा था जो रावण के समान था। सारे ससार के दानव राक्षस, देव उसके अधीन थे। उसकी सेवा करते थे ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी उसके आदेशों का पालन करते थे। लका दुग के समान ही उसका सतमजिला 'कोट' था जो बभ्रव, ऐश्वर्य और विलासिता से परिपूर्ण था। सारा कोट सुवर्ण मय था। उसके दरवार में द्रुपति और जुम्हार वीर उपस्थित रहते थे। वन, उपवन, वृक्ष, फूल, पक्षियों का कवि ने विस्तार से वणन किया है।

जमुना के दूसरे किनारे पर नद महर की महराई चलती थी उसके पास असह्य गांधन था। सभी गायें धेड़ जाति की और दुधार थीं। अप्सराओं के समान शालिनें दूध दही बेचा करती थीं।

1 कहावत - भूमिका पृ 12-13

एक दिन वस ने सेना सजाई सारा सतार बाँप उठा। कस ने "सूक" को बुलाकर मृत्यु के अधिपति यम को खोजने की आज्ञा दी। "नारद" को बुलाकर पूछा कि मेरी मृत्यु किसके हाथ होगी? नारद ने कहा कि महर् के यहाँ "विष्णु" अवतार होगा और वही तुम्हारा महार करेगा।

कस ने देवकी और वसुदेव की बंदीगृह में डालकर कठोर पहरा बठा दिया। देवकी के गभ में जो भी बालक जन्म लेता वस उस पत्थर पर पटक कर मार डालता था। वस के व्यवहार से क्रुद्ध होकर विष्णु न अवतार लिया। देवकी ने वसुदेव से कहा कि कस ने सात पुत्रों को मार डाला है अब इसकी रक्षा के उपाय करो। नारद महर् की पत्नी इसे ले लेगी। इस वहाँ ले जाओ तो ले जाओ। वसुदेव चने तो बंदीगृह की सातों कोठरियों के ताने खुल गये। वे यमुना तट के किनारे पहुँचे। यमुना में बाढ़ आई हुई थी। मन को कठोर करके वह यमुना में उतर चले। चलते चलते वे पार हो गये, जन्की जाँच तक नहीं हुई, यशोदा के गभ से लक्ष्मी ने जन्म लिया था। वसुदेव ने बच्चा को लिया और वापस बन्दीगृह आ गये। प्रातः कस को रखवालों ने सूचना दी। कस आया। उसने ज्योति बालिका को पथ पर पटकना चाहा वह हाथ से छूटकर आकाश में चली गई। आकाश से कस न मृत्यु का समाचार सुना। वह चिंतित हो उठा।

प्रातः होते ही नन्द के यहाँ पुत्रोत्पत्ति के प्रसंग में मंगल वाद्य बजने लगे। नारी नर हृष विभोर हो गये। खूब उत्सव मनाया गया। पात्रों दिन "रतत्रगा" हुआ और छठे दिन पण्डितों को बुलाकर प्रालक की कुडली बतलाई गयी। पण्डितों ने कहा कि ये विष्णु का अवतार है।

एक रात स्वप्न में वस को बामुरी बजात हुए कृष्ण दिखाई दिए। उन्होंने कस का दबोच दिया। वे काल बन गये। कस बहुत डर गया। उसने "सूक" को बुलाकर अपना स्वप्न सुनाया। सूक ने कहा कि वह तो बालक है। नारद ने कहा तुम्हारा शत्रु "नन्द" के घर में है। विष देकर उस मारने का उपाय करो। वस ने दरबार में "बीडा" रखकर घोषणा की कि जा कृष्ण को विष दे दगा उसे आधा राज्य दे दूंगा। पूतना न "बीडा" उठाया और वह अत्यंत रूपवती होकर गोकुल गई। लोणी ने समझा कि राजघरान की रूपसि आई है। उसने हिडाले में बूतल कृष्ण को गोद में लेकर विष सने स्तन उनके मुख में दे दिये। 'कृष्ण' जो सब कुछ जानते थे उन्होंने पूतना का समस्त रस चूस लिया। पूतना मर गई। गोकुल में आनन्द छा गया वस घबड़ा उठा। उसने घोषणा की। "सूक" ने नन्द से पातास नगरी के सहस्र दल के कमल मगवाने की सलाह दी। कस ने नन्द को बुलाकर, सास कमल लाने की आज्ञा दी। नन्द व्याकुल हो गये। यह सुनकर पंच वष के गोपाल और बलभद्र यमुना किनारे गँद रोसने गये। गँद उदी में बनी गई। गँद सात हनु नदी में नूद पड़े। सारे नर नारियाँ में चलबत्ती मच गयी।

बहुत प्रयत्न किए गए किंतु कृष्ण नहीं मिले। कस यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुआ।

कृष्ण पाताल में पहुँचे। उन्होंने महादेव की बारी और मानसरोवर देखा। अष्टोत्तुली नाग उसकी रखवाली कर रहे थे। वासुकि सो रहा था। नागिन ने कृष्ण को वज्रित करत हुए कहा कि वासुकि के जग जाने से तू जलकर मरम हो जायेगा अतः शीघ्र ही चला जा। कृष्ण ने कहा कि मुझे एक लाख कमल चाहिए तभी तुम्हारे नाग को छुटकारा मिलेगा। शेषनाग जागा उसकी फूफकार से कृष्ण काले हो गये। कृष्ण ने लाककर उसे नाथ दिया और लाख कमल उस पर लादकर विशाल नाव के समान उसे सतह पर ले आये। पुरवामी हृषित हो गये। नन्द ने वे एक लाख कमल कस को पहुँचाते हुए कहा कि इन्हे बाल कर्हाई ले आए हैं आप पूजा करें।

कस ने पुनः सूक और नारद से कृष्ण की मृत्यु के सम्बन्ध में प्रश्न की। नारद ने कहा कि कह जहाँ गौं चराते हो वहाँ जाकर दैत्य शिलाएँ बरसायें। कस ने आज्ञा देकर दैत्यो को भेज दिया। जहाँ कृष्ण गायेँ चरा रह थे, वहाँ उत्पल वर्षा होने लगी। कृष्ण ने वाएँ हाथ से बारह योजन पहाड को उठाकर उसे छाता बना दिया। सभी की रक्षा हो गई और दैत्य परास्त होकर लौट गये।

जसे भ्रमर बगिया में भ्रमण करता है वैसे ही कृष्ण वृंदावन में विहार करने लगे। गोपिया से अठखेलियाँ करने लगे। गोपिया ने नद से शिकायत की कि यह मटकी फोड देता है, गोरस चखता है, चीर खीचता है, नारग दाडिम को नख देता है, उसे मना करा। कृष्ण ने प्रति उत्तर में कहा कि ये मुझे अकेला पाकर मुझ पर मटकी धर देती हैं बरबस कठ लगा लेती हैं और खिन्नाती हैं। "कह" के भोलेपन पर सभी हस पडे और हृषित होती हुई गोपियाँ अपने घर लौट गईं।

नक्षत्रों में राशि के समान राधा अत्यन्त रूपवती थी। कृष्ण के हृदय में राधा के प्रति प्रेम प्रकट हुआ। वह उदास रहने लगे। यशोदा ने समझा कि कह' को नजर लग गई है। अगस्त नामक घाय कृष्ण का रोग देखन आई। कृष्ण ने गारुडो बनकर 'चंद्रायली' से भेंट की। चंद्रा की सुहावनी बगिया, चित्रसारी और नक्षत्र के समान सुन्दर सखियो को देखकर कृष्ण विमोहित हो गये। चंद्रा वाली कृष्ण का मिलन हुआ। चंद्रा के भाग्रह से कृष्ण ने अपना विष्णु रूप प्रकट किया।

कृष्ण दिन में राधा के साथ और रात में चंद्रा के साथ क्रीडा करते रहे। महेन्द्र की पूजा के समय राधा और चंद्रा की भेंट हो गई। चन्द्रा ने पूण शृङ्गार किया था उसने राधा से शृङ्गार न करने का कारण पूछा। राधा ने कहा कि तुमने मेरा प्रिय हर लिया है क्यों शृङ्गार करूँ। राधा और चंद्रा का

विवाद हुआ। जो द्वन्द्व में परिणित हो गया। सार गृहकार ध्वज न भिन्न हा गया। कृष्ण ने अन्त में दोनों को स तुष्ट किया।

कस इन समस्त बातों को सुनकर व्याकुल हो गया। उसने नन्द यगोदा को बुलाकर जदी गृह में डाल दिया तथा यग के लिए सभी ग्वालिना से घो दधि मगवाया। कृष्ण गाय चराकर लौट तो उ होने घर यन्दावन का जन भूय पाया। "सूक" ने कृष्ण का क्रोध सुनकर कस क दैत्यों को युद्ध क लिये तैयार रहने का आदेश दे दिया। अक्रूर यदावन आये। उनमें निमंत्रण पर कृष्ण और बलभद्र मधुरा की ओर चले। गोरियाँ व्याकुल हो गई। कृष्ण ने मधुपुर की अद्भुत गोभा देखी। सुशामा का स्वागत स्वीकार किया। माग में कुब्जा मिल गयी। उसने चान्न चढ़ाकर कृष्ण की अचना की। कृष्ण ने प्रमान होकर उसे सीधा और अत्यंत रूपप्रती बना दिया। कुब्जा स्वीकार करते हुए कृष्ण ने उसी के माध्यम से सन्देश पहुंचाया कि कम से कह देना कि वह समस्त दैत्यों को मार कर दे अथवा मैं 'हिरनाकुस' और 'रावण' से समान उनको नष्ट कर दूंगा।

स्ववती कुब्जा महलो की ओर चली तो हाट में बैठे हुए लोग उसका रूप को देखकर विमोहित हो गये। यथा सुनार गहना गढ़ रहा था उसने अपन हाथ पर ही प्रहार कर लिया। जायसी ने इस स्थल पर गहुत ही रोचक वपन विया है।

कस ने नन्द को बुलाकर कहा कि दोनों वालका और ग्वाला को बुलवावा वे यहाँ आकर रग भूमि में खले। 20 हजार ग्वाले और दानव दत्य एकत्रित हुए। कुवला हाथी द्वार पर बाध दिया गया। इस खेल की बात सुनकर ब्रह्मा, महादेव, सवा लाख पवन, आठा कुन के नाम, छपन बश्वानर व्याकुल हो उठे। छत्तीस करोड देव ननाथ, चौरासी सिद्ध और अष्टासी हजार ऋषि इस खेल को देखने के लिए आये। कस ने नन्द से कहा कि यह एकाजा युद्ध होगा। नन्द किभक्त की कृष्ण छात्र है मत्स्यो से युद्ध कैसे करेगा परन्तु बीडा लेकर ही लौटना पडा। कृष्ण ने नन्द को डाडस बघाते हुए अपने स्वरूप और अनार की बात कही। ग्वाले और यग जूझ गये। चाणूर को मारने क लिए अजुन (बलभद्र) आगे बढ़े तो कृष्ण ने कहा कि यह रत्नबीज है, इसे मैं ही युद्ध में मारूंगा। कृष्ण क बात ही दत्यो ने कान्त युद्ध प्रारम्भ किया। कृष्ण शक्त, चक्र गता, धनुषधारी चतुर्भुज हो गये। घमासान गत्य और द्वन्द्व युद्ध हुआ। कृष्ण ने 'चाणूर' को घुमाकर ऐसा पटका कि एक बूद रक्त नी पृथ्वी पर गही गिरा और यह यमलाक सिधार गया।

कस नयभीत हो गया उसने नन्द को बुलाया और कहा कि ग्वालो को मना करो। कृष्ण को स्वर्ण चक्र वाला रथ व राजसी पहनाया और विदा किया। गोवुन में हर्ष का पारावार लहराने लगा। कृष्ण गोवुस पहुंचते ही यगोदा के साथ

मगल कलत्र लिए गीत गाती ग्यालिनो ने च दन आरू, फुमकुम् की बपा की, और
आरती उतारी ।

चन्द्रावती ने अगस्त न चाणुर वध की बात पूछी । अगस्त धाय ने कृष्ण के सम्बन्ध में सब कुछ बतला दिया । चन्द्रा दशन और मिलन हेतु व्याकुल हो उठी अचेत हो गई । बार बार दशन का प्राग्रह करने लगी । अगस्त के साथ चन्द्रा सोलहो शृंगार कर सखियों (नक्षत्रा) सहित महर मन्दिर में गई । कह न चाद को चाँद ने कह को देखा दोनो की दीपक पतग गति जन गयी ।

राधा भी महर गृह की ओर चली, दो हजार सखियों के साथ । माग म "दानी" मिल गया । उसने दान माँगा राधा की गृह रोक ली राधा ने कहा कि विघना ने मुझे कह के लिए बनाया है मैं उसकी धया हूँ । कृष्ण प्रकट हो गये दोनो का मिलन हो गया । प्रात राधा सोलहो शृंगार कर गौरी पूजन के लिए चली वन म श्री कृष्ण वाँसूरी बजाते हुए मिल गये । उन्होंने सभी को स्वर्ण कोट में धर दिया फुनवारी से फुन चुराने के अपराध में । राधा कृष्ण म मिठ बोला हुआ, फिर धमारी हुई और दोनो विलास में चले गये ।

राधा कृष्ण का विवाह हुआ । ब्रह्मा न मन्त्रोच्चार किया महादेव ने मण्डप सजाया, पावती ने मगल गीत गाये इन्द्र न वादन किया, अप्सराओ ने पत्तू बाँधे भवरी हुई और चौक पूरे गये ।

इसके पश्चात् जायसी न राधा कृष्ण की मिलनावस्था के अनेक अनेक वर्णों क चित्र प्रस्तुत किए हैं । बसन्त धमारी का चित्र भी बड़ा मनमोहक है । राधा आश्चर्याभिमत है कि कृष्ण प्रत्येक गोपी के साथ कसे सुसोमित हैं । अन्त में राधा जान पाती है कि कृष्ण पूण कला सम्पन्न पुरुष हैं ।

कृष्ण भोग रस मग्न थे आर कस व्याकुल था । कस ने कृष्ण को समाप्त करने हेतु स्व और नारद को बुलाकर मन्त्रणा की । मन्त्रियो ने सुभाव दिया की दोषावली पर रगभूमि मजाई जाय और द्वन्द्व युद्ध का आयोजन किया जाय । रगभूमि मजाई गई और खोज खोज कर दैत्य बुलाये गये ।

कुबजा महनो म पदुची तो उसे अप्सरा रूप में देखकर सभी ठगी रह गई - कस का मूर्च्छा आ गई । चेतना जाने पर उसने कहा कि क्या तुम्हें इन्द्र न भेजा है—तुम मेरी रानी बन जाओ ।

कुबजा ने कहा—राजन् मैं तो तुम्हारी दासी हूँ—सुगनी कुन्ना । कृष्ण ने मुझे ऐसा बना दिया और सन्देश दिया है कि जाग सभी बन्धियों का मुक्त कर दें अथवा व मधुपुर को दहन कर देंगे । कस यह सन्देश सुनकर दहक उठा । उसने अक्षर क द्वारा कृष्ण को बुलावा भेजा । कृष्ण समाचार पाकर ईश्वर का स्मरण करते हुए मधुरा की ओर चल दिये । चतुर्भुज रूप धारण किया । सभी लोगो ने अपनी अपनी भावना के अनुरूप कृष्ण के स्वरूप के दशन किये ।

कृष्ण गड के निवृत्त पदुचे — धनुष चूर-चूर कर दिया एक दरय को यमलोक पहुँचा दिया । पहली चोकी पर उनका स्वागत हुआ । दूसरी स छठी पौरी तक दैत्यो का सफाया करत वे आगे बढ़ते गये । सातवी पौरी पर कृष्ण और बलभद्र ने सहस्र हाथियो के बलवाले कुवला को समाप्त कर दिया । कुवला के समाप्त होते ही हटकम्प भ्रम गयी । 'मुष्टिक' मल्ल को बलभद्र ने समाप्त कर दिया । अन्य मल्ल भी मारे गये । कृष्ण ने 'भोटो' पकड़कर कनका जमीन में पटक दिया । वह परलोक सिंघार गया । उन्होंने नन्द-यगादा, वसुदेव देवकी को कारागृह से मुक्त किया । कस के पिता को राज्यासन पर असीन किया । बलभद्र को, द्रव्य और कृष्ण को रनिवास प्राप्त हुआ । कृष्ण कुब्जा के पास चले गये और पद्मशतुओ का आनन्द लेते रहे ।

प्रतीक्षारत गोकुल विरहाकुल हो गया । पशु पक्षी तक विकल हो गये, गोपियो ने कृष्ण के पास पवन दूत को पहुँचाया । दूत का सन्देश पाकर कृष्ण न गोपिया को बुलवाकर मधुवन में रस भोग किया । सोलह सहस्र गोपियाँ और एक पुरुष ।

कृष्ण ने 'धमशाला' चलाया — योगी, जोगी सन्यासी, पंडित सभी यथा योग्य पाने लगे । भक्ति की सरिता प्रवाहित हो उठी । दुर्वासा ऋषि ने अन्न ग्रहण नहीं किया था अतः सभी गोपियो ने पकवानो से उह तृप्त कर छपन कोटि पुन का आगीवाद प्राप्त किया । लोटकर गोपियो ने मान किया और यमुना सूखने का रहस्य जानने का जाग्रह किया । कृष्ण ने अपने मुख में समस्त ब्रह्माण्ड के दशन करा दिये । कृष्ण ने कहा अपना अन्तरपट उघाडकर देखो सारा भाग ईश्वर करता है — यह सृष्टि उसकी लीला है । गोपियो ने यह भेद जाना ।

कृष्ण की कीर्ति सुनकर गोरखनाथ अपनी विशाल योग बाहिनी लेकर आ पहुँचे । कह तक योगियों के आने की यात पहुँची । कृष्ण मिलने आये । गोरखनाथ ने कहा तुम्हारी कीर्ति सात समुद्र पार तक पहुँची है — तुम भोग त्यागकर योगी बन जाओ ।

कृष्ण ने कहा— मैं तुम्हारा योग लेकर क्या करूँगा ? सोलह सहस्र गोपियाँ मेरी सेवा करती हैं वही तपी और पैलासी है । गोरखनाथ ने आन्धान किया कि आबो "मार" करें जो मरे उसकी द्वार । गोरख और वह मे युद्ध हुआ । अतः मे गोरख मान गए कि तू बडा पानी है । गोरख सुमेरु की ओर गये और कह मधुपुर लोट आए ।

सम्य अन्तराल के पश्चात् एक बद्ध ऋषि कन्ह के पास आये और बडा यस्था में सेवा के लिए एक गोपी चाही । कृष्ण ने कहा आप यहाँ भोजन करें विध्याम करें । रात्रि को जिन गोपी की सेज सूनी हो उसे अपने साथ ले जायें ।

रात्रि पपन्त वे सभी सेत्रो वे पास गये और उहोने सभी जगह पुरुष की खपार सुनी कोई सेत्र खाली न थी, प्रात होत ही व अपने गन्तव्य की भार चल दिये ।

धृष्ण कोटि यादव क्रीडा मग्न थे । उन्होने एक तुन्दिल पण्डित को देखकर हसो उठाई । ऋषि ने खीभकर कहा तुम लोग आपस म ही लडकर समाप्त हो जावेंगे । यादवो का शय होन सगा । कृष्ण ध्यान मग्न हुए, उह जात हो गया कि अब दशा पूण हो गई है । उहोने अर्जुन (बलभद्र) को राजकाज दे दिया और स्वय ससार त्यागन की इगिट से द्वारका की ओर चल दिय । यह जानकर सभी बिलखन लगे । कृष्ण ने सभा को मधुपुर म रहने को कहा और यह भी बताया कि मैं जहाँ से आया हूँ अब वही जाऊँगा ।

अजुन को सारा मार सोपकर कृष्ण द्वारका की ओर चल पडे । चलते चलते सध्या हा गई । व एक स्थान पर विश्राम करने लग । इसी मध्य एक गिकारी ने विष बुझा बाण छोडा जो उनके तलत्रे म लगा और वह मसार छोडकर चल दिय ।

अन्त मे महाकवि जायसी न पुन प्रस्नावना धाले सत्य को दुहराते हुए कहा कि — "इस ससार मे आकर कोई रहा नही । इस ता मूल रूप म परदश जैसा समझो ।"¹

कृष्ण कथा और क हावत का मून स्रोत

रुषा वस्तु का नवीन सपठन

हिन्दी भक्ति युग के आराध्यो में 'कृष्ण स्याधिक महस्वपूण है, पुराणो में प्राय सबत्र उनका महात्म मिलता है । भारतीय इतिहास के वे सर्वाधिक प्रधान व्यक्ति हैं । वे महाभारत युद्ध के सूत्रधार है, महान कमयोगी हैं, महान पराक्रमी और महान राजनीतिज्ञ हैं । योगेश्वर, पुरुषोत्तम, रसेश्वर सभी रूपो में वे महान हैं । कृष्ण का महिमा मण्डित और वमियों-वचित्रया से सम्बलित विराट व्यक्तित्व भारतीय मनीषा की एक महत उपलब्धि और परिकल्पना है गोपीजन वस्सभ, राधा माधव राजा नेता, कमयोगी, भोगी वे सभी रूपो मे महत और दिव्य हैं ।"²

1 यह ससार धन के छाहा । रहा न कोई धाइ जग माहा ॥

तुम पुनि चलचल तुनहु सदेधा । सबर नेहु जान परदेसा ॥ क हावत पृ 255

2 क हावत भूमिका - प 48

कहावत हिंदी कृष्ण काव्य परम्परा का, प्रथम प्रबन्ध काव्य है। सूर से भी पहले जायसी ने कहावत में कृष्ण चरित का वर्णन किया है। यह हिंदी का प्रथम कृष्ण काव्य है।

कहावत की कथा के मूलस्रोत के विषय में जायसी ने लिखा है—
 'हरि अनन्त हरि कथा अन्ता । गावहि वेद, भागवत सता ॥
 विष्णु, पद्म शिव, अग्नि पुराना । भारय, सिरि हरिवस बखाना ॥
 सुनेऊं पढ़ेऊं भागवत पुराना । पाएऊं पेम पथ सधाना ॥
 जोग, भोग तप और सिगारु । धरम, करम, सत के बेवहारु ॥
 ज्ञान भगिन रस कवल विगासा । भौर दूर सा आवाहि पासा ॥
 सुमिरो वेद विश्वास क चरना । जिहू हरि चरिता सहस्तर बरती ॥
 क २ कैं कथा लोरु मह एती । सरगैं नरवन तराइहू जेती ॥
 अइस प्रेम कहानी, दोसरि जग मह नाहि ।
 तुरुकी अरथी फारसी - सब देखेऊं अनगाहि ॥¹

स्पष्ट है कि जायसी यह मानते हैं कि कृष्ण की अनन्त कथाएँ हैं इनका गायन वेदा में है भागवत में है और सत जन भी इसी गाते हैं।

कवि ने विष्णु पद्म शिव, अग्नि हरिवस पुराणा का भी उल्लेख किया है। उसने यह भी लिखा है कि—“सुनऊ पढ़ऊ भागवत पुरान और इसमें प्रेम पथ का सधान मिला। उसके अनुसार कृष्ण कथा में योग भोग तप श्रु गार, धर्म कम सब व्यवहार जान और भक्ति का कमल अपने परिमल को विकीर्ण कर रहे हैं। उमन वेदव्यास का उल्लेख—चित्ररेखा पदमावत और कहावत—अपने तीनों प्रबन्ध काव्य में किया है। उसके अनुसार वेदव्यास ने हरि चरित का सविस्तार आख्यान किया है। उसके एक और महत्वपूर्ण तथ्य की ओर संकेत किया है—‘जग में कह कथाएँ इतनी हैं जितनी आकाश में तराई’”

उपरोक्त विवेचन से स्पष्ट है कि जायसी के समक्ष अनेक पुराणों की कृष्ण कथाएँ थी साथ ही लोक में प्रचलित अगणित कृष्ण कथाएँ भी थी और इन सब स्रोतों से उन्होंने कृष्ण कथा के सूत्रों को गृहीत करके कहावत की कथा वस्तु की संरचना की है।

‘कहावत’ में गोरखनाथ और कृष्ण के द्वादश कथा भी हैं। पदमावत को विद्वानों ने योग पथ का आकार ग्रन्थ कहा है। कहावत में भी कवि पथ से प्रभावित मिलता है। गोरखनाथ की कथा को कृष्ण कथा से जोड़ने का यही रहस्य है। यो मध्यकाल में गोरखनाथ के विराट व्यक्तित्व और कृतव्यय का व्यापक प्रभाव था। जायसी ने इससे प्रभावित होकर कृष्ण और गोरखनाथ का द्वादश भी

करवा दिया है। कहावत की कथा से ज्ञात होता है कि कवि ने इनके शास्त्रीय रूप में अनक परिवर्तन भी किये हैं। ये परिवर्तन कुछ तो उसके कल्पना विलास से जनित हैं और कुछ का स्रोत साक जीवन है। कुछ परिवर्तन ऐसे भी हैं जिनके मूल स्रोत वा पता भावी शोधों के अनंतर ही लगगा। जायसी ने कृष्ण के जन्म में लेकर उनकी मृत्यु तक की विविध कथाओं का इसमें मुष्ट घटन किया है, अनक घटनाओं को अपनी कल्पना से नवीन रूप में उपस्थित किया है— और इस प्रकार उन्होंने कृष्ण के विराट जीवन चरित्र का महाकाव्यात्मक रूप में अंकन किया है।

रूप सौन्दर्य वर्णन

नख गिख

जायसी ने पद्मावत में पद्मावती का नख गिख वर्णन किया है और लौकिक सौन्दर्य से परम सौन्दर्य की एक मूल्य देने का प्रयत्न किया है। उनका सादृश्य विधान प्रायः भारतीय काव्य परम्पराओं में अनुसृत है। उन्होंने अमर, वासुकि, जमुना, सरस्वती, शुक, यामिनी, चंद्र, नारंगी धीफल आदि उपमानों से नायिका का सादृश्य विधान किया है।

कहावत में भी जायसी ने राधा चंद्रावली आदि के रूप सौन्दर्य वर्णन में अन्तर्गत साहित्यिक परम्परा में उपमानों तथा लोकगृहीत उपमानों के साथ ही कतिपय नवीन मौलिक उपमानों का भी आनयन किया है।

नायिका के रूप सौन्दर्य वर्णन के लिए फारसी के कवि नख गिख वर्णन अवश्य करते हैं। इसके द्वारा वे नायिका के रूप गुण और अंगों की गरिमा को अधिक भास्वर बनाकर प्रस्तुत करते हैं। भारतीय नायिका को योगी बनकर निकल पडने के लिए यह रूप सौन्दर्य ही विवश कराता है। पद्मावत में रतनसन पद्मिनी का रूप सौन्दर्य वर्णन सुनकर योगी वेश में चित्तौड़ से निकल पडता है। 'कहावत' में कृष्ण चंद्रावली के रूप सौन्दर्य पर विमुग्ध होकर योगी बनत है और चंद्रावली की फुनवारी में मुनी रमाकर बंध जात है।

कहावत में निम्नलिखित प्रसंगों में रूप सौन्दर्य वर्णन की योजना की गई है—

- (1) मथुरा नगर वर्णन के अन्तर्गत।¹
- (2) गोकुल की ग्वालाभा का रूप-सौन्दर्य वर्णन।²
- (3) बालक कृष्ण का रूप-सौन्दर्य वर्णन।³

1 कहावत—पृ 18 उ-ख 21

2 वही पृ 26 उ-ख 29

3 वही पृ 42 उ-ख 51 70 90

- (4) चद्रावली का रूप सौ दय वणन ।¹
- (5) चद्रावली-राधा-विवाद कं स दभ मे रूप वणन ।²
- (6) राधा का रूप वणन ।³
- (7) राधा का नख शिख वणन ।⁴
- (8) राधा की सखियों का रूप वणन ।⁵
- (9) बुब्जा का रूप-सौ-दय वणन ।⁶

रूप सौ दय वणन के इन सभी स्थलों पर जायसी ने भारतीय साहित्य के प्रचलित उपमानों, मौलिक उपमानों तथा अ्य प्रकार के उपमानों की संयोजना अत्यंत सुंदर और काव्यात्मक रूप में की है ।

मथुरा नगर वणन के स-दभ में कवि ने वहाँ के सप्त भूमिक गढ़ का वणन करत हुए उसमें रहने वाली रानियों का वणन किया है

सात दीप कै रानी भरी । जनु कँलास मांझि आछरी ॥

रूप सुरूप सुरग सोहाई । जनु बैकुंठ हूती सब ठाई ॥

चद देखि तहि होई मलीना । दरसन सूर जाइ होई खीना ।⁷

कम की रानियों को कवि ने 'स्वर्ग की अप्सराओं की उपमा दी है, उन्हें देखकर चंद्रमा भी मलिन कांत हो जाता है, सूर्य भी क्षीण प्रभा हो जाता है ।"

मथुरा के जल भरे सागर सरोवरों का क्या कहना है, वहाँ पानी भरने जो पनिहारिनियाँ आती हैं वे अत्यंत रूपवती हैं । उनके सिर पर कनक कलस हैं, वे बाह डोलाती हुई चलती हैं ।

'पानि भरन पनिहारी आवहि । कनक कलस तिर बाह डोलावहि ॥⁸

कृष्ण का जम होने पर वासुदेव भारी चिंता में पड़कर — कहीं छिपाऊँ लेई अस दिया । लेऊँ घालि जो फाट दिया ॥⁹

यमुदउ वार देखि मुठि लोना । अति निरमल चमकै जनु सोना ॥¹⁰

-
- 1 वही पृ 75 छंद स 100
 - 2 वही प 104 छंद स 112
 - 3 वही प 142 छंद स 142
 - 4 वही पृ 107 छंद स 153 स 286
 - 5 प हावस पृ 165
 - 6 वही पृ 189
 - 7 वही पृ 18
 - 8 वही पृ 21
 - 9 वही पृ 43
 - 10 वही प 75

यहाँ श्रीकृष्ण के लिए निमल और उनकी प्रभा के लिए "चमकते सोने" की सुंदर उत्प्रेक्षा इष्ट है। वृष्ण के लिए भास्वर "दिया" (दीपक) का उपमान भी अत्यन्त व्यञ्जक बन गया है।

चंद्रावली के लिए अगस्त सोच रही है

"वह तो सरग ऊपर छह ऊई। नैन न दीख कर काहु न छुई।

जाकर बदन दूइज सब दीसा। जग जुहार कै कद्रई असीसा।

अस निरमल वह दई सँवारी। चारहु भुवन होई उजियारी ॥

चौदसि गगन सपूरन, जाने सब सयँसार।

पलँ तो होइ अमावस, रहै जगत अधियार ॥¹

यहाँ चंद्रावली के चंद्ररूप का बड़ा ही प्रभावाभिव्यञ्जक रूपक दिया गया है। यह चौदहवीं (पूर्णिमा) के चंद्रमा सदृश भास्वर है। उसकी रूप ज्योति से निखिल भुवन रूपयित हो उठा है। चंद्रावली विश्व व्यापी महाज्योति का नाम है। उसके अनेक रूप और प्रतीक निखिल ब्रह्माण्ड में व्याप्त हैं। वही ज्योति चन्द्रमा के रूप में अकाश में उड़ित होता है, वह कलाश शिव लोच की मणि है जो गोकुल को प्रकाशित करने के लिए उत्पन्न हुई है, उसी महा ज्योति की रश्मि से भुवनो को आलोक मिला है

चंद्रावली 'स्वाति' है, कृष्ण चातक हैं वे अगस्त से कहते हैं कि 'मेरी प्यास शीघ्र बुझाओ।' अगस्त ने कहा—

'वह सो चंद्रावलि है गोरी। सरग चाँद दिन रहे अलोपी ॥

ओ घौराहर ऊपर बने। सोरह करो ज्योति परगसे ॥

मुख जोवहि गन गंधव देवा। नी सई नखत करहि सब सेवा।²

चंद्रावली को पूण चंद्र जैसी महाभास्वर कहा गया है, गण, गधव, देवता उसका मुख निहारा करते हैं, तारागण उसकी सेवा में सलग्न हैं। चंद्रावली को विश्व की चिंति (या महाज्योति) शक्ति के रूप में कवि ने उरहा है।

"जग उजियार भई रहि जोती। पुनिऊँ जोनि कहाँ जग ओती ॥⁴

अलकृति जय सौंदर्य के साथ ही कवि चंद्रावली के विश्वव्यापी भास्वर सौंदर्य की ओर भी संकेत कर रहा है। उसके चंद्र बदन की ओर देखकर हरि अपनी मुग्धि खो बैठे :

1 कहावत पृ 75

2 कहावत पृ 75

3 वही पृ 74

4 वही ,, - 109

“सूरज चाँद मुख जोषत, रहा नैन तस लाइ ।
पास पलो नहि सार्व, लोटि मार नहि जाइ ।¹”

हरि के लिए सूर्य और चंद्रा के लिए चंद्र के उपमा या प्रतीक अत्यन्त सार्थक और व्यञ्जक हैं ।

चंद्रावली की भाँह धनुष हैं - यही जा राम, परशुराम आदि क हाथों में रहा, जिससे रावण, सहस्रबाहु आदि के वध हुए । उन भाँहों के धनुष को अवतारी कृष्ण ने चीँह लिया

इहँई धनुष म रावण मारा । इहँई धनुष में मार सधारा ।
इहँई धनुष धनुबाई कीँहा । इहँई धनुष अरजुन कह दीँ ठौं ।
जाज धनुष में चीँहा, सोइ धनुष ओँ वान ।²

चंद्रावली राधा विवाद के सदन में दोनों न अपन रूप की प्रशंसा में एक से एक मुँदर उपमानों का उपस्थापन किया है साथ ही दोनों एक दूसरे के रूप के लिए तिरस्कार और अपमान सूचक उपमानों के माध्यम से व्यंग्य किया है ।

नवि ने राधा का रूप सौन्दर्य वणन अत्यन्त उन्मत्तासित और उत्तरजित भाव से किया है तथा परम्पराप्रथित उपमानों के प्रयोग किये हैं ।

रूप सौन्दर्य वर्णन के उपमान

पद्मावती के 'नखशिख वणन के समान राधा का नखशिख वणन 'कन्हावत' में मिलता है । इसमें जायसी ने राधा के शरीर के विभिन्न अंगों के लिए उपमानों का प्रयोग किया है वे समष्टि रूप में निम्नलिखित हैं

(1) माग

(पाटी, पत्नी माग) - तारा भरा आराग, सूर किरन, बीर बहूटी, घुँघरी मोवितक भरी केश रागि -

'पाति पाति मुफताहल बनी ।
सरँग नरवत जनु दीसहि घनी ॥
उगरत सूर किरन जस फूगी ।
रंगि चली जनु बीर बहूटी ॥
× × ×
सँदुर माग भाव तस पाई ।
घुँघरी जइस रात दिखराई ॥

1 कन्हावत छंद - 113

2 बही - 115

कनक खभ जनु विसहर चढ़ा ।

गारूर भूल मत्र को पढ़ा ॥¹

(2) सत्ताट

कचन रेख, दुइज का चाँद, सूयकला, माँग मे तिलक-पत्र, रचना-कृति का नक्षत्र—

“मनि सत्ताट जनु वचन रेखा (कचनरेखा) ।

दुइजक चाँद उवा अन्न देखा ॥ (द्वितीया का चंद्र)

बदन सपूरन ससहर दीसा ॥” (पूर्णिमा का चंद्र)

× × ×

तिलक बनाइ जो चुगी रची ।

चाँद सघ जाइहु कवाची ॥ (कृतिका नक्षत्र) ।²

(3) नेत्र

कमल कमल पत्र पर बैठा भ्रमर सीपी जादि

नैन सुरूप सुरगम दीठी ।

कवल पत्र जनु भवर बईठी ॥” (कमल पत्र)

सुरग बिरग सीप मुह राते । (सीपी)

बजन रेख बनी अति वारी ।

(4) भौंह :

भौंह धनुक धानि जानु अहेरी ।” (धनुष)

कपोल पर तिल

सुरग कपान सुहाए, तहि तिल एक विधि दीह ।

भा सजोग मसि बिंदु अचल गगन घुव कीह ॥ (ध्रुव)

(6) नासिका

“सूआ नासिक मुह सिगाह ।” (शुक)

(7) घघर

बिज्जुमान जनु विद्रुम धारी । (विदुत)

जानु मिलाए चीर पवारी ॥ (पवारी मुग्गी)

(8) मुल

मुह सो कवल जिमि बिगसै, फूल परहि जनु वात ।” (कमल)

1 कन्हावत छंद 234

2 वही ” 235

(9) दशन

दसन पाट जनु बठे होरा (होरा)
बिहसत जानहु बीजु दमावै (विद्युत्)
घरनिहि मांभ नखत जनु ऊर्वाहि (नक्षत्र)

(10) वांत

कपोल के निए अमृत
फून परहि जो-जो कह बोला । जनु अकिन जो सुराकपोला ।

(11) कठ

कोकिल कठ बात जो कहै । (कोकिल)

(12) प्रीवा

जानु सोनार सांचे भरि काड़ी । गीऊँ पुछारि मोति जनु ठाड़ी ॥
मानो उसकी प्रीवा सोनार ने सांचे मे भरकर निमित्त की है ।
वह मयूर प्रीवा है ।

“जानु उई भरि नखत तराई (रत्नमरी प्रीवा)

(13) हृदय प्रवेश स्तन द्वय

कुच बचोर दोइ तेहि महुँ साजे । (कचोर)
अमिये कलस जानु लेई लाई । (अमृत कलश)
मुद्रित रतन जानु बैसाई । (मुद्रित रत्न)
के रे सिधोरा सेंदुर नरे । (सिधोरा)
जनु कचन मालूर सवारे । (कचन बिल्व फल)

(14) भुजा

“भुजा सुवरनक केहि लेइ लाऊँ ।
जैहि रे जोग बसत कछु पाऊँ ॥ (बसन्त)
कनक लण्ड जनु सांचे फिरे ॥ (कनक दण्ड)

(15) अंगुली

अगुरी छीमी के पतराई (छीमी)
मुदरिह भरी बीजु लेइ दूनी (विजली)

(16) रोमाशली

(17) कटि

अलप लक रहै हिगुरबारी । (हगुर चोमान का उडा)
पातर लक सिहिनी भीनी (सिहनी)
वरें लक चाहि अति खीनी (वरें)

(18) लट्ठी हुई राधा

जानहु मुदज किरन हुत काड़ी । (सूय किरन से निकली)

(19) जाँघ

जघ अर्हाहि बेला के गाना (केला के गाभा)

(20) परो की उँगलियाँ

“अगुरी जानहु दारिक करी । दस नख माक महावार भरी
(दाडिम कली)

(21) पर

अमिय बेल अनु भाइ बिगासा (कमल अमृत)

(22) गति

हसि गवनि जिमि गवनै, सउद होइ लकार । (हसगति)

सशेष म नख शिख और रूप वणन म प्रयुक्त उपमानो की यह रूपरेखा है ।
ये उपमान मुख्यत दो प्रकार के है

1 - प्रकृति क्षेत्र से गृहीत उपमान और 2 - अन्य सांसारिक वस्तुओ स सम्बन्धित उपमान । कमल, भ्रमर, चंद्र, सूर्य आदि प्रकृति क्षेत्र से गृहीत हैं । खम, प्रभति उपमान अन्य सामारिक वस्तुआ से गृहीत उपमानो की कोटि मे आते हैं । ऐसे उपमानो की सख्या अपेक्षाकृत कम है । कवि ने प्राय भारतीय काव्य परम्परा प्रयित उपमानो का आश्रय लिया है । सम्पूर्ण नख शिख वणन का यात्मक है । कहीं कहीं कवि ने नवीन मौलिक उपमानो की भी योजना की है । नख शिख वणन मे जायसी म कहावत म शीप से परो, उगलियो और उगलियो के नखो तक का वणन किया है । नख शिख वणन मुख्य रूप से राधा का ही किया गया है ।

पट ऋतुवणन

पट ऋतुवणन की परम्परा के अनुसार जायसी न कृष्ण और कुब्जा के सयोग के उद्दीपन रूप मे पट ऋतुवणन की योजना की है इसके सम्यक अनुशीलन से स्पष्ट होता है कि इसमें अपेक्षित काव्यात्मकता के साथ ही लौकिक तत्वो का भी सुंदर समावेश मिलता है ।

इस पट ऋतुवणन म नवला परम रूपवती कुब्जा के हर्षातिरेक का चित्रण हुआ है ।

कस का सहार करके कृष्ण ने शासन का काय बस्रराम को सौप दिया ।
कृष्ण ने कस का रनिवास सम्भाला कुब्जा सुंदरी के साथ उनका भोग विलास शुरू हुआ

“आपु रहे मधुवन होइ, रचि कुब्जा सो भोग ।”

जायसी ने बड़े उपयुक्त ढंग पर पट श्रुतुवर्णन का अवकाश निकाल लिया है। कुब्जा की सयागायस्था का चित्रण करने के लिए कवि ने बड़ी कृपा लता के साथ श्रुतुवा का वणन करके एक बार तो प्रकृति वणन का ढंग निकाल लिया है और दूसरी ओर कथा के सौंदर्य को भी अक्षुण्ण रखा है। उसके श्रुतु वणन की सबसे बड़ी विशेषता है—प्रत्येक मास के अनुसार परिवर्तन का ज्ञान तथा परिवर्तनमान कृति का सयोगिनी के ऊपर पड़ने वाले प्रभाव का विचार। उसने जहाँ प्रकृति का सीधा और सजीव चित्रण किया है, वहाँ उस अपने ज्ञान और अपनी कल्पना से नवीन और मौलिक भी बना दिया है। इस वणन में उसकी सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति भी स्पष्ट मिलती है। वर्षा का वणन करते हुए काले घने बादलों का वणन किया है साथ ही वर्षा के अर्थ प्रसाधनों का आनयन भी किया है वह उसके सूक्ष्म निरीक्षण का प्रमाण है। इसके द्वारा उसने वातावरण की सुंदर सृष्टि की है—यह भी उसके कौशल का परिचायक है। उत्तर भारतीय श्रुतुओं तथा दृश्यों का समावेश उसे और भी प्रभावपूर्ण बनाने में सफल हुआ है। यद्यपि यह श्रुतुवणन उद्दीपन रूप में ही है और प्रकृति यहाँ सयोगिनी के आनंद को सम्बद्धित करने में उद्दीपन का काम करती है, तथापि इसमें कुछ स्थलों पर प्रकृति का आलम्बन रूप में भी चित्रण हुआ है। इससे हमें कृष्ण और कुब्जा के सयोग सुख का अनुमान करने में सहायता मिलती है, इससे कथा का स्वरूप स्पष्ट होता है और विस्तार भी मिलता है, साथ ही काव्य की रमणीयता में भी वृद्धि हुई है।

ग्रीष्म श्रुतु का आगमन हुआ है। पवन का झिरकना, शीतल छाँह कोमल सेज, फूल ताम्बूल और कपूर—और हाँ सबके साथ स्वरूपवती कुब्जा

“बनी पदुमिनी कुबजा, जनु जाछरि कलास।

सुख सहित वीत भल ग्रीष्म रितु दोई मास।”¹

पावस श्रुतु में अपार जल बरस रहा है सावन भादौ बड़े माहिर गभीर हैं कुबजा ने कचनी कुसमी वस्त्र पहन, कागा में जडाऊ खुभी पहन ली। ऊँचे चौबारे पर शयनागार चारों ओर उसके सुले द्वार सुरग बिछोने चारों ओर सुगन्धि, अगो में लगे लस और चंदन और कृष्ण कुबजा का भोग बिलास

पूलाहिं सखी हिंडोल गावाहिं पदुम हुलास।

कुबजई कीह भोग सुख दूसर रितु चौमास ॥²

सयोगिनी के लिए शरद श्रुतु का समागम का क्या कहना? निमल चंद्र कँवार, फातिक का आनंद, चन्दनिया और सवार दर पहनना—सार जगत में उज्वलता भर गई, सात खण्डों वाला धवलगृह, भाँति भाँति के कटाव उद्देध

उसके ऊपर बिछी सेज, उरेहे हुए चित्र और सजी हुई चार खण्डों की चौकियाँ, दोनों जन गलबाही देकर मिलते हैं। घर में मानो प्रेम प्रीति श्रुतु का आगमन हो गया है। वे क्षण-क्षण में पान की बीटिका लेते हैं, कृष्ण नारंगी, दाडिम जमीरी नौडू, कमल, केतकी बली, मदन-बस्ती, का रस चखते हैं -

भाग करहि रस दूनिऊँ, मिले रहहि एक पास ।

खेतत हसत गवाए तीसर रितु छौ मास ॥¹

शिखिर श्रुतु के समार की अनुपमता - अगहन पूष के महीने, घना जाड़ा दिन छोटे, रात भारी, कुबजा ने भोग की ऐकान्तिक श्रुतु को पा लिया ? दगलस सवारा गया, श्वेत पीत, हरित रतनारी वस्त्र धारण किए। कुबजा ने दुगुने भाव से प्रीति जोड़ी, उसने वण-वण की रेशमी साड़ी पहनी, सौर-सुपेती बिछ गई, सुरंग सेज मानो विमान की तरह सजी, उसके ऊपर सुरंगी चदोवा ताना गया, दोनों दिशाओं में जल-पात्र रखे गए - धन्धा और नायक दोनों रंग में भरे हुए -

तिल एक बिचुरहि नाहीं, मिले रहहि एक पास ।

एहि विधि कहै चौधहि रितु, सुख के आठहु मास ॥²

हेमन्त श्रुतु में अति तुषार पड़ रहा है, पर कुबजा के लिए (लेखे) पाले का कोई अस्तित्व नहीं है, सखियाँ अवश्य कहती हैं कि - परमशीत काल है" कुबजा अपने प्रिय के साथ है अतः उसके लिए रात दिन के समान हो गई और जाड़ा न जाने कहाँ चला गया है। वह कभी चन्दनी चोला पहनती है, कभी अमूल्य सिन्दूरी वस्त्र, कभी किजल सारी पहनती है, कभी मेघवण वस्त्र और कभी चिम्कट सारी। वह फुलड़े वाली अगिया भी पहनती है -

बहु सिगार तित अतिवै, जनु आधीर कयलास ।

काम कला, रितु बीतै, पंचमे रितु दस मास ॥³

अनुकूल बसंत का सुहावना मौसम - चैत्र वैशाख के महीने कुबजा का सौभाग्य चौगुना हो गया। कात साय है; वह फाग खेलती है। उसने श्रु गार करके स्वयं को सजाया, सिन्दूर से सारा जग रतनार हो गया। मानो कुसुमी फूली हो, ससार के भोग ठगे से देखते रह गए - उसके अधरो पर ऐसा रंग चढ़ा कि लोग देखकर पतिमें बन गये। सभी लोग ने चाचर का आयोजन किया, प्रत्येक द्वार पर अचीर मुम्का की बहार है, चदन और अंगर की भारमार है

“खेल फाग रितु मानै, सवहि भोग रस मास ।
साध हियै के पूजै, छबी रितु बारह मास ॥”¹

उपयुक्त पट-श्रुतु वणन से स्पष्ट है कि कवि की दृष्टि में प्रमुख है कुबजा का सयोग सुख वणन और उसका माध्यम है पट् श्रुतु वणन । पट् श्रुतुओं के सभार उसके सयोग सुख में उद्दीपन का सचार करते हैं ।

बाराहमासा

सादेश रासक, पृथ्वीराज रासो, डोला मारू रा दूहा, और पदमावत की ही भांति कहावत में भी श्रुतु वणन के अतगत प्रकृति वणन किया गया है। ‘श्रुतुसाहार’, ‘सादेशरासक, और डोलामारू का दूहा’ में श्रुतुओं का वणन प्रीण्य से प्रारंभ होता है। पृथ्वीराज रासो और पदमावत में यह वणन वसात से प्रारंभ होता है, पदमावत में ‘बाराहमासा’ आपाठ से प्रारंभ होता है। स्पष्ट है कि पट श्रुतु वणन कहीं से प्रारंभ किया जाय इस प्रश्न पर कोई सव माय परपरा नहीं थी। यह अवश्य महत्वपूर्ण था कि किसी उद्दीपक श्रुतु से ही उसका प्रारंभ हो। यह श्रुतु वणन मिलनजय आनंद और विरहजन्य दुःख दोनों में उद्दीपन पर सचार के लिए किया जाता था। इससे काव्य में मिलनजय सुख और विरहजय दुःख दोनों का रंग गाढ़ा हो जाता था। कवियों ने अपने सवेदनशील हृदय में मनुष्य के सुख दुःख का प्रतिबिम्ब देखा है। अपनी चिर सगिनी प्रकृति के व्यक्तिगत सुख दुःख विशाल परिदृश्य में मनुष्य के व्यक्तिगत सुख दुःख उसकी अपनी आशा-निराशा जलौकिक प्रभाव उत्पन्न करती है। हाँ, इस प्रकार के वणनों में प्रकृति केवल उद्दीपक का काय सम्पन्न करती है। कहावत में कवि ने पट श्रुतु वणन कुबजा के सुख विलास वणन के लिए किया है।

वृष्ण मधुरा में कुबजा के साथ रम गए। गोमुख में गापियाँ विस्तित हो गईं ‘कनू ने आन की बात सी बार कही थी पर वे लीं नहीं। क्या उन्हें मधुपुर में बहुत सुख मिला? यहाँ क दुःखा का स्मरण करके उन्होंने आना उचित नहीं समझा। क्या वहाँ उन्हें कोई रूपवन्ती नारी मिल गई? इस पर लुभा कर उन्होंने हृम विस्मृत कर दिया? क्या हम लोग से उनकी सवा में कोई कमी रह गई थी? क्या हमने उनके आदेश का पालन नहीं किया?’²

पुन गोपियाँ न कहे और कुबजा भोग की बातें सुनीं—सुनते ही उनके मन में वियाग निष्पन्न हुआ। यदि तुम्हें चंदन ही अच्छा लगा, तो हमसे ही

क्यो नही मांगा ? यदि तुम्ह टेडी चाल अच्छी लगती है, तो बोलो हम भी उसी चाल चलें ।¹

कवि ने बड़े कौशल से चारह मासा का विधान किया है । कृष्ण कुब्जा के साथ सयोग सुख मे सब भूल गए—पटश्रुतु वणन की पीठिका पर कवि ने गोपियों के विरह वणन का आयोजन किया है । अपाठ चढ़ा, लोग अपने-अपने घर आए और कन्ह मधुवन म बिलम रहे—

“उनये मेघ चहू दिमि गाजे । चमकि चमकि धन बीजु तराजे ॥
बोले कोकिल सबद साहावा । आइ पपीहन पीउ बोलावा ॥
दादुर ररहि कुहूकाहि मोरा । भा बरखा को धर कन्दोरा ॥
अति पुरवा आवै नित घेरी । भावियोग जिय गोविन्ह केरी ॥
रहव अकेली कन्ह न पासा । कइसै हम भगउव चोमासा ।
कत लोभाई और सग रहा, सो दुव सँवर जाइ नहि सहा ॥
जेहि विच हार न सबरत, तेहि विच परा पहार ।
के रे मरन दुखन जिउब, यह र निरह दुख भार ॥”²

सावन मे सघन मेह बरस रहा है कृष्ण के स्नेह का स्मरण करके गोप प्रीताए बिसूर रही है । घटाघोष बादल छाए हैं । चारो ओर जल ही जल है, सभी अपने घर आ गए हैं, घर-घर मे सखियो न हिडोले सजाए हैं, जिनके घर मे कात हैं, वे उनके सग झूल रही हैं मेघ-मल्हार गा रही हैं । सखियो ने रच रच कर वस्त्र पहन रखे हैं, गले म अमूल्य हार पहन रखा है—

“हम रख अब निशि दिन, भइ नहि कहूँ सौ भेंट ।
अरि मानुस गा आनहर, साथ रही सब पेट ॥”³

पदमावत की ही भाँति कहायत म भी बारह मास मे कवि ने प्रकृति का यथार्थ चित्रण किया है, दूसरी ओर उसक समानान्तर विरहिणी पर पढने वाले उसक प्रभाव की भी अभिव्यजना की है— ‘यदि सावन मे सघन घन मेह बरस रहा है तो दूसरी ओर गोपियाँ कृष्ण के वियोग का स्मरण करके झूर रही हैं ।’

काव्य कि यह विद्योही यह समझता कि भरे भादा म घनी अधियारी मे कुछ सुभ्राई नही देता । प्रिय उस परदेश म झूल रहे, वर्षा म न कोई पथिक आता-जाता है और न कोई सदेरा । यमुगा मे बाढ आई है जो उस पार गया यह लौटा

1 कन्हावत छन्द 311

2 कन्हावत छन्द 312/29

3 कन्हावत छन्द 3/31-9

नहीं, शायद वे वहाँ जाकर अधिक सुख पा गए, इसी कारण वहाँ नहीं आए। हम तो जल में डूब रही हैं नाच जजर है, बौन पार लगाएगा।”¹

बवार का महिना—ऋतु नई नई लग रही है जिसके घर में कांत है, वे नारियाँ परम सभ्यगी हैं, वे रसवती सुख भोजन करती हैं, कांत से मिलती हैं, अभी दुखा को भूल जाती हैं। हम से तो हरिन कौल कपट किया, पहल मिले जोर अब बिछोह दिया। बवार में जगस्त नारा उगा है, वन में कास फूले हैं और हमारे कांत कुबजा के साथ भूल हुए हैं। सजन पड़ी आ गए, पर कह नहीं आए।²

कार्तिक का सुहावना मास लगा, सभी साहायिनी के मन को यह अच्छा लगता है—गरदचंद्र को लोग शीतल क्या कहते हैं, यह हम गोपिया को जला रहा है। जिनके घर में कांत है वे अपने बेश का बिबास करती हैं सिन्दूर लगाती हैं सुख भोग करती हैं हम तो दिन रात वियोग में पूर विमूर रही हैं।

चंद तबै निशि पसरे, नरइ केत बिहाइ

भानु दहै, दिन दारुन एहि दुख निशि दिन जाइ।³

आहन के महीने में दिन घटने लगा रात बढ़ने लगी, जाड़ा लगने लगा एक तो विरह और दूसरे पाला, हम किस इम शीतकाल को झेलेंगी। यदि कह इस ऋतु में आएँ तो वे ही जाड़े को देश निकाला दे सकते हैं।”⁴

पूस मास में घनी सर्दी पड़ रही है और हमारा बिछोहा अभी भी नहीं आया। बिना स्वामी के हृदय घर घर काँप रहा है। सारा शरीर और हवा की तरह ठोस रहा है। विरह की जगीठी से दह दग्ध है, अभी भी यदि हमारे सूर्य चले आएँ तो गीत भाग जाए। गोपिया के विरह की प्रभु विष्णुता अथवा मार्मिक रूप में अभिव्यक्त हुई है

‘आवहु कह मया कै, गोपिह प्रान अधार।

उजरत हिया बसावहु करहु हमारइ सार ॥’⁵

माघ में दिन रात तुपार पड़ रहा है, किसी भीति जाड़ा नहीं छूटता। वन में गोपियाँ तुपार में मर रही हैं सार सुपेती तो हिमालय हो गई हैं। घन्या अपने पुरुषों के लिए सजती हैं गले लगाकर सर्दी को दूर भगाती हैं। हमारी सेज हिमाँ चल की तरह बर्फानी हो गई है।

1 कृष्णवत पृ 314/1-9

2 ' 315/1-7

3 316/1-9

4 317/1-9

318/1-9

“को कुदिष्टि जान हरि केरी । सोत कीह जो कुवजा चेरी ॥
हम दुहाग ओहि दीन्ह सोहागू । भए दिन ओछ फिरा अस भागू ॥¹

फागुन में चोगुनी सर्दी पड़ रही है जाड़ा सोचता पर कह नहीं थाए ।
पवन झिरकता है, हृदय काप उठता है । तिल तिल रात घट रही है, दिन बढ
रहा है, हमारे प्रिय मधुवन म अलोप २, उनका स्मरण करके गोपियाँ झूर रही
है । जिनके घर म कान्त हैं, वे फाग खेलती है, सिगार करती हैं, सिर मे सिद्धर
लगाती हैं, हमारे लिए सिद्धर घूल क समान हो गया है —

‘चन्दन अगर, कुमकुमाँ, सब काइ खोरे देह ।
काह पाछि सब गोपी, जनु सिरमेलहि खेह ॥³

ईश्वर चंद्र में उह ही जाड़ा दे, जिनके घर मे सज हो, भोग सुख हो ।
सभी स्त्रियाँ वसत श्रुतु मे हपित होती हैं, मधुवन से अपने घरों मे फूल ले
आती हैं, कुसुम कलियो स सज विद्याती है और अब तो कुवजा के भाग्य मे सुख
है, हमारे माथे दुख है हमारे लिए तो सेज अग्नि के ममान दाहक हो गई है,
वसत तो तभी अच्छा लगता है जब बिहस कर का त घर आयें ।³

वैशाख म सूय अधिक गम हो गया, च द्रा और राधा झूर रही हैं सोलह
सहस्र गोपियाँ श्री कान्त के अभाव मे कोतुक भूल गई हैं । हमारे लिए तो अगर
अग्नि हो गया है, वस्त्र अगारे हो गए हैं ।

जेठ जीवु अब पिय बिनु नाही । होइ घाम जनु लूक पगही ।
परै वजासन बर्हाहि सुवारा । पिय बिनु जरै सेज न सुवनारा ।
भूहर भुइ धिक दबि होई रही । उठै जठार तन जाइ न सही ।
पिठ जो मिलहि घरै मन पूरा । नतु जरि होब छार कर कूरा ।
अबहूँ जोरे काह चलि आवाइ । नसम समेटहि अग्नि बुझावाइ ।
अग्नि जरहि दगध जाइ गोपी । ऊधो मधुवन रहे अलोपी ।
जरहि प्रागि हिय उर सब जरई । बिनु रे काह को सीतल करई ।
“पूज अवधि बड़े दिन, कनु नहि जाए पास ।

तपति सहत सब गोपिहि, बीते वरहो मास ॥⁴

यही जेठ महीने की प्रतपन प्रकृति का परिदृश्य चित्रित है, साथ ही उसका
विमोचिनी पर पडने वाला प्रभाव भी अंकित है ।

1 कन्हावत पृ 319/1/9

2 कन्हावत पृ 320/1/9

3 कन्हावत पृ 321/1/9

4 कन्हावत पृ 323/1/9

कहावत के विरह वणन की बहुत बड़ी विशेषता यह है कि कवि ने अत्यन्त सहज रूप में विरह के मार्मिक भावा की तीव्र अभिव्यक्ति की है। एक उदाहरण इस तीव्रता और प्रभविष्णुता का प्रदर्शन के लिए पर्याप्त होगा।

“का तुम्हारे हम अवगुन कीही। बेहि कारन पट अतर दीहा ॥
हीया बीच न रसतर्हि हारा। अब होइ रहे जउन के पारा ॥
बिनवइ रनि अकेलेउ करी। बिनु प्रिय रनि, फाटिहिय मरी ॥
औ जोवन धन वरस अढ़ाई। भोग बार का अवधि बुढ़ाई ॥
आउ देखु जस मरण हमारा। कहि कहि सोऊं करहि सभारा ॥
काह देखाइ के काह देनामहु। प्रीति रगाइ आग तन लायहु ॥
प्रेम चिनगि सुलुगे तस हिया। जनु लेसती पाल निसि दिया ॥
कत जरैहि बिरहैं सब गापी। आंग के ओप क्या सब ओपी ॥
धुवां न पावै परगट होई। मुहके भार दायै सब कोई ॥
षट्पावली कहै जस राहौ। राही जरै अधिक दुख माहौ ॥
चिनगि एक बाहरि होइ पर। घरती दाह सरग पुनि जरै ॥
हौं सबो अस रायट, चलि आवहु रघुनाथ।
जस सुहाइ अस मारहु हमहि जाहु लेई साथ ॥”

कहावत का विरह वणन पूणत स्वाभाविक बन पडा है। कवि ने बड़े कौशल से इस अवसर पर “पवन दूत” का आयोजन किया है। पवन गोपियों का सन्देश लेकर कृष्ण के पास जाता है, कृष्ण कुशल पूछते हैं और पवन गोपियों की वधा का वणन करता है और कृष्ण गोपियों से मिलन के लिए व्यवस्था करते हैं।

कहावत का महाकाव्यत्व

मूलतः “कहावत” एक थ्रूट कोटि का भागवत काव्य है। जायसी ने इसकी रचना एक विशिष्ट परम्परा प्रथित शली में की है। इसमें अलौकिक और अपारत तत्व भी हैं। कथा के नायक पूण कलावतारी कृष्ण हैं। इसमें अनेक कथानक कडियों और कवि समयों का दर्शन होते हैं। यह एक प्रकथन प्रधान महाकाव्य भी कहा जा सकता है। इसमें अनेक रोमांटिक तत्व भी हैं। कवि का उद्देश्य महान है। शली साहित्यिक और उदात्त है। कथा का आधार पौराणिक सो व्याप्त है। इसकी कथा में एव विशिष्ट सुश्रुतला भी है, इस कथा प्रधान काव्य हम रोमांचक शली का महाकाव्य भी कह सकते हैं। वस्तुतः प्रथम काव्य के क्षेत्र में महावत, पद्मावत और राम चरित मानस हिंदी के थ्रूट काव्य हैं।

उदात्त कथा

कन्हारवत में कृष्ण के जन्म से लेकर उनकी मृत्यु तक उनके विविध कर्तव्यों को उल्लेख किया है। कृष्ण कथा का हिन्दी में प्रायः मुक्ताकात्मक स्वरूप ही मिलता है, पर जायसी ने कन्हारवत की रचना प्रबन्ध-आत्मक रूप में की है। मथुरा का राजा कंस, उसका वैभव, उसके अत्याचार, कृष्ण का जन्म, उनकी गोकुल की लीलाएँ अनेक राक्षसों व मन्त्रियों के वध, उनके अनेक आलौकिक काय, कंस का वध आदि का इसमें सविस्तार वर्णन है। इसकी कथा पर्याप्त विस्तृत एवं व्यापक है। इसमें हम पौराणिक कृष्ण विषयक आख्यानों, लोक विश्रुत आख्यानों के साथ ही जायसी का कल्पना विलास भी मिलता है। यद्यपि सम्पूर्ण कथा का विभाजन खण्डों में नहीं किया गया है, इसमें संग भी नहीं दिये गये हैं। तथापि पूरे काव्य को पढ़ने पर ज्ञात होता है कि यदि इसका खण्ड विभाजन करना हो तो इसमें सहज ही निम्नानुसार खण्ड उपलब्ध हो सकते हैं

- | | |
|------------------------------|--|
| (1) स्तुति खण्ड | (2) कह जन्म खण्ड |
| (3) पाताल खण्ड | (4) चन्द्रावली खण्ड, |
| (5) पूतगा वध खण्ड, | (6) दानी खण्ड |
| (7) नद्य - शिक्ष वर्णन खण्ड, | (8) कंस वध खण्ड, |
| (9) षटश्रुतु वर्णन खण्ड, | (10) राधा-चन्द्रा विवाद खण्ड, |
| (11) पवन दूत खण्ड | (12) कुवजा खण्ड, |
| (13) राधा-गोपी वियोग खण्ड, | (14) गोस्वयं कह विवाद खण्ड,
प्रभृति |

कुल 58 खण्ड मिल जायेंगे।

पदमावत के विभिन्न सम्पादित पाठों को पढ़ने पर ज्ञात होता है कि सर जाज प्रियसन और प रामचन्द्र शुक्ल के सम्पादित पाठों में खण्डों का विभाजन दिया गया है। डा वासुदेवशरण अग्रवाल ने 'खण्ड विभाजन' का सुविधा के लिए मान लिया है। डॉ माताप्रसाद गुप्त ने पदमावत का सम्पादन अत्यन्त परिश्रमपूर्वक किया है उन्होंने पदमावत में खण्ड विभाजन नहीं दिया है। उन्होंने बड़ी दृढ़ता के साथ खण्ड विभाजन को अस्वीकार कर दिया है।

समझ लें यही स्थिति कन्हारवत की भी है। कन्हारवत के सम्पादक ने लिखा है कि 'जन्म से प्राप्त कन्हारवत की हस्तलिखित प्रति में खण्ड विभाजन मिलता है।'¹ अन्य 'प्र च' में भी खण्ड विभाजन प्रायः नहीं है। फिर भी प्र च म

1 कन्हारवत (जायसी वृत्त) व डॉ शिव सहाय पाठक पृ 63 भूमिका

शीघ्रता या सुरिधो न रूप म रही कही खण्डा के नाम दिये गए हैं। 'ऐसे 12 खण्डों के नाम भी उ हान गिलाए हैं। प्र स म भी प्राय खण्ड विभाजन नहीं है, पर उद्यम भी आठ स्थलों पर खण्डा के नाम दिये गए हैं।'¹

उपरोक्त तथ्यों पर विचार करने से कई महत्त्वपूर्ण निष्कर्ष निकलते हैं। कथावत की अब तक प्राप्त तीन हस्तलिखित प्रतियों ने केवल एक खण्ड बारह मासा का शीघ्रक लगभग समान है।

कथा

दण्डी न सम्भवतः भामह के पद्यतन्त्र को दृष्टिगोचर म रखाकर ही कथा या कि कथा और आख्यायिका म कोई विशेष अंतर नहीं होता। दोनों एक ही श्रेणी की रचनाएँ हैं। नायक कह या कोई अर्थ अर्थ अध्याय का विभाजन हो या न हो, अध्यायों का नाम उपखण्ड रखा जाय या न रखा जाय, इससे कहानी" म क्या अंतर आता है।² आचार्य भामह न अपने समय म उपरोक्त संस्कृत गद्य की कथाओं के साथ ही प्राकृत और अपभ्रंश म लिखी कथाओं को भी देखा था। उनके पहले ही बहूतकथा ना उपाति मिल चुकी थी। रुद्रट न कथालंकार म स्पष्ट लिखा है कि संस्कृत मे निबद्ध कथाओं के लिए गद्य मे लिखने का व धन है, अर्थ भाषाओं से कथा पद्य मे भी लिखी जा सकती है। अर्थ भाषाओं से रुद्रट का आशय प्राकृत और अपभ्रंश से है। नमि साधु न अपनी टीका म लिखा था। अर्थ भाषाओं का अर्थ है प्राकृत आदि भाषाएँ उन्हे अगद्य पद्य अर्थात् भाषाओं मे कथा लिखी जानी चाहिए।

प्राकृत और अपभ्रंश मे 'अगद्य' अर्थात् पद्य मे गाथाएँ लिखी गईं। इसकी सन् की सातवीं आठवीं शताब्दी म ही इस प्रकार का काव्य, कथा काव्य मिलन लगता है।

रुद्रट ने कथा और महाकाव्य के लक्षण इस प्रकार लिखे हैं

दशकमही कथाया मिच्छान् देवान् युक् नमस्कृत्य ।

सशोण निजकुलमभिदस्या स्त्वं च कत तथा ॥

सानु प्राप्तेन ततो लघ्वश्वरेण गद्य न ।

रचयत् कथा शरीर पुरेव प्रलणक प्रम तीन ॥

1 कथावत (जानकी इत) स डॉ चित्र सहाय
दण्डी-काव्यान्त-1/23/28

आदो कवान्तर वा तस्यो यस्यत प्रपविबत सम्मन ।
 जघु तारत स धान प्रत्रा कथा वतागय ।
 कयासाभ फला वा सम्मग वि यस्य सरल श्रु गारम् ।
 इति प्रस्कृतेन कुर्यात् कथा मगद्येन या वन ॥¹

हद्रेट ने अपन युग तरु के इस प्रकार के साहित्य को देख समझकर ही इन नियमों का लिखा था। हद्रेट के पूर्व यौ 'लीलावती' नामक कथा में ये सभी मक्षण मिलते हैं।

जायसी ने पद्मावत चित्ररेखा जोर के हावत में भी कथा शब्द का प्रयोग किया है—

'सिंहल दीप कथा अब गाओ
 ओ सा पद्मिनि बरनि सुनाओ ॥'²

पद्मावत की कथा को उठोने गाथा भी कहा है—

आदि अन्त अस गाथा अत्र
 लिखि भान्ना चारार्ड कह ॥³
 सुनउ कथा जस अत्रित बानी ।
 जहाँ चित्रग्या यह रानी ॥⁴

कहावत में जायसी ने अनेक बार 'कथा' शब्द का प्रयोग किया है—

ना मैं कहा अमिय खण्ड गाऊँ ।
 कहूँ कथा करि मयहि सुनाऊँ ॥⁵
 कहूँ के कथा लाव मह एती ।
 सरग नरवन ताराइन जेती ॥⁶
 कथा कहौ सुनहु अब साई ।
 कहत रसान सुनत सुग दोई ॥⁷

पद्मावत चित्ररेखा आर कहावत में कवि ने कहानी शब्द का भी प्रयोग किया है

- 1 दण्डी-नाट्यान्व - 1/23/28
- 2 पद्मावत सिंहल दीप कथन खण्ड 1/1
- 3 पद्मावत स्तुतीखण्ड का अन्तिम छंद
- 4 चित्ररेखा स डों शिवसहाय पाठक पृ 78
- 5 पद्मावत स डों शिवसहाय पाठक पृ 11
- 6 कहावत-स डों शिवसहाय पाठक पृ 12
- 7 , वही पृ 14

'अह चित्ररेखा कीर गू कहानी
लिखे चित्र कीर रचन बानी ॥'¹
'अदस प्रेम कहानी, दासिर जग मह नाहि ।
तुफकी अरबी फारसी सब देखऊँ अबगाहि ॥'²
'केह न जगत जम वेचा ।
केह न जगन जस मोल ॥
जो यह मुने कहानी ।
हस मुमिरे दुई बोल ॥'³
केउ न रहा जग रही कहानी ॥'⁴

इस प्रकार स्पष्ट है कि जायसी न अपने काव्यों को कथा और कहानी की श्रेणी में रखा है। निश्चय ही—कहावन—कथा है—'कथा-काव्य' है—'प्रकथन प्रधान काव्य' है।

कवि ने इसमें कृष्ण का आक्षेपान किया है और इस काव्य में कथा आख्यान आख्यायिका के बहिष्कार मिल जाते हैं।

फारसी, मगनवी और भारतीय कथा आख्यायिका एवम् महाकाव्य में ऐसे अनेक लक्षण मिलते हैं जो समान हैं अपभ्रंश में ऐसे अनेक काव्य हैं जिनमें ईश्वर स्तुति, गुरु स्तवन पूर्ववर्ती कवियों का स्मरण आदि उपलब्ध हैं। समसामयिक गायन का उल्लेख या उसकी प्रशंसा भी अपभ्रंश काव्यों में उपलब्ध है, कवि प्रपना परिचय भी देता है।

प रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि "प्रबन्ध काव्य में मानव जीवन का एक पूरा दृश्य होता है उसमें घटनाओं की सम्बन्ध शृंखला और स्वाभाविक क्रम के ठीक ठीक निर्वाह के साथ साथ हृदय को स्पष्ट करने वाले—नाना प्रकार के भावों का रसात्मक अनुभव करने वाले प्रसंगों का समावेश होना चाहिए। इस इतिवृत्त मात्र के निर्वाह और व्यापारों का प्रतिबिम्बित चित्रण होना चाहिए जो श्रोता के हृदय में रसात्मक तरंगें उत्पन्न में समय हों।"⁵

कहावत की कथावस्तु से स्पष्ट है कि कवि ने कृष्ण के जीवन का एक पूरा दृश्य उपस्थित किया है। उसमें घटनाएँ सुगुंजल और अत्यन्त स्वाभाविक क्रम में विद्यमान हैं। उसमें हृदय को स्पष्ट करने वाले एक से एक सुन्दर मनोरम स्थल हैं।

1 चित्ररेखा स हाँ निवसहाय पाठन
2 कहावत - स हाँ निवसहाय पाठक - पृ 12

3 पदमावत - उपसहार पृष्ठ 2

4 वही पृ 3, 8 9

जायसी काव्य-विशेष रामचन्द्र शुक्ल-पृ 53 भूमिका

कवि ने ऐसी वस्तुओं और व्यापारों का चित्रण अकन किया है जो किसी भी श्रोता या पाठक के हृदय में रसात्मक तरंगें उठान में समर्थ है।

उसकी प्रकथन प्रधान पक्तियों में भी रसिकता आ गई है। कवि ने कृष्ण जीवन के बड़े-बड़े ममस्पर्शी स्थलों का चयन और चित्रण किया है— कृष्ण की बाल क्रीड़ाएँ असुरों का वध कन वध, गोपियों के प्रति प्रेम, चन्द्रावली राधा के प्रेम प्रसंग और उसकी सयोगावस्था, गोपियों का विरह आदि बड़े अगाध गम्भीर भाव प्रवण और रसात्मक स्थल हैं। तथा सुश्रु खल एवं सम्बन्ध निर्वाह की दृष्टि से कवि पूणत सफल है।

कहावत की पूरी कथा में स्पष्ट है कि उसका विषय व्यापक और महान् है। इस कृष्ण कथा में काव्यात्मक शोभन तथा उत्तम विकास मिलता है, अस्तु ने जावन्त कथा में आदि, मध्य और अन्त के सर्वांग के समानुपातिक विकास को महत्व दिया था। कहावत में इस समानुपातिक विकास का बड़ा सुन्दर रूप दृश्य है।

कहावत की कथा में प्रारम्भ, प्रयत्न, प्रत्यागा नियताप्ति और फलागम-पाचो कायावस्था के साथ मुख, प्रतिमुख, गम विमर्श और निवाहण पाँचा सर्धियों की भी सुन्दर योजना मिलती है। कहावत के अन्त में नियताप्ति और फलागम को प्रत्यक्ष रूप में न दिखलाकर कवि ने निगति और अवसान नामक अवस्थाओं का चित्रण किया है। इस प्रकार का अन्त गानहनामा शीरी परहाद, शीरी खुसरो, जसी फारसी मसबियों में भी मिलता है। मार्मिक परिस्थितियों के विवरण और चित्रण के लिए घटनावली का जो विराम पहले कह आये हैं वह तो काव्य के लिए अत्यन्त आवश्यक विराम है क्योंकि उसी से सारे प्रबंध में रसात्मकता आती है। जायसी का सम्बन्ध निर्वाह अच्छा है। एक प्रसंग से दूसरे प्रसंग की श्रु खला बराबर लगी है। कथा प्रवाह खण्डित और सुश्रु खलित है। इस प्रकार अस्तु की कार्यावली और पाश्चात्य देशीय कार्यावस्थाओं की कसौटी पर कहावत पूणत खरा उतरता है। कहावत में कोई भी घटना कथा की दृष्टि से अनावश्यक नहीं है। सभी घटनाएँ और प्रसंग एक दूसरे से कार्य कारण श्रु खला में बंधे हैं। प्रत्येक घटना कथा प्रवाह में योग देती है। कहावत का कथानक पूणत सुसघटित कलात्मक और अचिन्ति युक्त है।

कहावत के नायक साक्षात् भगवान् कृष्ण हैं। भगवान् कृष्ण सोलह कला सम्पन्न रसेन अवतारी हैं। इनका चरित्र भारतीय चरित्र कोष में अपना प्रतिमान नहीं रखता है। वे माधुर्य, श्रु मार, ओज बीर नीति, स्थैर्य, दय, गम्भीर, औदार्य गीय विनय प्रभृति ममस्त बशिष्टों से मण्डित हैं। वे धीरोदात्त हैं। परम ललित हैं समुद्रवत प्रगान् हिम गिरिवन महान् अचल एवम् दृढ़ हैं। वे महासत्य वति गम्भीर, क्षमाशील और दुष्ट दलनकर्ता भी हैं। वे परम आदर्श प्रेमी हैं,

ही सर्वेश्वर महायोगी भी हैं। वे परम प्रेमी और परम त्यागी भी हैं। राधा चन्द्रावली तथा अथ सोलह सहस्र गीतियाँ उनकी स्वकीयाएँ हैं। प्रेमिका के रूप में राधा और चन्द्रापरम दिव्य प्रेम की प्रतीक हैं।

रसात्मकता महाकाव्य का एक अति आवश्यक गुण धर्म है। ब्रह्मावत में प्रमुखतः रति भाव की व्यञ्जना हुई है अतः इसमें उदात्त फीटि का शृंगार रस प्रवाहमान है। उसकी कथा के अन्त में मानो गीत रस प्रत्यक्ष रूप धारण करके उपस्थित हो गया है, स्थल स्थल पर कृष्ण, वीर, वीरत्स प्रभृति रसों का भी सुन्दर आनन्द मिलता है। अतिम रूप्य, जिसमें श्रीकृष्ण राजपाट रनिवास आदि छोड़कर द्वारका के लिये चल पड़ते हैं — म कृष्ण प्लवित, शान रस की उत्तम अभिव्यक्ति हुई है। वहाँ निर्वेद सुन्दर निखार पा सकता है। उसमें अत्यन्त शांतिपूर्ण उदासीनता अनुस्यूत है। इतना होने के बावजूद प्रेम और रति भाव का प्रावाय होने के कारण में उस शृंगार रस प्रधान महाकाव्य मानती हैं। गीतियों के विरह वणन में विप्रसम्भ शृंगार का चरम उभेय है। शृंगार के सयोग एवं वियोग दोनों के एक से एक सुन्दर चित्र ब्रह्मावत में दशनीय हैं। गीतियों के विरह में जायसी एक महान कलाकार के रूप में उपस्थित हुए हैं। ब्रह्मावत में जीवन के अनेक प्रयोग व प्रकृति के विविध रूपों के विनाद कलात्मक एवं प्रभविष्णु वणन मिलते हैं। ब्रह्मावत में मथुरा नगर, अनेक राक्षसों के वध, कंस का अगाधा नारद सूक्त कंस सवाद चन्द्रावली कृष्ण प्रसंग, राधा कृष्ण प्रसंग, चाणूर आदि का वध कंस वध, कुबजा प्रसंग, पवन दूत पट श्वेतु वणन, बारह मासा वणन यमुना में नौका विहार विविध वस्तुओं के वणन की योजना करते हुए जपन काव्य कौशल का परिचय दिया है। मथुरा नगर वणन के अंतर्गत अमरार्क, कुवा हाट-बाट, सरोवर दुग साईं आदि के वस्तु वणनों का समावेश है। इन वस्तु वणन में अविध्य, विस्तृति अलङ्कृति आदि विद्यमान हैं। नगर, दुग यात्रा मन्त्रणा जन ब्रीडा दूत युद्ध पुत्रोदय, विवाह विरह, सयोग आदि के वणन में एक युग का समय रूप चित्रित हुआ गया है। इन वणनों में यद्यपि कहीं कहीं अनावश्यक विस्तार लक्षित होता है फिर भी इनमें कथा में रसात्मकता और सौन्दर्य की निष्पत्ति होती है।

ब्रह्मावत में कंस-वध महत्त्वपूर्ण काव्य है। कंस के अत्याचार से ससार नस्त था। भगवान् विष्णु ने कृष्ण के रूप में अवतार लिया और कंस का वध कर दिया। रामचरित मानस में रावण का वध और ब्रह्मावत में कंस का वध महत्त्व काव्य है। नैतिक, सामाजिक एवं धार्मिक दृष्टि में सबभूत यह महत्त्व काव्य है।

महाकाव्य में भाषा शैली की गरिमा आवश्यक है। महत्त्व विषय प्रतिपादन और उदात्त भावों की सुष्ठ व्यञ्जना के लिये भाषा और शिल्पगत कुशलता आवश्यक है। यद्यपि तो यह है कि ब्रह्मावत में पद्मावत की भाँति महाकाव्य,

चरितकाव्य व मसनवियों के तत्त्वों का समावेश व समन्वय मिलता है। इसी कारण कहावत में इन तीनों शक्तियों का गरिमामय रूप सुगुम्फित है। भाषा सवत्र व्याकरण सम्मत, माधुर्य पूरित, लोकोक्तियों व कहावतों, सुक्तियों, अलंकारों से सम्बलित अबधी है। इसमें आद्यात दोहा चौपाई की कडवक पद्धति अपनाई गई है। सात अर्द्धालियों के पश्चात् एक दोहा का उसमें विधान किया गया है। कथा कहने की शक्ती अत्यन्त स्वाभाविक प्रवाहमयी एवं प्रमत्तिष्णु है। कहावत के कवि का उद्देश्य महान है उसमें शिव या लोक मंगल का प्राधान्य है, साथ ही काम तत्त्व भी उसमें विद्यमान है। उसमें अवतारी भगवान की मानवता के उस सच्चे रूप का उद्घाटन है जो प्रेम, उदारता, साहस, सहिष्णुता, बलिदान और त्याग की व्यापक भूमिका पर प्रतिष्ठित है। प रामचंद्र शुक्ल का कथन है कि—“एक ही गुप्त तार मनुष्य माय हृदयों से होता हुआ गया है जिसे छूते ही मनुष्य सारे बाहरी रूप रंग के भेदों की जोर से ध्यान हटा एकत्व का अनुभव करने लगता है।” जायसी ने अपने महान उद्देश्य की पूर्ति के लिए उसी गुप्त तार को शकून करके मनुष्यमात्र के चाह वह जिस जाति, धर्म या वर्ग का हो हृदय को जागृत और प्रेम-प्लावित करने प्रयत्न किया है।

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये उन्होंने मानव की रागात्मक वृत्ति काम को व्यापक अर्थों में गृहीत किया है। इसी के माध्यम से जायसी ने प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृष्य उपस्थापित किया है। उन्होंने हिन्दू और मुसलमानों के बीच की दूरी को स्नेहामृत से भरकर एकत्व की प्रतिष्ठा की है। इसीलिये जायसी के अध्यात्मवाद के अंतराल में उदार और प्रेम प्रवण मानवतावाद की सरस्वती प्रवाहित हो रही है। इस प्रकार मानवतावाद की प्रतिष्ठा जाति, धर्म आदि की कृत्रिम दीवारों को तोड़कर मानव मात्र को एक सूत्र में बाँधना ही कहावत का उद्देश्य है और जायसी अपने इस उद्देश्य की पूर्ति में सफल हुए हैं।

सांस्कृतिक संक्रमण वाले मध्ययुग में उन्होंने धार्मिक, दार्शनिक, सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में विराट, समन्वय करके बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका का निवाह किया है। आधुनिक भारतीय जीवन (और विशेषकर हिन्दू मुस्लिम जीवन) के अनेक सद्गम में जायसी हिन्दू मुस्लिम सभ्यताओं के अमर सतु और सवश्रेष्ठ समन्वयकर्त्ता के रूप में उपस्थित हुए हैं। उनका जीवन और कृत्य इन दोनों सभ्यताओं का पावन सगम है

“परमट भेस गोपाल गोविन्द । गुप्त गियान न तुख्क न हिन्दू ॥

— कहावत’

महती प्रतिभा सम्पन्न कवि जब किसी महत्त शक्तिमय प्रेरणा से उद्वेगित और अभिभूत होता है तो यह महाकाव्य की सजना में प्रवृत्त होता है। महाकवि मार्मिक स्थलों का सुंदर विधान करता चलता है। वह जीवन के मनस्पर्शी

प्रसंगों का पारखी होता है। ये ममस्पर्शी चित्रण मानव हृदय से रागात्मिका वृत्ति को जागृत कर देते हैं। महाकवि क प्रबन्ध रस से निरस पद्यों में भी रसवत्ता आ जाती है।

कहावत के घटनाचक्र के अंतर्गत ऐसे स्थलों का पूरा सन्निवेश है, जो मानव की रागात्मिका वृत्ति को उद्बोधित कर देते हैं, उसके हृदय को भाव मग्न कर देते हैं। जायसी ने वस्तु-वर्णन के रूप में और पात्र द्वारा भाव व्यंजना के रूप में इन प्रसंगों को कथा प्रवाह के रूप में रखा है। वस्तुतः कथावस्तु की गति इन्हीं स्थलों तक पहुँचने के लिए होती है। कहावत में ऐसे अनक स्थल हैं। इनमें कई अत्यंत अगाध और गम्भीर हैं। उन्होंने कृष्ण चरित के ममस्पर्शी स्थलों का चुनाव करके अपने हृदय का समस्त रस उडेलकर कहावत को रसमय बनाया है। राधा रूप सौ दय और राधा गोपी विरह वर्णनों में उनकी काव्य प्रतिभा के बहु विध आयाम मिल जाते हैं। हिंदी में कहावत को कृष्ण विषयक प्रथम महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है। उसमें जायसी का गम्भीर जावन दर्शन, उनकी सशक्त प्राणवत्ता मौलिकता उनका उदात्त प्रेम सन्देश, लोक भाषा अवधि का पूण निखार उनका मानवतावाद एवं उनकी लोक मंगल की भावना का उत्तम रूप मिलता है। कहावत को हिन्दी में श्रेष्ठ महाकाव्य के रूप में समाहित किया जाएगा।

मसनवी-शैली —

मूलतः मसनवी फारसी साहित्य की एक काव्य शैली है। 'मसनवी' शब्द का व्यवहार बड़े काव्य के लिये किया जाता रहा है। मसनवी के छंदों में प्रत्येक पद अपने में पूण होते हैं व तुकान्त होते हैं। आकार में बड़ा काव्य (कहावत) होने के कारण कवि को पूरी स्वतंत्रता बरतने का सुयोग प्राप्त हुआ है, प्रेमाध्यान, धार्मिक तथा उपदेशात्मक काव्यों के लिये मसनवी का ही सहारा लिया गया है। मसनवी अपने आप में एक पूण ग्रन्थ होता है। इस ग्रन्थ का एक विशेष नाम होता है। प्रेमाध्यानक कवियों ने अपने ग्रन्थों के नाम उसके नायक नायिका के नाम पर रखे हैं जैसे 'साकी नामा'। इसमें साकी का ही नाना भाव रूपों में वर्णन होता है। शराब के दीर की चर्चा होती है। ये ग्रन्थ प्रतीकात्मक हो सकते हैं जिसमें शराब को किसी आध्यात्मिक भाव का प्रतीक माना गया हो। नायक नायिका के आधार पर भी कई ग्रन्थों का नामकरण हुआ है—जैसे 'सुसूफ जुलेखा' 'सुसरो धीरी' आदि। इन ग्रन्थों में ऐसे भी हैं जिनके नाम पूण रूप से कल्पनित हैं और उनमें धार्मिक उपदेश देने की प्रवृत्ति की प्रधानता है। साधारणतया मसनवी सगबद्ध काव्य है। पहले सग में परमात्मा का गुणगान रहता है। दूसरे में पगम्बर को स्मरण किया जाता है। तीसरे में पगम्बर के 'मीराज' की चर्चा रहती है। उसने बाल साधारणतः घासन करने वाले सुल्तान, शाहें बक्त की

प्रशंसा रहती है अथवा किसी महान व्यक्ति की तारीफ रहती है, जिसे कवि उस ग्रंथ को समर्पण करता है। इसके बाद कुछ इस प्रकार का वणन रहता है कि किस उद्देश्य से अथवा किसी मित्र की प्रेरणा से कवि ने उस काव्य ग्रंथ का प्रणयन किया। इस सर्ग का शीपक भी वह कुछ इसी प्रकार का देता है। इसके बाद ही मूल काव्य ग्रंथ का प्रारम्भ होता है। इस ग्रंथ के खण्ड या विभाग होते हैं और फिर ये विभाग या खण्ड सगबद्ध किये जाते हैं। प्रत्येक सग के ऊपर उस सग में वर्णित विषय का संकेत साधारणतः फारसी भाषा में दिया हुआ रहता है। अन्त में कवि एक उपसंहार से ग्रंथ समाप्त करता है।¹ मसनवी के कुछ विशिष्ट लक्षण इस प्रकार हैं

- 1- मसनवी में छन्द स्वतः पूरा होता है। वाक्य रचना के दृष्टिकोण से उसमें पूर्ण वाक्य आता है।
- 2- उसकी दोनो अद्व लियों में समान अत्यानुप्रास गुणयुक्त होता है।
- 3- यह प्रकयन प्रधान होता है। इसका विषय कथा प्रधान होता है और उस कथा में विविध प्रकार के विषयों के सागोपाग वणन मिलते हैं।
- 4- कथा के प्रारम्भ में ईश्वर, पैगम्बर मुहम्मद, मुहम्मद के मित्र, कवि के गुरु और सामयिक राजा की प्रशंसा की जाती है।
- 5- इसके पश्चात् कवि अपनी रचना का सश्टीकरण करता है।
- 6- साधारणतः छन्दों का परिवर्तन नहीं होता।
- 7- पाँच या सात छन्दों के अनन्तर एक व्रत रहता है।
- 8- उसमें सामी सश्रुति (समेटिक क्लब) का प्राधान्य भी कभी-कभी प्रदर्शित किया जाता है।

फारसी की मसनवियों में जिन छन्दों का प्रयोग किया जाता है उनका उपयोग हिन्दी के प्रेमास्थानों में नहीं हुआ है।

मसनवी की दो अद्व लियाँ परस्पर तुल्य होती हैं। इसमें सम्झाई का निश्चित निर्धारण नहीं होता है तथा प्रारम्भ से अन्त तक एक ही छन्द होता है। प्रायः उसमें परिवर्तन नहीं होता। कवि इस बात के लिए स्वतंत्र होता है कि वह सात छन्दों की मसनवी लिखे अथवा वह इसे सात हजार छन्दों तक बढ़ाये। विषय निर्वाचन करने में भी कवि स्वतंत्र होता है। पौराणिक, धार्मिक, दार्शनिक, रहस्यवादी आदि कोई भी किसी भी विषय का चयन किया जा सकता है।²

1 फारसी साहित्य का इतिहास - डॉ. अख्तर हिकमत पृ 153

प्रसंगों का पारखी होता है। ये ममस्पर्शी चित्रण मानव हृदय से रागात्मिका वृत्ति को जागृत कर देते हैं। महाकवि के प्रबंध रस से निरस पद्यों में भी रसवत्ता आ जाती है।

कहावत के घटनाचक्र के अंतर्गत ऐसे स्थलों का पूरा सन्निवेश है, जो मानव की रागात्मिका वृत्ति को उद्बोधित कर देते हैं, उसके हृदय को भाव मान कर देते हैं। जायसी ने वस्तु-वर्णन के रूप में और पात्र द्वारा भाव व्यञ्जना के रूप में इन प्रसंगों को क्या प्रवाह के रूप में रचा है। वस्तुतः कथावस्तु की गति इन्हीं स्थलों तक पहुँचने के लिए होती है। कहावत में ऐसे अनेक स्थल हैं। इनमें कई अत्यंत अगाध और गम्भीर हैं। उन्होंने कृष्ण चरित के ममस्पर्शी स्थलों का चुनाव करके अपने हृदय का समस्त रस उडेलकर कहावत को रसमय बनाया है। राधा रूप सौंदर्य और राधा गोपी विरह वर्णनों में उनकी काव्य प्रतिभा के बहु-विध आयाम मिल जाते हैं। हिंदी में कहावत को कृष्ण विषयक प्रथम महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है। उसमें जायसी का गम्भीर जीवन दर्शन, उनकी सगत्त प्राणवत्ता मौलिकता उनका उदात्त प्रेम संदेश, लोक भाषा अवधि का पूण निखार उनका मानवतावाद एवं उनकी लोक मंगल की भावना का उत्तम रूप मिलता है। कहावत को हिंदी में श्रेष्ठ महाकाव्य के रूप में समाहित किया जाएगा।

मसनवी-शैली —

मूलतः मसनवी फारसी साहित्य की एक काव्य शैली है। 'मसनवी' शब्द का व्यवहार बड़े काव्य के लिये किया जाता रहा है। मसनवी के छंदों में प्रत्येक पद अपने में पूण होते हैं व तुकान्त हाते हैं। आकार में बड़ा काव्य (कहावत) होने के कारण कवि को पूरी स्वतंत्रता बरतने का सुयोग प्राप्त हुआ है, प्रेमाख्यान, धार्मिक तथा उपदेशात्मक काव्यों के लिये मसनवी का ही सहारा लिया गया है। मसनवी अपने आप में एक पूण ग्रंथ होता है। इस ग्रंथ का एक विशेष नाम होता है। प्रेमाख्यानक कवियों ने अपने ग्रंथों के नाम उसके नायक नायिका के नाम पर रखे हैं जैसे 'साकी नामा'। इसमें साकी का ही नाना भाव रूपों में वर्णन होता है। शरारत के दौर की चर्चा होती है। ये ग्रंथ प्रतीकात्मक हो सकते हैं जिसमें शरारत को किसी आध्यात्मिक भाव का प्रतीक माना गया हो। नायक नायिका के आधार पर भी कई ग्रंथों का नामकरण हुआ है—जैसे 'युसुफ जुलेखा' 'सुमरो धीरी' आदि। इन ग्रंथों में ऐसे भी हैं जिनका नाम पूण रूप से काल्पनिक है और उनमें धार्मिक उपदेश देने की प्रवृत्ति की प्रधानता है। साधारणतया मसनवी सगबद्ध काव्य है। पहले सग में परमात्मा का गुणगान रहता है। दूसरे में परमेश्वर को स्मरण किया जाता है। तीसरे में परमेश्वर के 'मीराज' की चर्चा रहती है। उसके बाद साधारणतः शासन करने वाले सुल्तान, शाही बक्त की

प्रशंसा रहती है अथवा किसी महान व्यक्ति की तारीफ रहती है, जिसे कवि उस ग्रंथ को समर्पण करता है। इसके बाद कुछ इस प्रकार का वर्णन रहता है कि किस उद्देश्य से अथवा किसी मित्र की प्रेरणा से कवि ने उस काव्य ग्रन्थ का प्रणयन किया। इस सग का शीपक भी वह कुछ इसी प्रकार का होता है। इसके बाद ही मूल काव्य ग्रंथ का प्रारम्भ होता है। इस ग्रंथ के खण्ड या विभाग होते हैं और फिर ये विभाग या खण्ड सगबद्ध किये जाते हैं। प्रत्येक सग के ऊपर उस सग में वर्णित विषय का संकेत साधारणतः फारसी भाषा में दिया हुआ रहता है। अन्त में कवि एक उपसंहार से ग्रंथ समाप्त करता है।¹ मसनवी के कुछ विशिष्ट लक्षण इस प्रकार हैं

- 1- मसनवी में छन्द स्वतः पूर्ण होता है। वाक्य रचना के दृष्टिकोण से उसमें पूर्ण वाक्य आता है।
- 2- उसकी दोनों अब्द लियाँ समान अत्यानुप्रास गुणयुक्त होती हैं।
- 3- यह प्रकथन प्रधान होता है। इसका विषय कथा प्रधान होता है और उस कथा में विविध प्रकार के विषयों के सागोपाग वर्णन मिलते हैं।
- 4- कथा के प्रारम्भ में ईश्वर, पैगम्बर मुहम्मद, मुहम्मद के मित्र, कवि के गुरु और सामयिक राजा की प्रशंसा की जाती है।
- 5- इसके पश्चात् कवि अपनी रचना का स्पष्टीकरण करता है।
- 6- साधारणतः छन्दों का परिवर्तन नहीं होता।
- 7- पाँच या सात छन्दों के अनन्तर एक चैत रहता है।
- 8- उसमें सामी संस्कृति (समेटिक कल्चर) का प्राध्याय भी कभी-कभी प्रदर्शित किया जाता है।

फारसी की मसनवियों में जिन छन्दों का प्रयोग किया जाता है उनका उपयोग हिन्दी के प्रेमाश्यानों में नहीं हुआ है।

मसनवी की दो अब्द लियाँ परस्पर तुल्य होती हैं। इसमें लम्बाई का निश्चित निर्धारण नहीं होता है तथा प्रारम्भ से अन्त तक एक ही छन्द होता है। प्रायः उसमें परिवर्तन नहीं होता। कवि इस बात के लिए स्वतंत्र होता है कि वह सात छन्दों की मसनवी लिखे अथवा वह इन्में सात हजार छन्दों तक बढ़ाये। विषय निर्वाचन करने में भी कवि स्वतंत्र होता है। पौराणिक, धार्मिक, दार्शनिक, रहस्यवादी आदि कोई भी किसी भी विषय का चयन किया जा सकता है।²

1 फारसी साहित्य का इतिहास - डॉ. अशफ़ाक़ हिक्मत पृ. 153

“कहावत” मूलतः मसनवी आदाग पर सजित है। मसनवी की ही भीति कथावत की कथा श्रुतला बद्ध है। उसका विभाजन खण्ड या सर्गों में नहीं किया गया है—कही वही शीघ्र द दिया गए हैं।

विश्वनाथ न 'सर्गाष्टारहाधिरा' अर्थात् आठ सर्गों या उससे अधिक संग महाकाव्य में होते हैं। आठ सर्गों की बात वही गई है, उस दृष्टि से विचार करने पर रामचरित मानस में सात संग ही मिलते हैं, पदमावत में (डॉ० माताप्रसाद गुप्त के अनुसार) संग या खण्ड विभाजन नहीं है। ठीक वही स्थिति कथावत की है। पर इससे इस काव्य की गरिमा कम नहीं होती। ये सभी हिंदी के श्रेष्ठ महाकाव्य हैं—यों यदि खण्ड विभाजन ही करना है, तो पदमावत के खण्डों की तरह कथावत में भी 58 खण्ड हो जायेंगे।

मसनवी फारसी भाषा या एक काव्य रूप है। इस शब्द का अर्थ 'युग्मक' है—युग्मक अर्थात् द्विपदी मूलतः मसनवी वह लम्बा धारावाहिक काव्य है जिसमें दोर के दानों चरण हम काफिया (तुकान्त) हो और प्रत्येक दोर का काफिया अलग अलग हो। मसनवी के प्रत्येक वत में मुद्दरु सम्यग् होता है—व जज़ीर की कडियों की तरह परस्पर सुसम्बद्ध होते हैं। मसनवी में सम्बाई की कोई सीमा नहीं होती है। सात पक्तियों से लेकर लाख पक्तियों तक इसका विस्तार हो सकता है। इसमें प्रारम्भ से अंत तक प्रायः एक ही छंद का प्रयोग होता है। इसकी शैली प्राक्कथन प्रधान होती है। इसमें प्रकृति, चित्रण, श्रुतु वणन, रीति-रिवाज आदि का भी समावेश होता है।¹

जब हम कथावत पर इस दृष्टि से विचार करते हैं तो मिलता कि कथावत की रचना मसनवी पद्धति पर हुई है।

फारसी मसनवियों की तरह कथावत में भी

- 1 ईश्वर स्तुति है।
- 2 पैगम्बर मुहम्मद साहब की वन्दना है।
- 3 मुहम्मद साहब के चार मित्र (अबुयुसर उमर, उसमान और नबी) की प्रशंसा भी है।
- 4 उसमें साहेबत क रूप में हुमायूँ बादशाह का उल्लेख है।
- 5 उसमें कवि ने अपनी गुफ परम्परा का उल्लेख किया है।
- 6 इसकी कथा सुश्रुतला है।
- 7 उसमें द्विपदी छंद का प्रयोग है।
- 8 उसके प्रत्येक छंद तुकान्त है आदि।

मसनवी की दृष्टि से विचार करें तो लगता है कि क'हावत के नियमों का कवि ने सुन्दर रूप में पालन किया है ।

जायसी कृन पदमावत चित्ररेखा और क'हावत मूलतः श्रवधी मसनवियों हैं । इस महान प्रेमाख्यानकार जायसी का यशस्व्य यह है कि उन्होंने भारतीय व फारसी काव्य परम्पराओं का ऐसा सुन्दर सम वय किया है कि जो भावनात्मक एकता की दृष्टि से अपना प्रतिमान नहीं रखता । मसनवी शैली की परम्परा में कुछ नियम सब सामान्य मिद्वान्न के रूप में स्वीकृत हैं ।

1 ईश्वर स्तुति

जायसी ने क'हावत के प्रारम्भ ही में ईश्वर स्तुति की है "ताकर अस्तुति कीह न जाई । कौन जाहि अस करौ बडाई ॥¹ फारसी की प्रायः सभी श्रेष्ठ मसनवियों में इस प्रकार की स्तुति मिलती है ।

2 मोहम्मद साहब की स्तुति

"नअत का पालन करते हुए जायसी ने "क'हावत" में पैगम्बर मुहम्मद साहब की व दना की है ।

कहो मुहम्मद दो सो यानू । जाहि मिठान लेत मुख नामू ॥²

3 चारो यारो की प्रशंसा

मुहम्मद साहब के (1 अबूबकर, 2 उमर, 3 उसमान और 4 अली) चार मित्रों की प्रशंसा जायसी ने पदमावत चित्ररेखा आदि में की है ।

क'हावत में भी चार मित्रों का उल्लेख किया है

"चारि मीन विघनैं बड कीह । नबी रसून के गोहन दीह ॥

पहिले अबूबकर सत बारू । एक मत्री और बीर अपारू ॥

दोसरें उमर पोरुख हुत आदि । जिता न कोइ वादि के चादी ॥

तिमर उसमा पण्डित समाने । पढ़ि पुरान जिह अरथ चताने ॥

चौथें जलिंसिध बरियारू । राडग देखि काप ससाह ॥³

4 दाहे वक्त

जायसी ने क'हावत में बड़े हुलसित रूप में दिल्ली के बादशाह हुमायूँ की प्रशंसा की है ।

1 क'हावत - पृ 81 शिवसहाय पाठक पृ 58

2 यही , ,

3 यही , ,

देहली कहो छत्राति नाऊँ । यादसाह बड साह हुमाऊँ ॥¹
 सभै परिधि मो असीरौं, देनि देखि एह साज ।
 छात पाट तुम सोह, बरउ मदा सुख राज ॥²

5 गुरु विषयक स्तुति

जायसी ने अपनी अथ मसनवियों की ही तरह क'हावत में भी अपनी गुरु परम्परा का सविस्तार उल्लेख किया है ।

कहाँ तरीकर अगुवा गुरु । रोघन दोन दुनी मुल ॥³
 कहीं सरीअत पीर पियारा । सोयद असरफ जग उजियारा ॥⁴

18 पंक्तियों में जायसी ने अपनी गुरु पीर परम्पराओं का उल्लेख किया है मसनवी की कसीटी पर कसो तो हम देखते हैं कि जायसी ने क'हावत के हम्द नअत, प्रभनि मसनवी की रुदियों का पालन किया है । यह एक धारावाहिक प्रवचन प्रधान मुदीब काव्य है । इसमें तुक़ातता या अस्थानुप्रास युक्तता प्रत्येक चौपाई या दोहा में विद्यमान है । इसे हम अबधो भाषा की एक सुन्दर मनसवी कह सकते हैं ।

क'हावत फारसी मसनवियों की भाँति अबधि की एक मसनवी है इसके प्रारम्भ में ईश्वर स्तुति मुहम्मद साहब की वन्दना, उनके चार यारों की प्रशंसा शाहेबक्त गुरुस्तुति आदि का विधान किया गया है ।

जायसी ने 'कथा केही कान सात्रोगु' क द्वारा इसे कह कथा भी कहा है । फारसी मसनवी के साथ ही भारतीय कथा आख्यायिका के तत्व भी इसमें मिलते हैं ।

जायसी ने क'हावत में कृष्ण जीवन का एक पूर्ण चित्र उपस्थित किया है । उसमें घटनाएँ सुश्रुत हैं और अत्यन्त स्वाभाविक क्रम में विव्यस्त हैं उसमें हृदय को स्पर्श करने वाले एक से एक सुन्दर मनोरम स्थल हैं । कवि ने ऐसी वस्तुओं और व्यापारों का चित्रण ब्रकित किया है जो किसी भी श्रोता या पाठक के हृदय में रसात्मक तरंगों उठान में समर्थ है ।

भारतीय और पाश्चात्य महाकाव्यों के परम्परा प्राप्त और भाषायों द्वारा मित्राएँ गुरु लपणों में एक साथ लयग इतम नहीं मिल तो भी प्राय वे सभी गुणरम इनमें विद्यमान हैं जिनाम हम 'क'हावत' को एक श्रेष्ठ महाकाव्य कह सकते हैं ।

क'हावत का विषय स्वयं में महान व्यापक है । ध्यानपूर्वक पढ़ने पर पता होता है कि इसमें काव्यात्मक सौन्दर्य का भी चरम उन्मेष विद्यमान है ।

सम्पूर्ण कथा कृष्ण से सुसम्बद्ध है—कृष्ण ही पूरी कथा के मूल तथा अयन सम्प्रसार हैं। कन्ह आवत के कृष्ण विष्णु के पूणवतार है उसमे आचार्य विषयक सारी विदोपताए हैं।

कन्ह आवत म 'राधा' को जायसी ने रक्ष्मी, सीता के अवतार रूप में उपस्थित किया है। (कन्ह आवत में) कृष्ण के लिए ही अवतरित हुई हैं। राधा और का हा का कवि ने विधिवत विवाह कराया है।

प्रब घ काव्य की दृष्टि से यह एक उत्तम कोटि का प्रकथन प्रधान कथा काव्य है। महाकाव्य या महाकाव्यों के तब भी इसमें पूरी मात्रा में उपलब्ध है। साहित्य दण में (6/315/328) गिनाए गए लक्षणों की दृष्टि में यदि हम कन्ह आवत का मूल्यांकन करें तो मिलेगा कि उसमें प्रायः वे सभी लक्षण इसमें विद्यमान हैं। चरित काव्यों की प्रायः सारी विशेषताएँ इसमें हैं ही। सच तो यह है कि जायसी सच्चे अर्थों में "पृथ्वी पुत्र" थे। उन्होंने पूरी सहृदयता के साथ भारतीय और फारसी काव्य परम्पराओं के परस्पर अंतरावलम्बन की प्रक्रिया को अनायास है। कन्ह आवत में इन दोनों शक्तियों का पावन गंगा जमुना संगम उपस्थित है। फारसी काव्य परम्परा की दृष्टि से यह एक सुंदर अवधी मसनवी है और भारतीय काव्य दृष्टि से यह एक सुंदर (चरित काव्य, कथा काव्य) महाकाव्य है।

फारसी मसनवी के विषय में अनेक बार कहा गया है कि उनमें एक मजाजी और इस्क हकीकी का निरूपण तो उत्तम कोटि का है पर लोक पक्ष की दृष्टि से वे प्रायः शून्य हैं। पर जायसी के कन्ह आवत और पदमावत की बात सबथा भिन्न है—इन दोनों में एक ओर उत्तम प्रेम ज्योति का स्वर है, तो दूसरी ओर लोक और वेद पक्ष भी अत्यन्त सुंदर और उत्तम रूप में विद्यमान है। जायसी वेद पद्य की बहुत महत्वपूर्ण मानते हैं।

पारिवारिक और सामाजिक आदर्शों की दृष्टि से भी जायसी के दोनों महाकाव्यों का बड़ा महत्व है। राधा कृष्ण और गोपियों के प्रेम का 'परकीया' प्रेम मानने वाले हिन्दी कवियों की बहुत बड़ी सूची है। कृष्ण के महान भक्त कवियों में भी राधा कृष्ण और कृष्ण गोपियों के प्रेम को परकीय भाव का प्रेम माना है। जायसी ने कन्ह आवत में राधा और कृष्ण गोपियों के प्रेम को स्वकीया भाव का प्रेम माना है। उन्होंने राधा कृष्ण के विषय का अत्यन्त दिव्य और भव्य आयोजन भी किया है

"लोज कहूँ राधिका नारी । मान गहसि कीजे मनुहारी ॥
जेहि पिय चहै गोपाल गोविन्दू । रास निसकै होई बरिवदू ॥
हुत जो लुकानि वानि धरि तीही । आपुन जोरि लेहु अब चौही ॥
मानु भोग विधि परसन तोका । बरह्या वेद मने सिउ (लोक) ॥
महादेव तहँ भाइव छावा । पारवती सयँ मगल (गावा) ॥

इन्द्र सबद सब बाजन बाज । वदनवार मंदिर महें (साजे) ॥
 अछरि ह जोरि गाठि दह भांवरि । चौक पुरि कीही (नवछावरि)
 ससि दिनयर, रिखि, देवता नवेंत फिरा सब काहु ।
 तीनहु लोक भएउ सुम्न सुनि राही का ब्याहु ।¹
 धय है इस परम भागवत मुसलमान कवि की दृष्टि ।

तानसेन

इनकी जाति आधिभाव काल आदि के बारे में मतभेद हैं । अबुलफजल और शिबसिंह सैगर ।² इन्हें ग्वालियर का निवासी मानते हैं किंतु शिबसिंहजी के मत से ये मकरन्द पाण्डय के पुत्र तथा स्वामी हरिदास के शिष्य थे । बाद में इन्होंने ग्वालियर-निवासी शेख मुहम्मद गौस से सघात कला की शिक्षा प्राप्त की । कहा जाता है कि शेख ने अपनी जीभ से तानसेन की जीभ को चू लिया और ये आश्चर्यप्रद ढंग से गायन में पारंगत हो गये ।³ इसी घटना को तानसेन के धर्म परिवर्तन का कारण बनाया जाता है । अधिकांश विद्वानों की यही मान्यता है कि तानसेन का जन्म ग्वालियर से सात मील दूर बेहट⁴ ग्राम में हुआ था । इनके जन्म सबत व विषय में भी मतभेद हैं । डॉ० सुनीतिकुमार चाटर्ज्या के अनुसार जन्म लगभग 1520 ई है ।⁵ शिबसिंहजी के अनुसार इनका जन्म सबत् 1588 ई है ।⁶ शिबसिंहजी का सुभाव ज्यादा सही है, सम्राट अकबर के समय तानसेन का होना भी सिद्ध हो जाता है ।

कहा जाता है कि तानसेन का विवाह अकबर की पुत्री मेहलुनिसा से हुआ था । तानसेन की एक पुत्री और चार पुत्र थे । तानसेन का सम्बन्ध पहले दौलतखाँ (शेरशाह के पुत्र) के दरबार में था । फिर भी शीर्वा नरेश राजा रामचन्द्र की सभा में आये, जहाँ से अकबर ने इन्हें अपने यहाँ बुला लिया । ये सम्राट अकबर की सभा में प्रसिद्ध सगोतन थे । "आईन ए अकबरी" में शेख अबुल फजल ने इनकी गायन की प्रशंसा में लिखा है कि भारत में ऐसा गायक कलाकार पिछले एक सहस्र वर्षों में उत्पन्न नहीं हुआ ।⁷

1 कन्हावल - पृ 176 छन्द 265

2 शिबसिंह सरोज पृ 429

3 , वही , पृ 429

4 कवि तानसेन और उनका काव्य-नमदेवर चतुर्वेदी पृ 11

5 शिबसिंह सरोज पृ 429

6 अजयभट्ट पृ 118

7 681

तानसेन थोष्ट गायक के साथ साथ वादक व कवि भी थे । ध्रुपद तथा अन्य राग रागनियों में रचित इनके गान इनकी अद्वितीय कवित्व शक्ति का परिचय देते हैं । संगीत के क्षेत्र में ये 'मियाँ की मत्हार', 'मियाँ की टोडी (गुजरी टाडी), "दरबारी कानडा' आदि के आविष्कारक हैं । इनका निधन अकबर के सामने ही हो गया था । इसी स वष में अकबर का यह दोहा प्रस्तुत है

"पीयल सो मजलिस गइ, तानसेन सो राग,
हैंसिबो रमिबी खेलिभो गयो वीरवन साथ ॥

इनकी मृत्यु सन 1589 ई¹ अर्थात् स 1686 में हुई । ग्वालियर में इनकी नद्व विद्यमान है ।

दो सौ बावन वर्षायन की वार्ता के अन्तगत 237 पृष्ठ पर तानसेन की वार्ता दी गई है । उल्लेख है कि एक बार तानसेन ने गोस्वामी विठ्ठलनाथजी को एक पद गाकर सुनाया, जिस पर उन्होंने दस हजार रुपये आर एक कौड़ी से इनको पुरस्कृत किया । तानसेन ने जब गोस्वामीजी के रुपये के साथ कौड़ी देने का कारण पूछा तो उन्होंने कहा कि दस हजार रुपये इसलिये दिये गये कि तुम बाइसाह क बलायन्त हो और कौड़ी देने का आशय यह है कि तुम्हारे गायन का मूल्य हमारे गर्वियों के समक्ष कौड़ी के तुल्य है । तानसेन ने इसका प्रमाण माँगा । गोविंद स्वामी बुलाये गये और उन्होंने सारंग राग में तानसेन के आग यह पद गाना प्रारम्भ किया —

"थी बल्लभनदन रूप अनूप स्वरूप कस्यो नहिं जाई ।"

पूरा पद सुनकर तानसेन विस्मित हो गये । इन्होंने गोविंद स्वामी से गान विद्या सिखाने की प्रार्थना की, जिम्को उन्होंने ठुकरा दिया । इसी बात पर व गोस्वामीजी के शिष्य हो गये ।²

तानसेन व भक्त कवि मूरदास से अच्छी मित्रता थी । उन्होंने मूरदास की प्रशंसा में दोहा लिखा है

"किधो सूर को सर लग्यो किधो सूर की पीर ।
विधौ सूर को पद लग्यो, तन मन धुनत सरीर ।
उत्तर में मूरदासजी ने यह दोहा लिखकर भेजा
विधना यह जिय जानि के, सस न दोहें मान ।
धरा मेरु सब डोलत, तानसेन की तान ॥³

1 मध्ययुगीन हिंदी के सूफी स्तर मुसलमान कवि डॉ उदयशंकर श्रीवास्तव पृ 247

2 वही पृ 247

3 विश्वसिंह सरोज पृ 429

तानसेन की रचनाएँ इस प्रकार हैं

(1) रागमाला, (2) सगीतसार (3) गणेशस्तोत्र और (4) ध्रुपद ।

"ह्याल टिप्पा" एवम् "सगीत राग कल्पद्रुम" ? म भी तानसेन की स्फुट रचनाएँ मिलती हैं । इसकी सगीत विषयक 'हृयहृलास' नामक कृति 34 दोहा छंदों में है । जिनमें छ राग तीस रागिनियाँ, बाध के प्रकार आदि वर्णित हैं । ये बँकटेश्वर प्रेस बम्बई से मुद्रित हुई हैं । इसकी प्रामाणिकता विषयक चर्चा करना कठिन है ।

तानसेन के काव्य में प्रचुर श्रु गारिकता है, प्रधान रूप से इन्होंने अपने काव्य में नायक नायिका का सौन्दर्य वर्णन नख सिख वर्णन महादेव, सरस्वती गणेश जादि देवी देवताओं की बन्दना एवम स्मरण किया है । होली, दशहरा ईद आदि धार्मिक त्योहारों के पद, आश्रयदाता की प्रशंसा और गुरु स्तवन, कृष्ण की बाल लीला, राधाकृष्ण का मोन्दय, मुरली, मान, उपात्मभ विरह आदि का विस्तृत वर्णन इनकी रचनाओं में मिलता है । रहीम जमाल आदि कवियों की भाँति तानसेन भी भक्तिकाल (पूर्वमध्यकाल) की सीमा के अन्तगत रीतिकालीन कविता की लोचरस धारा का पूर्वाभास देत दिखाई पड़ते हैं । इनकी रचनाओं से इनका प्रौढ सगीत ज्ञान भी प्रकट होता है । होली के समय कृष्ण की ठिठोली का एक दृश्य

लगर बटवार खेले होरी ।

बाट घाट कोउ निकस न पावे पिचकारिन रग चोरी ॥

मैं जु गई जमुना जल भरने गह मुल मीजी रोरी ।

तानसेन प्रभु नन्द को डोरा बज्यो न मानत मोरी ।¹

तानसेन सगीतप्रेमी कवि थे इनके पदों में सगीत के स्वर की ही प्रधानता है । विषय का अधिक महत्व नहीं है । मल्हार रागिनी में बधा एक पद इस प्रकार है

रमिब झूलत है री जाल बाल इह रहसि सग ।

ज्यो ज्यो उरपति प्यारी त्यौ त्यौ कर गहत मोहन आली मोहि

अति रस बढ़्या बढ़ियो भँटत भुज भरि अग ।

छावन तीज सुहावनी लागति झूलति सहचोर करत रग ।

तानसेन पिउ प्यारी की छवि पर बारे कोटि अनग ।²

1 बकबरी दरबार के हिन्दी कवि - परिशिष्ट भाग 2 पृ 406 सख्या 110

साहित्य में कृष्ण में सरोजिनी कुलधेष्ठ पृ 316

रसखान

रसखान दिल्ली के पठान सरदार थे। इनका जन्म सन् 1590 वि माना जाता है।¹ प्रेम बाटिका नामक ग्रन्थ में उन्होंने लिखा है

देखि गदर हित, साहिबी दिल्ली नगर मसान।

छिनहि बादसा बेस की ठसक छोहि रसखान ॥²

इससे स्पष्ट है कि वे बादशाही खानदान के थे।

“प्रेमदेव की छवि सख, भये मियाँ रसखान” अर्थात्

श्री कृष्ण के दशन के उपरान्त मियाँ (मुसलमान) रसखान (हिन्दू) हो गये। वस्तुतः रसखान का अर्थ रस की खान नहीं है यह शब्द मूलतः ‘रस खा या “रसाखान” है। इनके पूजक सैयद अब्दुल गफूर की वीरता प्रदर्शन के लिये सम्मानसूचक खान की उपाधि प्राप्त हुई थी, इस उपाधि को इनका वंश के सभी लोग धारण करते आये थे। इस तथ्य का समयन मवलगढ़ के राजकुमार सप्राम सिंह के पास सुरक्षित रसखान के एक चित्र पर उद्धृत फारसी लिपि में रसखाँ और नागरी लिपि में रसखान शब्द से होता है। हिन्दी में कबीर दास के समय से प्रचलित सक्षिप्त नाम के प्रयोग की परम्परा के कारण ही काव्य में सैयद इब्राहीम रसखान के स्थान पर केवल रसखान शब्द से होता है।

रसखान का अर्थ वास्तव में रस की खान न होकर रसखा ही है इसकी पुष्टि उनके एक दोहे में प्रयुक्त रसखाँ शब्द से ही होती है— रसखाँ ढोल बजाइ के बेजियो हिय जिय साथ” इस प्रकार रसखान शब्द का प्रयोग केवल उपनाम के रूप में हुआ है और इसका अर्थ सैयद इब्राहीम में रसिकता और वीरता का समन्वय है।

“छिनहि बादशाह बस की ठसक छोहि रसखान” इस पंक्ति के आधार पर अनेक आलोचकों की धारणा है कि रसखान शाही वंश के थे, परन्तु उनका एक अन्य पद इस धारणा का खण्डन करता है

देश विदश के देखे नरसान रीझ की कोऊ न बुझ करेगी।

रसखान तिन्हे तजि जानि गिरयो गुनसो ओगुन गाठि परेगो ॥

इससे स्पष्ट है कि उन्होंने कई नरेशों का आश्रय ग्रहण करना चाहा होगा परन्तु उन्हें कहीं भी सफलता प्राप्त नहीं हुई। इसके विपरीत दरबार में उनके विषय चुगली भी की जाती रही होगी, इससे आश्रयदाता से सम्बन्ध विवृत होने की सम्भावना रही होगी, इसी की प्रतिध्वनि निम्न पंक्तियों में मिलती है

1 पोटार अभिनन्दन ग्रन्थ (स बाबुदेवधारण भद्रपाल)

2 प्रेम बाटिका — प्रथम पृष्ठ से

“काहा करे रसखानि को कोऊ भुगत खबार
जो पै राखन हार है माखन चाखन हार ।

स्पष्ट है कि वे राजवशो के आश्रय में रहने वाले अमीर उमराव अवश्य थे, परन्तु शाही वश से उत्पन्न नहीं थे। इनके पूर्वजो को मिलि उपाधि इन्हें राज-वश के निकट खाने में सहायक रही होगी।

वे महान कृष्ण भक्त और गोस्वामी विट्ठलनाथ के अत्यन्त कृपा पात्र शिष्य थे। दो सौ बावन वृष्णवन की वार्ता में रसखान का उल्लेख कुछ इस प्रकार मिलता है

सोबा दिल्ली में एक साहूकार रहेतो । सोबा साहूकार को
बेटों बहुत सुन्दर हतो । बा छोरा सौ रसखान को मन बहुत
लग गयो । बाही के पीछे फिरयो करे और बाको झुठा खावे
और आठ पहेर बाही की नौकरी करे ॥ पगार कछू लेवे नहीं दिन
रात में आसक्त रहे ॥ दूसरी बड़ी जात के रसखान की निंदा करते
हते । परन्तु रसखान कोई कु गनते नहीं हते ॥¹

उक्त वार्ता के अनुसार यह पहले एक बनिये के लडके पर आसक्त थे, एक दिन उन्होंने किसी को कहते हुए सुना कि भगवान से ऐसा प्रेम करना चाहिए जैसे रसखान का उस बनिये के लडके पर है। इस वक्तव्य से वे मोहित हो गये और श्रीनाथजी को खोजते-खोजते वे गोकुल पहुँचे वहाँ पर उन्होंने गोस्वामी विट्ठलनाथजी से दीक्षा ली। कुछ इसी प्रकार की एक और कहानी भी कही जाती है। कहते हैं कि ये किसी स्त्री पर आसक्त थे पर वह अत्यन्त मानवती थी और बार-बार इनका अनादर किया करती थी। एक दिन वे श्रीमद्भागवत का फारसी अनुवाद पढ़ रहे थे। उसमें गोपियों के अनन्य और असौकिक प्रेम को पढ़कर उन्हें ध्यान हुआ कि क्यों न उसी पर मन लगाया जाय, जिस पर इतनी गोपियाँ मरती थीं। इसी बात पर वन्दान चलने लगे। विद्वानों ने प्रेम यादिका के निम्न लिखित बोहे में उसी घटना की ओर संकेत किया है।

तोरि भानिनी ते हियो, फोरि मोहनी मान ।

प्रेमदेव की छविहिं लखि, भए भियाँ रसखानी ॥

उपर्युक्त प्रवादों से स्पष्ट है कि रसखान आरम्भ से ही बड़े प्रेमी जीव थे। 'वह प्रेम अत्यन्त गूढ भगवत् भक्ति में परिवर्तित हुआ। प्रेम के ऐसे सुन्दर उद्गार भरे इनके सर्वियों को ही "रसखान" कहा जाने लगा—जैसे काई "रसखान सुनाओ" इनकी भाषा बहुत चलती, सरस और शब्दाढम्बर मुक्त थी, ब्रज भाषा का जो चलतापन और सफाई इनकी और घनानन्द की रचनाओं में है वह अत्यन्त दुर्लभ

है। इनका रचनाकाल सन् 1640 के उपरान्त ही माना जा सकता है क्योंकि गोसाईं विट्ठलनाथजी का गोलोबवास स 1643 में हुआ था। प्रेम वाटिका का रचनाकाल स 1671 है। अतः उनके शिष्य होने के उपरान्त ही उनकी मधुर वाणी स्फुरित हुई होगी। इनकी कृतियाँ परिमाण में तो बहुत अधिक नहीं हैं। पर जो हैं वह प्रेमियों के मन को स्पष्ट करने वाली हैं। इनकी दो छोटी पुस्तकें अब तक प्रकाशित हुई हैं। प्रेम वाटिका (दोहे) और सुज्ञान रसखान कवि (सर्वैया) कृष्ण भक्तों के समान इन्होंने गीत काव्य का आश्रय न लेकर कवित्त सवयो में अपने सच्चे प्रेम की व्यंजना की है। ब्रजभूमि के प्रति सच्चे प्रेम से परिपूर्ण एक सवैया दृष्टव्य है

मानुष ही तो वही रसखान बसों, सग गोकुल गाँव के ग्वारन ।
जो पसु ही तो वही बसु मेरो चरो नित नद की घेनू मकारन ॥
पाहन हो तो वही गिरी को जो कियो हरि छत्र पुरदर कारन ।
जो खग हों तो बसेरो करों, निलि कालिदि बूल बदन की डारन ॥

रसखान पठान होकर भी कृष्ण भक्त कवि थे। उनकी भावना में ब्रज की महिमा इतनी अधिक है कि वे मात्र करील के कुजो पर करोड़ों स्वर्ण प्रासाद यौद्धा-वार करने के लिए प्रस्तुत हैं। कृष्ण की लकुटी और कामरी पर तीनों लोको का राज्य त्यागने के लिये आतुर हैं

या लकुटी अब कामरिया पर राज तिहु पुर का तजिडारो ।
आठहु सिद्धि नवो निधि को सुख मद की गाय चराम बिसारों ॥
नैनन सो रसखान कहैं ब्रज के वन बाग तडाग निहारो ।
कौटिक ही कलघोत के घाम करील क कुजन ऊपर बारों ॥¹

इनके कवित्त सर्वैया में सुन्दर अनुप्रासिक छटा है, भाषा की चुस्ती है, और पुरी-पुरी सफाई है, भावों की सुन्दर व्यंजना है और सवय लीला पक्ष की रजन-कारिणी अभिव्यंजना है।

किशोरोलाल गोस्वामी ने इनकी दो रचनाएँ प्रकाशित की हैं

(1) सुज्ञान रसखान 159 और (2) प्रेम वाटिका - 52 दोहे

साला भक्ताराम संपादित "राम रत्नाकर" में भी इनके प्राय 130 सवये और कवित्त हैं। किन्तु श्री माया शंकर याज्ञिक के अनुसार इसकी संख्या 109 है।

इनके रसपूर्ण सर्वैया हिन्दी कृष्ण काव्य की अमूल्य निधि है। इसमें ब्रज की माधुरी उच्चलित हो रही है। ब्रजभाषा की मिठास, ब्रजभूमि के प्रति चिर अनु-

1 प रामचन्द्र शूक्ल, हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ 185-86

राग और बजरंग कृष्ण ने प्रति निश्चल नेह - य रसखान की प्रेम साधना को तीन उपलब्धियाँ हैं। उनका निबध प्रेम किसी भी साम्प्रदायिक अथवा पाश्चात्य बन्धन से पूर्णतः मुक्त और स्वतंत्र है उनका कृष्ण काव्य पौराणिकता की प्रतीति भी नहीं है। वह तो रसिक कवि के निश्चल प्रेम का भावात्मक प्रतिरूप है।

इनका अन्तकाल स 1671 के आसपास गोबद्धन घाम क निकट हुआ यहाँ रसखान की छनरी के नाम से उनकी समाधि आज भी विद्यमान है।

उपर्युक्त बिबन्धन से निम्न निष्कर्ष निकलते हैं

- (1) रसखान का जीवन वृत्त अनिश्चित है।
- (2) ब्रह्म साम्य तथा अन्तःसाध्य से रसखान के जीवन पर आंगिक प्रकाश पड़ता है।
- (3) रसखान का असली नाम सयद इब्राहीम था और रसखान इनका उपनाम था।
- (4) रसखान का जन्म स 1590 है।
- (5) रसखान नाम का एक ही व्यक्ति सयद इब्राहीम हुआ है।
- (6) रसखान जाति के सयद थे और खान इनकी वंशानुगत उपाधि थी।
- (7) रसखान शाही बगम न हाकर अमीर उमराव थे।
- (8) रसखान 1612-13 में हुए गदर के कारण दिल्ली छाड़कर ब्रज में चले गए थे।
- (9) रसखान के लौकिकप्रेम का उदात्तीकरण हुआ था और उन्हें श्रीनाथजी के दर्शन का लाभ भी मिला था।
- (10) रसखान की मृत्यु स 1671 के आसपास ब्रज में हुई।

रसखान के कृष्ण

रसखान काव्य में ब्रजेश्वर कृष्ण का आत्म साक्षात्कार विशुद्ध भाव के धरातल पर हुआ है। इनमें बौद्धिकता का तनिक भी आग्रह नहीं है। इस कारण कृष्ण अध्यात्म के दिव्यात्म से उत्तरकर प्रेम की उदात्त मानवीय भाव भूमि में रम गये हैं। यहाँ वे आराध्य से बही अधिक प्रेम हैं।

इनके चरित्राकन में शास्त्रीयता और दर्शन का आवरण न होने से भावुकता दूर तक अप्रसर हुई है। इस तरह लीला पुरुष के कमनीय स्वरूप को हृदय में धारण कर कवि ने उनसे साथ सहज सख्य और कान भाव का सम्बन्ध स्थापित कर लिया है। इन सम्बन्धों में यह इस प्रकार तत्समीन हुआ है कि भक्त और भगवान के बीच की दूरी ही मिट गई है।

रसखान के द्वारा कृष्ण की विशुद्ध प्रेम की अनुभूति के रूप में निरूपित किये जाने के मूल में विद्वान जिन कुछ आधारभूत तत्वों की आर सध्य करते हैं वे ये हैं

- 1- फारसी का स्वच्छन्द सातारिक प्रेम — उदाहरणार्थ लैली प्रेम की श्रैष्ठ्यता ।
- 3- सूफियों के लौकिक प्रेम द्वारा आध्यात्मिक प्रेम की व्यञ्जना ।
- 4- "रागानुगा" प्रेम में स्वच्छन्द प्रेम में दर्शन । कि तु यह अतिम तत्त्व विन्दुल गौण माना गया है ।

वस्तुतः रसखान के स्वच्छन्द प्रेम पर गोपियों के चितचोर कृष्ण के स्वच्छन्द चरित्र की छाया अत्यन्त स्पष्ट है उहोने ब्रज लीलाओं का स्थूल बर्णन में बरके उनके सकेत भाष्य से अपने प्रेम देवता कृष्ण की भाकियाँ उपस्थित की हैं । सूफियों की प्रेम ज्योति से हम रसखान की प्रेम ज्योति की तुलना कर सकते हैं ।

"रवि ससि नरत दिपहि ओहि जाती" —जायसी

मुरली कर में अधरा मुसकानि तरंग महाद्वधि छावति है—रसखान¹

रसखान ने कृष्ण के मन्त्र की पूजा की है शेष महेश ने त्रिमका स्मरण किया वह अनादि-अनंत अखण्ड और अबूझ ही बना रहा । रसखान कहते हैं कि ज्ञान चक्षु तो हार गये, उसका रूप और स्थभाव प्रेमी भक्त का ही चाशुप प्रत्यक्ष हो सका ।

ब्रह्म में दू डयो पुरगननि गाननि, वेद रिचा सुनि चोगुनी चायन ।
दम्प्यो सु या कबहूँ न चितू वह कस मुत्प औ कस सुभायन ।
टरत हेरत हागि परया रसखानि, बतायो न लाग सुगायन ।
दम्प्यो देज्यो वह कुज कुटीर म, बँठ्यो पलोदतु राधिका पायन ।²

रसखान के कृष्ण सगुण भगवान हैं, ब्रजेदवर ब्रह्म के गुणात्मक विग्रह हैं । इस रूप में वे ब्रह्मा से भी महान परब्रह्म हैं । इनके रूप और गुण की कल्पना परम मनोहर है । इनका रूप मोहन है और गुण आनन्द क्रीडा । रूप और गुण से सज्जित कृष्ण लीला-नायक हैं, उन्हें प्रेमी भक्त अहर्निश अपने हृदय दपण में धारण किये रहते हैं, नयना में दसाये रहते हैं । नयन में बसा लेने पर वह उम मूत प्रेम की वाहणी की पीकर इतना बसुध हो जाता है कि फिर आँसू भी नहीं खोलता । यह दर्शन क्रम अप्रतिहत चलता रहता है

1 प्रेमवाटिका 33 (सला प्रती) बहो 38 (गोपी प्रम)

2 मुखान रसखान 28

"सोहत है चंदवा सिर मोर के, जसिये सुंदर पाग कसी है ।
तसिये गोरज भाल बिराजति, जमी द्विये बनमाल लसी हैं ।
रसखानि बिलोकति बीरी भई रग मूदि के ग्वारि पुकारि हँसी है ।
खोलि री घूषट, सोली कहा, वह मूरति नैनहि मान्क बसी है ।¹

अन्तिम पंक्ति के पूर्वाह्न में कबीर के प्रति कटाक्ष है तो उत्तरार्द्ध में मीरा के प्रति सहमति । कबीर कहते हैं—घूषट के पट खोल रे सोको पिया मिलेगे किन्तु रसखान की गोपियों के लिए घूषट पट खोलने न खोलने का अर्थ भी क्या है ?

कृष्ण के सम्मोहन से गोपियाँ अभिभूत हो जाती हैं । उनकी प्रेमासक्ति से भी कृष्ण ने मन-मोहन स्वरूप का आभास मिला जाता है । शब्द, रूप, रस, गंध और स्पृश से सज्जित कृष्ण का मोहक रूप तन, मन को झकझोर देने वाला है

'कानन दे अगुरी रहिबो, जबही मुरली घुनि मद बजै है ।
मोहिनी ताननि सौ रसखानि, अटा चढि गोधन गँहै तो गेहै है ॥
टेरि कहौं सिगरे ब्रज जोगनि कास्तिह कोऊ कितनो समुझ है ।
माई री वा मुख की मुसकानि सभारि न जहे न जहे न जहे ॥

रसखान काव्य में कृष्ण की इस मधुर मूर्ति के अनेक चित्र खचित हैं । सच तो यह है कि रसखान विशेषण कृष्ण प्रेमी कवि का पर्याय बन गया है । उनके काव्य में मानव और कृष्ण का सहभाव इष्टव्य है, भक्त प्रेमी अपने सम्पूर्ण अस्तित्व को विशेष भाव से कृष्ण के रूप में तदाकार कर देना चाहते हैं । व कृष्ण को प्रेम स्वरूप और प्रेम को कृष्ण स्वरूप मानकर दोनों का अगाधिभाव चित्रण किया है

"प्रेम हरी को रूप है, त्यों हरि प्रेम स्वरूप ।
एक होई दूजै में लसै, ज्यों सूरज अरु रूप ॥"

वस्तुतः रसखान के कृष्ण प्रेम-देव हैं । उनकी ब्रज लीलाओं को ही चित्रित किया गया है और उन लीलाओं में सत्य और मधुर भाव मुख्य हैं । उनका कृष्ण प्रेम, प्रेमी और प्रेम के चिरंतन मिलन का मनोमय उदाहरण है ।

सच तो यह है कि रसखान ने ब्रजलीला को उतना महत्व नहीं दिया जितना विलोकन और मुसकान को । इन्होंने सयोग और वियोग श्रृंगार के दोनों पक्षों का सुंदर वर्णन किया है । रसखान का मन जितना किशोर लीला में रमा है उतना बाल लीला में नहीं, हाँ दान लीला में भी रसखान का मन खूब रमा है । रास और धीर-हरण लीला को उहोने चलता-सा बना दिया है । बाँसुरी के चपस्कार और कुन्जा पर उनकी पंजी इष्टि पड़ी है ।

रसखान विशुद्ध थे न कि स्वच्छन्द प्रेममार्गी कवि। उपर्युक्त विवेचन से निम्न निष्कर्ष स्पष्ट होते हैं

- (1) ईश्वर के प्रति अनन्य और इतु अनुराग का नाम भक्ति है।
- (2) इस उत्कट अनुराग की सफलतम अभिव्यक्ति दाम्पत्य भाव में होती है।
- (3) मूलतः प्रेमी जीर थे, उनके लौकिक प्रेम का आध्यात्मिक प्रेम में उन्नयन हुआ था।
- (4) रसखान के काव्य में प्रेम का भोग पक्ष प्रबल है।
- (5) रसखान की भक्ति की परिभाषा निःस्वाद्य प्रेम है।
- (6) रसखान के इस प्रेम का आलम्बन श्रीकृष्ण है।
- (7) रसखान के श्रीकृष्ण प्रेमाधीन होने के कारण राधा और गोपियों के यश हैं।
- (8) रसखान ने श्रीकृष्ण की मधुर लीलाया का ही अधिकार में वचन किया है।
- (9) रसखान के काव्य में साम्प्रदायिक सकीर्णता की गंध नहीं है।
- (10) रसखान विशुद्ध भक्त हैं, स्वच्छन्द प्रेममार्गी कवि नहीं।

सैयद इब्राहीम रसखान की सबसे बड़ी उल्लेखनीय चरित्रगत विशेषता उनकी असांमप्रदायिकता है। मुस्लिम शासन काल में रसखान ने धार्मिक मतभेदों से सबका दूर रहकर हिन्दू धर्म में भगवान के अवतार रूप में स्वीकृत श्रीकृष्ण को इष्ट के रूप में अपनाकर धमनिरपेक्षता का एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया। यद्यपि सिद्धान्त रूप में प्रसिद्ध सूफी साधक रूपी शब्दों में—“इश्क का मजहब सभी मजहबों से अलग है। खुदा के आशिकों का खुदा के अलावा कोई मजहब नहीं।” सच्चा प्रेम धार्मिक मतभेदों से ऊपर होता है, परन्तु व्यवहार क्षेत्र में इस सिद्धान्त को गही उतारने वालों में रसखान अग्रगण्य हैं। रसखान के काव्य में कहीं भी धार्मिक मतभेद की गंध नहीं है। इस्लाम में अवतार और मूर्तिपूजा को मान्यता प्राप्त है और न ही इनके लिए कोई स्थान है। रसखान ने इस्लाम धर्मानुयायी होते हुए भी इन दोनों को सिद्धान्त और व्यवहार में मान्यता दी। रसखान के सच्चे प्रेम और मानवता के उच्च आदर्श को देखकर ही भारतेन्दु ने निम्न उद्गार प्रकट किये थे

“इन मुसलमान हरिजन न पर कोटिन हिन्दू वारिये।”

रसखान जिस प्रकार धर्म के क्षेत्र में साम्प्रदायिकता से ऊपर सटे हुए थे उसी प्रकार दशक के क्षेत्र में भी किसी सम्प्रदाय विशेष से आबंध नहीं थे। उनके समय तक कृष्ण भक्ति के क्षेत्र में निम्बार्क, मध्व, चतन्य तथा बल्लभ सम्प्रदाय प्रतिष्ठित हो चुके थे। रसखान के काव्य में इन विभिन्न सम्प्रदायों के कतिपय

सिद्धांत मिश्र जाते हैं परन्तु वे किसी सम्प्रदाय विशेष के प्रति प्रतिश्रुत नहीं थे। उन्होंने महाप्रभु वल्लभाचार्य से दीक्षा अवश्य ली थी, परन्तु न तो उन्होंने पुष्टि माग में स्वोक्त नवधा भक्ति को महत्त्व दिया है और न ही केवल जलौकिक प्रेम को अपने काव्य का साध्य माना है। वस्तुतः उनके काव्य में निम्बाक के द्वैता-द्वैतवाद का, मध्वाचार्य के द्वैतवाद का, चैतन्य के अचिन्त्य भेदाभेदवाद का और वल्लभाचार्य के शुद्धाद्वैतवाद का अनुसरण नहीं मिलता। वह तो इन सम्प्रदायिकवादों से दूर मान प्रेमी भक्त थे।

रसखान मधुर भक्ति रस के कवि थे। उन्होंने भक्ति रस के अनेक प्रकारों की अपेक्षा मधुर भक्ति रस का और सयोगपक्ष का सर्वाधिक और विशेष चित्रण किया है। रसखान मधुर भाव में ही प्रेम की अनन्यता स्वीकार करते हैं। इनके अनुसार

“जदपि जसोदा नन्द अरु त्रवालु बाल सब घाय ।

वै या जग में प्रेम करि गोपी भई अनन्य ॥”

सख्य और वात्सल्यभाव से भी अधिक निकटता दाम्पत्य रति में ही सम्भव है, अतः इसी मधुरारति का वर्णन ही कवि को सर्वाधिक अर्पण रहा है।

रसखान का यह मधुर भक्ति रस अत्यन्त उज्ज्वल और पवित्र है। न इसमें कहीं क्लृप्तता अथवा उच्छ्वासलता आई है और न ही कहीं रसाभास हुआ है। रासलीला के प्रसंग में वर्णित शृङ्गार भी अत्यन्त सयत है। सूरदास, मन्ददास आदि के शृङ्गार की अपेक्षा इनका शृङ्गार पर्याप्त सीमा में शिष्ट और मयादित है।

रसखान अपनी असाम्प्रदायिकता, एक निष्ठ भक्ति, काव्योत्कर्ष, श्रुतता, मौलिकता तथा ब्रज संस्कृति के प्रति अनुराग के कारण हिन्दी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान रखते हैं। कृष्ण भक्त कवियों में सूर और मीरा के समान इनका नाम चिर अमर है। रसखान हिन्दी साहित्य के देदीप्यमान रत्न हैं।

अकबर जन्म - 1556 ई

महान सम्राट अकबर का साहित्य कला तथा संगीत की ओर अत्यधिक रुचि थी। कृष्ण की रूपमाधुरी के जाल में वे भी बंधे गये थे उन्होंने लिखा है कि-

‘साहू अबन्यर एक समय चले जाहू विनोद विलोकन वासहि ।

आहत अबना निरख्यो चकि चौकि चलो करि आतुर पासहि ।

र्यों बलि बनी सुधीर घरी सुभई छवियों सलना अरु पासहि ।

चम्पक पारु बमान चढ़ावत काम ज्यों हाथ लिये आहि पासहि ॥’

इब्राहीम

इनका कविता काल मिश्र बंधुओं ने स 1607 के लगभग निश्चित किया है। इनका कवित्त इस प्रकार है

हरि सों रिसानो हैं पुरवर कहा धो करे,
 कोर्प आसमाई कँ बालायकन लीरे ना ॥
 बेलि कँ प्रलय के मेघ गोकुल बहायवे को,
 मुसर समान धार धनी तार तोरे ना ॥
 छाती हाय दै दै बिराहिम कहत गोपी ॥
 हीय के समीप धनश्याम दूग जोरै ना ।
 गिरै ना गोबरधन कन्हैया धरो है तल,
 दइया कहू आज राधे भीहे मरोरै ना ।¹

रहीम

नवाब अब्दुल रहीम खानखाना का जन्म सन् 1613 विक्रमी में लाहौर में हुआ था। इनके पिता का नाम बरामखाँ खानखाना था और माता जमालखाने वाली की छोटी बेटी थी। दिल्ली के बादशाह हुमायूँ ने उसकी बड़ी बेटी से विवाह किया था। बरामखाँ छोटी अवस्था में ही हुमायूँ बादशाह के दरबार में रहने लगा था और धीरे धीरे अपनी काय कुशलता से बड़ा सरदार और बादशाह का विश्वस्त आदमी बन गया था। कन्नौज की लड़ाई में बरामखाँ ने बड़ी वीरता दिखायी थी। जब हुमायूँ हार कर फारिस भाग गया तो बरामखाँ भी बादशाह से वहाँ जा मिला और फिर भारत पर चढ़ाई कर उसने हुमायूँ को राज्य दिलवाया। बरामखाँ के युद्ध कौशल और पराक्रम के कारण मुगलवंश में फिर एक बार भारत का साम्राज्य प्राप्त किया। हुमायूँ ने प्रसन्न होकर युवराज अकबर की शिक्षा का भार भी बरामखाँ को ही सौंपा और अपने अन्त समय पर राज्य प्रबंध भी बरामखाँ को देकर अकबर का अभिभावक नियुक्त किया।²

बरामखाँ ने अकबर के शत्रुओं को परास्त किया और मुगल साम्राज्य को बढ़ा किया। बड़ा होने पर अकबर ने बरामखाँ के हस्तक्षेप को स्वीकार नहीं किया। बरामखाँ ने अकबर के विरोध में विद्रोह किया अकबर ने बरामखाँ को हज्ज के लिए जाने को बाध्य किया और बरामखाँ हज्ज के लिए चला। पाटन में उसके एक पुराने शत्रु ने उसे मार डाला उस समय अबुल रहीम केवल चार वर्ष का था। अकबर ने कृपा पूर्वक बालक और उसकी माँ को अपने पास बुला लिया उसकी शिक्षा दीक्षा की व्यवस्था की। बालक भी कुशाग्र बुद्धि का अल्पकाल में ही उसने

1 मायाशंकर यासिक रहीम रत्नावली पृ 3

2 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफ़ी शतर मुसलमान कवि डा उरदयकर धीरास्वर पृ 328

उनके आश्रय में रहते थे। गग, प्रसिद्ध, मण्डन सन्त, लक्ष्मीनारायण, बाण जैसे कवि उनके आश्रित थे। गग को एक छप्पय पर रहीम ने छतीस लाख रुपये का इनाम दिया था। गोस्वामीजी से भी रहीम के बड़े घनिष्ठ सम्बन्ध थे। मतीराम की कृतियों पर रहीम की गहरी छाप है। केशवदास ने जहाँगीर चन्द्रिका रहीम के पुत्र एलचबहादुर के लिए लिखी थी। तुलसी के बरवै छन्द और बरवै रामायण की प्रेरणा रहीम ही थे। रहीम के जीवन काल में अब्दुलबाली ईरानी ने "मोआसिर रहीमी" नामक ग्रन्थ में रहीम की जीवनी रहीम के ही जीवन काल में लिखी थी।

वा अयात बावरी का उहोने तुर्की से फारसी में अनुवाद किया था। कहते हैं कि उहोने फारसी भाषा में एक "दीवान" भी लिखा था किन्तु अभी तक मिला नहीं है। कहा जाता है कि रहीम ने कई युरोपीय भाषाएँ भी सीखी थी और अफ़्कर के लिए वे उन भाषाओं में पत्र भी लिखते थे।

"भिखारीदास" ने एक कवित्त में सादर स्मरण किया है।

"मालम रहीम खानखामा रसलीन बली,
मुदर अनेक गन गनती बखानिये।"

इसी आधार पर शिर्वांसिंह और मिश्र बंधुओं ने दो रहीम का अनुमान किया है। किन्तु यह मात्र अनुमान ही है। भिखारी दास ने लिखा है कि "एकन को रसही को प्रयोजन है रसखान रहीम की नाई।" वस्तुतः हिन्दी साहित्य में एक ही रहीम है और वह अब्दुल खानखाना। हिन्दी को अपना कर अपनी कृतियों से उन्होंने हिन्दी की अपार सेवा की है। अनेक भाषाओं पर समान अधिकार रखने के बावजूद वे हिन्दी के मातृभूमि पर मुग्ध थे। वे हिन्दु सभ्यता और हिन्दु धर्म को भी बड़ी गहराई से समझ गये थे और उनके प्रति रहीम को बड़ा आदर था। उनके मन में हिन्दुओं के प्रति रचमात्र भी घृणा का भाव नहीं था। अवतारों के साथ ही गंगा, महादेव आदि के प्रति श्रद्धा थी। वे वैष्णव धर्म के अनुयायी तथा श्री कृष्ण के महान भक्त थे। हिन्दी के मुसलमान कवियों और लेखकों में रहीम का स्थान बहुत ही ऊँचा है। उनकी कविता सरस, मधुर और नीति पूर्ण है। उनकी भाषा ब्रजो है किन्तु उसमें कहीं-कहीं अवधी का भी मिश्रण है, वह परम स्वाभाविक भाषा है। उह ससार का व्यापक अनुभव प्राप्त था, वह उनकी नीतिमूक्त कविताओं से स्पष्ट है।

रहीम की रचनाएँ

1 दोहाबली कहा जाता है कि रहीम ने एक सतसई लिखी थी। वह अपने मूल रूप में प्राप्त नहीं है। दोहा सार सग्रह और गुण गज नामक दो सग्रह भी अर्चित हैं। दोहा सार सग्रह 1720 विक्रमी में रचा गया था। "रहीम रत्नावली" को भी रहीम की कृति कहा जाता है। "रहिमन शतक" नामक इनकी एक और कृति का उल्लेख मिलता है।

2 नगर शोभा इस ग्रंथ की सूचना माधुरी¹ पत्रिका के एक लेख में दी गयी है। इस पुस्तक के प्रारम्भ में लिखा है

“अथ नगर गोभा नवाब खानखाना - कृत”

इसमें 142 दोहे हैं। आरम्भ में मगलाचरण दिया गया है। इससे प्रतीत होता है कि यह एक स्वतंत्र ग्रंथ है। रहीम सतसई का अंश नहीं है। महाकवि देवकी ने ‘जाति विकास’ में जिस रीति से बहुत सी जातियाँ की तथा दर्शों की स्त्रियों का वर्णन किया है, उसी प्रकार से ‘नगर शोभा’ में भी अनेक जातियों की स्त्रियों का वर्णन बड़ी सुन्दरता से किया गया है। भाव शृंगार का है। दोहों की शब्द योजना से ही वर्णन स्त्री की जाति तथा कम का मनोहर चित्र नशों के सम्मुख आ जाता है। यह ग्रंथ रहीम के सल्लानी स्वभाव का परिचायक है। कहा जाता है कि रहीम को इसकी प्रेरणा मीना बाजार से मिली थी। रहीम कृत बरवै छंद में लिखे ग्रंथ का एक अंग और भी मिलता है। नगर शोभा वर्णन में अनेक बरवै मिलते हैं।

3 बरवै नायिका भेद यह ग्रंथ अपने पूरे रूप में उपलब्ध है। बरवै छंद में रहीम ने नायिका भेद पर आधारित यह प्रख्यात ग्रंथ लिखा है। कहा जाता है कि रहीम ने तुलसीदास से कहकर बरवै रामायण की रचना करवायी थी

कवि रहीम बरवै रचे, पश्ये मुनिवर पास।

लखि तेइ सुंदर छंद में, रचना कियेउ प्रकास ॥

बरवै लेखन की शैली में रहीम हिन्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि माने जाते हैं। हिन्दी का यह आदि नायिका भेद ग्रंथ माना जाता है।

महाराज काशीराम के पुस्तकालय में एक पुस्तक है जिसमें मतिराम के दोहे व रहीम के बरवै साथ मिलाकर लिखे हुए हैं। मतिराम और रहीम समकालीन थे। मतिराम के काव्य पर रहीम का प्रभाव मिलता है।

4 बरवै बरवै की प्राचीन हस्तलिखित प्रति सुलिखित है और प्रत्येक पृष्ठ के हाशिये पर फारसी चित्रकला के बेलवूट बने हुए हैं। रहीम की माता महजमाल खाँ मबस्न की थी और यह प्रतिमबस्न से ही मिली है। प्रारम्भ में छंद मगलाचरण के हैं, शेष एक ही एक बरवै संग्रहित हैं। इसकी भाषा नायिका भेद वाले ग्रंथ से अधिक प्रौढ़ है।

5 मदनमालिका रहीम न मालिनी छंद में इस ग्रंथ की रचना की है इसकी भाषा रसता और संस्कृत मिश्रित है।

6 फुटकर पर कहा जाता है कि रहीम ने रास पचाध्यायी नामक एक स्वसत्र ग्रन्थ की रचना की थी किन्तु वह उपलब्ध नहीं है। उसके दो पद नाभादास के भक्तमाल में दिये हुए हैं।

7 शृ गार सोरठा यह काव्य भी उण्डित रूप में मिला है, इसके सौरठे अत्यन्त भाव प्रवण है।

8 रहीम काव्य यह सस्त्रुत और हिन्दी मिश्रित श्लोको का संग्रह है। इसमें हिन्दु और मुसलमान जाति के सम्बन्ध का प्रयास किया है।

9 खेट कौतुकम रहीम ठुत यह ज्योतिष ग्रन्थ अपने पूण रूप में प्राप्त है। इस ग्रन्थ में सस्कृत और हिन्दी भाषाओं का सुन्दर मिश्रण दृष्टव्य है। यह ग्रन्थ श्री वेंकटेश्वर स्टीम प्रेस यम्बई से प्रकाशित है। वस्तुतः खानखाना हरफन मौला थे और उन्होंने ज्योतिष पर एक सुन्दर ग्रन्थ लिख दिया। एक उदाहरण दृष्टव्य है

यदा मुस्तरी बे-द्रखाने त्रिनाणे यदा वक्तखान रिपी आफताम ।

अतारिद बिलगने नरो वक्तपूणस्नदो बीनदारो अयवा वादगाह ॥

उद्धृत रामचन्द्र शुक्ल ने लिखा है कि—“भाषा पर तुलसी का सा ही अधिकार हम रहीम का भी पाते हैं, वे ब्रज और अवधी पच्छिमी और पूर्वी दोनों काव्य भाषाओं में समान कुशल थे।” बरवै नायिका भेद बड़ी सुन्दर अवधी भाषा में है। इनकी उक्तिया ऐसी सुभावनी हुई कि बिहारी आदि परवर्ती कवि भी बहुत को अपहरण करने का सोच न रोक सके। यद्यपि रहीम सब साधारण में अपने दोहे के लिये ही प्रसिद्ध हैं पर इन्होंने बरवै, बवित्त, सबैया, सारठा पद सय में थोड़ी बहुत रचना की है।¹

रहीम का बरवै-नायिका भेद निश्चित ही रीतिकाल का एक मनोहारी ग्रन्थ है इसमें न केवल नायिका भेद बरन् प्रेम और सौन्दर्य के मन मोहक चित्र हैं। रहीम के काव्य में उनके जीवन का व्यापक अनुभव अभिव्यक्त मिलता है। सहज सरल होत हुए भी मार्मिक भावपूर्ण बवित्त एवम् उक्ति बचित्र्य के आहरण इनमें देखने को मिलते हैं। इनके दोहे और बरवै दोनों ही बड़े लोक प्रिय हैं।

रहीम ने छोट बड़े कई ग्रन्थ लिखे रहीम दोहावली या रहीम सतसई, रहीम रत्नावली बरवैनायिका भेद, शृ गार सोरठ, मदनाटक, रासपचाध्यायी नगर शोभा, फुटवल बरव, फुटवल बवित्त सबय आदि। वे सस्कृत फारसी और हिन्दी के विद्वान थे स्वभाव से अत्यन्त विनोदप्रिय थे— इनकी विनोदप्रियता ममस्पर्शी उद्गार और जीवन की विविध अनुभूतियों के चित्रण काव्य की स्मरणीय बनाते

हैं, और इनकी सहज कवित्त प्रतिभा के द्योतक है। रीतिकाय के क्षेत्र में होने वाला इनका ग्रन्थ बरवै नायिका भेद है। जिसमें लोक जीवन के प्रेम और शृंगार पूर्ण आशा आकांक्षाओं से भरे अत्यंत मधुर चित्र मिलते हैं।

लागेउ आइ नवेलियाहि मनसिज बान ।
 उकसन लाग उरोजवा रग तिरछान
 भोरहि होत कोइलिया, बढवति साप
 घरि एक भरि अलिया, रह चुपचान
 वन धन फूलहि टेसुओ, बागन बेलि
 चले विदेस पियरवा, फागुआ खेलि ॥
 बाहर लके दियवा बारन जाइ ।
 सामु ननद घर पहुचत, देति बुझाय ॥
 उमडि उमडि घन धुमठे दिसि विदिसान
 सावन दिन मन भावन करत पयान ।

रहीम मुगलवा दरबार के श्रेष्ठ कोटि के कवियों में माने जाते हैं। कृष्ण के प्रति इनका अतीव अनुराग है। उन्होंने अपने मन को चकोर पक्षी की भांति चंद्रमा रूपी कृष्ण में लीन कर लिया था। “कमलदल नैन कृष्ण” उनके मन में बस गये थे

कमल दल नैननि की उनमानि ।
 बिसरत नाहि नेकु मो मनते म'द म'द मुसकानि
 ये दसनन दुति-चपला दुते महा चपल चमकानि ।
 बसुधा की बस करी मधुरता सुधा पगी बतरानि ॥
 चढ़ी रहै चित उर बिसाल की, मुकत माल पैहरानि ।
 नूत सभे पीतावर इसी फहरि फहरि फहरानि ॥
 अनुदिन श्री ब'दावन में ते, आवन जावन जौनि ।
 अब 'रहिम' चित्त ते न टरति है, सकल स्वयं की बानी ॥

रहीम मुसलमान होते हुए भी कृष्ण और राम के पूरे भक्त थे। इनको ईश्वर पर पूर्ण विश्वास था।

- 1 त रहीम मन आपना कीनो चारु चकोर ।
 निसि बासर लाग्यो रहै कृष्णचंद्र की ओर ॥
 रहिमन को कोउ का करै जवारी, चार लवार ॥
 जो पति रासनहार है, मायन पावन हार ।
 मांग मुकुरि न हो गयो केहि न त्यागियो साथ,
 मागन आगे गुंउ लौह रहीम रघुनाथ ॥”

- 2 "छवि आवन मोहन लाल की ।
काछिनि काछे कलित मुरलिकर, पीत पिछोरी साल की ।
बेक तिलक कसर को कीनें, दुति मानो विधु बाल की ।
बिसरत नाहिं सखी मो मनतें, चितवनि नयन बिसाल की ॥"
'तोकी हंसनि अधर सुषर निकी, छवि छानी सुमन गुलाल की ।
जल सो शरि दियो पुरइन पर, डोलनि मुकता माल की ॥
आप मोस बिन मोलनि डोलनि, बालनि मदनगोपाल की ।
यह सुरूप निरखै सोई जानै,
या रहीम के हाल की ॥'¹
- 3 पकरि परम प्यारे सांधरे को मिलाओ,
असल अमृत प्याला बयो न मुझको पिलाओ ?
इति बदति पठानी मापयाङ्गी विरागो,
मदन शिरसिभूय क्या बला आन लागी ॥'²
- 4 "कठिन कुटिल काली देख दिसदार जुलफें,
अलि-कलित, विहारो आपने बी की कुसफें ।
सकल शशि-बला को रोशनी हीन लेखो,
अहह ब्रजलला को किस तरह फेर देखो ॥"³

ऊपर के बरवै छंदो में निबद्ध चित्र अत्यन्त प्रभविष्णु और मनोमोहक हैं । इनसे रहीम की जीवन सौन्दर्य और भाव परखी दृष्टि प्रकट होती है । उनके पास जीवन का बड़ा ध्यापक ज्ञान और गहरा अनुभव था, जिसके कारण काव्य की सोक शक्ति को जगाने की वे क्षमता रखते हैं । रहीम के विविध भाषा सुमनों में कृष्ण की सुवास बसी है, जिसकी सुरभि लहरियों से आज भी वातावरण महक उठता है ।

मघनायक

मघनायक का पूरा नाम सैयद निजामुद्दीन है । मघनायक का सम्बन्ध बिलग्राम के हुसैनी परिवार से है । प्रमाणिक तिथि के अभाव में सन् 1000 हिजरी अर्थात् सन् 1591 ई (1648 वि) को ही मघनायक का जन्म सम्बत् स्वीकार करते हैं ।⁴ ज्ञानाजन् की सगन ने सृष्टि और हिन्दी के अमूल्य ग्रंथों के अध्ययन में मघनायक को दोनों ही भाषाओं का मन्त्र बना दिया ।

1 भवन सग्रह (भाग 4) वियोगीहरि प 22

2 भवन सग्रह ' वही प 25

3 भवन सग्रह " वही प 24

4 डॉ. संतष जैदी बिलग्राम के मुसलमान शक्ति, प 40

आपकी रचनाएँ बड़ी रतमय बन पड़ी हैं —

नायिका के नेत्रों की प्रशंसा में “मद्यनायक” भी आने] समकालीन कवियों से पीछे नहीं रहना चाहत । नायिका क अवयवा के अतिरिक्त मद्यनायक न नायक के रूप का भी हृदयप्राप्ती चित्रण किया है । कृष्ण की रूप माधुरी का स्वच्छ और स्पष्ट चित्र मद्यनायक के कवित्तो के माध्यम से पाठक के हृदय में बरबस ही अंकित हो जाता है

“चदन चित्र बनो तन साँबरे बाएनि सोहत आबत सोहन ।
पीत पिछोरी पछाहन छाजत ननन रग रच्यो रति छोहन ।
कुडस मडित मजुल मजरि नूतन नून लता फिर जोहन ।
बामुन की अवली उमहै मद्यनायक बाल विलोकित मोहन ।”

“मोहन क्रीडा” जो ब्रज क्षेत्र में बहुत लोक प्रिय है, उसका भी चित्रावन मद्यनायक ने किया है — नायक कृष्ण उगली से उतारकर अँगूठी यमुना जल में डाल देते हैं । डूबने के लिये बालाएँ जल में डुबनी लगाती हैं और जब थक जाती हैं तब कृष्ण यमुना की पेंदी से अँगूठी निकालकर पहन लेते हैं

“खेलत ही जमुना जल में दुहैं सौतन के मन में हरि जोहन ।
डार दई कर तें बरकै नग मडित हेम अँगूठी है सोहन ।
बूडि उठी भी हुरी न गइ गडि भूतल बाल विलोकत जोहन ।
बूडि फिरै मुँदरी सिगरै तब पौधि लई अगुरी मनमोहन ।”

कृष्ण की इस अनुपम छवि को हृदय में सरन्वित कर लेने के पश्चात कवि को उनकी क्रीडाओं से आनन्द विभोर होने का सुभवसर प्राप्त होता है । वही प्रोषित पतिव्रता नायिका के प्रसंग में कवि जिस समय श्याम की अवधि निश्चित करके भी न आने की यात करता है नायिका के साथ उसके अपने नयन भी सजल हुए बिना नहीं रह पाते

“औधि दे सिघाए आली आज हूँ न आए
दुहु नैन घन छाए घनश्याम के वियोग तें ॥”

परन्तु कवि घनश्याम को वर्षा के उमडते हुए काले मेघों की ओर से आकाशता हुआ पाकर सन्तोष कर लेता है । उसके हृदय में उनकी सम्पूर्ण छवि साकार हो उठती है

1 ध शैलश जदो विलप्राम के मुसलमान कवि पृ 110

2 मद्यनायक मद्यनायक सिगार 132

3 मद्यनायक मद्यनायक सिगार 213

"जाका देवी देन दुत्र पूजत करत सोय
तई मध मूरति सरूप दरसा वही ॥
नाद धन गजन चमक दुति दतन की ।
उर मनिमाल अन्द बघो दष्टि भावही ।¹

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि "मद्यनायक" ने भी प्रत्यक्ष रूप से कृष्ण की रूप माधुरी के वणन में रचि लेकर वृष्णव भक्ति परक काव्य में अपने उद्गारा को सम्मिलित करा लिया है ।

जमाल

जमाल का रचनाकाल सन् 1627 के आसपास अनुमान किया गया है । इनके नीति और शृङ्गार के दोहे राजस्थान में बहुत जनप्रिय हैं । भाव व्यजना अत्यन्त मार्मिक पर सीधे साधे ढङ्ग पर की गयी है । ये भारतीय काव्य परम्परा से पूरणरूप से परिचित कोई सहृदय मुसलमान कवि थे । शब्द क्रीडा में भी ये परम निपुण थे । इनकी पहेलियाँ सुकितियाँ और दोहे अत्यन्त व्यजनापूण हैं —

"बामिन जावक रग रच्यो, दमवत मुक्ता कार ।
इम हसा मोती तजे, इम युग लिए चकोर ॥"²

भूमिका के अन्तगत 'जमाल दोहावली' के सकलनकर्ता ने अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया है —

"जमाल ने कृष्ण सम्बन्धित दोहे भी रचे हैं, किन्तु स्थान स्थान पर नीति तथा भक्ति के दोहों में भी उन्होंने प्रेम को ही प्रमुख स्थान दिया है । जिससे सिद्ध होता है कि वे प्रेम-पीर के पुजारी कोई सूफी कवि थे ।"

जमाल के प्रेम निरूपण के दो स्तर हैं — कभी उन्होंने अपने आध्यात्मिक प्रेम की चर्चा के लिये सती या वृष्णव भक्ति की शैली को अपनाया है तो कभी वे राधा कृष्ण को प्रेम लीला के वणन में रीतिकवियों के शृङ्गार मूलक नायिका-भेद भाग पर चलत प्रतीत होते हैं । एक ओर तो ससार की जनित्यता को देखकर "योगी" होने की चर्चा करते हैं, तो दूसरी ओर दधि भाखन (गोरस इन्द्रिय रस) के लिये इनके कृष्ण गोपियों का भाग राकत हैं

1 मद्यनायक मद्यनायक सितार 1274

2 जमाल दोहावली पृ 10

हिंदी के मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य

धेरत नित मुहि कुंज म भार्द नद किशोर ।
 दधि मासन वो खान हित कह जमाल करि गोर ॥¹
 कही जमाल" के वृष्ण गोपी की आँसो को रग गुलान स बज कर मन-
 ही प्रियसी के उरोजस्पश वरत है
 इक की आँखिन डार दी, काहा रग गुलाल ।
 इक को कर धरि कुच मल्यो, वारण कवन जमाल ॥²
 प्राय ईश्वर से अत बदना का निवारण न कर पाने पर धोम व्यक्त करत
 ह तो कही दशा क बिना आँसो की प्यास न युक्त पाने की गिकाप्त भी करते हैं ।
 दरम बिना नहीं जात है अँखियन प्यास जमाल ॥³
 जमाल की उक्तियों में कही गी 'सूफीपन' का सीधा संकेत नहीं मिलता ।
 यदि जमाल श्रद्धावन्त होते हैं तो केवल राम, कृष्ण, शिव, गणेश और सरस्वती की
 प्रतिमाओं के समक्ष ।
 जमाल की भक्ति और प्रेम सम्बन्धी उक्तियों में निवार और गहराई है ।
 इन्होंने कृष्ण, गिब गणेश की आराधना की है, कवि के अनुसार परमाराध्य देवा-
 धिदेव हैं "नदलाल कृष्ण"
 विवि विध कौ मय विधि जपत, कोऊ सहत न लाल ।
 सो विधि को विधि नद घर खेलत आय जमाल ॥⁴

अकबर साह

आपका रचना काल 1631 से 1662 तक समझ पड़ता है । आपका जन्म
 1599 में अमर कटब में हुआ था । आप बड़े विद्वान थे परन्तु विद्वानों का
 सत्संग रखते थे । जाईने अकबरी नामक प्रतिष्ठित ग्रंथ आप ही के विचारों
 का संग्रह है । आपके दरबार में कई हिंदी कवि भी थे । आप हिंदी कविता भी
 करने थे जो साधारण श्रेणी की होती थी । अनुमानत 1631 में आस पास ही
 आपने हिंदी में छन्द रचना की थी ।

कृष्ण के सम्बन्ध में आपका एक पद इस प्रकार है

जाको जस है जगत में जगत सराहै नाति,
 ताको जीवन सफल है कहत अकबर साहि ।

1	जमाल दोहावली	भूमिका	पृ 39	दोहा 125
2	वही			39 दोहा 155
3	वही			2 दोहा 5
	वही,			1 दोहा 4

'साहि अकबर एक सम चल कह विनोद विलोकन बालहि
 आहुट से अबला निरख्यो भक्ति चाक चली करि जातुर चालहि ।
 त्यो भलि बेनि सुधारि धरी सुमई छवि यो ललना अरु लालहि ।
 चपक चारु कमान चढ़ावत काम ज्या हाथ लिह बहि बालहि ।
 बेलि करे विपरीत रमै सु अकबर बयो न इतो सुख पावै,
 कामिनी की कटि किकिन नान बिया गनि पीनम के गुन गावै ।
 विदु प्रसेद को छूटो तालाट त यो लट म लटको लगि आवै ।
 साहि म भोज मनो चित मे छवि चद सय चक डोरि खिलावै ।

कादिर बहा

ये हरदाई जनपद के पिहानी थाम के निवासी थे । इनके जन्म का स
 1635 वि माना जाता है । इनके गुब पिहानी निवामी समय इम्राहीम थे । इनके
 स्फुट कवित्त ही प्रकाश मे आय है । य तोप थैणी के कवि ह ।

'गरज नगार भारे बृन्द हरकार आग
 ध्यजा धार धुवा गजतीना वन्दन के ।
 पवन तरंग चढ़े धाये भट रग रग
 घेरि आये चारो ओर सून ही सदन के ।
 नेकी पूक काती कल कोकिला स छाती
 बरि छाती हहराती देखे चपला रदन के ।
 कादर चिरह सुधि लीजै श्याम सादर जू
 जाये बीर बादर बहादुर मदन के ॥¹

रूपमती वेगम :

रूपमती का ज म सारगपुर नामक ग्राम मे एक बध्या के गभ से हुआ था ।
 बचपन से ही ये गायन वादन मे प्रवीण थी । काव्य रचना मे भी अनुराग था ।
 इनके गुणो से धाकपित होकर मालवा के सुल्तान, सजावल खाँ सूर के पुत्र नवाब
 बाजबहादुर ने इह अपनी वेगम बना लिया । स्वयं सुल्तान भी छोटी के कलाकार
 थे । बाज बहादुर न गायन और वादन दोनों मे दक्षता प्राप्त की थी । सम्राट
 अकबर की आगा से स 1647 वि मे अहमदखाँ ने मालवा पर आक्रमण किया
 जिसमे नवाब की हार हुई । उन्होंने युद्ध मे जान से पूव कुछ मतिको की वेगमा
 की रक्षा के लिये नियुक्त किया और आदेश दिया कि उनकी हार के पश्चात्
 शत्रुआ के महल मे आने के पूव वेगमो को समाप्त कर दे । अहमदखाँ रूपमती
 को वेगम बनाने का इच्छुक था किन्तु जीत के बाद महल मे आने पर अन्य
 रानियों के साथ रूपमती का भी आहत पाया । उपचार उपरांत रूपमती स्वस्थ

हो गयी। अहमद खाँ ने बेगम से विवाह की इच्छा प्रकट की। तब प्रस्ताव से उत्तरकर बेगम ने स्वीकृति दे दी लेकिन संध्या को जब वह रूपमती के कदम में आया तो देखा रूपमती ने आत्महत्या करली थी और एक दोहा लिखकर अहमद खाँ के लिये रख गई थी दोहा इस प्रकार है

रूपमती दुखिया भई बिना बहादुर बाज ।

तो अब जियरा तजनि है इहाँ नहीं कछु काज ॥¹

रूपमती की अधिक रचनायें उपलब्ध नहीं हैं। रानी नगोत पारंगता कवित्री थी इसका प्रमाण रागा पर आश्रित स्फुट छंदा से मिलता है।

मुंशी देवीप्रसाद जी के नागरी प्रचारिणी पत्रिका के तीसरे भाग में प्रकाशित 'रूपमती तथा बाज बहादुर की कविता', नामक लेख से इनके जीवन पर बहुत प्रकाश पड़ता है। इनके मतानुसार रूपमती सारंगपुर की चतुर मुजान पात्रु थी। अब्दुल कादिर वंदायुनी के शब्दों में वह आम खास में पदमिनी मरहूर थी। उसकी गान शक्ति का वर्णन करते हुए तवारीख मालवा में मुंशी करमअली ने लिखा है कि तागसेन जब दीपक राग की ज्वाला से व्याकुल हो रहा था तो रूपमती ने मल्हार राग गाकर बादलों को निमंत्रण देकर प्रकृति पर काला की विजय की घोषणा की। बाज बहादुर के रसिक व्यक्तित्व में काव्य तथा संगीत के प्रति एक विशय अक्षय था। रूपमती ने अपनी अगर रूप रशि तथा संगीत और काव्य गुण से बाज बहादुर को मुग्ध तो कर ही लिया, स्वयं भी उस पर मुग्ध हो गईं। बाज बहादुर इस हास विलास में अपने जीवन के उत्तरागमिष्वो को बिनकुल ही भूल गये परिणामस्वरूप उसे जकरूर से युद्ध में पराजय मिली।

मुत खिबुल नवाब के अनुसार रूपमती वेश्या होती हुए भी पतिव्रता थी किसी क हाथ से अपने वस्त्रों का स्पश मात्र से ही वह जहूर होकर मर गईं। उसकी काव्य रचना के विषय में अनेक उल्लेख विभिन्न ग्रन्थों में मिलते हैं।

बाज बहादुर के वियोग काल में लिखा एक दोहा मिलता है

बिन पिपा पापी जिया चाहत है सुख साज ।

रूपमती दुखिया भई बिना बहादुर बाज ॥²

घार राज्त्र के मीर मुंशी अब्दुल रहमान जी के द्वारा प्राप्त एक पद का उल्लेख भी मुंशी देवीप्रसाद जी ने किया है, वह इस प्रकार है

और धन जोड़ता है री, मेरे तो धन प्यारे की प्रीत पूजी

कहूँ त्रिया की न लागे दष्टि, अपने कर राखूगी कूजी ॥

1 हिन्दी के मुसलमान कवि पून विवरण पृ 123 124

2 मध्यकालीन हिन्दी कवित्रियों डॉ सावित्री सिन्हा, पृ 250

तान तरंग शाँ

ये संगीत सम्राट तानसेन के पुत्र थे। अबुल फजल व अकबरी दरबार के संगीतगो मे इनका नामालेख किया है। इनका कविता काल स 1640 वि के लगभग है इनकी कुछ स्फुट रचनायें मिलती ह। उदाहरण के लिए एक छन्द प्रस्तुत है

अब ही टारि र ईश्वरिया काहाई मेरी पचरग पाट की ।
हा हा खात तर पेया परति हा नासच मोहि मथुरा नगर हाट की ।
मर सग का दूरि निकसि गई हों न रही किहूँ पाट की ;
तान तरंग प्रभु भगरी ठामो, हँसन तुमार्ह पाट की ॥¹

शाहजहाँ

इनका जन्म और मृत्यु का समय क्रमशः स 1647 और स 1723 वि है बादशाह शाहजहाँ काव्य रसिक प्रसिद्ध थे। समृद्ध हिन्दी व विद्वानों का व आदर करते थे तथा स्वयं भी श्रमभाषा मे रचना करत थे। कृष्ण व बहुनामकत्व पर एक पद इस प्रकार है

मादो बीस दिनन भाद दयाम बाहू को आवग ।
कोकिला की कुटुक मुनि छाती माती राती भई,
बिरही आग ऊधो फव फूल व जरावेंगे ।
शाहजहाँ किया तुम बहू नायक ।
बिरहिन के अजुमन की तपत बुभावेंगे ।¹

ताज

धर्म तथा जाति की सीमा ताडकर कृष्ण के चरणो मे सखस्व समर्पण द्वारा ताज ने कृष्ण के रूप के प्रति नारी के सहज आकर्षण का प्रमाण लिया। ताज को कुछ विद्वान् 'पुरुष' मानत हैं। सिहोर (भावनगर राज्य) के निवासी कवि गोविन्द गिल्लाभाई को आगे रत्नकर हिन्दी के मुसलमान कवि म श्री गंगाप्रसाद सिंह (अखौरी) ने इनको 'पुरुष' लिखा है। अखौरी जी का तब यह है कि समस्त सखी भाव की उपासना करने के कारण ताज ने अपने लिये स्त्रीवाची संबोधना का प्रयोग किया है या हो सकता है कि ताज नाम के दो कवि रह हा।¹ पता नहीं कैसे उन्होंने यह कहा है कि गोविन्द गिल्लाभाई (ज स 1905 वि) ताज को पुरुष मानते हैं। गोविन्द गिल्लाभाई इन्हें 'स्त्री-कवयित्री' मानते थे जिसकी स्पष्ट सूचना निमलजी को मिल गये उनके एक पत्र में मिलती है

1 मध्ययुगीन हिन्दी के सूक्त इतर मुसलमान कवि - डॉ. उषााराधन श्रीवास्तव पृ 249

2 हिन्दी के मुसलमान कवि, पृ 161

दिन दिन बढ़े सवायो डेधडो घट न एको पूंजी ।

बाज बह दुर के स्नेह ऊपर निछावर करूंगी धन ओं जी ॥

“संसार के समस्त जन धन एकत्रित करते हैं परम वैभवं तो प्रिय के द्वारा प्राप्त प्रेम की पूंजी पर ही निर्भर है। अपनी उस पूंजी को मैं सुरक्षित करके रखूंगी तथा उसकी कुंजी भी अपने ही पास रखूंगी जिससे किसी अयस्त्री की दृष्टि उस पर न पड़ जाए। इस प्रेम की पूंजी में दिनोदिन वृद्धि होती जाती है, उसने से एक गुजा भी कम नहीं होता। बाजबहादुर के स्नेह के लिये मैं प्राण तथा धन सर्वस्व योछावर कर दूंगी।”¹

उन्हीं प्रधान वातावरण में रहते हुए भी, उनकी भाषा में संस्कृत शब्दों का प्रयोग है। दृष्टि, श्रिया, पापी स्नेह इत्यादि शब्दों का अस्तित्व मुसलमानी वैभव में पनपतो हुई भाषा के प्रभाव से युक्त वातावरण में आश्चर्य का कारण है, परंतु ऐसा अनुमान होता है कि बाजबहादुर के सासग में आने के पूर्व उनका पालन पोषण हिंदू वातावरण में हुआ था जिससे उन्हें हिंदी तथा संस्कृत से कुछ परिचय प्राप्त करने का अवसर मिला था।

इसका रचनाकाल स 1637 वि के लगभग है राग-रागिनियों से निबद्ध दो उदाहरण प्रस्तुत हैं

राग बिहाग

श्याम बिना उमगे रो, बह बदरा ।

बरखत रहत रन अरु बासर, हिय कियो अति कदरा ।

कासो कहो, सुने को मेरी, जोहत बैठी पिय को मगरा ।

“रूपमती” ओ बाजबहादुर, तजि श्रियो गोबुल मिटि गयो ऋगरा ॥²

राग टोड़ी

‘देसों रं, वो आवत बगर मे, होरी खेलत श्याम सलोना ।

दिन मे मन बस करत सबन को, वाकी मुगली म है कछु टोना ॥

मोरे मुकुट कुंडल की अति छवि, आरुन नैन अजन घर कोना ।

‘रूपमती’ मन होन बिरागी, बाजबहादुर के नद डिडोना ॥³

यह सत्य है कि मध्यकालीन जीवन की कूठाओं में नारी द्वारा सर्जित साधारण रचनायें भी बहुत महत्व रखती थीं परंतु उनके काव्य के विषय में प्राप्त अनेक अतिशयोक्ति पूर्ण उल्लेख उनके काव्य की साधारणता का उपहास सा करते हुए प्रतीत होते हैं।

1 मध्यकालीन हिंदी कविप्रिया में काविली निहा पृ 251

2 पौदार अभिनदन पृ 356

3 वही 356

तान तरंग था

ये संगीत सम्राट तानसेन के पुत्र के संगीतज्ञों में इनका नामोत्प्रेक्ष किया है। लगभग है इनकी कुछ स्फुट रचनायें मिः प्रस्तुत है

अब ही डारि न र डंडुरिया बन्हा
हा हा खात तर पेया परति ही ल
मरे सग की दूरि निवसि गई हा न
तान तरंग प्रभु भगरी ठायी, हेंसर

शाहजहा

इनका जन्म और मृत्यु का समय प्र है बादशाह शाहजहाँ काय रसिक प्रसिद्ध आदर करते थे तथा स्वयं भी ब्रजभाषा में पर एक पद इस प्रकार है

भादो जैसे दिनन भाई क्याम काह क
बोकिला की कुटुक मुनि छाती माती
बिरही आगे ऊधो फव फूल के जरावें
शाहजहाँ पिया तुम बहु नायक ।
धिरहित के अजुमन की तपत बुभावेंगे

ताज

धम तथा जाति की सीमा ताड़पर कृष्ण ताज ने कृष्ण के रूप के प्रति नारी के सहज आब मुख विद्वान् पुरुष' मानते हैं। सिहोर (भावना गोविन्द गिल्लाभाई की आग रलकर हिन्दी के मुसल सिह (अखीरी) ने इनको 'पुरुष' लिखा है। अखीरी सखी भाव की उपासना करने के कारण ताज ने अपना प्रयोग किया है या हो सकता है कि ताज नाम के दो ही वंश उहोंने यह कहा है कि गोविन्द गिल्लाभाई (ज स पुरुष मानते हैं। गोविन्द गिल्लाभाई इन्ह स्त्री-व्यपित्री' मा मूचना निमलजी का लिसे गये उनका एक पत्र में मिलती है

1 मध्ययुगीन हिन्दी के प्रथम दूर मुसलमान कवि - डॉ. उन्नावरायण श्रीवास्तव

2 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 161

"भानु के प्रकास बिना कज मुख ढाँपि रह,
केतकी के दास बिना धौंर दुख सीर है ।
देखे बिना चन्द के चकोर चित्त चाय रहे,
स्वाति बूद चाखे बिना चातक मन पीर है ।
दीपक की जोति बिना सीस सो पतग धुने,
नीर के बिछोह मीन कैसे करि जी रह ।
कहू कवि ताज मिल मानिये हमारी किधौं
नैनन मे देखू जब नैनन मे धीर है ॥¹

'ताज' की भक्ति भावना का आधार कृष्ण का माधुयमय विराट रूप है। उनकी भावनाओं में निश्चरणी का चञ्चल वेग नहीं समतल स्थान में प्रवाहित सरिता का शान्त स्निग्ध प्रवाह है। विराट की गरिमा के प्रति आस्था और विश्वास उनके काव्य के एक एक शब्द में प्रस्फुटित है। उपास्य के प्रति उनकी भावना में विश्वास जय समर्पण है। राधा और गोपियों के साथ कृष्ण क्रीडा के प्रति आनन्द और उत्साह तो है परन्तु उच्छ खल रसिकता नहीं। कृष्ण के मधुर रूप में भी नैसर्गिक छाप है, लौकिक व्यक्ति के रूप में भी उनके कृष्ण उनसे उच्च स्तर ह।

प्रेम पथ की गहनता और गम्भीरता से उनका प्रौढ हृदय परिचित है। कृष्ण के रूप सौन्दर्य के आकर्षण में बध्धकर उनकी भावनाओं का ज्वार समाप्त नहीं होता, बल्कि सतुलित मस्तिष्क उसे जीवन का आधार मानकर उसका मूल्य आबने का प्रयास करता है—

"मुस्वयानि तिहारी जो मैंने लखी,
लखि के मन मे अति नेह जुरानो ।
जो तुम चाहत एक बिसे,
हम एक के बीस बिसे तेहि मानो ॥
राह बढी है जो प्रेम के पथ की,
चातुर होय सोई चित्त आनो ।
जीवन ताज कहे जग मे,
तुय चारहि आदि के अक्षर जानो ॥²

हिंदु धर्म में प्रचलित आडम्बरो पर जो आरोप किये हैं, उनमें व्यग्य और लाछना नहीं है, परन्तु उनकी भीठी घाणी में निहित सकेत इन उपहासप्रद वस्तुओं की महत्त्वहीनता सिद्ध करने के लिये पर्याप्त है

1 मध्यकालीन कवयित्रियों की सावित्री सिंहा, - प 189

2 वही , , - प 189 190

धम में प्रचलित पौराणिक कथाओं, उनके शुद्ध तथा यथातथ्य वर्णन को देखकर विश्वास नहीं होता कि वे एक मुसलमान घराने में जन्मी, पली, बड़ी हुई ह।

महाभारत, रामायण आदि धर्मग्रन्थों की प्रचलित पौराणिक कथाओं से ही नहीं अपितु अत कथाओं से भी उनका पूरा परिचय था। हिन्दूधर्म ग्रन्थों की छोटी छोटी कथाओं जैसे - कुन्तपुर जाकर भीष्म की सहायता करने जैसी घटनाओं का समावेश भी उन्होंने अपनी रचनाओं में किया है। जिससे स्पष्ट है कि हिन्दू धर्म की रूपरेखा से वे पूर्णरूपेण परिचित थी तथा उसका उनको विस्तृत ज्ञान था।

कवयित्री ताज का एक अनुपलब्ध ग्रन्थ 'बीबी बादी वा भगरा' है। आपत्ति यह की जाती है, उक्त ग्रन्थ भक्त कवयित्री ताज का लिखा हुआ नहीं हो सकता। यह ताज नामक किसी अन्य कवयित्री की रचना है। श्री अगरचंद नाहुटा का कहना है — कि यह भक्त कवयित्री ताज के ही प्रारम्भिक जीवन में सम्बद्ध है। उन्होंने भक्ति सम्प्रदाय में आने के पूर्व इसे लिखा। सम्भव है, राज-महल जीवन से उन्हें ऐसी वृत्ति रचने की प्रेरणा मिली।¹

ताज का समय अकबर काल (स 1598-1663 वि) में ही पड़ता है। इ होने स्वयं एक कविता में अपने कुछ पूर्ववर्ती तथा समकालीन भक्त कवियों का नामोत्लेख किया है जैसे — कबीर नानक, मूलक, सूर, तुलसी, रैदास, नामदेव, दादू, सदाना कसाई, मीरा, सेन (नाइ)—

'ध्रुव से प्रह्लाद गज ग्राह से अहिल्या दक्ष
सबरी और गीघ यो विभीषण जिन तारे है।

पापी अजामिल सूर तुलसी रदास बड़
नानक मूलक 'ताज' हरि ही के प्यारे हैं।

धनी नामदेव दादू सदाना कसाई जानि
गनिक कबीर मीरा सेन उर धारे हैं।

जगत को जीवन जहान बीच नाम सुयो
राधा के वल्लभ कृष्णवल्लभ हमारे हैं ॥²

मानव भावनाओं के आरोपण में माधुय भाव की प्रधानता है। अनेक माधुय में लीला रूप तथा प्रेम का सामन्जस्य है। कृष्ण के प्रति उनकी भावनाओं में अनन्यता है। विरह की अनुभूतियों में मिलन की छाया देखकर स तोष कर लेने की शक्ति उनमें नहीं है तो उनके नर्तकों को तो साकार दर्शन में ही विश्वास है प्रेम सम्बन्धित अनेक प्रसिद्ध उपमानों से उनकी भावनाओं का यह सम्बन्ध स्थापन अनुपम है। कृष्ण के प्रति उनकी भावनाओं में अनन्यता है

1 डॉ. उपसर्कार श्रीवास्तव मध्ययुगीन हिन्दी के सूची इतर मुसलमान कवि, पृ 141

2 हिन्दी के मुसलमान कवि प 163

"भानु के प्रकास बिना कज मुख ढाँपि रहे,
 केतकी के वास बिना भौर दुख सीर है ।
 देखे बिना चन्द के चकीर चित्त चाय रहे,
 स्वाति बूद चाखे बिना चातक मन पीर है ।
 दीपक की जोति बिना सीस सो पतग धुने,
 नीर के बिछोह मीन कैसे करि जी रह ।
 कहू कवि ताज मिल मानिये हमारी विधौ
 नैनन मे देखू जब नैनन मे धीर है ॥¹

'ताज' की भक्ति भावना का आधार कृष्ण का माधुयमय विराट रूप है। उनकी भावनाओं में निःशरणी का चंचल बेग नहीं समतल स्थान में प्रवाहित सरिता का शान्त स्निग्ध प्रवाह है। विराट की गरिमा के प्रति आस्था और विश्वास उनके काव्य के एक एक शब्द में प्रस्फुटित है। उपास्य के प्रति उनकी भावना में विश्वास जय समपण है। राधा और गोपियों के साथ कृष्ण क्रीडा के प्रति आनंद और उत्साह तो है परन्तु उच्छ्वल रसिकता नहीं। कृष्ण के मधुर रूप में भी नैसर्गिक छाप है, लौकिक व्यक्ति के रूप में भी उनके कृष्ण उनसे उच्च स्तर है।

प्रेम पथ की गहनता और गम्भीरता से उनका प्रौढ हृदय परिचित है। कृष्ण के रूप सौंदर्य के आकर्षण में बध्कर उनकी भावनाओं का प्जार समाप्त नहीं होता, बल्कि सतुलित मस्तिष्क उसे जीवन का आधार मानकर उसका मूल्य आकने का प्रयास करता है—

"मुस्वयानि तिहारी जो मैंने लखी,
 लखि के मन में अति नेह जुरानो ।
 जो तुम चाहत एक बिसे,
 हम एक के बीस बिसे तेहि मानो ॥
 राह बढी है जो प्रेम के पथ की,
 चातुर होय सोई चित आनो ।
 जीवन ताज कहे जग मे,
 तुक चारहि आदि के अक्षर जानो ॥²

हिन्दु धर्म में प्रचलित आडम्बरो पर जा आक्षेप किये हैं, उनमें व्यग्र और साछना नहीं है, परन्तु उनकी भीठी वाणी में निहित संवेत इन उपहासप्रद वस्तुओं की महत्वहीनता सिद्ध करने के लिये पर्याप्त है

1 मध्यकालीन कवयित्रियों की सावित्री मित्रा - प 189

2 शही , , - प 189 190

काहू को भरोसो बढीनाय जाय पाँय परे,
काहू को भरोसो जगताय जू के मान को ।

“काहू को भरोसो 'ताज' पुस्कर मे दान दिये,
मो को तो भरोसो एक् नदजी क खाल को ॥”¹

“ताज के कृष्ण” मे महाभारत के राजनीतिज्ञ, गीता के उपदेशक तथा ब्रज के कवैया के रूपों का समय है। उपास्य तथा भक्ति भावना के अतिरिक्त कम काण्ड, भारतीय दशन भी उनके काव्य का प्रमुख विषय रहा है। जिनके सौष्ठव तथा स्पष्टता वा दृष्टांत इस प्रकार है

कम सो बुद्धि हूँ पान गुन अरु कम सो चातक स्वाति जो पीव ।
कम सो जोग अर भोग मिले, अरु कम सा पवज नीर न घोवे ॥
कम सो 'ताज' मिले सुख देह की, कम सो प्रीति पतग ज्यु देवे ।
कम के यो ही अधीन सब अरु कम बहु के अधीन न होवे ॥”²

ताज के काव्य में अनुभूतियों के स्रोत का स्वच्छन्द प्रवाह नहीं है। अनुभूतियों को मुक्तगेष्य पदा में स्वच्छन्दता प्रदान है। ताज ने कृष्ण काव्य धारा के लेखकों की पद शैली को न अपनाकर संवया शैली एवम् कवित्त शैली को अपनाया है। छन्दों की लय और संगीत तथा शैली की प्राजलता ने इनके काव्य को प्रमद्विष्णु बनाया है। अनेक स्थानों पर उत्प्रेक्षा, उपमा इत्यादि का प्रयोग इनके काव्य में सुन्दर बन पडा है। उपमाओं का सहारा लेकर अपनी मधुर व सरस भाषा तथा कोमल भावनाओं द्वारा चित्रनवीन बना दिया।

उपमा, उदाहरण, सन्देह इत्यादि अलंकारों का प्रयोग भी पर्याप्त मात्रा में है। उत्प्रेक्षा का एक सुन्दर उदाहरण इस प्रकार है

“नैकु विहाय न रैन कछु यह जान भयानक भार भई है ।
भौन मे भानु समाज सु दीपक अगन मे मानो आग दई है ॥

ताज के माधुर्य गुण में किसी स्थान पर लौकिक शृंगार की भावनाओं का प्रभाव प्रधान रूप से दिखाई देने लगता है। उनकी सरस अभिव्यक्ति प्राजल भाषा, सजीव कल्पना, भावुक चित्रण तथा सुन्दर अलंकृत शैली का परिचय, नीरव रजनी के एकांत में अशुभो जीर उच्छ्वासों से तडफती हुई विरहणी बाला के चित्रण से मिला जायगा।

“चन नहीं मन मे, मसोन सुनैन भर जल मे गतई है ।
ताज कहै पयक यो बाल ज्यो चप की माल बिलाय गई है ॥

1 डॉ. सावित्री सिन्हा मध्यकालीन हिंदी कवयित्रीयाँ पृ 189

2 यही

नेकु विहाय न रैन कछु यह जान भयानक भीर भई है ।
भीन मे भान समान सुदीयक, अगत मे मगो अगि दी है ॥¹

ताज ने काव्य रचना का आरम्भ एक प्रौढ़ जीवन दशा को आत्मसात् करने के पश्चात् किया था। इस्लाम के एनेश्वरवाद में उन्हें उनकी अपनी आध्यात्मिक जिज्ञासा का समाधान नहीं प्राप्त हो सका। उनके काव्य में रागात्मक अनुभूतियों के साथ गम्भीर दापानिकता की सरस अभिव्यजना मिलती है। इनकी भाषा संस्कृत के अनेक तद्भववा तथा तत्समो से बनी ब्रज भाषा है। उर्दू भाषा के प्रयोग के कारण खड़ी बोली का पुट भी इनकी भाषा में यदा कदा मिलता है।

ताज की जो रचनाएँ प्राप्त हैं, उन्हीं के आधार पर उनकी काव्य प्रतिभा और कला प्रियता का जाभास मात्र मिलता है।

“कृष्ण की कविताओं में, कला के सौष्ठव की दृष्टि से मीरा के पश्चात् ताज का ही स्थान धाता है। उनके काव्य की शुद्ध आत्मा सुधर कला की कसौटी पर पूरा परिष्कृत होकर निर्रर गई है। यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि ताज अपने युग की एकमात्र सचेष्ट कलाकार थी मीरा की अनुभूतियाँ की प्रखरता ही बसा बन गई थी, उनकी भावनाओं के अजस्र स्रोत की प्रवाह में सुदूर मुक्ताएँ मिलती हैं, परन्तु ताज की अनुभूति उनकी प्रतिभा तथा कला के स्पर्श से कुदन बन गई हैं।”

कवि जान

रचनाकाल स 1669 से 1721 वि

हिन्दी के विकास में महाकवि जान का बड़ा योगदान रहा है। वह हिन्दी प्रेमालयानो का सबसे बड़ा कवि कहा जाता है। जान सक्ति-सम्पन्न कवि थे, ईश्वर ने उन्हें अद्भुत कवित्व शक्ति प्रदान की थी। कहा जाता है कि हिन्दी की प्रख्यात कवयित्री “ताज” भी इसी क्यामखयानी नवाबो के परिवार की थी।

ताज शादी के बाद मीरा की तरह कृष्ण की दीवानी बन गई थी। वचन में जान को ताज ने खिनाया सिखाया था। उसके कवि हृदय और हिन्दु-मुस्लिम एकता के भाव का प्रभाव जान पर पडा था। और जान ने उसका उत्तम विकास भी किया।

बैसे तो महाकवि जान ने ‘प्रेमालयान’ परम्परा का ही निर्वाह करते हुए “धारित काव्य”, ‘नीति काव्य’, ‘उपदेग मूलक काव्य’ ज्योतिष काम दास्य, ककहरा आदि विविध विषयों पर अपने कवित्व का प्रभाव रखा है। इसके साथ ही उन्होंने कृष्ण एव राधा को भी अपने काव्य का विषय बनाया है, जिसकी की शृ गार मूलक रूप में प्रस्तुत किया है।

महाकवि जान के कुल 82 ग्रंथ मिले हैं। इनमें कई ग्रंथों में कृष्ण विषयक रचनाएँ हैं। जैसे "मदन विगोद" (स 1693 वि) में कृष्ण को नायक बनाकर नायक नायिकाओं से सम्बद्ध काम बलाओं का वणन सहृदयों के मनोरजनाय किया गया है। यह अत्यंत मनोरजक ग्रंथ है इसकी एक खण्डित प्रति अमर जैन ग्रंथालय बीकानेर में सुरक्षित है। बीकानेर की ही अनूप संस्कृत लायब्रेरी में भी इसकी खण्डित प्रति है। इसकी पण हस्तलिखित प्रति राजस्थान के प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर में है।

"विरह सत" नामक एक सौ एक दोहों की पोथी में (जिसे जान कवि ने दो दिनों में पूरा किया था।) कृष्ण के वियोग में व्याकुल राधा और गोपियों की विरह व्यथा से सम्बद्ध एक से एक रसमय दोहे मिलते हैं इसमें सयोग और वियोग श्रृंगार के दोहे हैं। कविवर "जान" ने इस काव्य के द्वारा सृष्टि में विरह ही सत्य है इस तथ्य का निरूपण किया है। सूफियों की सौकिक विरह के माध्यम से अलौकिक विरह की व्यंजना "विरह सत" का मूल प्रतिपाद्य है। (स 1671) में सम्भवतः इसकी रचना की गई है।

"विरह सार" नामक एक छोटे से काव्य में दोहा और सर्वथा छंद के माध्यम से महाकवि जान ने विरहनी राधा की विभिन्न विरह दशाओं का अत्यंत मार्मिक चित्रण किया है। जानकृत "सर्वथा" नामक आठ पृष्ठों का एक छोटा सा काव्य मिला है।¹ इस काव्य में एक से एक अनूठे छत्तीस छंद हैं। प्रत्येक सर्वथा अत्यंत सरस प्रमविष्णु और मार्मिक बन पड़ा है। इस पोथी के प्रारम्भ और अंत के पाने नहीं मिले हैं। इसमें राधा गोपिकाएँ और कृष्ण की प्रेम श्रीढाओं का बड़ा रसमय वणन किया गया है। राधा गोपी कृष्ण के प्रेम और उनकी क्रीडाओं को सामान्य सौकिक धरातल पर चित्रित किया गया है। इस विषय में कहा गया है कि 'यह विश्रम आगे के सुकवि रीभी हैं तो तोकवितार्ई न तु राधिका ऊहाई सुमिरन को बहानो हैं वाली सौकिक पद्धति पर है।

'वारह मासा' इन्दौर से प्रकाशित 'धीणा' नामक मासिक पत्रिका में डॉ. शिव सहाय पाठक ने इस ग्रंथ का प्रकाशन किया है, उन्होंने लिखा है कि इसकी हस्तलिखित प्रति में ढाई पृष्ठ हैं। इसमें चौदह सर्वथे हैं इसमें कृष्ण उदव और गोपियों के माध्यम से बारहमासा का वणन किया गया है।

सर्वथा (सर्वथा) या भूलनाह

इसमें कृष्ण की बशी से सम्बद्ध केवल 2 सर्वथे हैं। आकार की दृष्टि से यह जान कवि का सबसे छोटा ग्रंथ है।

1. हिन्दुस्तानी थकेरनी प्रयाग में संप्रदित जान कवि की हस्तलिखित प्रतियों में से एक।

कवि जान भी विधाता के इस मम से परिचित है कि उसने श्रीकृष्ण के श्यामवर्ण पर मोहित होकर ही शृङ्गार को सम्पूर्ण रसों में राजस्व प्रदान किया है। सम्पूर्ण जगत् को तारने वाले घनश्याम की छवि जिस रस में विद्यमान हो वह हमारे कवि की दृष्टि में साक्षात् 'जगतारन' स्वरूप है। इष्टदेव की पावन छवि को सकल सृष्टि में व्याप्त देखने के लिए बड़ी ही सूक्ष्म दृष्टि अपेक्षित है। कवि जान वह दृष्टि रखते हैं। तभी तो 'अग सोभा' की प्रारम्भिक पक्तियों में केशवणन के प्रसंग में कहते हैं

“पेखि रग श्याम को महात्म विधि रीझि जान
रसराज कीहो सब रस में सिंगार है ।
कीहो जगतारन जगतारन की आकृति,
रस भोग कारन सो कृष्ण अवतार है ॥
कियो सो पुनीत करै मन जो धरम रीति,
विघनहरन कारो कालिंदी को बार है ।
तिय तेरे बारन की श्यामता को अर लल
जगत सिंगार कीहो दै दै करतार है ।”¹

कवि जान लिखित 81 काव्यों में 'बारहमासा' कृति सबसे छोटी है। इसमें वर्णित सावन में जान के कृष्ण विषयक अभिव्यक्ति इस प्रकार है

सावन मास चले मन भावन महा अचनी बाढी तन मैं ।
होकर यौवन मनमथ धामी आप सिधारे है मधुवन मैं ॥
पिक्क चातिग केकी जारत हैं लौन लगावत घन धावन मैं ।
'जान' कहै तिभि हरि बिनु भीतत, गोपीयै जानत है मन मैं ॥

इस प्रकार हम देखते हैं कि कवि जान की पहचान कृष्ण काव्य में अमिट है।

अहमद

अहमद कवि का पूरा नाम ताहिर अहमद था। ये आगरा के निवासी थे। इनके ग्रंथों में अद्भुत विलास, मुक्ति विलास, बोकसार (गुणसागर), रस विनोद, रति विनोद सामुद्रिक और बाहरमासा प्रसिद्ध हैं "बोकसार" नामक ग्रंथ की रचना स 1678 वि है

सबत् सोरहू सी बरस अठहतर अघिकाम ।
वदि अयाढ तिथ पचमी कहि कीही समुभाय ॥
चारि धन्न सब विधि रचे जैसे समुद गभीर ।
छन घर अबिषल सदा, राज साहि जहगीर ॥

अहमद सम्राट जहाँगीर के समय विद्यमान थे। कुछ लोग उन्हें सूफ़ी श्रेणी के कविरूप में मानते हैं परन्तु यह ठीक नहीं है। इनकी रचना में वृष्णव मत की झलक दिखाई पड़ती है। डॉ० रामकुमार वर्मा, अहमद को असूफ़ी कवि मानते थे। उन्होंने इसी सन्दर्भ में लिखा है कि— प्रियसन का कथन है कि ये सूफ़ी थे पर इनकी रचनाओं में वृष्णव धर्म की छाप है।¹

‘जाति ते प्रीतम विदेस को गमन कीहो
तादिन ते ललना आनंद सी खरी रहै ।
अहमद केहूँ मिस हेरि हेरि-यहूँ दिसि,
अगुरिनि छाले परे गनत धरी रहै ॥
सोचन सकोचन सो बतिया दुरावति है,
मोचन चहत, प्रान औघक परी रहै ।
इहुमुखी जमा लागी सुरति अचभा सागो
कचन के खँभा लागी रभा सी खरी रहै ॥

अहमद को शृंगार प्रधान कवि माना जा सकता है। क्योंकि इनके काव्य में ‘शृंगार की प्रधानता है। रम विनोद, अहमदी बारहमासी आदि ऐसी ही कृतियाँ हैं। ‘कोकसार’ रीति विषयक ग्रन्थ है। ‘सामुद्रिक’ में हस्तरत्ना विधान का निरूपण है। ‘मुक्ति विलास’ का दूसरा नाम ‘हठप्रदीपिका’ है। दिग्विजयभूषण नामक ग्रन्थ से उपयुक्त दो कवित्त उद्धृत किये हैं। इनकी रचनाओं के कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं जिनसे वृष्ण विषयक वचन का स्वरूप स्पष्ट जा सकता है

अलस नाम इति परम गुर आदि अत विस्तार ।
जीव जत जल धल जहाँ शरनागति निस्तार ॥
निरगुन सरगुन पुरख को रचो सरूप अपार ।
जल धल भूमडल सकल प्रगट जीव विस्तार ॥²

‘अहमदी बारहमासी’ से

आज भले ही उद्योत भयो दिन गारि के नाह विदेस त आये ।
होँ मग जोइ थकी बहु चावनि भाग बडे घर बठे ही पाये ॥
नैन सिराय हियो भयो नीतस कोटिक भावनि मगल गाये ।
अहमद सेज सिगारन साजि के आनंद सौपिय गोबिन्द गाये ॥³

1 डॉ० रामकुमार वर्मा हिन्दी साहित्य का आलोचनात्मक इतिहास पृ 853

2 दिग्विजय भूषण पृ 566-567 (वृष्ण प्रकाश) (गोकुलप्रभा) हठ)

3 The Second Triennial Report - By Shyam Behari Misra Published by Nagari Pracharini Sabha Benaras 1914 P 420

दोहा "मन भ राखो मन जरै, कही तौ मुग जरि जाय ।
 'अहमद' वातन बिरह की, कठिन परी दुहु भाय ॥
 प्रीतम नहीं बजार मे, वहै बजार उजार ।
 प्रीतम मिल उजार मे वहै उजार बजार ॥
 कहा करौ बँकुठ मे, कल्पवृक्ष की छाँह ।
 'अहमद' ठाक सुहावने, जहँ प्रीतम गलबाँह ॥¹

जहाँगीर

जहाँगीर का शासन काल 1662 वि से 1684 वि के मध्य है। इनका जन्म स 1626 मे हुआ था। जहाँगीर ने भी अपने पिता की परम्परा का निर्वाह किया और ग्वाल रूप कृष्ण को अपनी कविता का विषय बनाया।

'अद्भुत गोप रूप वरनो न जाम कोटिक
 काम क्षुति सुघ बुघ बिमारे ।
 शाह जहाँगीर जान बूमकर सबुचावत इन
 ननन मे नैर बिहारे ॥'

मुबारक विलग्रामी

सैयद मुबारक अली विलग्रामी "शिष्या" (मुसलमान) थे तथा विलग्राम (हरदोई) के निवासी थे। इनका जन्म स 1640 वि मे हुआ था। इनका विवाह सैयद दुलारे के पुत्र सैयद मुहम्मद खलील की पुत्री से हुआ था। इनके पुत्र का नाम सैयद मुस्तफा तथा पुत्री का नाम सैयद हेमा था।

मुयारक सास्कृत, अरबी और फारसी के विद्वान थे। ग्रज भाषा पर इनका पूण अधिकार था। इनकी रचनाओं मे कल्पनाओं के निचरण के साथ ही विविधता, पदविभास, अप्रस्तुत विधान की भी समृद्धता देखते ही बनती है। इन्होंने नायिका के दस अंगों पर अलग अलग एन एक शतक लिखा है।

इनकी अलक शतक और तिलक शतक नाम की रचनाएँ प्राप्त हुई हैं जिसमे अलक शतक अपूण है। इसमे 85 दोहे ही हैं, जबकि तिलक शतक में नित्यानवे दोहे तथा अत मे एक सोरठा है। स्पुट कविता एयम 'सोवयो की तो गरमार ही है जो मुवारक अथवा 'भमारख नामो' की छाप रखती है।

इहोने अपने सर्वयो मे रीति परम्परा से हटकर नवीन चित्रों, बिम्बों आदि की रचना अपने काव्यो मे की है। फिर भी इनको रीति के अनुसरण कर्ता कहा जा सकता है। प्रेम व्यजना की अभिव्यक्ति इहोने मार्मिक ढंग से की है मुबारक

जब प्यारे के बिना हों कहा सखि हों सखियाँ दुखियाँ अंतियाँ जब खोलिहो
जैसी उक्तियाँ देने लगते हैं तो उनके सामने 'परिपाटी' नहीं होती है। प्रत्युत म
आपातत एक नवीन आश्चर्य भूत विस्तार करके इसमें पक्षियों के समान उड़ाने
भरने लगते हैं। इसकी रचनाओं को शृंगार मूलक रचनाओं की श्रेणी में रखा
गया है। वे सस्कृत अरबी, फारसी के विद्वान और हिंदी के मुकवि थे। इन्होंने
बड़े मार्मिक दोहा की रचना की है। अलक शतक और तिलक शतक के दोहनस
शिर के होते हुए भी अलंकारिक चमत्कार से युक्त हैं।

कृष्ण और राधा के उद्यान वीथी में आकस्मिक मिलन तथा कृष्ण पर राधा
के चाञ्चल्यपूर्ण स्नेह प्रकाशन से सम्बद्ध है ग्राम्य जीवन के सौम्य वातावरण में य
निबन्ध युगल बहुविध कौतुक से एक दूसरे का मनोरंजन करते हैं।

वह साँकरि कुज की खोरि अचानक माधव राजा भेंट भई ।
मुसकान भली अचरा की अली त्रिली की बली पर दीठि गई ।
भहराइ झुकाइ रिसाइ मुबारक बाँसुरिया हँसि छीनि लई ।
भृवूटी मटकाइ गोपाल के गालन बागुरि खालि गढाई गई ॥¹

राधा की भाव भंगिमा, विलास चेष्टा के यथाथ अंकन से औचित्य सुषमा
प्रखर हो उठी है।

मुबारक की रचनाओं में राधा कृष्ण से सम्बन्धित बड़े ही सुंदर और मम
स्पर्शी छंद बने पड़े हैं। इनकी सम्पूर्ण हिंदी कविता उनके विशाल हृदय और
कुशाग्र बुद्धि की परिचायक है।

मुबारक की ही भाँति हिंदी में एक और जुगतराय (जगतानंद) द्वारा
रचित 'तिलक शतक' रचा गया किन्तु मुबारक कृत तिलक शतक की सुंदर सजा
बट देखते ही बनती है। मुबारक ने अपने काव्य में अनुप्रास, रूपक, उपमा, श्लेष
पर्यायोक्ति आदि का सुंदर समावेश किया, तथापि ये मूलतः उत्प्रेक्षा के कवि हैं।
भावों के ऐसे सज्जाकार मध्ययुग में थोड़े ही हुए हैं। उदाहरण के लिये कवित्त
इस प्रकार है

'हमको तुम एक अनेक तुम्हें उनही के विवेक बनाय रहो ।
इत आस तिहारी तिहारी जतै विभिचारी को नेम बरबै निवहो ॥
मन भावै 'ममारख' सोई कसै अनुराग सता जिन बोम दहो ।
धनस्याम सुखी रहो आनंद मो तुम नीके रहो, उनही के रहो ॥²

×

×

×

1 मूलसमानों की हिंदी सेवा पृ 159

2 सुंदरी तिलक पृ 16

कान्हू के बाँकी चित्तीनि चुभी
 मुकि कान्हि ही खालिनि भाकि गयाधन ।
 दखि अनोखी सी चोखी भी कोर
 अनोखी परो जिन ही तित साधन ॥
 माईरी जान निहार 'ममारख',
 ए सहजै कजरार मृगाधन ।
 काजर दे रोन एरी मुहागिन,
 बाँगुरी तेरी करंगी बटाधन ॥ १

× × ×

'चबल चौखे से चौबने मे, चटकार से, चौगुने रूप अभिराम के ।
 सान-सगे से विषान लगे से, सधान पगे से रगे स सलाम के ॥
 माजे 'मुबारक' दे विष-अजन, सीध से बाधि ऊद घनस्यी के ।
 बान चितै हग तेरे गियारी, रहे सर काम न एकदू काम के ॥'

मुबारक ने अलक गतक और तिलक शतक प्राया मे अलक और तिलक दोनों को ही प्रेम के अक्षर के रूप मे देखा है । अलक और तिल दोनों का वष श्याम है । प्रतीत होता है कि मुबारक ने इन दोनों अंगों को श्री कृष्ण के प्रतीक के रूप मे स्वीकार किया है और इन्हीं का मूलम अध्ययन करके ये पूण गात्र प्राप्त कर लेना चाहते हैं । कवि—'सोघ कियो विधि चिबुब' म ममता के अनुसार^१ और तरकाल ही वह पिपुके को 'रसधाम' बताकर पाठक का ध्यान घनश्याम के ब्रीडा क्षेत्र की ओर आकृष्ट कर देता है— 'तिलजु चुबक परलसत है सो सिगार रसधाम ।'^२ इस प्रकार मुबारक के काव्य का अधिपति प्रत्यक्ष अथवा परीक्ष रूप मे मात्र एषमूत्र नरेरा श्रीकृष्ण की परिभ्रमा करता हुआ दृष्टिगत होता है ।

भक्तिकालीन युग मे भक्ति की चार दाव्याया का तो स्पष्ट उत्प्रेक्ष है ही । मानसार्थी साक्षात् सन्तो ने जो अलस जगया बहु जन जग मे व्याप्त हो गया । इन सन्तो ने सामाजिक जन को नई दिशा और नया उत्साह प्रदान किया, एक आत्म विश्वास जायत किया, जिससे उनकी निरागा दूर हुई । भक्ति क्षेत्र प्रति वधित और मर्यादित न रहकर विस्तृत और व्यापक हो गया । इसका प्रभाव नमकाण्डिया पर भी पडा व भी कुछ उदार हुए और सामाजिक जन के प्रति आकृष्ट हुए । इस आन्दोलन ने शासन के भय को दूर किया और साथ ही मूर्ति भजन से जो आस्था उगमगा रही थी, उसमे साकार के स्थान पर निराकार को रचावित कर आस्था का पुन दृढ़ता प्रदान की ।

1 मुन्शी निररक पृ 53-54

2 मुबारक तिलकशतक पृ 26

3 पदो 28

राम भक्ति शास्त्र में आचार्य तुलसी ने जिस आदर्श स्वरूप की स्थापना की वह स्वरूप अर्द्धास्पर्द, बादनीय तो हुआ परन्तु सहज न होने से आकषण का केन्द्र न बन सका।

कृष्ण भक्ति की सुदीर्घ परम्परा भक्तिकाल तक आते आते अनेक आकषक रूपों में पल्लवित पुष्पित हुई। भागवत अवतारी कृष्ण की बहुआयामी क्रीडायें, सीसाएँ जन रजन के साथ-साथ रचनाकारों के लिए आकषण का केन्द्र बन गई। कृष्ण के व्यक्तित्व में असंख्य कथानक समाये हुए थे। इन कथानकों में जिसे जो प्रसंग प्रिय लगा वह उसी ओर उन्मुख हुआ। प्रेम-तत्त्व का विशेषज्ञ सूफी समाज ज्ञान के खुरदुरे धरातल की अपेक्षा प्रेम की सुकोमल धरती पर प्रेमी युग्मों की सीसाओं का भ्रूजन करता रहा। प्रेम तत्त्व के सर्वाधिक सशक्त कवि मलिक मोहम्मद जायसी ने पदमावत की रचना की। यह महाकाव्य हिंदी का गौरव है।

जायसी के जीवन से सम्बन्धित अनेक चमत्कार पूरे घटनाओं का वणन पढ़ने को मिलता है यथा वे परकाया प्रवेश की विधि जानते थे और अपना रूप ध्यात्र का बना लेते थे—यह कथन कितना विश्वसनीय है इसकी चर्चा यहाँ आवश्यक नहीं है परन्तु प्रेम भाग के सशक्त सूफी कवि मलिक मोहम्मद जायसी ने पदमावत की कथा का ताना बाना बुनकर जो झिलझिल वस्त्र तयार किया था उसके पूरे वे कृष्ण के बहुरंगी व्यक्तित्व से न केवल प्रभावित हुए अपितु उसके प्रति उनमें असीम आकषण उत्पन्न हुआ। वे कृष्णमय हो गए और उन्होंने कहावत महाकाव्य की रचना की। महान अवेपक डाक्टर शिवसहाय पाठक ने अपाध्य परिश्रम करके कहावत की खोज की और उसका सम्पादन करके हिंदी जगत को नया ज्वालन्मान रत्न 'कहावत' प्रदान किया। कहावत के प्रकाशन से कृष्ण काव्य धारा में एक नया अध्याय जुड़ गया। कहावत पदमावत पूर्व की रचना है। इसमें सम्पूर्ण कृष्ण चरित्र का वणन हुआ है। कृष्ण का आद्योपांत चरित्र इस महाकाव्य में वणित हुआ है। जायसी के भाव धरातल के अनुकूल कृष्ण चरित्र था अतः जायसी ने बड़े मनोयोग से इसकी रचना की है। जायसी की लेखनी हेतु यह सुन्दर क्रीडा स्थल था, जिसमें उनका मन खूब रमा है। कृष्ण-गोपी और राधा कृष्ण के वणन बड़े मनोरम हैं। मथुरा में कुब्जा की कृष्ण ने ऐसा रूप प्रदान किया कि सब उसके रूप को देखकर ठगे से रह गए। एक सुनार जो गहने बना रहा था उसने अपने हाथ पर ही हथौड़ी मार ली। इस प्रकार के रूप सौन्दर्य वणन के साथ ही महाकाव्य में कृष्ण के योगिक रूप का भी वणन हुआ है। योगीराज गोरखनाथ कृष्ण का युद्ध होता है उसमें अनेक प्रकार की सिद्धियों का प्रदर्शन बताया गया है। इस युद्ध में कृष्ण विजयी होते हैं।

कहावत हिन्दी का प्रथम महाकाव्य है मूर पूव की इस रचना ने कृष्ण भक्ति साहित्य को जहाँ समृद्ध किया है वहीं कृष्ण भक्ति धारा के पुनर्मूल्यांकन की आवश्यकता भी उत्पन्न कर दी है। भक्तिकाल में रामचरित पर तुलसी का "रामचरित मानस" आकर प्रथम है। भक्तिकाल के दो ही महाकाव्य थे पदमावत और रामचरित मानस। कहावत पदमावत पूव की रचना है और महाकाव्य भी। जायसी ने स्वयं कहावत ग्रंथ की रचना में कहा है कि मैंने भागवत एवम् अन्य पुराणों का अध्ययन किया है। जायसी कृष्ण काव्य की पूर्ववर्ती परम्परा से पूणतया परिचित थे। कृष्ण का चरित्र उनके सूफीयाना स्वभाव पर छा गया, उनके अंतरतम तक उतर गया तब उन्होंने कहावत की रचना की। जायसी पर कृष्ण चरित्र, उनके प्रसंगों और सम्बंधित कथों का व्यापक प्रभाव था। जायसी के पदमावत में भी अनेक प्रसंगों पर कृष्ण जीवन व सदर्भों का प्रयोग किया गया है यह इस अध्ययन से और स्पष्ट हुआ है। एक मुसलमान कवि द्वारा हिन्दी में कृष्ण चरित्र पर सर्वप्रथम महाकाव्य लिखा जाना आश्चर्य की सीमा तक आनंद का विषय है।

संयद इब्राहीम "रसखान की रचनाएँ 'रसखान शतक', "सुजान रसखान" 'हित चिंतक' और "प्रेम वाटिका" नाम से प्रकाशित हुई हैं। रसखान दिल्ली पठान सरदार के लडके थे। भगवान कृष्ण से आपने रूहानी मोहब्बत की। स्वामी विठ्ठलनाथजी ने इनको पुष्टिमाय में दीक्षित किया। भागवत में गोपियों के अनन्य और अलौकिक प्रेम को पढ़कर इन्हें ध्यान हुआ कि उसी से क्यों न मन लगाया जाय, जिसे इतनी गोपियाँ अपने प्राण अर्पण करती हैं। यह विचार आने पर ये देहली छोड़कर वृंदावन चले गये। यहाँ आकर रसखान कृष्णमय हो गए। आपने बालकृष्ण, कालिंद दमन, कृष्णलीला, मुरली माधुरी होली गोचारण, चीर हरण, कुज लीला, रास लीला, पनघट लीला बन लीला गौरस लीला, राधा रूप छटा, वन-संधि सुकुमारता, पूनराग अभिलाष, दधि लीला उलाहना, सपत्नीभाव, मिलन विभोग, मानिनी, प्रिया विदग्धा, सुरत सुरतात शुद्ध शृंगार, युगल जोड़ी, भ्रमरगीत आदि प्रसंगों का मनोयोग से वर्णन किया है। रसखान के काव्य में जो समपण भाव पाया जाता है वह अत्यंत दुर्लभ है। उन्होंने कृष्ण व सयक में आने वाली सजीव निर्जीव वीर भी यस्तु बन जाने की कामना की है। जन्म जन्मतरो तक वे कृष्ण के आतिथ्य में रहने की कामना करते हैं और गोपियों के समान रसखान के भी नेत्रों में "नवरग अनग भरी छवि सौं, वह मूरति आँखि गठी ही रहे।" और इसीलिए वे स्पष्ट कहते हैं - "मन भाई रही रसखानि महाछवि मोहन की तरसाई रही।"

स्वामी हरिदासजी के शिष्य तानसेन संगीत सन्नाट थे। मूर और अष्ट छाप के अन्य कवियों से तानसेन की मित्रता रही है। आपने अनेक देवी देवताओं की स्मृति में पद गये हैं। कृष्ण की बाललीला राधा कृष्ण का सौंदर्य मुरली, मान,

उपालम्भ विरह आदि का विस्तृत वर्णन इनकी रचनाओं में उपलब्ध है। तानसेन भक्तिकाल में हात हार भी रीतिकालीन कविता का पूर्वाभास देते हैं।

कृष्ण भक्ति का जाड़ इतना व्यापक और अनूठा था कि इससे वादघाह भी अछूने नहीं रहे। अकबर, साहजहाँ और जहाँगीर कृष्ण के इस रूप जाल में बंध गए हैं। अब्दुल रहीम गानखाना युद्ध और काव्य दोनों ही क्षेत्रों में दीर रहे हैं। अकबर के दरबार में रहीम को उच्च पद प्राप्त था। रहीम की रचनाएँ 'दोहावली' 'नगर शोभा' 'बरबै नायिका भेद', 'शृंगार सारठा' आदि शीघ्रको से प्रकाशित हुई हैं। रहीम के मानस पर भी "कमलदल नन कृष्ण" की गहरी छाप पड़ित थी। रहीम अरबी फारसी के विद्वान थे और आपका ब्रजभाषा ज्ञान भी व्यापक था। जमाल भी इस युग के वे कृष्ण भक्त कवि हैं जिन्होंने प्रेम को ही प्रमुख स्थान दिया है। अकबर साह, कान्तिर बक्श तान तरंग खाँ भी रसिक कृष्ण के रूप जाल से बंधे से दिखते हैं। रूपमती वंगम गायन वादन में प्रवीण थी। इनकी अनेक रचनाएँ विभिन्न रागा में आवद्ध प्राप्त होती हैं। गीत नस्व की प्रधानता होने के कारण भाषा में लोच है

'दयाम बिन उमगे री बहु बदरा।'

ताज इस युग की वे उत्कलनीय कवियत्री हैं जिन्होंने यह स्पष्ट घोषणा की कि

"नन्द के कुमार कुरबान तानी सुरत पै -

हा ता सुरआनी हि दुवानी हू रहगी मैं।"

रमलान की भाँति ही ताज भी कृष्ण के रूप सौंदर्य पर मुरत हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि ताज पर कृष्णवर्धन का गहरा प्रभाव पड़ा है। कृष्ण के प्रति प्रगाढ़ प्रेम के वर्णन के साथ हिन्दू धर्म की अन्त कथाओं का उल्लेख आश्चर्य की वस्तु है। रामायण महाभारत की अनेक कथाओं से आपका पूर्ण परिचय था। ताज ने अपने कवित्त में पूर्ववर्ती भक्त कवियों का भी उल्लेख किया है। ताज के काव्य में उदास्य के प्रति विश्वास जय समर्पण है। राधा और गोपियों के साथ कृष्ण श्रीडा के प्रति आनन्द और उल्लास तो है, परन्तु उच्छ्वसल रसिकता नहीं है। उनके काव्य में प्रेम पथ की गहनता और गम्भीरता है ताज निःशङ्क रूप में कहती हैं 'मो को तो भरासो एक नान्नी के लाल को' धाम्निव में हिन्दी कृष्ण काव्य को 'ताज' पर नाज है।

ताहिर जहमद आगरा का निवासी थे। इनके 7 ग्रन्थ हैं जिनमें प्रियसन ने अहमद साहब को सुफी कवि माना है परन्तु इनके काव्य में कृष्ण का रूप सौंदर्य और विरहानुभूति की व्यापकता है। कृष्णवर्धन का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है। अहमद के कृष्ण मयुरा चले गए हैं अतः अहमद के दूर गित हेरि हेरि

बहु दिखी, अँगुरिनी छाते परे गनन धरो रह ।” अहमद ने भी रीति बाल की पूज पीठवा-सी तैयार कर दी है। आपके काव्य में शृंगार की प्रधानता है। मुबारक बिलग्रामी का इस कड़ी का अन्तिम कवि कहा जा सकता है, जिन्होंने मतिवात में कृष्ण की शलक शतक निरख शक में नवीन जिम्हो और विशो क माध्यम से प्रस्तुत किया। प्राबलता और धीर प्रवाह आपकी भाषा की विशेषता है। इनके मयादित शृंगार में एक विशिष्ट आकषण और मधुरता है जो पाठक के मन में मिठास घोलनी सी लगती है, जब वे कहते हैं

“हमको तुम एक अनेक तुम्हें, उनही के विवेक बनाम रही’



हिन्दी के मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य
(संवत् 1700 से 1980 तक)

संवत् 1700 से 1900 तक के समय को आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के शृंगार काल कहा है। इस मध्य शृंगार रस प्रधान कालिक काल का नाम है। प्रेम, राम, कृष्ण, भक्ति की सरिताएँ ब्रह्मण्य क्षीप होती हैं। कृष्ण और राधा जो भक्तिकाल में आराध्य थे, जिनकी सद्बुद्धि और इच्छाएँ ही सबकुछ हैं, सीको को स्वीकार करने हेतु उत्पन्न थे। नूर के सदा, मीरा के सदा, जयसी के सीता पुरुष कृष्ण रीतिवाल में या नूर ही, या मीरा ही, या जयसी ही के रूप में प्रस्तुत हुए।

भक्तिकाल की स्वतंत्र स्वच्छन्द कविताएँ मुसलमान कवि-आदि राजशास्र की ओर आकर्षित हुईं। अघिदास कवि मल्लिकार्जुन के अतिशय हुए। राजाओं, नवाबों की मनोरंजा के अर्थक्य के कविता की शृंगार में सराबोर थी। पुरस्कार और अशर्तों की कविता उन काल में ही होती है। बलपना प्रधान सुशचिपूर्ण चित्र कलात्मक के अर्थक्य, इस कालिक में कवि एकांतवासिनी हो गई। अघिदास मल्लिकार्जुन के अतिशय हुए। वे कवि से कचन लेकर कुचों पर सदा ही ही कवि के साथ सदा ही का स्मरण भी किया।

वहाँ छोड़ा रगरजों की बहती है। श्री दोम ने ज्ञाना विषा है कि आलम मुसत इसी गीत के निवासी थे। जो भी हा इतना सही है कि आलम औरगजब के दूसरे बड़े मुअज्जम के आश्रय में रहने थे। यही मुअज्जम बाद में बहादुरशाह नाम में दि ली हा चादगाह हुआ। इस प्रकार आलम का कविता काल 1740 से 1760 विव्रम तक माना जा सकता है। इनके पद्य शफुट रूप से अनक पद्य प्रथी में सद्य हित मिलते हैं और बहुत से उल्लेख पद्य भोगी को कण्ठस्थ भी हैं। 'आलमकेलि' नामक इनकी कविताओं का सग्रह प्रक्यात है।

आलम के साथ ही गाय रगरेजीन भी अच्छी कवियित्री थी। इन दोनों के प्रेम की कथा भी बड़ी सुन्दर है। कहा जाता है कि आलम ने एक बार अपनी पगड़ी शेष रगरेजीन को रगन में लिये दी, भूल से पगड़ी की खूट में एक चिट धरी रह गई। जब रगरेजीन ने उस छोटा तो चिट पर एक अधूरा दोहा इस प्रकार लिखा मिला

'कतक छरी सी कामिनी, काह को कटि छीन ।'

शेष ने चिट को अलग रखकर पगड़ी का बड़े मन से रग डाला चिट के अधूरे दोहे का निम्नलिखित रूप में पूरा किया

'कटि को कचन काटि विधि कुचन मध्य धरि दीन ।'

और उस चिट को उसी पगड़ी में खूट में बाँधकर आलम के पास भेज दिया। उस खूट की चिट को पढ़ने के बाद शेष आलम पर प्रेमी और पुजारा हो गये आर बाद में उनसे विवाह कर लिया।

आलम द्वारा रचित कवित्त व सयथो में भी बहुत सी रचनाएँ शेष की मानी जानी हैं। निम्नलिखित कविता में शोध चरण शेष रगरेजीन का व शेष आलम को बनाया हुआ कहा जाता है

'प्रेमरग पग जगमगे जग जामिनि के,
जीवन की जाति जगी और समगत है।
मदन के माते मनवार एम घूमत है,
सुमत है झुकि-झुकि यदि उधरत है ॥
आलम सी तबल निकाई इन नैनन की,
पाखुरी पदुम में भबर पिरकत है।
चाहत है उडिबे को देखत मयक मुख,
जानत है रंगि बातें ताहि में रहत है ॥'

आलम प्रेमीभक्त यदि थे रीति बद्धता में उनका कुछ लेना देना नहीं था। मग की तरंग के अनुष्ण ही व रचना करते थे। इनके एक एक धामय में "इदक"

या प्रेम की पीर भरी मिलती है। हृत्प्र तत्त्व ही इनकी कविताओं में प्रधान रूप से मिलता है। शब्द वैचित्र्य, अनुप्रास की प्रवृत्ति इनमें अधिक नहीं मिलती किन्तु इनकी उत्प्रेक्षाएँ बड़ी अनूठी व बहुत अधिक हैं। श्रीकृष्ण के प्रेम के ये दिवाने ये।

शृ गार रम की ऐसी उमाद भरी उक्तियाँ इनकी रचना में मिलती हैं कि पढ़ने और सुनने वाले लीन हो जाते हैं। यह तमयता सच्ची उमग में ही सम्भव है। रेषता या लक्ष्मी भाषा में भी इन्होंने कवित्त बहूँ हैं। भाषा भी इनकी परि-
माजित और सुव्यवस्थित है, पर उसमें कही-बही कौन, दीन, जीन आदि अवधी या पूरबी हिन्दी के प्रयोग भी मिलते हैं। प्रेम की तमयता की दृष्टि से आलम की गणना "रसखान" और घनाद की कौटि में होना चाहिए। इनकी कविता में कुछ नमून नीचे दिये जाते हैं

"जा थल कौन बिहार आवन ता थल काकरी वठि चुयो करे,
जा रसना सा करी बहु बातन वा रसना सौं चरित्र गुयो करे,
आलम जीन से कृजन में करी केलि, तहा अब सीस धुयो करे,
ननन म जी सदा रहते, तिनकी अब जान बहानी सुयो बरे ॥¹

इनके द्वारा रचित दो रचनाओं में कृष्ण का वणन है। "श्याम सनेही" और "मुदामा चरित्र"। कुलपति मिथ न आलम के लिये एक दोहा कहा है

"तव रस मय मूरति सदा, जिन बरने न-दलाल ।
आलम आलम बस कियो, दे निज कविता जाल ॥²

दो पक्तियाँ इस प्रकार हैं

"नद सौं बहुत नन्दरानी हो महर,
सुतचन्द की सी बलन बड़तु मेरे जान है ।"

शेख रंगरेज

दोख का उल्लस प्रायः समस्त राज ग्रन्थों तथा इतिहासों में मिलता है। आलम से परिचय होने से पूरा उनके जीवन के विषय में कहा जा सकता है कि उनका जन्म एक मुसलमान घराने में हुआ था। य जाति की रंगरेज थी, तथा बपड़े रंग बर ही अपना जीविकोपाजन करती थी। नतिक उल्लसलता के इस युग में दोख तथा आलम की पुनीत प्रेम ग्रन्थि प्रेम की अनेकमुखी रसिकता पर एकनिष्ठ प्रेम के विजय की घोषणा करती है। आलम और दोख एक दूसरे के लिए

1 व शानबद शूबन हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 314-315 के उद्धृत

2 डॉ. सारनिनी कुलश्रेष्ठ हिन्दी साहित्य में कृष्ण पृष्ठ-317

ही बने थे। घम, सम्पूर्ण ससार के विरोध, सामाजिक बंधनों, मायताओं को तोड़कर एक दूसरे से मिल गये। भावनाओं को जो पारस्परिक भावगत सामंजस्य प्राप्त हुआ, उन्होंने उनकी प्रेमगाथा को अमर कर दिया।

श्री शिवसिंहजी ने दोनों का उल्लेख "शिवसिंह सरोज" में किया है। आलम सनाढ्य ब्राह्मण थे। इनका रचनाकाल सम्वत् 1740 से 1770 तक माना जाता है। आलमकेलि की हस्तलिखित प्रति की तिथि 1753 है। आलम का समय अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तथा उत्तरार्द्ध का आरम्भ रहा होगा आलम और गजेब के पुत्र मुअज्जम के दरबार में रहते थे। आलम के निश्चित समय के आधार पर ही शेख के समय का भी अनुमान किया जा सकता है। परंतु इनकी जन्मतिथि तथा मृत्यु तिथि का ठीक ठीक निश्चय अभी नहीं हो सका है। शेख तथा आलम की प्रणय की कथा प्रसिद्ध है। शेख के विषय में प्रचलित साहित्य से पता लगता है कि उनका जीवन विवाह के पश्चात् भी काफी स्वतंत्र था। उनके पुत्र का नाम जहान था। शाहजादे मुअज्जम के साथ जिस प्रकार के विनोद का उल्लेख मिलता है, उससे ऐसा आभास होता है कि वे राज दरबार इत्यादि स्थानों पर स्वच्छन्दता पूर्वक आती जाती थीं। एक दिन मुअज्जम ने शेख से पूछा 'क्या आलम की पत्नी आप ही हैं?' शेख ने प्रस्तुत उत्तर दिया 'हाँ जहाँपनाह। जहान की माँ मैं ही हूँ।'¹ इस हास परिहास से शेख के मुख्य व्यक्तित्व का परिचय तो मिलता ही है साथ ही उनके जीवन की स्वाधीनता की रेखा भी स्पष्ट दिखाई देती है।

कतिपय ताकिक शेख और आलम का एक ही कवि (शेख आलम) सिद्ध करते हैं किंतु ऐसा सम्भव ही नहीं है। आलम ने शेख की काव्य प्रतिभा को देख कर सारे बंधनों का अतिक्रमण कर शेख से विवाह किया था। अतः किसी प्रकार का सन्देह करना अनुचित ही है।

'आलम केलि' के नाम से प्रकाशित संग्रह आलम शेख की कविताओं का संग्रह है। सम्पूर्ण ग्रंथ की भाषा 'श्रज भाषा' है। "आलम केलि" संग्रह श्रृंगार परक उत्कृष्ट ग्रंथ रचना है। रीति वासिन श्रृंगारिक काव्य परम्परा के अनुसार नायिका भेदों तथा प्रेमलीलाओं का वर्णन है। पदावली के प्रारम्भ में कुछ बाल लीला के पद हैं, जिसमें एक पद शेख द्वारा लिखा गया है। पद में कृष्ण के बाल जीवन का सुन्दर सजीव चित्रण है। बालक कृष्ण की चंचलता, माँ यशोदा के यासत्य को शम्भु के माध्यम से स्वाम्भाविक रूप में उदरेहा गया है

"बीस विधि आऊँ दिन बारीय न पाऊँ और
याही काज याही पर बांसनि की बारी है।"
नकु फिर आई हैं बहूँ बँ री दे जसोदा मोहि,

मों पै हृठि मागे बैसी और बहू डारी है ॥
 सेख कहै तुम सिखदी न कछु राम माहि,
 मारी गरिहाइतु की सीसे सेत गारी है ।
 सग साइ मइया नेपु न्यारो न कहैया कीजै
 बलन बलैया लँके भैया बलिहारो है ॥”¹

‘धम सचि’

इस प्रसंग के केवल दो कवित्त ही उपलब्ध हैं । एक कवित्त में न तो शेख का नाम है, न आलम का । दूसरा कवित्त आलम द्वारा रचित है । नबोढ़ा प्रसंग के अनेक कवित्तों में शेख द्वारा रचित एक कवित्त भी है । ‘शेख’ की श्रु गार भावना में नारी हृदय की श्रु गारिक अनुभूतियों की अभिव्यजना नहीं है, उसने अपने युग के कवियों की भांति नारी पर उपभोग प्रधान ही दृष्टि डाली है ।

नायिका को दूती की यह मुखर वाणी ससज्ज नारीत्व से बहुत दूर दृष्टिगत होती है, उनके काव्य में परम्परागत भाव्य रचना का अनुकरण मात्र है, पर उस अनुकरण में अपनी यथायता का अस्तित्व वास्तव में अनुठा है । अनुठा बालिका का भय, उसकी शका सब कुछ शेख की कल्पना का सजीव रूप है

“कीनी चाही चाहिली नबोढ़ा एक्कें बार तुम,
 एक बार जाय तिहि छल उर दीजिये ।
 सेख कहौ आवन सुहैली सेज आवे लास,
 सीखत सिखेगी मेरी सीख सुन सीजिये ॥
 आवन को नाम सुन सावन कियो है नेना,
 आवन कहै सु कैसे आइ जाइ कीजिये ।
 बरबस बस करिबे को भेरो बस नहीं,
 ऐसी बस कहौ काग्हू कैसे बस कीजिए ?”²

प्रथम समागम के भय से आकुल बालिका के विषय में नायक को आश्वासन देती हुई दूती के ये स्वर नारी द्वारा रचित हैं यह भावना विचित्र लगती है ।

मानिनी प्रसंग के अनेक कवित्त शेख द्वारा रचित हैं । मानिनी का मान तोड़ने के लिये उन्होंने नायक के विरह की ज्वाला, मूर्च्छा, आँसुओं की बाढ़ का यणन किया है—कहो उनके श्याम के आँसुओं से सर-सरिताएँ भर जाती हैं

“शेख कहै प्यारी तू जो जबही तै बन गई,
 तब तब ही तै काह असुवन सर करे है ।

1 डॉ सावित्री सिन्हा—‘मध्यकालीन हिन्दी कवियत्रियों’ पृ - 254

2 डॉ सावित्री सिन्हा—‘मध्यकालीन हिन्दी कवियत्रियों’ पृ - 254

यात जानियत है जू वेऊ नगी नार नीर,
काह यर विपल वियोग राय भरे हैं ॥”

और कही उनकी विरह प्यासा से विरह भी जलता प्र

“जोगी वंसे फेरनि वियोगी आवैं बारवार,
जोगी ले है तो सगि वियोगी बिनसात है ।
जा दिन ले निरखि किसोरी हरि तियो हरि,
ता छिन ले षटोई घटोई पियरातु है ॥
लेख प्यारे अति ही विहास होई हाय हाय,
पल पल अग की मरार मुस्तातु है ।
आनि चाय होति तिहि तन प्यारी घति याहि,
विरही जरनि त विरह जरयो जातु है ॥”

विरही की मध्यु के साथ मान और समाप्ति की उद्भाः
वह उनकी प्रौढ़ अभिव्यजना शक्ति का परिचायक है ।

दोष द्वारा रचित नायक की दूती सम्बन्धित बवित्त क
बवित्त म भावा का प्रवाह अलकारो का अलकरण गेल का प्र
है । जिसमें नायक के प्रभाव पर दूती की आशा एव की
अनूठी शब्द याजना म किया है ।

‘रय मे विरस जानि वंसे बसि कीजै आनि,
हा-हा करि मोमो अब बोलिहा तो लरोगी ।
जोरिन के आघे नाऊँ आघी रैन दोरि जाऊँ
राघा जू के सग दे न आघी डग भरोगी ॥
सख होत प्यारे ऐसी पीर साथे प्यारे तुम
अबही हों विरह रसाने पीर हरींगी ।
आज हूँ न ऐहे काम बालि चलि प्र है सोह,
परों सगि हो की याके पांय आय परोगी ॥’

दोष के अधिकतर पद दूती शायद हैं उन्होंने नायक तय
का विषय किया है । कुछ छोटे से पद उन्होंने सीव के प्रति
रय म लिये हैं । जिसमें नायिका अपनी आप घीती अपनी
अपने उल्लास में सहभागिनी बनावर अपनी हृदय का भार हल
अभिव्यक्तियों में शृंगार की मुक्त अभिव्यजना है । प्रेम के
विचंगता इस प्रकार की आक उन्नतिया में स्पष्ट दृष्टित होती

“बोली ताहि सो सोहे जोरे कौन मोहे ऐमे
पाय परो बाके जाके पायन पर वार हो ।
प्यारी बहा ताही सौ जु रावरे मो प्यारे बहे,
आजकल रावर परोसिन के प्यारे हा ॥”

शृ गार की इन रचनाओं के नायक-नायिका पूर्णरूप में लौकिक हैं, परन्तु शेष ने कृष्ण (हरि), राधा गोपी इत्यादि शब्दों का प्रयोग एवं राधा और कृष्ण की लीलाओं की आड में साधारण प्रेम की अभिव्यक्ति कर अपने युग की परम्परा का निर्वाह किया है। इन चित्रणों में शारीरिक पक्ष को ही प्रधानता मिली है। शेष ने स्त्रियों की प्राकृतिक सुलभ सज्जा के चित्रण को छाड़कर समाज की उन्नतता शृ गार प्रियता में पुरुष के समान ही योग दिया।

कृष्ण की जीवन घटनाओं व प्रसंगों पर स्थूल व अश्लील भावनाओं का समावेश न कर स्वस्थ व मानसिक अनुभूतियों का सजीव चित्रण किया। भ्रमर-गीत तथा गोपी विरह इत्यादि प्रसंगों में व्यक्त शृ गार में प्रेम प्रसूत अनेक चित्रों को अपने काव्य में उल्लेख है, तथा अपनी सूक्ष्म और कोमल अनुभूतियों को प्रस्तुत किया है। इन पदों का लौकिक पक्ष साध्य नहीं, कामनाओं की अभिव्यक्ति का साधन मात्र है।

शेष ने गोपियों की आशा में उद्भव के आगमन से व्यापक, उनकी प्रेम-प्लावित भावनाएँ तथा उनके त्राल जीवन के साथ असामञ्जस्य पर सुन्दर व्यंग्य किया है। कृष्ण के जीवन को सर्वस्व मान लेने वाली गोपिकाएँ शेष की साधारण नारियाँ (गोपियाँ) हैं। उद्भव के याग का निर्वाह अपने जीवन के साथ करने में असमर्थ हैं वह अपनी सहज स्वाभाविकता उत्सुकता को प्रश्न बना कर उद्भव से कहती हैं

‘चाहती सिंगार जि ह गिगी सा सगाई कहा,
औघि की है आस तो आधारी कैसे रहिये ?
विरह अगाध तह सुन की समाधि कान,
जोग कहि भाये जो विगोग दाह रहिये ।
शेष कहै मैं न मुद्रा मोहन पू लये बन
गुना लानो कानन मु देखे मूल सहिय ॥’

उद्भव के सन्देश के अतिरिक्त जिन पदों में गोपियों का विरह व्यक्त है उनमें भी भावनाओं की प्रधानता है। भावनाओं का महत्त्व प्रकृति के उपकरणों द्वारा उद्दीप्त होकर व्यक्त है— “बाह के बिरस विगोग” में ये चार पंक्तियाँ इस प्रकार हैं

“सख बहे प्यारी तू जो जवही त बन गई,
तबही ते काह अमुबनि सर परे है ।

याते जानियत है जू वेरु नदी नारे नीर,
काह बर बिबल यियोग रोय भरे हैं ।”¹

गोपाल जब मधुवन से चले गये हैं, तो गोकुल का मधुवन दानव सा प्रतीत होता है। अनेक मधुर स्मृतियों का केन्द्र—कदम्ब वृक्ष, कालिन्दी का तट उनके जाने से सुतसान हो गया है। पक्षियों का फलरव गोपियों की विरह की ज्वाला की टोस को द्विगुणित कर देता है

“जबतें गोपाल मधुवन को सिधारे भाई,
मधुवन भया मधु दानव विपम सौं ।
सेख कहे सारिका शिखड़ी मडरीक सुक,
मिलि के कलेस कीही कालिन्दी कदम सौं ।
देह करे करण करेजो ली हो चाहत है,
काग भई कोयल कगायो करे हम सौं ।”

कृष्ण उनके काव्य के नायक हैं। उनका निरूपण दो रूपों में हुआ है— (1) साधारण पुरुष प्रतीक (2) कृष्णावतार (ब्रजनायक)। साधारण मानव कृष्ण की प्रेम लीलाओं में स्थूल त्रियाओं की प्रधानता है, परन्तु अवतारी कृष्ण के प्रति भावनात्मक स्निग्धता, सुरम्यता लक्षित है जो दोनों रूपों में भिन्नता प्रदान करती है।

पार्थिव व अपार्थिव विषयों को छोड़कर भी अ्य विषयों पर उनकी रच नाएँ मिलती हैं। “आलम केलि” में किसी विषय का क्रमिक निर्वाह नहीं हुआ है ये मुक्तक पदों का सग्रह है। उन्होंने अपने पति के पूर्व धम (हिन्दुत्व) का अनुसरण किया है, इसलिए गंगा वणन, निर्वेद तथा शांत रस सम्बन्धित पद, देवी को कवित्त, रामलीला आदि अनेक ऐसे प्रसंगों पर उन्होंने कृष्ण एवम् सफल रचनाएँ की हैं।

भक्ति विषयक रचनाओं के अतिरिक्त कुछ रचनाओं में फारसी की ऊहात्मक पत्नी का भी स्पष्ट प्रभाव है। एक ओर भारतीय पद्धति पर लिखा हुआ काव्य और दूसरी ओर लीला मजनू की कहानी का हल्का पुट भी कुछ पदों में परिलक्षित होता है।

दोख मध्ययुगीन नारी के उन अपवादों में से है जो जीवन की समस्त विषय मताओं को रौंदकर सभी अदृश्यों को नष्ट कर, स्वतन्त्र आत्म अभिव्यक्ति में समर्थ हो सकी थी। दोख का अति साधारण व्यक्तित्व रीति युगीन रसिकता से रचा-बसा होकर और आसमन जसा आसम्बन पाकर लौकिक शृंगार की स्पृसता

से प्रस्कृष्टित होकर, और पति के प्रभाव से अपनी प्रतिभा के विकास और निखार का अवसर प्राप्त कर सका ।

शेख ने अपनी अनुभूतियों को व्यक्त करने में मूर्त उपकरणों का प्रयोग किया है । अनुभूतियों और अभिव्यजना के सटीक एवं सजीव चित्रण के अलावा कलात्मक चित्रण भी सुंदर बन पड़ा है । अलकारों के समावेश के साथ ही संस्कृत, फारसी तथा देशज शब्दों के प्रयोग से काव्य में निखार आ गया है । उनकी भाषा में संस्कृत शब्द प्रचुर मात्रा में मिलते हैं । अधिकतर संस्कृत शब्दों को उ होने तद्भव रूप देकर ग्रहण किया है । मुसलमानी संस्कार के कारण काव्य में अरबी तथा फारसी के प्रयोग भी प्रचुरता में मिलते हैं ।

शेख ने अपनी भाषा को अलकृत एवं सुसज्जित बनाने का सफल प्रयास किया है । पदों की सज्जा में योग देने के लिये शब्दालंकार यमक के अतिरिक्त अनुभूति की व्यजना हेतु अनेक अलकारों का प्रयोग किया है ।

उनकी भक्ति विषयक रचनाओं में माधुय तथा विनय दोनों ही भावनाएँ व्यक्त हैं । राम के जीवन एवं कृष्ण के प्रसंगों की व्यथा को भी आपने काव्य में बाँधने की चेष्टा की है ।

शेख ने प्रकृति चित्रण में प्राकृतिक उपकरणों तथा कवि प्रसिद्धियों के द्वारा शृंगारिक भावनाओं को ही अभिव्यक्त किया है । उन्होंने प्रकृति को वियोग भावनाओं के सद्दीपक रूप में ही लिया है । उद्दीपन के रूप में प्रकृति के अनेक परम्परागत उपमानों का वणन है— टेसू का कुम्हलाना, कोयल की बूक से उत्पन्न हूक, इत्यादि ।

“मध्यकालीन नारी जीवन की परिसीमाओं के बंधनों के प्रभाव से दूर रहने के कारण ही शेख की प्रतिभा अपने विकास का पूरा अवसर प्राप्त कर सकी, भारतीय एकनिष्ठ नारी भावनाओं में गैर की रचनाएँ प्रथम अपवाद हैं । उनकी शृंगारिक भावना में नारी की भावनाओं का व्यक्तिकरण नहीं है । शृंगार युग के पुरुष का नारी के प्रति उच्छ्रंसल तथा सालुप दृष्टिकोण ही उसमें व्यक्त है, अतः शेख की कविता उस युग के नारी हृदय का प्रतीक रूप में नहीं ली जा सकती है । हाँ युग की भावना में अपनी भावना का सामंजस्य कर उन्होंने अपनी प्रतिभा का महत्वपूर्ण और आश्चर्यजनक परिचय दिया है । जीवन के रसात्मक दृष्टिकोण को व्यक्त करने वाली लेखिकाओं में वे सर्वश्रेष्ठ हैं तथा नारी द्वारा सजित साहित्य में उनका स्थान अमर है ।”

मीर अब्दुल्लाह बिलग्रामी (मृत्यु 1721 ई.)

मीर अब्दुल्लाह बिलग्रामी अरबो समय के प्रसिद्ध विद्वान हुए हैं। यह शुद्ध कृष्ण भक्त कवि थे।¹ इनकी उपलब्ध रचना शृंगार के अन्तर्गत आती है। आपका अरबी, फारसी तथा हिन्दी भाषाओं पर समान अधिकार था। ये इन सभी भाषाओं में कविता करते थे।

मीर अब्दुल्लाह बिलग्रामी एक प्रौढ़ कवि जान पड़ते हैं। उनकी भाषा सरल तथा भावयुक्त है। शम्श सगुन, प्रवाह, प्यारमरगना तथा भावमाधुर्यता की दृष्टि से भी वे सफल हैं।

रहमत

पूरा नाम सैयद रहमत उल्लाह—जन्म सन् 1060 हि (1650 ई.)

रहमत की रचनाओं में भी शयोग शृंगार के चित्रों की कमी नहीं है। नायिका नायक कृष्ण की मुरली लेकर उरोजो में छिपा लती है और अपनी रस त्रिया से नायक (कृष्ण) के हृदय में व्याप्त प्रेमागुणों को उद्दीप्त कर देती है—

“हरि मुरली हरि की लई धरी उरोज बनौन।

राग रगी पर बोन तिय करी हिये पर बोन ॥”²

रहमत की उपलब्ध रचनाओं धार्मिक भावना का लगभग अभाव सा है फिर भी उपयुक्त दोहे की बल्लव भक्ति की सीमा में समेटा जा सकता है।

‘पैमी’

‘पैमी’ का पूरा नाम सैयत बरकत उल्लाह था। व सयद मुहम्मद मुगरा बिलग्रामी के ब्राज थे। ‘पैमी’ का जन्म सन् 1070 हि (सन् 1959-60 ई.) में बिलग्राम में हुआ था।³

एक सूफी मुसलमान होते हुए भी आपन अपन काव्य में एकरूपता पर बल दिया है। ये बल्लव भक्ति से प्रभावित थे। शुद्ध बल्लव भक्ति की भाँति उनका कवि-हृदय कभी विमुग्ध होकर हमारे हरि विना और न कोय की स्वर लहरियों में डूब जाता है और कभी उसे ‘हरि के बिना खैन ही नहीं पड़ता’—‘हरि विन कबहू नान परी। उनके हृदय में कृष्ण की ललित छवि समा गई है। प्रसन्न मन पैमी सब जग या मूरत पर बारी। सच्ची बात तो यह है कि मीरा, मूर और रसखान की आत्मा पैमी’ के काव्य करीर में पुन जीवित हो उठी है। पैमी की मृत्यु 10 मुहरम सन् 1145 हि को हुई।

1 डा. जीवण जैदी बिलग्राम के मुसलमान हिन्दी कवि पृ-23

2 रत्न सज्ज दोहे

3 बिलग्राम के हिन्दी कवि पृ 58।

'पमी' ने शृ गारिक भावनाओं की अभिव्यक्ति समयित सीमा के भीतर ही की है। प्रस्तुत छन्द में कवि ने दम्पति मिलन का परिदृश्य उपस्थित किया है। नायक (कृष्ण) नायिका को भुज पाग मे सेन को आतुर है, किन्तु नायिका आसानी से पकड़ में नहीं आती है—

“कृजन मे दरसन है देगो जाइ दम्पति को
मुग्ध क मगूह मधुमात न समाति है ।
जसे उठे पनस्याम, तसोई हसोरे काम,
अग प्रनिअग छूटि नियराति है ॥
सोटि जात सोटि जात आटिजात कबहू के
दोरे दोरे भावरे खचल सुभाति है ।
कहत न आवे पमी देखे मन चैन पाव,
निहचे पठात रीझि रीझे पठान है ॥”¹

'पमी' द्वारा रचित - 'प्रेम प्रकाश' का द्वितीय खण्ड लगभग पूरे का पूरा बंगलाव भविन परब है। कृष्ण के अनन्य भक्त के रूप में उनके बोधल हृदय में कृष्ण की सलिन छवि अति हो चुकी है— 'सलिन छवि मन में रही समाय'² पनस्वरूप के अब कृष्ण के अतिरिक्त किसी अन्य को अपना कहना भी पसन्द नहीं करते— “हमारे हरि बिन और न कोय ।”³

कृष्ण के विमोग में गोपियों की मन स्थिति का चित्रण करने में कवि की विशेष सफलता प्राप्त हुई है। गोपियाँ रात दिन कृष्ण की प्रतीक्षा में खड़ी रहती हैं। उनके विचलित हृदय में श्याम की प्रीति निरन्तर गहरी होती जा रही है। व कहती हैं— 'श्याम को यदि कुञ्जा ही अधिर प्रिय है तो वे भी पनस्याम का दशन तो करना ही चाहती हैं

'रेन दिन जात इक टक् ठाड़
कछु न सुभाय विकल भयो तन मन, गहे काम रिपुगाड़े ।
अतर मूर हृदय नहीं लागत, श्याम पीत चित बाड़े,
बिससत जाइ कूबरी अग सग, गोप स्वास सब छाड़े ।
जो पिय चतुर साम न लागे, कुञ्जा की गति डाड़
पमी' आवो अग रावरे हमहू कूबर काड़े ॥”⁴

1 पमी प्रेम प्रकाश पृष्ठ 254

2 पमी प्रेम प्रकाश पृष्ठ 209

3 पमी प्रेम प्रकाश, पृष्ठ 260

4 पमी प्रेम प्रकाश' पृष्ठ-211

उद्धव गोपियों को योग उरदेस लेना चाहते हैं, चतुर गोपियाँ उनमें बहती हैं कि वे हम मम को नहीं समझ सकती। व कृष्ण को गोपियों से अलग करके क्यों देखते हैं व श्याम में उसी प्रकार सा चुबी हैं जैसे मसि में अक अथवा अक म मसि या जल में लहर अथवा लहर में जल।

“उधो तुम यह मरग न जानो,
हम में श्याम, श्याम मय हम हैं, तुम जनि अन्त वखानो।
मसि में अक अक मसि महिया दुविधा कियो पयानो,
जल म लहर लहर जल माही कह विगि विरहा ठाने।
सिलिवा जाय जोग बुद्धा किहि जाय ताप अह ध्यानो
हम सग जोग भोग बुद्ध नाही, बुद समुद समानो ॥”¹

गोपियों को कृष्ण के प्रयोग में कही भी सुख नहीं मिलता वे पक्षिक श्लो रोकर दिग्भ्रम आधिक्य और अत्याचार का उलाहना कृष्ण के पास भिन्नवा रही हैं

‘हरि विन कबहु न चन परी।
कहियों रविक सदेस अवधि कर, विरहा अधिक करी ॥
मूर मत्र बुद्धु ओट त तावत सीरी होत खरी।
काल्ह रूप ससि जोह सतावत, तातें निपट जरी ॥
पेमी बिकल कुसल नहिं दीखत, गिनगिन अवध टरी।
आवहु बेग रावरे नातह अबके सुनी भरी ॥’

इस प्रकार पेमी के काव्य में वैष्णव भक्ति परक रचनाएँ प्रचुर मात्रा में मिलती हैं। पेमी ने इस क्षेत्र में सूरदास द्वारा प्रदर्शित माग का यथा धमता अनुगमन किया है। पेमी के धार्मिक मुक्तका में बबीर तथा नामदेव आदि सतों का प्रभाव भी झलकता है। पेमी एक उच्चवर्गीय के महात्मा, एक आदर्श सूफी सत, महान सम वयी और एक प्रतिभा सम्पन्न कवि हैं। अरब और भारत की भावनात्मक एकता की जैसी रूप रेखा पेमी के काव्य में मिलती है अत्यन्त दुर्लभ है। इस्लाम धर्म में अट्ट आस्था रखने वाले पेमी भारतीय देवी देवताओं के प्रति भी अतार श्रद्धा रखने वाले एक अनन्य भक्त हैं।²

अब्दुल जलील—

मीर सयद अब्दुल जलील का जन्म सन् 1719 वि (जून सन् 1662 ई) में हुआ था। मीर सयद अब्दुल जलील विलग्राम हरदोई के निवासी थे। य मीर अब्दुल सतीफ के पौत्र तथा मीर अहमद के पुत्र थे। इनका कविता काल स 1750

1 पेमी प्रथम प्रकाश पृष्ठ-212

2 डॉ. मलेन जी के विग्रह के हिन्दी कवि पृष्ठ-57।

विक्रम है। सरोजवार के अनुसार य अरबी फारसी आदि यवनी भाषाओं के विद्वान थे।¹ इन्होंने बिलग्राम के कवि हरिवंश मिश्र से भाषा काव्य की शिक्षा प्राप्त की थी। इनकी अनुशाना में अमीर उमरा हुसैन अमीर खाँ न हरिवंश मिश्र को एक हजार रुपये वार्षिक वसति रना स्वीकार किया था इस पर हरिवंशजी ने कहा

'कृष्ण गुदामा सो करी, जानो यही दलील ।

वधी कवि हरिवंश की कीहें मीर जलील ॥''

मीर अब्दुस जमीन पर अमीर उल उमरा हुसैन अमीर खाँ और सम्राट फख्रसियर का गहग विश्वास था। इन्होंने अमीर खुसरो की तरह दिल्ली के अनेक मुगल सम्राटों की कृपा प्राप्त की थी। औरंगजेब के पश्चात् जलील को शाह आसम प्रथम, जहाँदरशाह फरुखसियर रफीउद्दजान शाहजहाँ द्वितीय और मुहम्मदशाह से भी बहुत सम्मान मिला।

मीर जलील का विवाह संयद् मृतजा की क या बीबी सुपरी से हुआ। इनके पुत्र संयद् मोहम्मद भी हिन्दी के कवि थे। जलील 'मुनी' थे, लेकिन बाद में इनके बराज 'नीया' हो गये। इनकी मृत्यु 23 जमादि उस आखिर सन् 1118 हिजरी (स 1783 वि। में हुई। हरिवंश मिश्र के पुत्र दिवाकर मिश्र ने इनके मरणोपरांत यह दोहा पढ़ा

'हुआ नहीं ओ हा गव, एमो गुनी सुमील ।

जैसी अहमद मद जग हुवे गयो मीर जलील ॥''

मीर जलील की एक हिन्दी कृति प्रेमकथा बताई जाती है। स्फुट बरब का उदाहरण इस प्रकार है —

'अधम उधारन नमथा मुनि करि तोर ।

अधम काम की बन्धिया गहि मन मोर ॥

मन बच कायक निमिदिन अधमी काज ।

करत करत मन मरिया हा महाराज ।

बिलग्राम कर वासी मीर जलील ।

तुम्हदि सरन गहि गाडे ऐ निधि सोल ॥²

नेवाज

हिन्दी साहित्य के इतिहास में यो में नेवाज नाम से तीन कवियों का उल्लेख मिलता है। जि का वजन इस प्रकार है — वे अतबेद के रहने वाले ब्राह्मण थे

1 निबन्ध सरोज पृष्ठ 423-424। कवि सख्या-43।

2 निबन्ध सरोज पृष्ठ-116

और सबत् 1737 के लगभग बतमान थे। शिर्वांसिंह सरोज में सबत् 1739 का जन्म सबत् लिखा है, जो अशुद्ध है। क्योंकि इनका लिखा हुआ शकुंतला नाटक सबत् 1737 का है। इतना तो निश्चित है कि ये पन्ना नरेश महाराज छत्रसाल के यहाँ दरबारी कवि के रूप में रहें। अतः सबत् 1730 से पहले ही इनका जन्म हुआ। छत्रसाल के यहाँ रहने के सम्बन्ध में एक दोहा प्रसिद्ध है जो किसी भगवत् कवि का लिखा हुआ है, जिसके स्थान पर नेवाज को छत्रसाल के दरबार में प्रवेश मिला था

‘तुम्हें न ऐसी चाहिए छत्रसाल महाराज।

जह भगवत् गीता पढ़ी, तह कवि पढ़त नेवाज ॥”

इस दोहे के प्रथम चरण का पाठान्तर इस प्रकार भी मिलता है — भली आजु कलि करत हो, छत्रसाल महाराज।’ इतिहास ग्रंथों में नेवाज कवि का औरंगजेब के पुत्र आजमशाह के यहाँ रहने का भी उल्लेख मिलता है। इनका लिखा हुआ शकुंतला नाटक प्रसिद्ध है। यथाथ में यह दोहा चौपाई, सबया आदि छन्दों में लिखा पद्यबद्ध शकुंतला सम्बन्धी आख्यान है। नाटक शब्द से भ्रम में पड़कर इसे अभिनेय नाटक नहीं समझना चाहिए। शकुंतला आख्यान के अतिरिक्त इनकी कतिपय फुलकर रचनाएँ मिलती हैं जिनका प्रधान स्वर शृंगार है। शृंगार वचन के लिए जिस कोटि की सहृदयता और काव्य कुशलता अपेक्षित होती है वह इनके पास प्रचुर मात्रा में थी। इन्होंने शब्द चयन में बड़ी सावधानी से काम लिया है। रसिक होने के कारण शृंगार वचन में कहीं कहीं अत्यधिक रमन रूप भी ग्रहण कर लिया है। सयोग शृंगार इनका प्रिय विषय प्रतीत होता है। सयोग शृंगार के लिए जिसे प्रसंगों की ढालने चुना है, वह रसि सभोग-परक हैं। अतः वचन श्लोक मर्यादा से दूर होने के कारण भोग प्रधान हो गए हैं, किन्तु वास्तविकी दृष्टि से उनमें प्रचुर भाव सामग्री मिलती है। कृष्ण वियोग से दुखी नायिका का वचन इस प्रकार है

‘देखि हमे सब आपस में जो कुछ मन भाव सोई कहती हैं।

य धरहाई तुमहई सुवै निमी घास नेवाज हमे दहती हैं ॥

बाते खवाब भरी सुनिर् रसि आवत पं चुप रहती हैं।

बाह विचारें तहार लिये सिगरे जग हों हसबो सहती हैं ॥”

प्रच्छन्न प्रेमाचार के जग विन्नि हो जाने पर निराश होकर प्रेम करने की प्रेरणा देने वाला सर्वथा इस प्रकार है

‘भागें ता की हों सगा सगी सायन कम दिए अजहू जो दिएवनि।

तू अनुराग की सोध किया द्रव की बनिता सब यों ठहरावति ॥

‘कीन सकोच रह्यो है नेवाज जो तू तरसै उनहू तरमावति।

बाधरि जो प कलक लग्या तो निरक हवै क्यों नही अब लगावति ॥

रसलीन

रसलीन एक बहुमुखी प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति थे। उनका व्यक्तित्व साहित्य समीन, कला तीनों का सगम स्थल था। वे साहित्यकार के रूप में कवि और बाधाय थे।

रसलीन जाति के मुसलमान थे, पर सभी धर्मों के प्रति उनमें अटूट आस्था थी। उनके मन में जो श्रद्धा इस्लाम धर्म के प्रति थी उतनी ही हिंदुओं के देवी देवताओं के प्रति भी रही। इस प्रकार जब हम उनके व्यक्तित्व पर दृष्टिपात करते हैं, जो चलचित्र की भाँति रसलीन को अनेक रूपों में प्रतिष्ठित पाते हैं।

बिलपामी कवियों की यह विशेषता रही है कि वे जाति से मुसलमान थे पर हिंदी, हिंदू और हिंदुस्तान के प्रति उनके मन में अटूट श्रद्धा विद्यमान थी। रसलीन के काव्य में जो सम्मान हजरत मुहम्मद, हजरत अली नबी और इमाम को प्रदान किया गया है, वही मान हिंदू भक्तों की भाँति कवि ने राधा-कृष्ण, गंगा, गणेश, राम, हनुमान आदि धार्मिक महापुरुषों को भी प्रदान किया है।

रसलीन के काव्य में वैष्णव भक्ति परक छंद के अनेक उदाहरण मिलते हैं। जहाँ उन्होंने कृष्ण और राधा को अपने काव्य में नायक और नायिका के रूप में चित्रित किया है, वही उनकी मोहिनी वशी के प्रभाव का भी चित्ताकषक वर्णन किया है

“वही ह्वै छुडावत है बस है न रीति कछु,
वसी सम लेत प्रान भीन को निकार के।
अधर सुधा में लग उगलत है बिल एतो,
अद्भुत भयो है यह जगत् निहारि के ॥
‘मोहे मन देव और अदेव रसलीन जब,
पसु पछी थके मानो डार दई मार के।
यातैं विधि मेरे जान सेस को न दीन्हा कान,
सेस तन तान दी हो धरती को डारके ॥”¹

रसलीन हिंदू धर्म की वैष्णव भक्ति से अधिक प्रभावित थे। उन्होंने हिंदू धर्म के अनेक देवी देवताओं के प्रति श्रद्धा, विश्वास एवं आस्था प्रकट की है फिर भी उनकी धार्मिक भावना का मूल आधार कृष्ण लीला ही रही है।

“राधा पद बाधा हरन साधा करि रसलीन।
अग अगाधा लखन को बीहो मुकुर नबीन ॥१॥ (अग दपण)

1 सुवर्तकारिक कवित 98 रसलीन प्रभावली।

कवि सबप्रथम शृंगार रस की ओर आकृष्ट होता है। उसका मत है कि शृंगार के दशता हैं— श्रीकृष्ण जो दशताओं के सिरताज हैं अतः उनसे सम्बंधित रस भी 'रसरत्न' ही होगा।

'रस का रूप बलानि व बरनी तो रस नाम
अब बरतन सिंगार को जाही त सब काम ॥
तेहि सिंगार को देवता कृष्ण लीजओ जानि ।
ओर बरनहूँ कृष्ण ली कृष्ण बरन पहिचानि ॥'

'आंसू' भवभूति की धरोहर है वात्प्रीति का गुह्य मोर की आहुति है तो पत की कथिना। यह भगवान बुद्ध का वह दण्ड है जिसमें उन्हें समस्त विष दिखाई पडा था। पर रीति युगीन कवियों को तो सदा सुख के ही आंसू दीख पड़ते हैं, जिनसे जलती हुई छाती भी एक बार तो शीतल हो ही जाती है। रसलीन कहते हैं

"पिय लखि नही तिय चखन म सुख असुवा ठहिराई ।
आपुन मे शीतल हियो शीतल वात बनाइ ॥
परत वान मुख छहि के दुगन रूप म भाइ ।
हरि के सुख अमुवा चल पारद हव उफनाइ ॥'¹

रसलीन का हृदय मिथिल स्तम्भ का एक बड़ा भागिक चित्रण प्रस्तुत है— एक नायिका आ दही मयन में तल्लीन है किन्तु हरि को देखते ही उसकी मधनी उसके हाथ में ही रह जाती है और उसका मधना रुक जाता है—

"हरि के देखत ही कहा भकिन भयो सुर गत ।
रई रही ली हाथ में दही मययो नहि जात ॥'²

तो दूसरी ओर नायिका अपने बाल सवारन व जुड़ा बाघन में व्यस्त है कि इतने में उसकी दृष्टि श्रीकृष्ण पर पड जाती है, फिर तो पूछना ही क्या— जूड़े की पंख (भीली) नायिका व करों में रह गई और "याम उडे की पंख में समा गए

'पाग सत्रन हृत्किंग परी जूरो बांधत वाम ।
रहे पख वा में पने ओज पख मे हयाम ॥'³

'नायिका न नायक (श्रीकृष्ण) को न दखा, न उसकी ध्वनि ही सुनी केवल उसके सम्बन्ध में बातें चलत ही वह कल्पित हो उठी — वही नायक

1 रस प्रबोध श्लोक 818 19 'रतमान बनावना ।

2 रस प्रबोध श्लोक 808 'रसलीन बनावती ।

3 रस प्रबोध श्लोक 809 'रसमान बनावना' ।

(शंकराज) नायिका के सुकोमल शरीर तथा चन्द्र ज्योत्स्ना सी शीतलता पाकर प्रकम्पित हाता गया। यथा

“लज्जो न बहु घनश्याम अथ बोल सुयो नहि कान ।

वहां लगी तू बेल सी बात चलति यहिरान ॥”

“तन मन चन्दन पदन ससि दुनि सीतलता पाइ ।

आजु अग शंकराज के कप भयो है आइ ॥”

कोई भी प्रेमी षोडे बहुत परिचय से किसी भी प्रेमिका के घर सीधे नहीं पहुँच जाता है। वह माध्यम ढूँढता है। कृष्ण और राधिका के मिलन में सखी और उसका सदन किस प्रकार सहायक हैं। रसलीन के दोह में प्रस्तुत है

“काह बनाइ कुमारिका सखी गृह मे ल्याइ ।

चौर मिहि जुनी मे दई ले राघकाहि मिनाइ ॥”

इसी प्रकार नायिकाएँ श्रीकृष्ण को कहीं सून घर में पाकर आलिगन पाश में भर लेती हैं तो कहीं उधे उपवन में देखकर फूली नहीं समाती। विपिन में हरि को अनेने देखकर राधा इस प्रकार लिपट जाती है, जैसे - मानो तमाल के वक्ष से पटुन की लता लिपट गयी हो

“धनि सूनै घर पाइयो हरि सी हों उर लाइ ।

सूनै गृह सहि लेत है ज्यो घन चौर उठाइ ॥”

“हरि को लखि यहि राघिका ठहिराई यह माइ ।

मनु तमाल तरु को मइ पुहुपलता लपटाई ॥”

श्रीकृष्ण की विविध क्रीडाओं के वणन में कहीं कहीं रसलीन का काव्य भी शृंगार मर्यादा का उल्लंघन अवश्य कर गया है, किन्तु ऐसे स्थलों पर भी कवि की भाव्यानुभूति सजग रहती है। उसके भाव सोदय में सिधिलता नहीं आने पायी है।

कुछ स्थलों पर रसलीन का मीदय वणन अथवा तमामिक आकषक सरस तथा हृदयद्राही बन गया है। राधा गौरी है, पर कृष्ण सावरे। इधर राधा श्यामल रंग की सांगे पहुँचे अपनी पीरी पर लडी हो जाती है तो उधर श्रीकृष्ण पीताम्बर धारण किये अपने द्वार पर लडे हो जात हैं। दोनों एक दूसरे को चतुरतापूर्वक

- 1 'रस प्रबोध' दोहा 813 'रसलीन प्रयावली'
- 2 'रस प्रबोध' दोहा 814, 15 'रसलीन प्रयावली'
- 3 'रस प्रबोध' दोहा 945 'रसलीन प्रयावली'
- 4 'रस प्रबोध' दोहा 946 'रसलीन प्रयावली'
- 5 मूलकृतिक कवित्त 41 'रसलीन प्रयावली'

समागम का सवेत करते हैं, किंतु इस रहस्य को अघरा पर नहीं आने देते। उन्होंने अपने वस्त्र को आगन प्रदान का माध्यम बनाया है। व इतना अधिक निकट आता चाहते हैं कि जितना वस्त्र दारीर के निकट हैं। यहाँ राधा को परकीया रूप में प्रस्तुत किया गया है। रसलीन की यह व्यंजना कितनी मामिक और चित्ताकषण बन पड़ी है—

'स्यामल सारी सजी उत राधिका ठाढ़ी मई निज पोरि सुहाय ।
काहउ तो हत द्वार में आइ कछे भये पामरी पीत रगाये ॥
चासुरता रसलीन कहा कहि आपने भेद न काहु जनाये ।
जो रग जो रहे घट सा चित के पट दोऊ दुहुन दिखाये ॥'¹

जो बातें अभी तक आँखों में हो रही थी वह अब संकेतों से होती हुई वस्त्रों तक आ गयी, और अब काह की बसी में तो इनका प्राण ही बसने लगा—

'पीतम बसुरी की सरिस सब जग तें करि ध्यान ।
अघर लगत हरि के जियति बिछुरै बिछुरै प्राण ॥'²

यह मनोवैज्ञानिक सत्य है कि प्रेमपात्र की प्रत्येक वस्तु और काय प्रेमी को अच्छे लगते हैं। आचार्य शुक्ल के शब्दों में यही 'सम्बन्ध भावना' कहलाती है। इस प्रकार की श्रुतिवाँ वास्तव में प्रेमी को प्रगाढ़ बना देती है। दोनों एक दूसरे से मिलने के लिए आतुर हो उठते हैं। प्रेम की मर्यादा, सामाजिक बंधन लोक लज्जा, पग पग पर रोड़े बनकर भाग को अवरोध करने हैं। रसलीन भी ऐसे ही प्रेम को प्रेम मानते हैं, जिसमें तन, धन, लाज व जीवन की भी परवाह न हो। कृष्ण की मुरली की ध्वनि कानों में पड़ते ही राधा की भी यह दशा हुई।

'यह मति राधे की भई सुनि मुरली की तान ।
तन तन धन कह लाज कह देन चहा तक प्राण ।'³

रसलीन के कुछ ऐसे वणन भी हैं जो रसिकता से ओतप्रोत होने हुए भी कोमल भावनाओं से परिपूर्ण हैं। परकीया की सुरति का एक चित्र प्रस्तुत है—

'राधा तन फूलन मिरयो पातिन हरि को गात ।
नुपुर घुनि छग घुनि मिली भले बने सब भाति ॥'⁴

किंतु परकीया का वणन अधिक रसिकतापूर्ण हो गया है, फिर भी प्रतीकों के आवरण ने उसे अनावृत होने से बचा लिया है।

1 रसप्रबोध दोहा-1126

2 रस प्रबोध दोहा-1126 ।

3 'रस प्रबोध दोहा 791 । रसलीन प्रभावनी ।

4 रस प्रबोध, दोहा 949 । रसलीन प्रभावनी ।

"सब जग हार्यो ये अलख काहू को न लखात ।
कूजन मे रति के दोऊ पक्षी लो उड़िजात ॥"¹

यह रसलीन के बणन की सफलता है। जहाँ कितने समय कवि ऐसे बणन में अपने को मर्यादित रखने में असफल सिद्ध हुए, वहाँ रसलीन सौंदर्य संहारक तत्वों से अपने को बचाते हुए, सौंदर्यानुभूति के चित्रण की रमणीयता में रचमान भी कभी नहीं आने दी है। इसमें रसलीन का मन भी अन्य कवियों की अपेक्षा अधिक रमा है।

रसलीन का साहित्य संगीत और कला से परिपूण हो गया। साहित्य ने रस प्रदान किया, कला ने सौंदर्य और संगीत का स्वर देकर उनका व्यक्तित्व को रम, रूप और राग में भर दिया एवं देश और काल की सीमा का पार कर अलौकिकता के ऐसे वातावरण में पहुँचा दिया, जहाँ काव्य रस की धारा, रूप सौंदर्य की छटा, संगीतमयता थी। जहाँ व्यक्ति हिन्दू रह जाता है, न मुसलमान। वस वह एक अलौकिक पुरुष बन जाता है। "समाधि पर एक और पड़ी है तलवार, तो दूएरी ओर रखी है लेखनी, सीने पर झुकी हुई है शीशा। मिश्रित 'रस प्रबोध' है, सीने से लगा 'अगदपण', तथा रग बिरंगे रूपा की सीने दिखत है, 'मुत्तफरिक् कवित्त' के पृष्ठ और समाधि पर स्थूयागरी में लिखा है—

"अभी हलाहल मद्य भरे सेत स्याम रतनार ।

जियन मरत चुकि झुकि परत जिहि घितकन मद्य काट ॥"²

उनकी रमधारा साहित्य की धारा का आश्रय लेती है, और करती रहेगी।

यारी साहब

यारी साहब का समय सम्वत् 1725-1780 वि है। इनकी "रत्नावली" नामक पुस्तक बेरोवेडियर प्रेस प्रयाग से सन् 1921 ई में प्रकाशित हो चुकी है। खोज के दौरान तीन ग्रंथ और उपलब्ध हुए हैं (1) यारी साहब के शब्द, (2) रमनी तथा (3) राम के कवहरा। "शब्द" में तिगुण भक्ति वर्णित है। "रमनी" में आत्मगाता और 'राम के कवहरा' में फारसी लिपिमाला के "अलिफ" से ए" तक के अक्षरों से पद्यात्मक रूप में ज्ञान निरूपण किया गया है।¹

यारी साहब पर सूफी मत का भी कुछ प्रभाव है। इनके काव्य में अनुभूति और अभिव्यक्ति दोनों का वैभव दृश्यनीय है। 'कवित्त' और 'शब्द' बड़े ही मधुर व सरस हैं। यारी साहब की प्रीति हरि' में किस प्रकार दिन-प्रतिदिन बढ़ती ही जाती है इसका अनुप्रास युक्त वर्णन इस प्रकार है -

दिन दिन प्रीति अधिक माहि हरि की।

काम बोध, जज्ञान भसम भयो बिरह अग्नि लगी धवकी।

धुधुकी धुधुकी सुलगनि अति निरमल भिलमिल भसकी ॥²

मूर्ति पूजन आडम्बर आदि पर प्रभावात्मक शैली में व्यंग्य करने से ये नहीं चूके हैं -

'आघर को हाथी हरि हाथ जाको जसो आयो,

बूझो जिन जसो तिन तसोई बतायो है।

× / ×

आपना सरूप रूप जापु माहि दखै माहि,

कहै यारी आघर न हाथी व सो पायो है।³

इनकी काव्य भाषा सरस ब्रजभाषा है तथा उसमें अरबी एवं फारसी शब्दों की भी सुंदर गणना मिलती है।

सम्बुल्साह

ये बहरियावाद (दिल्ली) के रहने वाले थे। हिजरी सन् 1140 सवत् 1779 वि में इन्होंने अपने मित्र मुहम्मदगाह फाजिल के पठनाथ दक्षिण विलास' नामक ग्रंथ की रचना की थी। 'दक्षिण' इनका उपनाम कहा जाता है। इस ग्रंथ में प्रमुख रूप में 'नवरस', नायिका भेद का वर्णन मिलता है। इनके समय में दिल्ली

1 हस्तलिखित हिंदी कवियों का अठारहवाँ संवाचिक विवरण

(प्रथम भाग) पृ-121

2 यारी साहब की रत्नावली पृ 1, शब्द 3

3 यारी साहब की रत्नावली पृष्ठ-15

में बादशाह मुहम्मदशाह का शासन था। 'दक्षिण विलास' के अंत में कवि ने लिखा है —

दक्षिण कृत यह प्रथम है, महा सुदस सुमाह ।
महमद फारिस भीत लंगि, दक्षिण लिख्यो बनाह ॥
ग्यारह सौ चालिस बरस, हिजरी सम्बत् आहि ।
पातसाह दिल्ली तख्त हतो मुहम्मद साहि ॥
दिल्ली मधि दक्षिण लिख्यो, अपने कर यह प्रथम ।
भर कं सरस बवित्त रस, रसिकन लायन पथ ।¹

प्रथम के आरम्भ में छप्पय द्वारा कवि ने अपना भी परिचय दिया है। इस प्रथम की रचना दिल्ली में हुई थी।

छप्पय

"भाषा काव्य रसाल तामे दणण पद पायो ।
फारसी काव्य सुदेस सुभग वालिह पद लामो ॥
पद्यो में ग्रन्थ अनेक फारसी और अरबी ।
पूरब, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण षेख्यो मे सबी ॥
अहमदुल्लाह निज नाम है, याही बहुरियादा को ।
शुभ देश महे मारुक का रखी पद जो भादि को ॥"²

'दक्षिण, अरबी फारसी के ममण ये, ये चारो दिगाओ मे धूम चुके थे। लेकिन इनको 'रसाल' लगा तो सिर्फ भाषा काव्य से। 'दक्षिण विलास' की भाषा शुद्ध प्रजभाषा है। 'दक्षिण' की कविता में शक्ति है। इन्होंने काव्य शास्त्र का पूर्ण ज्ञान प्राप्त किया था। 'दणण' शृंगारी कवि थे। इन्होंने नायिका भेदा पर भी अपनी कलम चलाई है। स्वकीया नायिका का लक्षण इस प्रकार से निरूपित किया है

'रस ऊख विपुल भरी सपनेहू न रोप परोस तिया के ।
सखि मान के देखिबे की जिये चुक रहे नित खोज प्रवीन पिया के ॥
शुभ बोल अमोल खरे खल लोल ये चित्त बडोल दुलाये हिया ने ।
जुग अक्षण लाज धनी कुल रक्षण 'दक्षिण' के लक्षण ये स्वकिया के ॥'³

राधा और कृष्ण को इन्होंने नायक नायिका रूप में ही चित्रित किया है। राधा कृष्ण का समरस घणन का चित्र इस प्रकार है—

- 1 मुसलमानों की हिंदी सभा, पृष्ठ-170
- 2 हिन्दी के मुसलमान कवि पृष्ठ 197-98
- 3 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 197-98

“राजे एक सेज पर राघिया कुंवर हरि,
 दक्षण सुधर वर दोऊ समरस है ।
 वाम की बलोलन सो मीठे मीठे बोलन सों,
 आवे बख लोलन सा पीवें रूप रस हैं ॥
 सावरे सहाई मीत माध के प्रतीति प्रीत,
 सुरति समर जीति आनंद बरस हैं ।
 कैसि वे चरित्र सार बरत न दोऊ हारे,
 प्रेम मतवार एव एक तें सरस है ॥”¹

नायिका के जीवन के उ मेघ पर भी वे अपनी बसम चलाने से नहीं चूके ।

“और जाति और भाति और रूप औरे काति,
 और राग औरे भाति औरे दुति अग की ।
 औरे रग भीजे नैन औरें प्रेम पागे बैन
 औरे चाव औरें चैन औरे चौप सग की ॥
 औरे चाल डगमग औरें बाल सग बग,
 औरें दक्ष जगमग भूषण के भग की ।
 औरें रग औरें दग औरें छवि की तरग,
 औरई उमग गति औरई अनग की ॥”²

अब्दुलाह की रचनाएँ शैतिकासीन वक्तियों में पगी हुई हैं । राधा-कृष्ण के उल्लेख में भी इन्होंने श्रमार्कितता का ही परिचय दिया है जो नायक नायिका का स्वरूप ही प्रस्तुत करता है । राधा कृष्ण की लीलाओं के व्यापक आकषण से ये भी अछूते नहीं रह पाए हैं ।

मुहम्मद आरिफ

बिलग्रामी कवि मुहम्मद आरिफ ‘जान’ सत मलदूम मुहम्मद हकनुद्दीन के वंशज थे । इनका जन्म स 1767 वि (दिसम्बर, सन् 1710 ई) में हुआ था । इनके पिता ‘नसरुद्दीन’ थे ।

मुहम्मद आरिफ ‘रसलीन’ स अत्यधिक प्रभावित थे । उनको ‘मुनि’ नाम से सम्बोधित करते थे । ‘जान बहयो रसलीन मुनि भव सुरसर मे लीन’ । ये अरबी, फारसी संस्कृत के विद्वान थे एव हिन्दी के अच्छे कवि भी थे । इनके द्वारा रचित तीन कृतिमाँ उपलब्ध ह—

1 हिन्दी के मुसलमान कवि पृ 198

2 मुसलमानों की हिन्दी सेवा प 171

(1) 'अग सोभा', (2) 'मदन मूरत', (3) 'रस मूरत' ।

"आरिफ भाखा में बहुरि घरयो 'जान' निज नाम ।"

-आ शोभा

"आरिफ नाम कवित्त मे भावयो 'जान' नबीन ।

-मदन मूरत

ऊपर उदाहरण से स्पष्ट है कि अपनी कविता के लिए आरिफ ने अपना उपनाम 'जान' रख लिया था । रसमूरत का उदाहरण दृष्टव्य है —

'मनुति सहित करि ध्यान हिय कडो दोड कर जोगि ।

सदा रहे जोरी धनी राधा-नन्द किशोर ॥¹

-मगलाचरण

मगलाचरण में राधा कृष्ण की जोड़ी का स्मरण करके आपने वृष्णव घम के प्रति अपनी आस्था का परिचय दिया है । आरिफ की राधा कृष्ण विषयक रचनाएँ भक्ति भाव के अधिक समीप प्रतीत होती हैं ।

मीर साधो

सरोजकार के अनुसार ये सन् 1735 वि में उत्पन्न हुए थे ।² उन्होंने 'सुगमा चरित्र' नामक काव्य की रचना की है । ग्रन्थ का रचनाकाल अज्ञात है । परन्तु लिपिकाल सन् 1775 ई (सन् 1832 वि) दिया गया है ।³ इसके अतिरिक्त कुल फुटबल कवित्त है, जो 'हजारा' में संग्रहित बताये जाते हैं —

"बाँसुरी बिसद बसीबट को बसरो तहा

त्रिविध बयारी बन बिसद बहति है ।

बरन बिरह भीरी माधव ये विधिबर,
वेप बूझि मानो बारि बिरसु करति है ॥

बारिज वदन बिरयो है तेना बानी,

बाकी बिपिन बसन सुनि बिरचि रहति है ।

बारक कहति बिलखीही, ही बार भई,

बार बार मोसो चलु आवरी कहति है ॥⁴

1 नागरी प्रचारिणी पत्रिका (सम्पूर्णानन्द स्मृति अंक), पृष्ठ 73 अंक 1 सन् 1944
स 2025 वि पृ 177 180

2 शिवसिंह सरोज पृ 471 कवि सन् 35

3 चौहवाँ शैवार्थिक विवरण - विवरण - भाग, पृष्ठ 3 सन् 12

4 सरोज पृ 273, सन् 588

गीत माथो की धानगी से स्पष्ट है कि रीतिकालीन भाषा-शैली के माधुर्य से युक्त आपने कवित्तों में गद्या कृष्ण की मौलात्रा का सरम वजन उपमस्य होता है।

कारेखां कबीर

ये मुसलमान रंगरेज कबीर थे। सागर जिले के रहस्यी ग्राम में इनका जन्म हुआ था। इनका जन्म व मृत्युकाल अनिश्चित है। ये कृष्ण के अनन्य भक्त थे। रचनाकाल से 1843 ई के लगभग पड़ता है। कारेखां कबीर पर कृष्ण का अनुग्रह हुआ गया था। कथा है किसी ब्राह्मण पुत्र से इनकी घनिष्ट मैत्री थी। ये कहीं बाहर गये हुए थे कि इस बीच मित्र की अचानक मृत्यु हो गयी। लौटने पर यह शोक समाचार मिला। कारेखां रमणान भूमि की ओर लौके चिता जलाने की तैयारी हो रही थी। इन्होंने दूर से ही उच्चस्वर में कहा 'सबरदा' जोवित व्यक्ति को चिता पर मत जलाना। पहले किसी का विश्वास ही नहीं हुआ कि कारेखां सच कह रहे हैं। ये अपने मित्र के शव के निकट गये उमम कहा "मित्र उठो। मैं आ गया। पर वह तो निदराण शव था उहीन उपस्थित आदमियों से कुछ देर खने को कहा और स्वयं कृष्ण की स्तुति करने लग। सडे-सडे इहीन 108 कवित्त पड़े। अंतिम कवित्त समाप्त होत ही शव में प्राण लौट जाये और इनका मित्र उठ बैठा। यह दृश्य देखकर आश्चर्य का ठिकाना न रहा। कारेखां सिद्ध पुष्ट के रूप में विद्यमान हुए। इनके 108 कवित्तों में अधिकांश का पता नहीं चलता है। फकी-जुलाहा खां के हजारे में भी इनका एक कवित्त लिखा गया है¹

उदाहरण स्वरूप कवित्त इस प्रकार है
 "माफ किया मुनूक मनाह दी विभीषन की
 कही थी जुवान, कुरबान ये करार की।
 बैठिये का ताइफ तलत दे तखत दिया,
 दौलत बढ़ाई थी जुनारदा यार की।
 तब क्या कहा था अम सरफराज आप हुए
 एरे न-दलान क्या हमारी जा यार की ॥ 3

× × ×

बु-दावन कीरत विनोद कुज कुंजन में,
 धान-द के कद सास मूरति गुणाल की।
 कालीद कवि बारे पानाल पडि नाग नाययो,
 के ताकी के पून तोरि लामे मासा हार की ॥

1 हिन्दी के मुसलमान कवि - गंगाप्रसाद विहू विचारण पृ 219/220

2 हरीकृष्णसाह की का हजारा (पहला भाग) पृ 41 (विवरण बनात)

परसत की पूतना परम गति पाय गई,
पनक ही मार मार्यो अजामिल तार की ।
गोद गुन गान हार छाछि के उगानयार,
आयो ना अहीर क्या हमारी बार बार की ॥

कारे खाँ पहले भक्त थे, कवि बाद में । कविता इनका साध्य नहीं थी । इनका ध्येय श्रीकृष्ण का स्तवन था, न कि कविता के माध्यम से शब्द चमत्कृति, अथ चमत्कृति के फेर में पढ़ना । फिर भी आश्रम में निकली इनकी वाणी 'काव्य' बन गयी । कारे खाँ यदि श्रेष्ठ कवियों में नहीं हैं, तो एकात्म का भाव भी इन्हें नहीं कहा जा सकता । उदात्त भक्ति भावना के सहाहक इनके कवित्त भी अन्तमन को आन्दोलित करने की क्षमता तथा दीर्घकालिक प्रभाव छोड़ने की योग्यता रखते हैं । रीतिकाल के शृंगार-सागर में कारे खाँ का कृष्ण स्तवन इनकी आस्था का परिचायक है ।

आदिल

कवि आदिल बीजापुर के मुल्तान इब्राहीम आदिलशाह, स 1607 के लगभग राम राग विषयक 'नवरम कर्ता' से प्रेरित थे । 'सरोज' में इनका जन्म समय सम्बत् 1762 विक्रम दिया हुआ है । प्रियसन के अनुसार ये सन् 1703 ई (स 1760 वि) में उत्पन्न हुए थे ।¹ प्रियसन ने 'सरोज' में दिया हुए समय से दो वर्षों का अंतर किया है, लेकिन इसका आधार नहीं बताया है । आदिल ने सम्भवतः कोई पुस्तक नहीं लिखी थी । इनकी फुटकर रचनायें मिलती हैं । श्रीकृष्ण की रूप माधुरी इनके इस छन्द में वर्णित हैं ।

मुकुट की चटक, लटक विधि कुण्डल की
मोह की मटक नेकु आलिन दिलाउरे ।
एहो बनबारी बलिहारी जाऊँ तेरी मेरी -
गैल किनि आइ नैक गाइनि चराउ रे ॥
आदिल मुजाज रूप गुन के निधान काह,
बाँसुरी बजाइ तन तरानि बुझाउ रे ।
नद के किशोर चितचोर मोर - पथवारे,
बाँसी वारे सावर विपारे इन आज रे ॥²

आदिल यदि कृष्ण के बगीछर रूप पर मुग्ध हैं, तो तब उनसे वीररूप (कसारि रूप) पर । वैसे दोनों के यहाँ 'सावरे' 'दुल छबीले' कृष्ण का सौम्य

1 विनिह सरोज पृ 68। कवि सख्या 25 । हिन्दी साहित्य का प्रथम इतिहास (प्रियसन रत) पृ 225 कवि सख्या 38।

2 सरोज पृ 12

मादक ही है। वे यदि आदिल का चित्त चुराये बैठे हैं, तो ताज का भी मन मोह चुके हैं —

“छैन जो छबीला, सब रग मे रगीला,
बड़ा चित्त का अडीला कइ देवतों से प्यारा है।
माल गले सोहे नाक मोती सेत सोहे बान-
कु डल मन मोह लाल मुकुट सिर धारा है ॥
दुष्टजन मारे, सतजन रक्षवारे 'ताज',
चित्त हितवारे प्रेम-प्रीति करवारा है।
नद जू का प्यारा जिन कस को पछारा,
वह वृदावन वारा कृष्ण साहेब हमारा है ॥¹

आदिल तोप — श्रेणी के कवि हैं।² इनका कविता काल सवत् 1785 वि है।

तालिबशाह

तालिबशाह जन्म सवत् 1768 वि में हुआ था। इनका कविता काल सवत् 1800 वि है। मृत्यु सवत् अज्ञात है। तालिबशाह का कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं मिलता। स्फुट छन्द ही अभी तक प्राप्य हैं। इनकी भाषा खड़ी बोली के निकट है। तत्सम शब्द — 'महबूब' (अरबी) 'दीवाना (फारसी) तथा 'निमाना' (हिंदी विनोत के अर्थ में) इत्यादि के साथ संस्कृत के 'मदन' 'भकुटी' आदि शब्दों का कुशलता से प्रयोग किया है। कृष्ण भक्ति विषयक एक 'मुजग प्रयात' (वर्णिक वरा) इस प्रकार है।

“महबूब बागे सुहागे बने हैं,
सुमोइन गरे माल फूलों हिये है।
महारग माते अमाते मदन के,
बिलोकत बदन और चदन दिये हैं ॥
यही भेष हरिदेव भकटी तुम्हारे,
सुलकुटी भवर लेख या लख लिये हैं।
दिवाना हुआ है निमाना दरस का,
सुतालिब वही श्याम गिरिवर लिये है ॥³

1 'मुसलमानों की हिन्दी सेवा' पृष्ठ 130

2 मिथबधु — किनो (द्वितीय भाग) — मिथबधु पृ 620 ;
कवि सङ्घा-698

3 भजन सङ्घ (भाग 4) विनोती हरि पृष्ठ 155 156

शिर्वासिंहजी ने भी तालिबशाह के कवित्तो की प्रशंसा की है । बहुवर्णी कृष्ण सीलाओं का बहु भाषा मिश्रण के माध्यम से जो वणन हुआ है वह तालिब-शाह का महबूब के प्रति सच्चा आक्षेपण है ।

सन्त दाना साहेब

इनका समय सन् 1750 से 1800 वि है । जन्म स्थान चापनेर है । दाना साहेब काजो गुलशन के शिष्य थे । स्याम की सांवरी सूरत पर ये भी कुर्बान थे —

'मुरली स्याम की सांवरी सूरत निरखत नैना छाकि रहे ।
 भ्रजवासी हुई ब्रज ठाठि रहूँ, वसीधर माधुर वेणु बहे ॥
 बरसाना कुज वृंदावन मे हरि दीसत नाही कौन कहे ।
 दाना ब्रज से नहिं दूर रहे, यह जनत का सुख कौन सहै ॥
 दाना के दिल मे लगी, पीय दरस की आस ।¹
 × × ×
 विरहिन ब्रज मे आइ कै ठाढी ठौर उदास ।
 मनमोहन ! तुम हो कहा ब्रजवासी सुख दैन ॥''

बाबा नबी

ये दोन दरवेश के शिष्य हैं । इ होने कृष्ण की आराधना की है—

'मैं जानू हरि अधम उधारन पतित उबारन स्वामी रे ।
 भक्त बत्सल मूधरजी रे है एक नाम बहुनामी रे ॥
 प्रथम भक्त प्रह्लाद उबारे, ध्रुव को अमर पद दीहा रे ।
 मुदामा के सब सबट कारे, हँस हँस तदुल ली हा रे ॥
 पाचाली को चीर बढ़यो पाडव लिये उबारी रे ।
 गौरव कुल को आप विदारे अर्जुन को रथ धारी रे ॥
 × × ×
 गिरधारी तेरो नाम बडो है जहर मीरा का पीया रे ।
 नामदेव की गाय निवाई दामा के जीवण जीया रे ॥
 × × ×
 बहुरगी तोहे कौन बखाने गोविंदजी गवहारी रे ।
 दास नबी को सरण राखी, डूवत नैया तारी रे ॥''²

बाबा नबी की बानगियो से ज्ञात होता है कि आप केवल लीलाओं के सीदय पक्ष मे ही आबद्ध नहीं है अपितु उनके लोक कल्याण कारक रूप के आराधक भी हैं ।

1 कल्याण सन्त-बाणी अ० 1 पृष्ठ 449

2 कल्याण सन्त-बाणी अ० 1 पृष्ठ-447

बाबा फजल

इहोने अपना गुह दोन दरवस को ही माना है । कृष्ण की आराधना की है—

“यदुपति कृष्ण मुरार, मोही बिदारिये ।
लपट मन की चाल, बिदानद वारिये ॥
नैया बहे मझगार नैय्या तारिये ।
फाजन अपनी जाग, हरी उबारिये ॥”

सत हुसैन खा

इनको दोन दरवेश की शिष्यता प्राप्त थी । मुसलमान कवि होते हुए भी आपने कृष्ण की आराधना की है ।

“बालमुकुंदा माधवा केशव कृष्ण मुरार ।
यवन सघारन आदये निजज नदकुमार ॥
निलज नदकुमार नाथ द्वाडों निठुराई ।
दूध यही घत छाग यादव तेरी चतुराई ॥
हुसन तेरा हो गया गिरधर गोविंदा ।
केशव कृष्ण मुरार माधवा बालमुकुंदा ॥”

उपयुक्त पद में सत हुसैन खाँ का भवन हृदय अभिव्यक्त हुआ है । भाषा में प्रवाह है ।

बाबा गुलशन

ये ब्रजदास नामक सत (श्रजवासी मुस्लिम सत) के शिष्य थे । मनमाहन की ‘माहनि सूरत’ पर ये भी रीझ गये थे—

‘मनमोहनि सूरत मोहन की देखत जग लागि रहा सपना ।
मुख चैन न सावरि सूरत बिनु मोहे कोइ यहाँ न लगे अपना ॥
चित्त चचल हरि के चरन लाग्यो, रसना लागि प्रिय नामहि जपना ।
गुलशन तहकीक कर देख लिया जग झूठ जजाल मन की बल्पना ॥’

× × ×

ठावो रह ब्रज म्बादिनी गुलशन पूछन तोर ।
श्रजवासी वो बहा गये मुरलीधर चित्त चोर ॥

× × ×

1 कल्याण - बहा - पृष्ठ-447

2 कल्याण संतवाणी अह पृष्ठ-448

“श्याम छत्री जिन जिन लखी, गुलशन चहै न आन ।
मुरलीधर सौं मन लगा, उह वही भगवान ॥”¹

बाबा गुलशन ने भी मीरा के धरातल को स्पश करते हुए स्पष्ट कह ही दिया कि ‘गुलशन चहै न आन । यह इनकी एकनिष्ठता का प्रमाण है ।

सत यकरण

खानजहाँ लोदी के वंशज मुस्तफा कुली खा का उपनाम यकरण था । ये सम्राट मुहम्मदशाह के समय के एक अमीर थे और देहली के उदू कवियों में सम्मानित स्थान रखते थे । इनकी शिक्षा मिर्जा मजहर के यहा हुई थी । यकरण ने हिन्दी में भी कवितायें लिखी हैं । इनकी रचनाओं में कृष्ण भक्ति के अनेक पद पाये जाते हैं—

“निसिदिन जो हरि का गुन गाय रे ।
बिगड़ी बात वाकी सब बन जाय रे ॥
लाल कूँ माने नही एकहु ।
अज वहाँ, बज लग हम समभाय रे ॥”²

सत यकरण का भाव पक्ष भक्तिकालीन कवियों की याद ताजा कर देता है ।

मीर मुराद

मीर मुराद, कविराज चारण बाहनदाम के शिष्य हैं, बडौदा राज्य के त्रिलवाई ग्राम में इनका निवास कहा जाता है । इनका कृष्ण विषयक निम्न पद उद्धृत है । जिसमें कवि ने श्याम की छत्रि को अपने हृदय में बसा लिया है ।

मुरलीधर मुख मोडवे अब मत रहियो दूर ।
मुराद आयो शरण भ रक्षियो हरी हूर ॥
श्याम छत्री हिरद लखी, अब कहा निरखू आन ।
मुराद दूरा कोउ नही, नाम बिया निरवान ॥
बिलगत मन हरि के बिना, दरस बिना नहि चैन ।
मुराद हरि के मिलन बिन, बरखा ज्यू बहै नैन ॥”³

1 कल्याण - सत वाणी अंक पृष्ठ - 449

2 कल्याण सत वाणी अंक पृष्ठ - 448-449

3 -बही पृष्ठ - 450

नवखान

भारतीय-चरिताम्बुधि' के अनुसार नवखान बुन्देलखंड के निवासी थे। इनका जन्म सन् 1792 वि. में हुआ था।¹ ये हिन्दु या मुसलमान क्या थे, इसका कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं मिलता है। सम्भावना इनके मुसलमान होने की ही अधिक है। इनकी स्फुट श्रृंगारिक रचनायें प्राप्त होती हैं। एक कवित्त इस प्रकार है—

“प्यारी को बुलाह चित्रसारी दखिबे के मिस,
लाई वह सखी जहा सोइबे को घाम है।
प्यारे को निहारि परजक मे मयकमुखी
शक मानि भाजो राजी तक अति छाम है ॥
वेनी मगननी की कुवर काह गहि लई
ऐसी भाति भई नवखानि अभिराम है।
मोहन की चास छटकीली परतचा ऐँचि
तमगयो चढावत क्रमान मानो काम है ॥”

मीरन

अनुमानत य भी बिलघाम के निवासी तथा जाति से मुसलमान थे। सरोजकार के अनुसार इन्होंने - नखशिख नामक सुन्दर ग्रन्थ की रचना की है। इनका रचनाकाल सन् 1870-75 वि. के बीच का है। इनके कुछ छन्द दिग्विजय भूषण में समादृत हैं। मीरन के दोहे, सवैये और कवित्त स्फुट रूप से अनेक संग्रह-ग्रन्थों में मिलते हैं। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं—

(प्रौढा खडिता)

‘आये कहूँ अतहै मनमोहन, सोहति मूरति मैं भई है।
आरस सो रस सो अनुराग सो रूप सो रीझ सो डीठि ठई है ॥
‘रावरे ओठन अजन राजत मीरन मो मति तेहवई है।
जानति हो वह भाव तो और सो बालन की मुह छाप दई है ॥”

(मध्या अघोरा)

‘नन रगे सब सैन जगे स नखे से लगे मन की लसचावत।
मेरियो रीझ बिघी पिय प्यारे की रूप खरो लगे रीझि रिभावन ॥

1 मध्ययुगीन सूफी इतर मुसलमान कवि डॉ. उमरुल्लाह खोवास्तद, पृष्ठ - 289
2 तिरविहू मराठ - भाठनी संस्करण 1966 ई. पृष्ठ - 172
3 दिग्विजय भूषण - पृष्ठ 93 (दोहता प्रमाण)

"मीरन" आज की भावन ऊपर भावन ध्वं बरिये बर पावन ।
आये कहुँ अनहै बसि के मनभावन लागे तऊ मन भावन ॥¹

× × × ×

"धूर कपूर मी पूरी रही अग दूरि ते देखिह दामिनि ज्यो धन ।
कोमल बज से हाथ ओ पाय है खेलत खेल के बीच दिये मन ॥
चाल धितीन द्यै कवि "मीरन" कालिहि ते कछु और भयो तन ।
सेसब मे भलबयो इत जोवन माल में जैमे पताल धर्यो धन ॥

(दोहे)

जब लगि हिय मे धरि सम्यो, तब लगि धरयो जु धीर ।

'मीरन' अब कैसी बनी, अधिब पिरानो पीर ॥

'मीरन' बिछुरत ही पिया, उलटि गया ससार ।

चदन चढा-चादनी, भये जराहन हार ॥

मीरन प्यारे अस कह्यो, सपने देखो मोहि ।

तुम बिन नीद न आवही कैसे पैखो तोहि ॥²

मीरन की बानगियो से जात होता है कि इनका मन केलि क्रीडाओ मे अधिर रमा है चाहे वे गद्या कृष्ण की हैं अथवा नायक नायिकाओ की । इनकी रचनाओ पर रीतिवाला का प्रभाव स्पष्ट है ।

नजीर अकबरावादी

मौलवी नजीर का जन्म सन् 1797 वि के लगभग हुआ था । ये आगरा के निवासी थे । नजीर स्वाभिमानी व्यक्ति थे । इन्होंने किसी की प्रशस्ति स्वरूप एक भी कसीदा नहीं लिखा । ये फारसी अरबी के ममज्ञ तथा हिंदी उर्दू और पंजाबी पर समान अधिकार रखते थे । हिंदी की एक रचना दृष्टव्य है—

'जो में ऐसा जानती प्रीति किये दुख होय ।

नगर डिढोरा पीटती, प्रीति न कीजो ज्योय ॥'³

नजीर की रचनाओ मे खड़ी बोली का प्राधाय है । सबसे बड़ी चीज तो यह है कि हिंदुओ के धार्मिक उत्सवो तथा देवी देवताओ के प्रति इन्होंने अपनी कविता मे जितना अधिक आदर लिखलाया है उतना शायद किसी मुसलमान कवि ने नहीं ।⁴

1 'निवृजय भूषण' - पृष्ठ 550 (पोडस प्रकाश)

2 हिन्दी क मुसलमान कवि पृष्ठ 305

3 महाकवि नजीर (अकबरावादी) और उनका हिन्दी और उर्दू काव्य - रघुनाथ किशोर बतन' पृष्ठ-7

4 मध्यमगीन हिंदी के सूफी - इतर मुसलमान कवि का उदयशकर श्रीवास्तव, प -337

नजीर 'मौजी' व "रसिक" व्यक्ति थे। नजीर की मृत्यु सन् 1877 के लगभग हुई है। इनकी प्रमुख रचनाएँ इस प्रकार हैं— (1) क हैया जू का जन्म, (2) बासुरी, (3) बजारानामा, (4) हसनामा, (5) दोहा सग्रह और (6) दीवान नजीर।

कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं —

"है रीत जन्म की यो होती जिस घर मे वाला होता ।
उस मडल मे मन बहुतेरा सुख चैन दोवाला होता ॥

× × ×

"य नेक नछतर होते ह इस दुनिया मे ससार जनम ।
पर उनके और ही लच्छन हैं, जब लेते हैं औतार जनम ॥
जो नारद मुनि हैं ध्यान भली सब इनका भेद बताते ह ।
वह नेक महुरत से जिस दम सृष्टि मे जन्मे जाते हैं ।

(क हैया जू का जन्म)

आपने 'क हैया का बालपन' शीर्षक से एक लम्बी कविता का सृजन किया। कविता सीधी सपाट परतु हृदयग्राही है—

"यारो, सुनो दे दधि के तुटैया का बालपन ।
और मधुपुरी नगर के बसैया का बालपन ॥
माहन सरूप नृत्य करैया का बालपन ।
बन बन के ग्वाल गायें चरया का बालपन ॥'¹

नजीर का भापा पर असाधारण प्रभुत्व था। उनकी शैली बड़ी ही सुंदर और मनमोहिनी थी, जिसमें उनके शब्दों का पाठको पर बड़ा प्रभाव पड़ता था। वे लौकिक और पारलौकिक सभी विषयों पर अपना मत स्पष्ट रूप से सरल भाषा में प्रकट करते थे जैसा इन अवतरणों से जाना जायेगा —

जोगीनामा

"कोई कहता है जोगी जी किधर को आये ।
सच कहो कौनसी नगरी मे तुम्हारा है वतन ॥
तुम तो आत हो नजर हमको नये से जोगी ।
सच कहो जोग लिया तुमन यह किसके कारण ॥
गर गुह टुम्म हा बनवा दें तुम्हारा अस्थान ।
गहर मे बाग म या बरलवे दरियाए जमन ॥

या कि मधुरा जो पसन्द आये तो वा जगह लें ।
या खदिरवन में महावन में ही या वदावन ॥

× × ×

बासरी

“मोहन की बासरी के मैं क्या-क्या कहूँ जतन ।
लय इसकी मनकी मोहनी धुन इसकी चित हरन ॥
इस बासरी का आन के जिसका हुआ वचन ।
क्या जल पवन 'नजीर' पखेरू व क्या हिरन ॥
सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी ।
ऐसी बजायी किशन कहैया ने बासरी ॥
जब मुरलीघर ने मुरली को अपनी अधर पर धरी ।
क्या क्या परेम मीत भरी इसमें धुन भरी ॥
लय इसमें राधे राधे की हरदम भरी खरी ।
तहराई धुन जो उसकी इधर और उधर जरी ॥
सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी
ऐसी बजायी किशन कहैया ने बासरी ॥
जिस आन का हाजी का वो बसी बजवानी ।
जिस वान में वो आवनी वा सुध भुलवानी ॥
हर मन की होके मोहनी और चित लुभावनी ।
निकली जहा धुन उसकी वह भीठी लुभावनी ॥
सब सुनने वाले कह उठे जै जै हरी हरी ।
ऐसी बजायी किशन कहैया ने बासरी ॥

नजीर अकबरावादी भी कृष्ण की बासुरी के आकषण में आवठ पगे से प्रतीत होते हैं ।

महसूब

ये शृंगारी कवि थे । इनका जन्म समय मवत् 1761 वि है । स्फुट छप्पा के अतिरिक्त इन्होंने 'बवित्त' नामक ग्रन्थ की रचना की, ऐसा कहते हैं । इनका निम्न कवित्त कृष्ण पर आधारित है—

‘आग धेनु धारि गेरि ग्यारन बमार वाम,
फेरि फेरि टेरि घोरी घूमरी गगन लें ।

पोछि पुचकारण अगोछन सा पोछि पोछि,
 चूमि चाह चरन चलावैं सुवचन तैं ॥
 बहै महबूब धरे मुरली अघर वर,
 फूकि दई खरज निग्वाद के मुरन ते ।
 अमित आनंद भर बंद छवि बंदवत,
 मंद गति आवत मुकुंद मधुवन तैं ॥¹

महबूब 'मुकुंद' की अदा और रूप पर फिदा हैं ।

हाफिज

इनका समय सवत् 1864 वि के लगभग पड़ता है । वस्तुतः ये हरदोई निवासी हफी जुल्लाह खाँ 'हाफिज' (स 1913-1950 वि) "नवीन सग्रह" प्रेम तरंगिणी मनमोहिनी और "रसिक सजीवनी" के रचियता से बिलकुल पृथक है । रचनाओ स हाफिज कृष्ण भक्त भी प्रतीत होते हैं ।

"रग नयो तेरो ढग नयो तु कहा नयो तेरी मान नई है ।
 तेरी सभा सब रग रगेली हरि की धुनि जो शान नई है ॥
 याके रूप को कौन पहचाने घ्यान सो हरि को पहचान नई है ।
 'हाफिज' छल ने होरी मे गोही मुरली नई तेरी तान नई है ॥"²

बली मोहम्मद

भीर बली मुहम्मद हि दू से मुसलमान हो गये थे । गार्सा दत्तासी के अनुसार 'इस्लाम धर्म स्वीकारने के पूव इहोने हिंदी मे कृष्ण भक्ति विषयक दो रचनायें— 'श्रीकृष्ण की ज मलीला' तथा बालपन बमूरी लीला की, — जिन्हें रामस्वरूप नामक सज्जन ने सम्पादित किया है ।³ इनकी कृतिया फतहगढ से सन् 1868 ई मे प्रकाशित हुई है । इनके पूव नाम तथा स्थान आदि का कही विवरण नहीं मिलता है । इनकी कृतिया' अनुपलब्ध है ।

ईशा अल्ला खा 'ईशा'

सैयद ईशा भीर माशा अल्लाह खा के पुत्र थे । ये लोग मुगल दरवार मे हुकीम और मनसबदार थे ।⁴ ईशा का जन्म सवत् 1813 के लगभग मुशिदा बाद मे हुआ था ।

1 हिंदी के मुसलमान कवि प 195

2 मध्यमूमीन हिन्दी के इतर मूफी मुसलमान कवि डा उदयशंकर जीवास्तव पृष्ठ 152

3 'हिंदुई साहित्य का इतिहास गार्सा दत्तासी पृ-274-275

4 उर्दू साहित्य का इतिहास ब्रजरत्नदास प-90

ईशा की प्रमुख रचनायें इस प्रकार हैं — (1) फारसी दीवान (2) दीवान (उर्दू गज़लो का संग्रह), (3) रंखती का संग्रह, (4) फारसी कसीदे, (5) फारसी मसनवी, (6) शिकारनामा (7) स्फुट काव्य खवाईया आदि ।¹

‘रानी केतकी की कहानी’ ईशा द्वारा विरचित है। यह शुद्ध हिंदी में लिखी गयी रचना है। कहानी का एक छंद जिस प्रसंग में कृष्ण को जोड़ा गया है —

‘जब छाडि के करील कुज बा ह द्वारिका मा जाय छिपे ।
कुलघूत घाम बनाय घने महाराजन के महाराज बने ॥
मीर मुकुट और कामरिया कछु और हिनाते जोड लिये ।
घरे रूप नये, किये नेह नये और गहया चरावन भूल गये ।’

एक उदाहरण और —

‘लिफट कर वृन् जी से राधिकाजी यो मगी कहने,
मिला है चाद से ए लो । अघरे पाख का जोडा ।’²

‘ईशा’ ने आधुनिक काल के पहले चरण में खड़ीबोली मिश्रित ब्रजभाषा में जो सवाद प्रस्तुत किया है वह इनकी घमनिरपेक्षता का परिचायक है।

नेवाज बिलग्रामी

नेवाज बिलग्रामी का जन्म सन् 1804 वि में हुआ था। यह बिलग्राम (हरदोई) के निवासी तथा मुसलमान जुलाहे थे। इनका कविता काल स 1830 के आसपास ठहरता है। इनके नाम के अर्थ कवि भी हुए थे। इन्होंने मुख्य रूप से शृंगार प्रधान काव्य की रचना की। बिलग्रामी ने स्फुट सर्वयों की ही रचना की। इन्होंने किसी ग्रंथ की रचना नहीं की है। इनके सर्वयों में दिग्विजय भूषण से उद्धृत हैं —

‘राधिका जू वपभानु सुता सुनो माइहि बाप लडाइहि लाडनि ।
छाकी दसा सुनि हो हू ‘नेवाज’ विलोकिव आज गई हुतो चाडनि ॥
मैनि मसूसनि के मुरझानी बडी थलिया वे गई गडि गाडनि ।
पासुरी पालुरी वैधि गई धुनि बासुरी की बरमा’ मई हाडनि ॥’³

× × × × ×

पीठि दे पीठि दुराय कपोल को मान न कोटि पियाउत पीटत ।
बाहन बीच हिये कुल दोऊ गहे रसना मन ही मन सोचत ॥

1 ‘उर्दू साहित्य का इतिहास डॉ रामबाबू सक्सेना पृ 179-180

2 हिंदी उर्दू और हिंदुस्तानी पृष्ठ-97

3 ‘दिग्विजय भूषण पृष्ठ 78-79 सख्या 107 (पृष्ठ प्रकाश)

सोवत जाति 'नेवाज' पिया कर सो दे निज ओर करोटत ।
नीधी विमोचन चौकि पर री मृग छोना सी बाल बिछोना पर लौटत ॥"¹

× × × × ×

"सोये अकेले रह दिन मे समुरारि मे काहुँ नाहि सकात हैं ।
भोजन काज जगाये 'नेवाज' उठे रति केलि थके अरसात हैं ॥
सारी निसा के जमे डिग सामु के ज्या ज्यो तला अगिरात जम्हात हैं ।
त्योँ त्यो इते लखि लडिली के बडे लोचन लाजन ही गडे जात हैं ॥"²

× × × × ×

'काहे को मो मन देखवे को दहिवो करते दृग हैं दुखदाई ।
हौ हूँ 'नेवाज' तुम्ह विसरावती जा विधि सो तुमहूँ विसराई ॥
चूकी परी चलवे की समें तब मो मन मे सुधि नेक न आई ।
मैं तुमसो निरमोही सो मोहन मागिलियो न कहु निठुराई ॥"³

शेख मुल्लन

ये भरतपुर निवासी थे । सन् 1819 ई (स 1876 वि) में भरतपुर नरेश राजा रणधीरसिंह की हिन्दुस्तान के तत्कालीन गवर्नर जेनरल से एव भेंट हुई थी, जिसका कवित्त मय वणन शेख मुल्लन ने 'महाराजा भरतपुर और लाटसाहब का मिलाप 'अथवा' मिलाप श्री महाराजा को लाट साहब से' नामक ग्रंथ में किया है । ग्रंथ का रचनाकाल भी स 1876 वि है । ईश्वर', 'भवानी' और 'सुरस्वती' की बन्दना के पश्चात् ग्रंथ में नगर की साज सज्जा का वणन मिलता है —

'हुई सहर में खयर यह सुब साम से जारी ।
सरकार की अगरेज से मिलने की तयारी ॥
और सहर भरतपुर में यहीं सौर है जारी ।
करते हैं सबी साथ के लसवर की तयारी ॥
सरकार ने लमकर को हुकुम पेरो का दिया ।
शेख इमाम बचस की उनके साथ कर दिया ॥"

× × ×

अत—

मुत्तामा के जु हमराहो ये ये ऐस वृष्णचन्द ।
एव पल में दल दर के सब पटि दिये फन्द ॥

1 'विश्वजय मूषण', पृष्ठ 192 म 33 (अष्टम प्रकाश)

2 मुन्दी निम्न पृष्ठ 66-67

रसिक विनो पृष्ठ 23

मैं सनकी सनै बानी में कहता हूँ नये छंद ।
तुम ऐसे श्री महाराज हो मेटोगे मेरे दद ॥
ऐसा मिलाप हमने जग में कही न देखा ॥”¹

ग्रंथ में खड़ी बोली का प्रयोग किया गया है । रचयिता सामान्य कवि लगते हैं ।

वाहिद

इनका समय अनुमानत 19 वीं शती विक्रमी का अंतिम चरण है । इनके फुटकर छंद मिलते हैं । प्रस्तुत उदाहरण से प्रतीत होता है कि वाहिद कुशल कवि थे और इनका भाषा पर अधिकार था । नद नदन के मोह पास में ये भी आबद्ध थे ।

‘सुंदर सुजान पर मद मुसकान पर,
वासुरी की तान पर ठौरहि ठगी रहे ।
मूरति बिसाल पर वचन की भाल पर,
खजन सी चाल पर खीरन खगी रहे ।
मोह धनु मैन पर लोने जुग नैन पर,
सुद रस वैन पर वाहिद पगी रह ।
चचल से तन पर सावरे बदन पर,
नद के न दन पर लगन लगी रहे ॥”²

मालम (सुदामा चरित्रकार)

‘सुदामा चरित्र’ के कर्ता आलम नाम से मुसलमान प्रतीत होते हैं । अनुमानत ये स 1850 वि के बाद के कवि हैं । ‘सुदामा चरित्र’ में लावनी, छंद का प्रयोग हुआ है । अरबी, फारसी के अतिरिक्त बीच बीच में अर्जी शब्दों का भी प्रयोग हुआ है । इनका विस्तृत विवरण अप्राप्त है । ग्रंथ में ‘भक्ति’ का प्रतिपादन है । रचना सामान्य कोटि की है । उदाहरण इस प्रकार हैं—

“ओकार है अलख निरजन कैसा कृष्ण गोवधनधारी ।
नादर सब के कादर सिर पै सुंदर तन धनश्याम मुरारी ॥
सूरति खूब अजायब मूरति आलम के महबूब बिहारी ।
जगमग जग है जमाल जगत में हिलमिल दिल की जय बलिहारी ॥”

× × × ×

“सत सुनाम अस बहुत बन्दगी जो इमको नीके कर जाने ।
ज्यो ज्यों याद करे वह चंदा त्यो त्यो वह नीके कर जाने ॥

देखो कम किया वामन ने जो कुछ दिया सो मन में जाने ।
ऐसे कौन बिना गिरघारी जो गरीब के दुख को माने ॥

× × × ×

“गदागीर रणम सुखन सुदामा श्रीकृष्णचंद्र को धार ।
आलम में प्रगटत भये सब राजन सिरदार ॥”¹

अलीमन

कवि अलीमन सभवत मुसलमान थे । इतिहास प्राय इनके जीवन परिचय के प्रश्न पर मौन है । इनका आविर्भाव काल उन्नीसवीं शती विक्रमी का उत्तरार्द्ध माना जा सकता है । इनके छंद सुन्दरी तिलक' (प्रथम लीथो मुद्रण का समय स 1931 वि) में संप्रहीत है । एक सबया यह है—

जैपत प्रीतम प्यारे बिदेश को मोहि कहा उपदेश बतैयत ।
तैयत ह छलिया जो कही बतियाँ चलिवे की सुने खिलखेयत ॥
खेयत रावरे पाँय की सौह 'अलीमन' या को उपायन पेयत ।
पेयत औधि के औसर जो बिछुरे ते जिये यह साज सजेयत ॥”²

अनीस

इनका कविता काल सम्बत 1911 वि के लगभग पडता है । मित्र बधुओ ने इन्हें तोप कवि की श्रेणी दी है । अनीस का केवल एक छंद ही देखने में आता है, जो वास्तव में बेजोड है—

'सुनिये बितप प्रभु पदुप तिहारे हम,
राखिहो हमे तो सोभा रावरी बढाइहैं ।
ताजिहा हरखि के तो बिलग न सौचे कछु ।
जहा-जहा जेहे तहा दूनो यश गाइहैं ॥
सुरन चढेगें नर सिरन चढेगें पर,
सुकवि अनीस हाथ हाथ में बिकाहैं ।
देश में रहगे परदेग में रहेंगे काहू
वेश में रहेंगे तऊँ रावरे कहाइहैं ॥’³

1 मध्ययुगीन हिन्दी के सूफी इतर मुसलमान कवि — डॉ० उम्पेशकर श्रीवास्तव, पृ—327

2 सुन्दरी तिलक' नवसन्धिपार प्रेस नयीं वार सन् 1905 ई पू 40 छन्द सख्या 240 ।

3 निवासिद् सरोज प 13

सयद रोशन

इनका जीवनवत्त अभी तक अज्ञात है। इनकी रचनायें 'भजन शिरोमणि' में संग्रहित हैं। उनका एक भजन इस प्रकार है—

“प्रभु तुम कहा न प्रभुता करी।
गाकुल घन धेरि आये इद्र आज्ञा करी।
बडते बज राखि लीहा गिरिवर नखपरधरी।
बीच बन मागीच मारयो बालि सो छल करी।
ताडका शर तानि मार्यो यज्ञ मूनिवर सरी ॥”¹

सयद रोशन की भाषा से प्रतीत होता है कि ये रीतिकाल के बाद के कवि हैं।

लतीफ हुसैन

इन भक्त कवि का जीवनवत्त भी अज्ञात है। सम्भवत मध्ययुग के अंतिम दशको में अथवा उसके कुछ पीछे ये रचनायें करते थे। लाला दबीदीन द्वारा संकलित तथा इग्लो ओरिएण्टल प्रेंस, लखनऊ से मुद्रित 'भजन शिरोमणि' नामक संग्रह ग्रंथ के सम्बत् 1982 वि के द्वितीय संस्करण में लतीफ हुसैन की रचनायें मुझे देखने को मिली। प्रस्तुत पद में गोपियाँ उद्धव ने समक्ष अपनी अंतव्यथा व्यक्त कर रही हैं—

“उद्यो, मोहन मोह न जावै।
जब जब सुधि आवत है रहि-रहि तब तब हिय बिचलावै ॥
विरह व्यथा बेधत है उन बिन पल छिन चन न आवे।
बाह करो कित जाऊँ कौन विध तन की तपन बुझावै ॥
व्याकुल ग्वालबाल अति दीखत अजबनिता घबरावै।
गाय बच्छ डोलत अनाय सम इत उत घाय रभावै ॥
कस वास भीषण लखि सिंगरो घी रज छूटो जावै।
कौन बचाव करेगी अब तो यह दुख भसह सहावै ॥
जब लो अवधि कस गृह पूरी करिके मोहन आवै।
तब लो कौन उपाय करें हम कोउ नाहि बतावै ॥”²

1 मध्ययुगीन हिंदी के सूफी इतर मुसलमान कवि - डॉ. उदयशंकर श्रीवास्तव, पृ 151
2 -वही -वही

निष्पत्त—

भक्तिकाल के पश्चात् भक्ति धारा न सूखी न समाप्त हुई, परन्तु भूमिगत हो गई सी प्रतीत होती है। राज दरबारा का वातावरण ऐश्वर्यपूर्ण, विसासिता पूर्ण था, वहाँ शृंगार का ही सम्मान था। रसमय, ब्रीहामय जीवन में 'गात और निर्वेद को स्थान कहाँ? भक्तिकाल के उत्तरार्द्ध में ही वेगव ने राम-चन्द्रिका की रचना करके भक्ति में शृंगार और चमत्कार का समन्वय कर दिया था। बिहारी जा तन की भाँई परे, क्षयाम हरित द्युति होय' कहने हुए शृंगार से भवबाधा दूर करने की प्रायना करने लगे और 'बहुत, नटत, रीभन, खिभन, मिलत, तिलत सजियात' के द्वारा भर मीन में भी सकेतो से राधा और कृष्ण ब्रीहारत रहने लगे, फलत भक्ति की एकनिष्ठता विलोपित हो गई। मेरे तो गिरधर गोगल, दूसरो न कोई कहने वाला कोई गेप न रहा। रीतिकाल में कोई ऐसा भी नहीं हुआ जो खग बनकर कालिंदी कुल कदम्ब की धारण पर ही बसेरा करना चाहता हो।

मुसलमान कवि भी शृंगार के प्रवाह में बहे उनमें स कुछ घाट बनकर स्थापित हुए। आलम ने 'प्रेमरग पये' जगमगे पदों की रचना की है। इसी रस-मयता में यत्र तत्र शृंगार राधा का समावेश हो गया है। आलम न उत्तरकाल में जिन पदों की रचना की उनमें रसखान सी मिठास पाई जाती है। नैनन में जो सदा रहते तिनकी अब वान कहानी सुयो करे।' की कम्ब भी आपके पदों में पाई जाती है। शेख आलम की पत्नी थी। पगडों के पल्लू के माध्यम से आलम और शेख एक दूसरे से बँध गए। आलम की समस्या कनक छरी मीकामिनी काहे को कटि छीन? को शेख ने—'कटि को वचन काटि विधि कुवल मध्य धरि दीन'—द्वारा हल कर दिया और साथ ही उनके जीवन की समस्या पूर्ति भी हो गई। सारी सामाजिक मर्यादाओं को भंग करके शेख के हो गए और शेख उनकी हाँ गई। इसके पश्चात् जीवन में अनेक पदों की पूर्ति होती रही। समस्या न बनी। कहा जाता है कि आलम के अनेक पदों में शेख सहायक रही हैं। शेख की अपनी स्वतंत्र रचनाएँ भी हैं, जो रीति कालीन परिवेश में अवगुठित हैं। शेख ने राधा कृष्ण के माध्यम से भी पदों की रचना की है। आलम कलि' आपका सग्रह है। इसमें वय सध्वि नवोढा समागम, दूती सदेश आदि का प्रसंग है। इन पदों में राधा कृष्ण हैं तो अवश्य कि तु भक्ति कालीन नहीं। प्रेम के क्षेत्र में नारी की विवर्गता के अनेक चित्र हैं—'प्यारी कहो ताहि सो, जु रावरे सो प्यारे कहे।' आजकल रावरे परोसिन के प्यारे हैं। अब मुरली सौच नहीं रही जो अग्र पयक पर लोटकर कृष्ण से पैर दबवाती थी, उसका स्थान पञ्चोसिन ने ले लिया है। शेख के काव्य में उद्वेग प्रसंग भी है। इसमें सहज स्वाभाविकता के दर्शन होते हैं। शेख के विरह वषण मार्मिक हैं। उनमें वेदना की अनुभूति और विरह जनित व्याकुलता है। 'जब तँ गोमाल मधु वन को तिधार माई। मधुवन भया मधु दानव विषय सो। शेख के काव्य में शृंगार

नायक हैं। उनका निरूपण दो रूपों में हुआ है—(1) साधारण पुरुष प्रतीक, (2) कृष्णावतार (ब्रजनायक)।

मीर जलील ने 'प्रेमकथा' की रचना की। इनके बरवे छंदों में कृष्ण का उल्लेख मिलता है। इन्होंने अपने उद्धार के लिए कृष्ण शरण की याचना की है। ये कहते हैं—'अधम उधारन नमवर सुनि करि तौर, मैं तेरी शरण में आया हूँ— अब इस जलील मीर का उद्धार कीजिए।' कवि नेवाज ने पथबद्ध 'शकुन्तला नाटक' की रचना की थी। इस नाटक से ही प्रतीत होता है कि ये रसिक स्वभाव के थे। फुटकर छंदा में जहाँ राधा कृष्ण का उल्लेख हुआ वहाँ समय से शृंगार के सुंदर चित्र उभरे हुए हैं। नेवाज अपनी नायिका (गोपी) को सलाह देते हुए कहते हैं—'बावलि जो पै कलक लगयो तो निमक हूँ बाहे त अक लगावति है। आपकी रचनाओं पर रीतिकाल का पूरा प्रभाव देखा जा सकता है।

यारी साहब की रचनाओं से प्रतीत होता है कि इन पर सूफी प्रभाव था। आपने राम और कृष्ण दोनों का ही स्मरण किया है। रीतिकाल की बयार से आप अप्रभावित प्रतीत होते हैं— यथा— 'दिन दिन प्रीति अधिक् मोहि हरि की। काम, क्रोध, ज्वाल भसम भयो, विरह अग्निनि लगि धधकी।' विरह की व्याकुलता भोगन वाले यारी साहब ने अलग अलग मती मायताओं के सम्बन्ध में बड़ी मटीक उक्ति प्रस्तुत की है— 'आँधरे को हाथी हरि, हाथ जाको जैसो आयो' इससे उनकी ताकिकता भी स्पष्ट होती है।

'दक्षिण विलास' के रचयिता अबुल्लाह अरबी, फारसी के ममन थे साथ ही ब्रजभाषा पर उनका पूरा अधिकार था। आपने नायक नायिका रूप में ही राधा-कृष्ण का चित्रण किया है— 'गर्ज एक मेज पर राधिका कुंवरी हरि'। नवोद्गा और यौवना के अनेक मधुर माटक रूपों को आपने चित्रित किया है। मुहम्मद आरिफ अच्छे कवि हुए हैं। आपने रचनाओं में अपना नाम आरिफ जाल का उल्लेख किया है। 'रसमूरत' कृति में राधा नन्दविशोर' भक्तिपरप धनन है, जो रीति कालीन प्रभावों से हटकर प्रतीत होता है। कारे रा फकीर सिद्ध पुरुष थे। इन्होंने अपने मृत मित्र को बचाने हेतु चित्त का समन रखे होकर कृष्ण की बन्दना में 108 कवित्त पद दिये थे। इनके कवित्तों में कृष्ण सम्बन्धी गायकों का भी उल्लेख हुआ है। कवित्त भर हृदय से निकली हुई पुकार है जिसमें कर्णा-निधान को बरणा करने हेतु आग्रह के साथ बुलाया गया है।

आदिल को फुटबल रचनाओं में कृष्ण की रूप माधुरी के दर्शन होते हैं। इन्होंने 'नन्द के विशोर चित्तघोर, मार परसवार बसोवारे, सवारे पियारे' को अपनी गलियों में गायें चराने का आशयित किया है। तात्तिलगाह, नवरत्नान, मीरान, नजीर अबबरावादी, नेवाज, नजीर, रोख मुल्तन आदि कवियों ने भी कृष्ण का प्रकारांतर से चित्रण किया।

वृष्ण भक्ति की यह धारा आधुनिक काल तक आते आते अतिशीघ्र हो गई है। आलम (सुदामा परिवार), अलीमन, अनीस सैयद रौदान, सतीफ हुसैन आदि मुसलमान कवियों की स्फुट रचनाओं में ही वृष्ण राधा को खोजा जा सका है।

□

हिन्दी के प्रमुख मुसलमान कवियों के कृष्ण काव्य में अभिव्यक्त कृष्ण-चरित्र

हिन्दी के भक्त कवि, जिनमें मुसलमान भी हैं, उच्च लोकाराधक एवम् दीप्पप्रज्ञ सौन्दर्य स्रष्टा थे। उनके निकट भौतिक जगत् का न कोई कल्पना पाया है न किसी प्रकार की लिप्सा उन्हें विचलित कर सकी है। वे राजभय का नाम नहीं जानते थे, न किसी का अकुश जानते थे। नित्य स्वच्छन्दता उनकी प्रकृति है, आत्म तन्मयता उनका प्रधान गुण है।

आराध्य के चरणा में आत्मापण का नियम सभी भक्तों ने अपनाया है, क्योंकि मत्त-हृदय को यह विदित है, लीलाधर कृष्ण रक्षक और उद्धारक भी है—

“तारन पे तरन कृष्ण सुने जो जहान बीच
मोको तो भरोसो एक नद के कुमार का।” —ताज

मुसलमानों में जितने भक्त कवि हुए हैं सवने कृष्ण प्रधान ही काव्यों की रचना की है। राधा-कृष्ण की विविध श्रृंगार चेट्याओं और लौकिकता में अनौकिकता की अभिव्यंजना ही इनका अभिष्ट प्रतिपाद्य था। मृत व्यापारों के माध्यम से अमृत आगम को संकेतित करना इस साहित्य की व्यापकता का प्राधान्य है।

पूरे मध्ययुग में कृष्ण चरित्र पर जितना अधिन बहा गया है, उसका चतुष्पाग भी राम के चरित्र पर नहीं है। कृष्ण का व्यक्तित्व मध्ययुगीन सौन्दर्य कल्पना का एक मात्र सवाहक है। राधा मूर्ति में दो तत्वा की औदात्यपूर्ण साकारता ससिद्ध हुई है— सौन्दर्य और प्रेम।

कृष्ण ऐंद्राजासिक रूप रखते हैं — श्याम मात, गीत पर मुकुट, कानों में कुण्डल, मोरपत्र और पीतपट धारण करने के अतिरिक्त त्रिशूली मुद्रा, मुदुवाणी और तिरछी चितवन से वे चित्त अपहृत कर लिया करते थे। उनकी अप्रतिम चारुता पर बिस्मय विमुग्ध मत्त के लिए प्रतिक्षण उनका मान्निध्य ही काव्य है।

भक्तिवाला मे "कृष्ण" और "राधा" विषयक भक्ति, पूण प्रीढता को पहुच गई थी। रीतिकाल मे एक ओर कवियो न ससृृत काव्यशास्त्र की एक सनिप्त हिन्दी रूपरेखा प्रस्तुत की, वा यागो का विवेचन किया। दूसरी ओर इन कवियो के द्वारा शृ गार रस के अतगत शृ गारी ग्रंथ भी लिखे गए। इस काल के बहु लाग कवि शृ गारी ही हैं। इहोने 'राधा कहांई सुनिरन' का बहाना किया है। इस काल के हिन्दू शृ गारी कवियो की भाति मुस्लिम शृ गारी कवियो ने भी 'राधा कृष्ण' के माध्यम मे शृ गार रस की ही कविताएँ लिखी हैं।

कृष्ण लीलाएँ

लीला का सामान्य अथलेख अर्थात् कृष्ण (प्रभु) का खेल है। यह खेल ही सृष्टि माना गया है। सृष्टि का अर्थ रचना है। कृष्ण लीला और आनन्दवाद दोनो एक दूसरे पर आश्रित हैं, जिसने लीला को पहचान लिया है, उसने आनन्द धाम को पहच हारि लीला के दशन कर लिए। बल्लभाचार्यजी न इस लीला म भाग लेने को मोक्ष से भी बढकर माना है। आसन्नत पुरुष अपनी शक्ति प्रकृति के साथ क्रीडा कर रहा है। यह पुरुष ही कृष्ण है और प्रवति राधा है।¹ पुष्टिमार्गीय भक्ति का मुख्य लक्ष्य मोक्ष प्राप्ति नहीं, प्रभु की प्रेम प्राप्ति है।² यह प्रेम भगवत्कृपा से साध्य है। वष्णव कवियो ने इस प्रेम की प्रशंसा की है। इसके द्वारा कृष्ण से भेंट होती है बिना प्रेम के हरि लीला के दशन असम्भव है। वास्तव म विश्व की रचना प्रभु की शाश्वत लीला है। प्रभुलीला करना चाहता है।

इसलिए विश्व अस्तित्व मे आना है। वेद और पुराण साहित्य म भी हरि लीला के दशन होते हैं। श्रीमद्भागवत् के दशम एकादश स्कंधो म इस लीला का विस्तारपूर्वक वणन हुआ है। अष्टछाप के कवियो ने भी लीला गान को विशेष महत्व दिया। हरि लीला का स्मरण करने मे मुसलमान कवि भी पीछे नहीं रहे। मुसलमान कृष्ण भक्त कवियो ने कृष्ण लीला का वणन अपने काव्य म विविध आयामा मे प्रस्तुत किया है।

मलिक मुहम्मद जायसी हिन्दी के मुसलमान कवियो मे सर्वश्रेष्ठ हैं। वे भक्तिकालीन चार प्रमुख कवियो मे एक तथा प्रेम काव्य परम्परा के सर्वश्रेष्ठ कवि हैं। उनके लिखे हुए ग्रंथो की सरया लगभग दो दजन बही जाती है। अब तक उनके छ ग्रंथ प्रकाशित हो चुके हैं। 'पद्मावत', 'अखरावट', 'आखिरी कलम', 'कहारनामा अथवा महरी वाई री' 'मसलनामा, चित्ररेखा' और 'बहावत'

1. आचार्य बल्लभ ब्रह्मसूत्र 4 4 14 के भाध्य म पृष्ठ 14 13 14 14 पर लीला को करत्य और परम भक्ति (भक्ति से बढकर) बताते हुए लिखते हैं— लीला विनिष्टमन शूद्र परब्रह्म न क्वाचित् तद्विद इत्यथ । तेन च (लीलाया) नित्यत्वम ।
2. ब्रह्मसूत्र अध्याय 3 पा० 3 सूत्र 38 का अनुभाष्य पृष्ठ 1100

इनम पद्मावत और कहावत उनके दो श्रेष्ठ प्रबन्ध काव्य है। पद्मावत अपनी गूढता, गम्भीरता, लोक और अध्यात्म पक्ष, प्रेम पीर आदि के 'कारण हिंदी का' एक श्रेष्ठ महाकाव्य माना जाता है। शोध के आलोक में सद्यः प्राप्त कहावत महाकाव्य भी पद्मावत के इन वैशिष्ट्यों से सम्बन्धित है। कृष्ण कथा भारतीय जीवन की अत्यंत प्रिय और ख्यात कथा रही है। जायसी ने कहावत में कृष्ण के जन्म से लेकर उनकी मृत्यु तक की विविध लीलाओं का महाकाव्यात्मक आख्यान किया है। कृष्ण कथा पुराण और साहित्य के साथ ही लोकजीवन में भी समाहृत रही है। वस्तुतः कहावत की कथा वस्तु का मूल स्रोत भारतीय पुराण काव्य और लोक समाहृत कृष्ण सम्बन्धी कथाएँ ही हैं। कवि ने कृष्ण की विविध लीलाओं का बड़ा ही जीवन्त चित्रण किया है। कुब्जा का पद ऋतु वणन बड़ा वैदग्ध्य पूर्ण बन पड़ा है। कवि ने राधा और गोपियों के वियोग का बारह मासा रूप में बड़ा ही हृदय विदारक वर्णन किया है। नागमती के विरह की ही भाँति राधा और गोपियों का यह विरह वर्णन भी हिंदी साहित्य की एक अमूल्य निधि है। पुराण काव्य और लोकजीवन की कृष्ण सम्बन्धी इस कथा में जायसी की कल्पना का सम्प्रसार और सम्भावना का प्रस्तार दशनीय है। इस कहावत का आंतरिक स्पन्दन और मूल चेतना अलौकिक है और बाहरी ढांचा तथा रूपरंग अभिजात्य साहित्यिक श्रुति का है। इसमें ब्रज सस्कृति अपने भव्य और प्राञ्जल्य रूप में जीवित हो उठी है। इसमें कृष्ण के विराट जीवन का एक सर्वांगीण चित्र उरेगा गया है। कहावत का रूपसौंदर्य वर्णन पद्मावत की ही भाँति नव गिख वर्णन के रूप में मिलता है। कवि ने राधा के रूप वर्णन के लिये सादर्य मूलक अलंकारों की योजना की है इसमें अनेक प्रकार के परम्परा प्रचलित लोकदृष्ट तथा नवीन मौलिक उपमानों की उद्भावनाओं का काव्य सौंदर्य दृष्टव्य है। कवि ने पद्मावत के रूप सौंदर्य वर्णन की तरह ही राधा के रूप सौंदर्य के, सृष्टि व्यापी प्रभाव की लाकोत्तरकल्पना की है। राधा की रीति से सारे ससार में लावण्य और माधुर्य भर जाता है।

जायसी ने कृष्ण को अवतारी माना है, उनके कृष्ण विष्णु के ही अवतार हैं। उन्होंने राक्षसों के वध करने धरती का भार उतारने और कम का सन्देश देने के लिए ही अवतार लिया है। पूतना वध, बागामुर वध, गोबरधन धारण, नैयनाग मदन मल्लवध, बस वध, प्रभूति लीलाओं का कवि ने बड़े रसमय ढंग में वर्णन किया है। कहावत में जायसी ने कथा कइहो कान सजोगू' के द्वारा उमे कह कथा भी कहा है। इसमें कृष्ण जीवन का पूर्ण चित्र उपस्थित किया है। उसमें घटनाएँ सुस्पष्ट हैं। जायसी ने कहावत में कृष्ण जीवन के मार्मिक स्थलों का चयन और उनका चित्रण किया है। कृष्ण की बाल लीलाएँ अमुरों का वध, बस वध, गोपियों के प्रति प्रेम, चन्द्रावली राधा के प्रेम प्रसंग, कुब्जा प्रसंग और उसकी सयागोवस्था, गोपियों का विरह आदि प्रसंग बड़े ही मार्मिक बन पड़े हैं। इन प्रसंगों पर भागवत कथा का पूर्ण प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। भागवत की इन कथाओं

को जायसी ने अपने प्रेम रस में डुबोकर और अधिक रसमय, मधुर और आकषक बना दिया है। यहाँ पुनरावृत्ति भय से उक्त कथाओं की व्याख्या नहीं की जा रही है। द्वितीय अध्याय में जायसी और उनके 'कहावत' महाकाव्य का विस्तृत विवेचन प्रस्तुत किया जा चुका है।

भक्त कवियित्री 'ताज' ने कृष्ण को ही अपना सर्वस्व माना है। मानव भावनाओं के आरोपण में माधुर्य भाव की प्रधानता है। विरह की अनुभूतियों में मिलन की छाया देखकर सन्ताप करने की शक्ति उनमें नहीं है। उनके नेत्रों को तो साकार दर्शन में ही विश्वास है कृष्ण के प्रति उनकी भावनाओं में अनन्यता है—

“भानु के प्रकास बिना कज मुख ढापि रहे,
केतकी के दास बिना भौर दुख सीर है।

× × ×

कहू कवि ताज मिल मानिये हमारी किधौ,
नैनन में देखू जब नैनन में धीर है।”

'ताज' की भक्ति भावना का आधार कृष्ण का माधुर्यमय विराट रूप है। उपास्य के प्रति उनकी भावना में विश्वास जय सम्पन्न है। कृष्ण के मधुर रूप में भी नैसर्गिक छाप है लौकिक व्यक्ति के रूप में भी उनके कृष्ण उनसे उच्चतर हैं।

प्रेमपथ की गहनता और गम्भीरता से उनका प्रौढ हृदय परिचित है। कृष्ण के रूप सौंदर्य के आकषण में बधकर उनकी भावनाओं का उबार समाप्त नहीं होता, उसे जीवन का आधार मानकर उसका मूल्य आँकने का प्रयत्न करता है।

“ताज” ने अपने कृष्ण में महाभारत के राजनीतिज्ञ, भीता के उपदेशक तथा ब्रज के कहाँया के रूपों का समन्वय किया है।

महाकवि 'जान' ने अपने काव्य — 'विरह सत' में कृष्ण वियोग में 'याकुल राधा और गोपियों का रसमय चित्रण प्रस्तुत किया है।

इसी प्रकार 'विरहसार' में भी विरहिणी राधा की विभिन्न विरह दशाओं को उरेहा एवम् अत्यंत मार्मिक तथा हृदयग्राही चित्र प्रस्तुत किये हैं।

'वारहमासा' नामक ग्रंथ में भी इन्होंने कृष्ण, उदब और गोपियों के माध्यम से 'वारहमासा' का वर्णन किया है। कवि 'जान' ने राधा गोपी कृष्ण के प्रेम और उनकी अभिव्यक्ति को प्रेम ब्रीडाओं की लौकिक धरातल पर चित्रित किया है। इस विषय में कहा गया है कि—आगे के सुकवि रीति हैं तो तो बकिताई, न तु राधिका कहाई सुमिरन का बहानो है 'वासी लौकिक पदति पर है।

बारहमासा की इन पक्तियों में विरह-वेदना स्वाभाविक बन पड़ी है
 "सावन मास चले मन भावन महा अर्चनी वाढी तन मे ।
 होकर यौवन मनमथ धामी आप सिधार हैं मधुवन मे ॥
 पिक-चातिग कैकी जारत हैं लोन लगावत धन धावन मे ।

"जान" बहै जिमि हरि बिनु वीतत गोपीये जानत है मन मे ॥"

रसखान ने कृष्ण की अनेक लीलाओं के दशन अपने काव्य में कराये हैं। ये लीलाएँ साधारण मानव की शृंगार ब्रीडा के समान प्रतीत होती हैं। कहीं कहीं तो आध्यात्मिक लीला भी मिल जाती है।

बाल लीला

रसखान ने कृष्ण के बाल लीला सम्बन्धी कुछ ही पदों की रचना की किन्तु उनके ये पद भक्तजनों के कठहार बने हुए हैं - 'काग के भाग बढे सजनी हरि हाथ सों ले गयो माखन रोटी।' यद्यपि रसखान को कृष्ण के मानवीय स्वरूप ने अधिक आकर्षित किया, किन्तु यहाँ वे ब्रह्मत्व शब्द को न भुला सके। यहाँ हरि शब्द का प्रयोग साधक है।

रसखान ने कृष्ण को एक शिशु रूप में दिखाया है। प्रस्तुत पद में नारी मनोभावनापूर्ण परिचय प्राप्त होता है -

"आजु गई हुनि भोर ही हो रसखानि रई बहिनद के भोनहि ।
 बाबो जियो जुग लाख करोर, जमुमति को सुख जात कह्यो नही ॥
 तेल लगाई लगाइ के अजन, भोहें बनाई बनाई डिठौनहि ।
 डालि हमेलिन हार निहारत वारात ज्यो चुचकारत छौनहि ॥"

दूसरे पद में रसखान ने कृष्ण को खेलते हुए सुन्दर बालक के रूप में चित्रित किया है

"धूरि भरे अति सोमित श्यामजू तैसो बनी सिर सुन्दर छोटी ।
 खेलत खात फिरे जगना पग पेंजनी बाजति पीरी बछोटी ॥
 या छवि को रसखानि बिलोकत वारत काम बलानिधि कोटी ।
 काग के भाग बढे सजनी हरि हाथ सों ले गयो माखन रोटी ॥"

रसखान के बाललीला सम्बन्धी पद बहुत ही सुन्दर हैं। बाल स्वभाव का चित्रण हृदयहारी है। प्रायः बच्चों के हाथ से कुछ छीनकर ले जाना 'काग' की आदत होती है। इस मत्स्य की काव्य भाषा में ढालकर रसखान ने मोहक एवम् हृदयस्पर्शी चित्र खींचा है।

1 मुसलमान रसखान पृ० 20

2 'मुसलमान रसखान पृ० 20

गोचरण लीला

कृष्ण बड़े हुए । श्वालो के साथ गायें चराने वन में जाने लगे । कृष्ण की हर धरा पर दिवानी गोपियाँ गो चारण से प्रभावित फिर क्यों न हो ? रसखान ने गा चारण लीला को बहुत ही मुदर ढंग से दर्शाया है । कृष्ण घोर समीर कालिंदी के तीर खड़े हुए गठएँ चरा रह हैं । गायें घरने के वहान गापियो से आकर अड जाते हैं ।

“गाईं दुहाई न या पे कहीं न कहीं यह मरी गरी निकस्यो है ।
घोर समीर कालिंदी क तीर खरयो रहे आजु ही डीठि परयो है ॥
जा रसखानि विलोक्त हा सहसा ढरि टाग सा आग ढरयो है ।
गाइन घेरत हेरत सो पट फेरत टरत आनि अरयो है ॥”¹

रसखान कृष्ण की गा चारण लीला को मनोहर चित्रात्मक ढंग से प्रस्तुत करने में सफल हुए हैं । ऐसा लगता है अन्त पटल पर एक के बाद एक दृश्य का चित्र अकीत होता है ।

घोरहरण लीला

रसखान ने घोरहरण लीला के सम्बन्ध में केवल एक ही पद लिखा है । घोरहरण लीला आध्यात्म पक्ष में आत्मा का भग्न होकर माया के आवरणों सांसारिक सत्कारा से पृथक होकर प्रभु से मिलता है ।² जमना में नहाती हुई गोपियों की दशा का वर्णन करते हुए रसखान कहते हैं—

“एक समे जमुना जल में सब मज्जन हत घसी बज गौरी ।
रयो रसखानि गयो मन मोहन लेकर चीर कदम्ब की छोरी ॥
न्हाइ जग निकसी बनिता चहूँ औ चित्त चितरोप करोरी ।
हार हियें भरि भावन सो पट दीने लला वचनामृत बोरी ।”³

रसखान के इस वर्णन में बहुत नाटकीयता का साधारण शब्दात्मक सुन्दर चित्रात्मक वर्णन किया है ।

कुंज लीला

वादावन की कुंजों में गापियो का कृष्ण के साथ विहार आज भी जगप्रसिद्ध है । रसखान ने इसका चित्रण बड़ी ही रमणीयता के साथ किया है—

1 मुद्रान रसखान पाठ 21

2 भारतीय साधना और गायिका प 279

3 मुद्रान रसखान प 27

निरग भर्यो मुमकात लला सकस्यो कल कुजन त मुखदाई ।

× × × ×

दूटि गयो घर को सय बघन छूटि गो आरज लाज बढाई ॥”¹

कृष्ण कुंजी से मुसकाते हुए निकलते हैं— उनका यह रूप गोपियों के दिल में इस प्रकार बस गया है कि निकाले से नहीं निकलता ।

रासलीला

श्रीकृष्ण की लीलाओं में रास का बहुत महत्त्व है । रासलीला मानसिक भावना के साथ साथ लौकिक धरातल पर अनुकरणात्मक होकर दृश्य लीला का रूप धारण कर लेती है । अतः इसके प्रभाव की परिधि अत्यन्त लीलाओं की अपेक्षा अधिक व्यापक हो जाती है ।² रसो वै स³ अर्थात् भगवान् स्वयं रास रूप है आनन्द रूप है । रस आनन्द तीन प्रकार का है, एक लौकिक, विषयानन्द दूसरा अलौकिक ब्रह्मानन्द, तीसरा वाक्यानन्द । श्रीकृष्ण के ससग की लीलाओं में जो रस समूह मिले वह ‘रास’ है और यह रस समूह गोपी कृष्ण की शरत् राश्री की लीलाओं में अपने पूण रूप में बताया गया है ।⁴

रासलीला के स्वरूप का विचार प्राचीन काल से ही होता आया है । लीला के समस्त रूप भगवान् का ही प्रतिपादन करते हैं । गोपियाँ वेद की ऋचाएँ हैं और भगवान् का सम्बन्ध भी नित्य है । भागवत पुराण में रासलीला का विस्तार से विवेचन मिलता है ।

अष्टधाप के कवियाँ में सूरदास और नन्ददास ने रासलीला का वर्णन भी विस्तार से साध किया है । वास्तव में गोपी रूपी कृष्ण भक्तों का रास में कृष्ण से मिलन वल्लभ सम्प्रदायी भक्ति का फलात्मक रूप है ।⁵

रसखान ने रासलीला का वर्णन कई पदों में किया है । इनका रास वर्णन परम्परागत रास वर्णन से भिन्न है । राधा कृष्ण की पूरक शक्ति मानी गई है, और रास में राधा कृष्ण के साथ ही रहती है किन्तु रसखान ने राधा का चित्रण इस रूप में नहीं किया ।

रसखान की गोपियाँ मुरली की ध्वनि सुनकर खिंचे हो जाती हैं, और यह सोचती है कि कृष्ण मुरली के माध्यम से उन्हें बुला रहे हैं—

1 मुजान रसखान पृ 30

2 राधावल्लभ सम्प्रदाय विज्ञान और साहित्य पृष्ठ 264 ।

3 उपनिषद् वाक्यकोश भाग 2 पृष्ठ 547 ।

4 डॉ. भाजन अहलद, रसखान काव्य तथा भक्ति भावना पृ 63 ।

5 डॉ. भाजन अहलद रसखान काव्य तथा भक्ति भावना पृ 63 ।

“अधर सगाइ रस प्याइ बासुरी बजाइ,
मेरो नाम गाइ हाइ जादू कियो मन म ।

×

×

रस रास सरस रगीलो रसखानि आनि,
जानि और जुगुति विलास बियो जन मे ॥¹

रास की सूचना मिलते ही गोपिया विवश हो जाती है। माग की कोई बाधा उह रास में सम्मिलित होने से नहीं रोक सकती। शीत की चिंता न करते हुए वे चल देती हैं—

‘कौजै कहा जु प लाग चवाव सदा करिवो करि हें ब्रजमारो ।

×

×

×

आवत है फिरि आज बयो वह राति के रास की नायन हारी ।²

कृष्ण ने बशी बट के तट पर रास रचाया। गोपियो ने कुछ मर्यादा का प्रतिष्ठा बनाये रखने का प्रण किया किंतु वे राम रचाये जाने की सूचना पाकर अपने प्रण से विचलित हो गईं—

‘आज भट्ट मुरली बट के तट मद व सावर रास रच्यो री ।
नननि सैननि बैननि सो नहि कोऊ मनोहर भाव बच्यो री ॥
जद्यपि राखन को कुलकानि सबै वृजवालन प्रान प्रच्यो री ।
तथापि वा रसखानि के हाथ बिकानि को अत लच्यो प लच्यो री ॥³

रसखान की गोपियो में कुल मर्यादा का ध्यान बना रहता है किंतु फिर भी वे रास स्थल पर पहुँच जाती हैं। रसखान के कृष्ण सूर के कृष्ण की भाँति गोपियो को मर्यादा का पाठ नहीं पढ़ाते। भारतीय दशन विनय का निरूपण भी नहीं मिलना वरन् कृष्ण रास की बेवत विविध क्रीडाओं के दशन होते हैं।

रसखान की कल्पना अत्यंत सगवत एवं सम्पन्न है। अतः उनकी अभिव्यक्ति में हमें सौंदर्य विधान की प्रचुरता चित्रों की अनिपय अनुरजयता तथा रूपावन की सहजता मिलती है। रसखान की गोपियो में कृष्ण के जीवन को देखकर शृंगार भावनाएँ जागृत होती हैं। रसखान न कृष्ण के रूप में प्रभावित होकर गोपियो को वन वन में डूलाया है—

1 डॉ. भास्करदा अस्न, रसखान काव्य तथा भक्ति भावना' पृ 64।

2 डॉ. भास्करदा अस्न, रसखान काव्य तथा भक्ति भावना' पृ 65।

3 सुत्राने रसखान प 33

'बाकी बड़ी अरियाँ बडरोर कपोलनि का कल बानी ।
मुदरहास सुधानिधि सो मुख मूरति रग सुधारस-सानी ॥
ऐसी नवेली ने देने क्यूँ वृजराज लला अति सुखदानी ।
डोलति हैं बन बोधिन म रमखानि मनोहर रूप लुमानी ॥'¹

रूप के साथ रसखान ने 'मोहन छवि रसखान लखि, अब दृग अपने नाहि' में मोहन की छवि को भी निरूपित किया है। रसखान ने नख शिख निरूपण की परिपाटी को लेकर नायिका चित्रण नहीं किया।

राधा का वर्णन दो स्थलों पर ही मिलता है— एक युगल जोड़ी के रूप में और दूसरा राधा की रूप की छटा के अंतर्गत। राधा मुदरता की पराकाष्ठा है कृष्ण राधा छवि की निस्सीमता है, तभी तो रसखानि राधिका रानी के रग में रग जाने को धन्य समझते हैं।

'ऐसे भये तो कहा रसखानि रस रसना जो मुक्ति तरेनहि ।
दे चित ताके न रग रच्चा जु रही रचि राधिका रानी के रगहि ॥'²

राधा कृष्ण की उल्लासमयी क्रीड़ाएँ जिस नैसर्गिक परिवेश में सम्पन्न हुई हैं वह अत्यंत मनोरम ही लगता है। प्रकृति स्वयं अचल पसार कर दोनों को अपनी स्नेह छाया में रख लेने को उत्सुक है। श्रज मण्डल की शोभा बढ़ि करने वाली मुग्ध वस्तुएँ य ह—यमुना गोवधन, करील कुंज, पुष्पलताएँ विहगावलि, वन उपवन, गोवत्स, भग्ध भवन, स्वच्छ वीधियाँ, हाट इत्यादि।

मुरली

कृष्ण भक्त कवियों ने मुरली के महत्व तथा उसकी आध्यात्मिक विशेषता को स्वीकार किया है। श्रीकृष्ण की चर्चा मुरली के बिना अधूरी प्रतीत होती है। मुरली का शब्द ब्रह्म का नाम दिया गया है।³ ब्रह्म के समान उसकी वाणी भी सब-यापक है। अतः वशी ध्वनि परम ब्रह्म का शब्द रूप है। वेणु में तीन अक्षर हैं—व+इ+णु। 'व' ब्रह्म सुख का द्योतक है, 'इ' सात्त्विक सुख को प्रकट करती है। इन दोनों को जो 'णु' अर्थात् पान करने वाली है, वह है—वेणु।⁴ आचार्य वल्लभ के अनुसार—“जब किसी मनुष्य को प्रभु का आग्रह प्राप्त हो जाता है, तब उसके सामने वगी बजने लगती है।⁵

1 मुजान रसखान पृ 33 34।

2 रसखान धीर घनामद पृ 28। छद सध्या 105।

3 "रास पचाश्यायी प्रथम अध्याय पृष्ठ 5।

4 डॉ माजदा अंस" रसखान काव्य तथा भक्ति भावना पृष्ठ 68।

5 श्रीमद्भागवत स्कन्ध 10 पुनर्दि श्लोक की सुबोधिनी टीका।

‘मद्यनायक’, न भी प्रत्यक्ष रूप से कृष्ण की रूप माधुरी के वणन में ही रुचि ली है। अपने काव्य में उन्होंने शृंगारी कृष्ण’ के चरित्र को उरेहा है।

‘मद्यनायक’ की रचनाओं में मिलन तथा सहकारी भावों के चित्र प्रचुर मात्रा में आते हैं। समागम के चित्रण में भी ‘मद्यनायक’ न अश्लीलता नहीं आने दी। ‘मद्यनायक’ के विप्रलम्भ चित्र अधिकांशतः गम्भीर और प्रभावोत्पादक हैं।

जमाल

जमाल ने भी राधा कृष्ण की प्रेमलीला का ही वणन अपने काव्य में किया है। कभी वे नायिका भेद माग पर चलते प्रतीत होते हैं तो वही य सत्कार की अनियमितता को देखकर योगी होने की चर्चा करते हैं और कभी दधि माखन के लिये गोपियों का माग अवहृद्ध करते हैं।

“धैरत निन मुहि कुज में माई नद बिसोर।

दधि माखन को खानहित, वह जमाल बिकरि मोर ॥”

कहीं कवि जमाल के कृष्ण आँखों को रंग-गुलाल से बंद करते हैं व मनचाही प्रेमिका को स्पष्ट करने में प्रयत्नरत है—

“इक की आखिन डार दी, काँगा रंग गुलाल।

इक काँ कर धरि कुच मल्या, कारन धवन जमाल ॥”

इनके काव्य में कृष्ण विषयक दोहों का उल्लेख नायिका भेद रूप में ही सामने आया है। वैसे स्तुति एवं आराधना भी की है। प्रेम निरूपण में निखार एवं गहराई है।

रहीम

रहीम मुमनमान होते हुए भी कृष्ण भक्त थे। इनको ईश्वर पर पूर्ण विश्वास था। कृष्ण के प्रति इनका असीम अनुराग है। उन्होंने अपने मन को चकरोर पक्षी की भाँति चन्द्रमा रूपी कृष्ण में लीन कर दिया।

रहीम ने भक्त बनकर ही कृष्ण को चाहा, कृष्ण की छवि में ही अपने का लीन रमा। कवि ने कृष्ण को विभिन्न उपमानों से गृहीत किया तथा उनकी ही भक्ति में लीन रहे।

“छवि आवन मोहन लाल की।

काखिनि बाँछे कलित मुरलि बर, पीत पिछोरी सालकी ॥

बब तिलक केसर की कीर्णें, दुति मानो बिगु बालकी।

बिसरत गार्हि सखी, मो मनतें चितधन नयन बिसाल की ॥

नीकी हसनि अधर सुधर निकी, छवि छीनी सुमन गुलाल की।

जलसों डारि दियो पुरइन पर, डोरनि मुक्ता माल की ॥

आप मोलबिन मोलनि डोलनि, बोलनि मदन गोपाल की ।
यह सुरूप निरसे सोह जाने, या 'रहीम' के हाल की ॥”

रहीम न मुसलमान होत हुए भी कृष्ण और राम की भक्ति को स्वीकारा था । इनको ईश्वर पर पूण विश्वास था —

“त रहीम मन आपनो कीनो चाइ चकोर,
निसिवासर लाग्यो रहै वृष्ण चंद्र की ओर ।
रहिमन की फोउ वा की ज्वारी चोर लवार
जो पति राखनहार है, मासन चासन हार ।
मागे मृकुटि न को गयो के हित त्यागियो साथ
मागन आगे सुख लो रहीम रघुनाथ ॥’

मुबारक के मिलन चित्र सभी रस पूण व स्वाभाविक और हृदयग्राही हैं । कवि का निम्न कवित्त मिलन के कोमल भावों का एक सजीव चित्र प्रस्तुत करता है ।

‘खेली कहा अलवेली इतै उत तेरे समय की सहेली मिलाइ हौं ।
गाइही मीन बनाइहो स्वाग मुबारक आपने सग सुवाइहौं ॥
पौढी सो प्राण की प्यारी चली पिय देखि वहै चल म फिर आइहो ।
जानि सयानप की बतिया यह कोही लग डर आगे न जाइहौं ॥’

इस प्रसंग में अभी वास्तविक मिलन नहीं हुआ, अभी तो प्रिय की भलक मात्र ही मिल पाई है ।

कवि ने नायक और नायिका की रस चेष्टाओं के जो चित्र अंकित किये हैं, उनमें मानसिक और शारीरिक सुख के गहरे छीट हैं । मन और शरीर इस उत्सव में साथ साथ सम्मिलित हैं ।

मुबारक के विरह सम्बन्धी कवित्त प्रेम की तन्मयता और वेदना की तीव्रता लिये हुए हैं । उनमें चमत्कार और कल्पना की ऊँची उड़ान होने पर भी सुन्दर भावों का लोप नहीं हुआ है ।

कृष्ण ने गोपियों के साथ छल किया । वे कुच्चा से प्रेम करने लगे हैं । वृष्ण उन्हें अगर इसी प्रकार ‘कलपाते’ रहेंगे तो मिलन तो असम्भव ही है—

छलकरि छल सजी गोकुल की गल लगी ।

× × ×

जु और कलपाइ हैं सो बस फलपाई हैं ॥’

और गोपियाँ—“धनश्याम सुखी रहो आनद सों तुम नीचे रहो उनही के रहों
म ही सतोप कर लेती है ।

इस प्रकार स्पष्ट हाता है कि अपने काव्य में मुबारक न कृष्ण को विभिन्न आयामों में प्रस्तुत किया है।

बास लीला

शेख का उल्लेख प्रथम 'समस्त खोज ग्रंथा तथा इतिहासों में मिलता है। आलम शेख रचित 'आलम बेलि' सग्रह श्रृंगारपरक उत्कृष्ट ग्रंथ रचना है। रीतिकालिक श्रृंगारिक काय परम्परा के अनुसार नायिका भेदा तथा प्रेम लीलाओं का वर्णन है। शेख ने अपनी पदावली में कृष्ण के बाल-मुल्लभ जीवन का सुंदर व सजीव चित्रण किया है।

बालक की चञ्चलता एवम् माँ यशोदा के वात्सल्य को शब्द के माध्यम से स्वाभाविक रूप में चित्रित कर प्रस्तुत किया गया है—

“बीस विधि भाऊँ दिन बारीये न पाऊँ और ।
याही काज बाही घर बासनि की बारी है ॥
नकु फिर अइहें बइहें दे री दे जसादा माहि ।
मो पै हरि मागे बसी और कहूँ डारी है ॥
शेख कहै तुम सिखवौ न कछु राम याहि ।
मारी गरिहाइनु की सीख लेत गारी है ॥
सग साइ मइया नकु प्यारी न कहैया कीजे ।
बलन बलैया लेके मया बलिहारी है ॥”

गोपी विरह

शेख के जिन पदों में गोपियों का विरह व्यक्त है, उनमें भी भावनाओं की प्रधानता है। भावनाओं का महत्व प्रकृति के उपकरणों द्वारा उद्दीप्त होकर व्यक्त हुआ है— 'काह' के वियोग में नदी नाले सब भासुओं से रो रोकर भर गए हैं—

'सेग कहै प्यारी तू जो जबही ते बन गई,
तबही ते काह असवनी सर बर हैं ।
याते जनियत है जू वेऊ नदी नारे तीर
काह बर विकल वियोग रोय भरे हैं ॥”¹

गोपाल के 'मधुवन' से चले जाने के पश्चात् उनकी मधुर स्मृतियों का नेत्र कदम्ब वक्ष, कालिंदी तट आदि हैं जो उनके विरह की ज्वाला की द्विगुणित बर देते हैं—

' जबतें गोपाल मधुवन की सिघारे भाई,
मधुवन भयो मधु दानव विषय सा ।

× × ×

देह कर करण करेजो ती हो चाहन है,
भाग भई कोयल कमाया कर हम गौ ॥'

कृष्ण इनके काव्य के नायक हैं उनका निरूपण दो रूपों में हुआ है। एक साधारण पुरुष प्रतीक व दूसरा 'वृष्णावतार', 'प्रजनायक'। साधारण मानव कृष्ण की क्रियाओं में स्थूल क्रियाओं की प्रधानता है परन्तु अवतारी कृष्ण के प्रति भावनात्मक स्निग्धता, सुरम्यता, लक्षित है जो दोनों रूपों में भिन्नता प्रदान करता है।

मानिनि प्रसंग

"मानिनि प्रसंग" को शैल ने अपने काव्य में भी लिखा है। मानिनि का मान तोड़ने के लिए उठने नायक के विरह की ज्वाला, मूर्च्छा आसुओं की बाढ का वणन किया है - कहीं उनके श्याम के आसुओं से सर सरिताएँ भर जाती हैं तो कहीं विरह ज्वाला से विरह भी जलता प्रतीत होता है -

' जोगी कैसे फेरनि वियोगी भावें बार बार
जोगी ह्वे है तो लागि वियोगी बिललात है ।
जा छिन ते निरखि किसोरी हरि लियो हेरि,
जा छिन ते खरोई घेराई पियरातु है ॥
शेख प्यारे अति ही विहाल हाई हाय हाय
पल पल अग की मरोर मुस्कातु है ।
आनि चाल होति तिहि तन प्यारी चलि चाहि
विरही जर्नि ते विरह जरया जातु है ॥'

विरही की मृत्यु के साथ मान और समाप्ति की उद्भाषना का जो चित्र है, वह उनकी प्रौढ अभि यज्ञना शक्ति का परिचायक है।

उद्धव प्रसंग

शैल ने गोपियों की आंगा में उद्धव के आगमन से जो गोपियों की दगा हुई गोपियों द्वारा उद्धव पर किय गये व्यग्न का मुदर चित्रण किया है -

कृष्ण के जीवन को सबस्व मान लेने वाली गोपिकाएँ शैल की साधारण नारियाँ (गोपियाँ) हैं। उद्धव के योग का निर्वाह अपने जीवन में करन में अपने आपको असमर्थ पाती हैं। वह अपनी सहज स्वाभाविकता उत्सुकता को प्रसन्न बनाकर उद्धव को बहती है -

“चाहती सिंगार जिह सिंगी तो सगाई कहा,
 ओधि की है, आस ता आघरी कसै गहिये ?
 विरह अगाध तहा सुग की समाधि कौन
 जोग कटि भावे जो वियोग दाह दहिये ।
 सेख बहै मैन मुद्रा मोहन जू लाये बन,
 मुद्रा लाओ कानन सुनेई मूल सहिये ॥’

राधा और कृष्ण को कवि अब्दुल्लाह ने भी नायक नायिका के रूप में ही चित्रित किया है। ये मूलतः शृंगारी कवि थे। नायिका भेद पर भी इन्होंने अपनी कलम चलाई है। नायिका के जीवन उमेद पर भी व अपनी कलम चलाने से नहीं चूके। राधा कृष्ण के समास वचन का एक चित्र उदाहरण स्वरूप यहाँ दृष्टव्य है -

“राजै एक सेज पर राधिका कुँवर हरि,
 दक्षन सुधर वर दोउ समरस है ।
 काम की कलोलन सो मीठे मीठे बालन मा,
 वाके चरन लोलन सो पीवै रूप रस हैं ॥”
 “सावरे सहाई मीत माइके प्रतीति प्रीत,
 सुरति समर जीति आनद बरस है ।
 केलि के चरित्र सारं करत न दोऊ हार,
 प्रेम मतवारे एक एक तैं सरस हैं ॥”¹

विरह वचन

पमी ने भी अपने काव्य में गोपियों के विरह वचन का अति सूक्ष्मता से उल्लेख है। गोपिया रात दिन कृष्ण की प्रतिक्षा में खड़ी हैं, उनके बचन मन में श्याम की प्रीति निरंतर गहरी होती जा रही है, तो वही गोपियों को कृष्ण के वियोग में कही भी मुक्त नहीं है। व पयिका को रोक रोक कर विरह आधिक्य और अत्याचार का उलाहना कृष्ण के पास भिजवाती हैं।

“हरि बिन बबहू न घन परी ।
 बहियो पयिक सदेश अवधि कर बिरहा अधिक करी ॥

× × ×

पेमी बिकल कुसल नाहि दीखन, गिन गिन अवध टरी ।
 आवहु धेग रावरे ना तरु अयके सुनौ भरी ॥”²

1. मुसलमानों की हिंदी सेवा पृष्ठ 171

2. देवी प्रेम प्रकाश पृष्ठ 211

कवि ने अनेक प्रकार से अपने काव्य में गोपियों के विरह को अभिव्यक्त किया है। वृष्ण के वियोग में गोपिका की मन स्थिति का चित्रण करने में कवि को विशेष सफलता प्राप्त हुई है।

वृष्ण वियोग में गोपियों की मन स्थिति का चित्रण करने में कवि 'पमी' को अधिक सफलता प्राप्त हुई है। कुब्जा प्रसंग, उद्धव प्रसंग विरह वचन आदि रूपों में कवि ने वृष्ण के चरित्र को अभिव्यक्त किया है।

“कुब्जा प्रसंग” में “याम का कुब्जा में साथ राग रग बढ़ाना और इसी के साथ गोपिका का विरह उठो का गोपिका का माग उपदेश देना, प्रत्युत्तर में गोपियों का यह कहना — “उधो तुम यह मरम न जानो” और अंत में यह कहकर उधो को बिदा करना ‘हम सग जोग माग कतु नाही वूँ समुद समानो।’ में कवि ने गोपियों को विरह-वेदना को बड़े स्वाभाविक ढंग से उजागर कर अपने काव्य में चित्रित किया है।

नेवाज' ने शृ गार परक रचनाएँ ही लिखी है। शृ गार वचन के लिये जिस कोटि की सहृदयता और काव्य कुशलता अपेक्षित होती है वह इनके पास प्रचुर मात्रा में थी। सयोग शृ गार इनका प्रिय विषय प्रतीत होता है। सभोग शृ गार के लिये जिन प्रसंगों को लिया है वे रति सभोग परक हैं। कृष्ण वियोग से दुखी नायिका का वचन इस प्रकार है।

“देखि हमें सब आपस में जो कछु मन भावें सोई कहती है ।
ये छरछाई तुगाइ सब निमि घास नवाज हम देहती है ॥
वातें चाव भरी मुनिके रिसि थावत पं चुप है रहती है ।
कान्ह विघारें तिहार लिय सिगर जग को हसबो सहती है ॥

नवाज न अपन काल में वृष्ण व नायिका राधा गोपिका को शृ गार मूलक दृष्टि से ही देखा है।

परकीया भाव

‘अष्टछाप’ के कवियों ने राधा को स्वकीया रूप में प्रस्तुत किया है, किंतु रसलीन ने राधा कृष्ण को परकीया रूप में चित्रित किया है। उनकी अभिव्यक्ति बड़ी मार्मिक बन पड़ी है—

“स्यामल सारी सजी अति राघिका ठाढी भई निज पीरी मुहाय ।
कान्हहें तव इस द्वार में आई सडेभये पामरी पीत रगाये ॥
चतुरला रसलीन कहा कहि आपने न भेद काहू जनाये ।
जो रग और रहे घट सो चित के पट दोऊ दुइन दिखाये ॥ १

कवि श्रृंगार की ओर ही षकृष्ट होता है। नायक-नायिका वणन को उन्होंने बड़े सुन्दर ढंग से चित्रित किया है।

श्रीकृष्ण की विविध क्रीडायो के वणन में वही वही श्रृंगार मर्यादा का उल्लंघन तो अवश्य हुआ है किंतु ऐसे स्थलों पर कवि की काव्यानुभूति सजग रही है।

परकीया नायिका वणन यद्यपि रसिकता पूर्ण हो गया है, फिर भी प्रतीको के आवरण ने उसे अनावृत्त होने से बचा लिया है

“सब जग हारयो मे असल काहू को न सखात ।

बुजन में रति के दाऊ पक्षी लो उडिजात ॥”¹

सौन्दर्यानुभूति के चित्रण में रसलीन का मन अधिक रमा है।

मुरली

रसलीन भी ‘काहू’ की वशी के आवरण में बंध गये। उन्होंने अपने पाव्य में मोहिनी वशी का चित्तरूपक वर्णन किया है—

‘वसी ह छुडावत है बस त न रीति गच्छ
वसी सम लेत प्राण मीन को निवार के ।

अधर सुधा मे लग उगलत हैं, नित एती,
अद्भुत भयो है, यह जगत् निहारिके ॥

माह मन देर और अर्धव रसलीन जब,
पसु पक्षी बके मानो डार दई भार के ।

बातें विधि भेर जान सेस को न दोहा बान
सेस तन तान सीहो धरती को डार के ॥”²

रसलीन भी अथ कवियों की भांति कृष्ण की मुरली पर क्या न मोहित हा, जबकि उस मुरली की स्तन पर मभी मोहित हैं। ‘काहू’ की वसी में तो राधा का प्राण ही हैं—

‘पीतम बसुरी की सरसि सब जगते बरि ध्यान ।

अधर लगत हरि के जियति बिछुरे बिछुरे प्राण ॥”

मुरली की ध्वनि बानो में पड़त ही राधा की यह दगा हृद—

1 ‘रस प्रबोध’, दोहा — 949 50 ‘रसलीन प्रभावली ।

2 ‘रसलीन प्रभावली — मृगजयति बरित 98 ।

“यह मति राधे की भई सुनी मुरली की तान ।

तन मग घत कह लाज यह दैन चहे तब प्रान ॥”

कारे साँ पहले भक्त थे, कवि बाद में । दाना ध्येय श्रीकृष्ण का ही स्तवन था । उदात्त भक्ति भावना के सवाहन में इनके कवित्त अतमन को आंगोलित करने की क्षमता तथा दीर्घकालिक प्रभाव छोड़ने की योग्यता रखत हैं ।

मीरन ने भी अपने वाध्य में मुद्गल नामक नायिका के रूप में ही श्रीकृष्ण को याद किया है । इनकी नायिका मध्या अघोरा, प्रौढा सखिता के रूप में है । स्फुट दोहों में भी इन्होंने कृष्ण को शृ गार मूलक रूप में ही उरहा है ।

नजीर ने ‘कन्हैया का बालपन’ शीर्षक से एक लम्बी कविता का सृजन किया । उनका यह कवित हृदयप्राही है—

“घारो, सुनो वे दधि के सुटैया का बालपन,

और मधुपुरी नगर के बसैया का बालपन ।

मोहा सरूप नृत्य करैया का बालपन,

बन वन के ग्वाल गोवें चरैया का बालपन ॥”

नजीर रसिक व्यक्ति थे । इ होने कृष्ण के जन्म को बड़े ही सुन्दर ढंग से प्रस्तुत किया है यथा—

‘है रीत जन्म की यो होती जिस घर में बाला होता ।

उस मडल में मन बहुतेरा सुख चैन दोवाला होता ॥”

—कन्हैया जू का जन्म

और यही से उन्होंने उनके जन्म की कहानी शुरू की है ।

नजीर भी कृष्ण की वासुरी की धुन को आसुना न कर सके अपनी रचना वासुरी में उन्होंने कृष्ण की मुरली की विभिन्न मुद्राओं का भी चित्रण किया है—

“जब मुरलीधर ने मुरली अपनी अधर धरी ।

क्या क्या प्रेम मीत भरी इसमें धुन भरी ॥

सै इसमें राधे राध की हृदय भरी खरी ।

लहराई धुन जा इसकी इधर और उधर परी ॥

सब सुनने थाले कह उठ ज जै हरी हरी

एसी बजाई कृष्ण कन्हैया ने बासुरी ॥’

1 ‘रस प्रबोध दोहा-197 रमलीन प्रयावली’ ।

2 सतवाणी अंक - कल्याण वष-291 पृष्ठ-343 ।

निरूपण

श्रीकृष्ण का चरित्र इतना मधुर एवम् व्यापक है कि इसमें योग भोग सभी समा जाता है। राधा माया के रूप में भी कृष्ण के सन्निकट है, और प्रेमिका के रूप में भी। कृष्ण की लीलाएँ अनंत हैं— इन अनंत लीलाओं में जिसे जो प्रिय लगा, वह उसी में सम्मिलित हो गया। कोई भक्त रास में सम्मिलित हुआ, और रसमय हो गया। कोई गौ चारण के लिए निकल पड़ा, कोई दधि माखन माँगनहार बन गया, कोई ममुना किनार के कुंजों में सो गया, कोई कदम्ब के डार के समीप ठिठक गया, कोई चौरहरण का दृश्य छुप छुप कर देखने लगा। ब्रज की गांधिया एवम् विशेष रूप से राधा के आकर्षण विक्रमण को देखने और समझने में अनेक भक्त सोए रहें। रुठना-मनाना, विहार, केलि क्रीडा, मिलन, ऋतु वणन के विभिन्न दृश्य तो सभी कवियाँ को प्रिय लगे। मुरसी जो कृष्ण की विशिष्ट पहचान है, उसे भी सभी ने अपनी अपनी भावना के अनुरूप ही देखा है। किसी ने मुरसीधर को आराध्य माना है, तो कोई सौतिया डाह से व्याकुल हुआ है।

कृष्ण काय की विभिन्न लीलाओं में लौकिकता स्पष्ट है, परंतु सभी लीलाओं का आध्यात्मिक स्वरूप है। भक्त इन लीलाओं के आध्यात्मिक पक्ष से बधा हुआ है। वह लीलाओं की गहराई में बैठा है। जिसने इसकी आध्यात्मिकता को नहीं पहचाना, वह लौकिकता से आगे बढ़कर शरीरी हो गया। शृंगार वासनामय हो गया और शरीरी रस-लोलुपों के आकर्षण का भेद बन गया।

हिंदी के मुसलमान कृष्ण भक्तियों के काव्य में बाल कृष्ण की लीला गीत हो गई है। 'कन्हारव' के रचयिता 'जायसी' ने कृष्ण की अयाय चमत्कारिक लीलाओं को महाकाव्य में बड़ी कुशलता से उरहा है। जहाँ इस प्रकार के प्रसंगों का घणन हुआ है वहाँ कृष्ण विष्णु के अवतारी रूप में ही अवतरित हुए हैं। राधा कृष्ण की प्रेम-लीला के रसात्मक उपारयाना का वणन सभी मुसलमान कवियों ने रसमय किया है। हिंदी में भक्त कवियाँ की भाँति ही परम्परा से प्राप्त राधा नत्व से कृष्ण तत्व से मिलाकर इस नव्य युगलमूर्ति को मधुरसाभित स्वरूप प्रदान किया है।

राधा के चित्रण में रति, प्रेम, स्नेह, मान, प्रणय, राग, अनुराग, भाव का चित्रण अनेक मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों में दृष्टव्य है। परन्तु 'महाभाव' का सफल चित्रण 'जायसी' ने 'कन्हारव' में किया है। रसखान ने कुंजों में कृष्ण को राधा के पाँव दबाते देखा और बिस्मय में डूब गए। वैसे रसखान मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों में अपनी पृथक पहचान रखते हैं—उन्होंने बालकृष्ण, किशोर-कृष्ण, और युवा-कृष्ण का सौंदर्य वणन बड़े ही मनोयोग से किया है। पुरुष-सौन्दर्य-चित्रण की कला रसखान की हिंदी साहित्य को अक्षुण्ण देन है।

महाकवि ज्ञान आसम मुबारक मठनाथक जमाल आसम नेम आर अफ़्दुल्लाह आदि कवियों ने कृष्ण राधा के रूप माधुर्य का ही विशेष चित्रण किया है। रहीम की रचनाओं में कृष्ण के प्रति असीम अनुराग के चित्रण होते हैं। कृष्ण के प्रति अभिषेक असीम आस्था रहीम का भक्त कवियों की श्रेणी में प्रतिष्ठित करती है। पंजी 'विद्योग विन है उहोन गागिग की विरह उरग सम्मिलित करके उमें अच्छी अभिव्यक्ति प्राप्त की है। इनका उदय प्रसंग सहज होत हुए भी विरहानुभूति की सामिकता को अभिव्यक्त करता है। 'रमलीन' भाव भाषा दोनों ही शब्दों से साहक है। शृंगार के सादक चित्र उरहण में इनकी कुशलता का कोई सानी नहीं है। अम कता पर रग तमे रह विरग' की अभिव्यक्ति का अनूठा उदाहरण है।

मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों का साहित्य, भक्ति और रीतिकालीन प्रवृत्तियों की सीक से हटकर नहीं है परन्तु हिन्दी में कृष्ण कथा का प्रथम महाकाव्य 'कावत्' पूर्ववर्ती और परवर्ती कृष्ण साहित्य के लिये स्तम्भ है।



भारतीय भावात्मक एकता और हिन्दी मुसलमान कवियों का कृष्ण काव्य

संस्कृत प्राकृत और अपभ्रंश भाषाओं में कृष्ण चरित्र सम्बन्धी प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। संस्कृत के माध्यम से समस्त भारत में कृष्णाख्यान का प्रसार तथा प्रचार हुआ। प्राकृत भाषा ने उस सबजनों सुलभ बना दिया। कृष्ण को विष्णुदत्त माननीय स्तर पर दर्शने की चेष्टा हुई। जैनाचार्य हर्मचन्द्र जयवल्लभ क्षेमेन्द्र तथा जयदेव कवियों द्वारा रचित काव्य ने कृष्णाख्यान के प्रति अभिषेच उत्पन्न कर दी। फलस्वरूप कृष्णलीला के लिये भूमि प्रस्तुत हो गई। 1400 ई. में मैथिल प्रदेश में अभिनव जयदेव मैथिल कोकिल, विद्यापति का आविर्भाव हुआ। महाराष्ट्र के अन्नगो के रचयिता नामदेव का नाम हिन्दी के प्रथम कृष्ण भक्ति कवि के रूप में लिया जा सकता है। सन् 1354 ई. में कृष्ण चरित्र सम्बन्धी सबसे प्राचीन ब्रजभाषा हिन्दी ग्रंथ माधव अग्रवाल जैन कृत - 'प्रद्युम्नचरित' है। इसके नायक कृष्ण व प्रद्युम्न हैं। विष्णुदास नामक कवि ने गीत पद्धति में 'महाभारत' 'स्वर्गरोहण' एकमणि मंगल और 'स्नेह लीला' नामक कृष्ण सम्बन्धी चार ग्रंथ लिखकर ब्रजभाषा काव्य हेतु पथ प्रशस्त किया। केशव कायस्थ ने सन् 1974 में कृष्ण लीला काव्य की गुजराती में रचना की इसमें ब्रजभाषा के दो पद हैं। शंकरदत्त असमिया साहित्य के जन्मदाता माने जाते हैं। 1481 ई. में इन्होंने वादावन की यात्रा की और रचनाएँ लिखीं। 1500 ई. में महाराष्ट्र के वि. भानुदास ने कृष्ण सम्बन्धी अनेक रचनाएँ ब्रजभाषा में प्रस्तुत की हैं।

मध्ययुग में बल्लभ सम्प्रदाय, निम्बार्क सम्प्रदाय, चैत यथा गोडीय सम्प्रदाय हरिदासी, राधा बल्लभ चरणदासी आदि सम्प्रदायों ने कृष्ण भक्ति की विस्तृत भूमि तैयार की। इस सुन्दर सुहृन्मल हरीनिमायुक्त भूमि को देख कर सभी भक्त-जन आनन्दित हो गए। कृष्ण भक्तों को यह लीला भूमि रास आ गई।

कृष्ण भक्ति का क्षितिज इतना व्यापक था कि इसने प्रत्येक रसिक भक्त को स्पष्ट किया। दिशाओं की परिधि जाति सम्प्रदाय की सीमा रेखाएँ अवराध

न वा सकती। रसेद्वय कृष्ण न सभी को अपना लिया जा रम सोलुप मे, इसम हिन्दू, मुसलमान वा कोई भेद नैव ही रह्य। प्रेमरस भरे पठान और मुगल हृदय भी कृष्ण का रसपान करन ह्यु गोपिका बन गए और कृष्ण की सीसाबा मे सम्मिलित हो गए। रस और प्रेम जगत म कोई भेद होना ही नही, वहाँ तो एक ही सत्ता होती है और पुष्प क मनोराज्य म दोष गभी नाम दोष होत हैं। इस सदम मे मुसलमानो की हिंदी मेवा भी विनोय उ-लेखनीय है। अरबी और फारसी जुवान मे कृष्ण के तालिस्य की ममेदन की अपेक्षा उ-हें ब्रजभूमि म प्रवाहित ब्रज भाषा म वह जाना ही प्रियकर प्रतीत सा हुआ।

इस्लाम और ब्रह्मण्य भक्ति भावना

भक्ति की भूमि पर भगवान का रस राज्य स्थापित है। इसम केवल रसिको का प्रवेश सम्भव है, अरसिय मा कृष्णे ज्ञानवादी दूर ही रह जाते हैं। वैराग्य का तिरस्कार करने वाली यह भक्ति रागानुगामिनी है परंतु जिस राग पय पर यह चढ़ती है उसे सामारिक भागासक्ति से विलकुल अलग विवाद रहित, अमृत स्वरूप राग जानना चाहिए—भवतो का ऐसा आदेश है। प्रेम प्रेमी और प्रेमास्पद भगवान् स्वय ही हैं लेकिन रसाम्बादन करने कराने के लिय व सदव "तीन" बने रहते हैं।

भक्ति की भावना है ता व्यक्तिगत वस्तु पर समष्टि के किसी भी एक व्यक्ति के अंत करण मे वह जग सकती है। इस पर दश काल का कोई बघन नहीं है। अत वह आयों की भी सम्पत्ति है और सामियो की भी² दोना इस पर अपनापन दिखा सकने हैं। ब्रह्मण्य आचार्यों का भी हम किसी प्रकार की परिसीमा निर्धारित करते नहीं देखते। इसके विपरीत वे सकीणता मिटाने भेद भाव दूर करने के पक्षपाती रहे है। साधक मे सच्ची निष्ठा है, तो वह निम्न कुलोत्पन्न होकर भी साधना का अधिकारी ह। निगुण मार्गीय सन्त जातिवाद के पक्षके शत्रु थीर मूर्तिषा मंदिरा के (मसजिदों के भी) उपहासक थे। कुरान भी यही शिक्षा दता है कि—इस्लाम का प्रत्येक व्यक्ति मानवीय सम्बन्धो म ध्रातृत्व

- 1 कल्याण पय 41 अक 7 सौर भाषण 2024। रस (प्रेम) साधन की वितरणता हनुमान प्रसाद पीठार का प्रवचन पृष्ठ - 1053।
- 2 इत इज सिमेटिक एत बेन एत आयात् एत इत सि भीएवजन भाक दी हट एपेन्ट रिजिड इटनेकम्पुमिजम - इरनामिक कल्बर (हिन्दुवाद रिग्यु), दि इन्फ्युएस भाव इस्लाम आन दि क-बर भाक भक्ति इत भीरियापेल इण्डिया - डॉ मुमुक हृषेन पृष्ठ-642।

(बचुत्तव)¹ का विचार डूब करे। यहां तक कि हिंदुओं के बीच का इस्लाम, जिसे "भारतीय इस्लाम" कहना चाहिये, हिंदू धर्म का प्रभाव कही कही स्वीकार करते हुए भी जाति विभाजन के मामले में उससे पूरी तरह असहमत हैं।

विक्रम की नवीं शती (आठवीं शती ईसवी) के पहले अरब के कुछ मुसलमानों ने मस्जिदों की ओर अपना उपनिवेश स्थापित कर लिया था। इनमें से तो अधिकतर इराक के शरणार्थी थे² और दक्षिण में शांतिपूर्ण ढंग से इस्लाम का प्रचार करते थे। इन आधार पर किही किही मुसलमान विद्वानों में यह विश्वास जन्म गया है कि आचाय रामानुज का चिन्तन इस्लाम से प्रभावित था।³ कहना नहीं होगा कि यह विश्वास हास्यास्पद है। मध्य युगीन वैष्णव धर्म में प्रचलित मधुर रस की उपासना सूफियों से कुछ न कुछ प्रभावित हुई थी, इतना स्वीकार किया जा सकता है। महमूद गजनवी के समय से ही सूफी फकीर पूरे देश में बिखर कर धर्म प्रसार का कार्य करने लगे थे। ताहीर म बुखारा के शेख इस्माइल (स 1060 वि) सिंध में बुखारा के ही मूल निवासी सयद जलालुद्दीन (स 1247-1348 वि), पंजाब में जलालुद्दीन के पुत्र सयद अहमद बबीर या 'मखदूम ए जहाँनिया' (मृत्यु स 1293 वि), बहाउल हक, बाबा फरीदुद्दीन, काश्मीर में बुलबुलशाह, पातीपत में अबूलली कलदर (मृत्यु स 1381), गुजरात में अब्दुल्ला यमनी (स 1124 वि) और फारस में फकीर नूरुद्दीन (स 1151-1200 वि), बगल में शेख जलालुद्दीन तन्वीजी (मृत्यु स 1301 वि) तथा अन्य सूफी साधु दक्षिण में गेलूदराज और पीर महावीर खम्दायत (अरबी, स 1361 में बीजापुर आये थे।)⁴ इत्यादि ने सूफी मत का प्रचार किया। जनता को सूफियों का संदेश भला लगा, अतः सूफी मत फलने में खास देर न हुई, और इस्लामी संस्कार प्रथम पात लग। आचाय शब्दावली में— 'इस्लामी संस्कार धीरे धीरे जन्मते जा रहे थे। सूफी पीरो के द्वारा सूफी पद्धति की प्रेम लक्षणा भक्ति का प्रचार कार्य धूम से चल रहा था। मुसलमानों जमाने में इन सूफियों का प्रभाव देश की भक्ति-भावना के स्वरूप पर बहुत अच्छी तरह से पड़ा। साधुय भाव' को प्रोत्साहन मिला। साधुय-भाव की जो उपासना चली आ रही थी, उनमें सूफियों के प्रभाव से 'आभ्यांतर मिलन', मूच्छा 'उमाद' आदि की भी रहस्यमयी योजना हुई। मीरा बाई व चैतन्य महाप्रभु दोनों पर सूफियों का प्रभाव

1 Indian Islam - Muway T Titus, Oxford University press 1909, P 53

2 Ibid, P 38

3 Islamic Culture (The Hyderabad Quarterly Review) Vol XII Oct 1938

4 Indian Islam P 42, 46

पाया जाना है।¹ वान ठीक भी है लेकिन इस्लामी मान्यताओं में जो अंतर है, वह और भी आश्चर्यप्रद है। अक्बर या चलाया छम 'दीन ए इलाही' खुदा का मजहूर कहने भर को या। नि सन्नेह उसमें इस्लाम की जगह अद्वैतमत (डिवाइन मोनोथीज्म) का आदर मस्वार हुआ था। बुगनी सिद्धांतों में अक्बर की अरबि और सावजनिक प्राधनाओं में मुहम्मद के नाम का प्रतिपेक्ष दिचारणीय है।² हिन्दुओं के पौराणिक आख्यानों से इस्लामी समाज को एक नवीन प्रेरणायें मिली। राम लक्ष्मण व आशु सम्बन्धों को हसन-हुसन में देखा गया अमीर उमिया अतीतिक शक्ति मन्मान हनुमान बना दिये गये और अली को भीम-अजुन की विशेषताएँ प्रदान की गयी।³ वैष्णव सम्प्रदाय का 'रास' सत्रहवीं शती के आसपास अरब में, 'रमाल नृत्य' के रूप में अपनाया गया।⁴ 'रमाल नृत्य' का ही एक प्रकार है।

मध्यकालीन हिन्दी काव्य सांस्कृतिक दृष्टि से समन्वय का प्रयास कहा जा सकता है। यह समन्वय काय एक ओर हिन्दू धर्म के नेनाओं द्वारा हुआ तथा दूसरी ओर सूफी सत्ता द्वारा। कबीर आदि सत्ता ने ईश्वर के माध्यम से दा परस्पर विरोधी समाजा तथा धर्म मतों के बीच एकात्म को प्रकट करके इन समन्वय का यत्न किया था।

'कबीर ने हिन्दूत्व और मुसलमानत्व के बाह्य उपकरण को हटाकर, उनका असली स्वरूप पहचानने की चेष्टा की। मुसलमानों की ओर से यह काम प्रेम कहानियाँ लिखकर सूफी सत्ता ने किया।'⁵ मनुष्य मनस्य के बीच जो रागात्मक सम्बन्ध हैं वह उसके द्वारा व्यक्त न हुआ। अपने नित्य के जीवन में जिस हृदय साम्य का अनुभव मनुष्य कभी नहीं किया करता है, उसकी अभिव्यजना उससे न हुई। हिन्दू और मुसलमान हृदय को आमने-सामने करके अजनबीपन को मिटाने वाली में कुतुबन 'जायसी' आदि कवियों का नाम लेना पड़ेगा।⁶

1 हिन्दी साहित्य का इतिहास पृ-152 और 154

2 याम हल विडोवेल इण्डिया अ ई वारपेटर-नेक्चर-8

'हिन्दूधर्म एण्ड इस्लाम' पृ 498-502

3 प्रो. द्रुपाम् कबीर हमारी परम्परा गिरिया प्रकाशन उज्जपुर हिन्दी संस्करण 1949 पृष्ठ 65

4 बजभारती (रामलीला विशारद) वप 16 अंक 789 माघशुद्ध 2015 वि प 27

5 डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य की भूमिका पृ 63-64

6 प रामचन्द्र गुप्त (स जायसी प्रभावली) पृ

खुसरो ने अलाउद्दीन खिलजी के जमान में हिंदी में कविता रची थी। खुसरो बड़े भारी पंडित थे। वे अरबी, पारसी तुर्की, इरानी, हिंदी प्रभृति कई भाषाओं को जानते थे। उन्होंने ग्यारह बान्शाहा को दिल्ली के शाहीतन्त्र पर चढ़ते उतरते देखा और सात बादशाहों के तो वे स्वयं दरबारी ही थे। वे अपने देहांत के समय लगभग 40 वर्ष के थे। (1925 ई.) उन्होंने खालिफवारी लिखकर फारसी राजभाषा और हिंदी का एक काव्य तैयार कर दिया था।

'खालिफवारी' के सिवा खुसरो की बहुत सी पहेलियाँ, मुकरियाँ या कह मुकरियाँ और सुखने आदि प्रसिद्ध हैं। ये सब फारसी अक्षरों में लिखे गए होंगे। यद्यपि खुसरो हिंदुओं और मुसलमानों की भाषाओं के बीच में सेतु का काम कर रहे थे, तथापि उनकी पहेलियाँ, मुकरियाँ आदि उन मुसलमानी रइसी और दरबार में मनोविनोद का कारण ही होती थी, जो हिंदी और फारसी आदि भाषाओं जानते थे। हिंदुओं में बहुत कम लोग अमीर साहब की जवांदनी का लुत्फ उठा सकते थे, क्योंकि वे मुसलमानी भाषाओं में प्रवण नहीं कर पाए थे।¹

भारतीय और ईरानी संगीत में सम बंध स्थापित करके उस एक नई पद्धति का रूप देने में अमीर खुसरो का बहुत बड़ा हाथ है। अमीर खुसरो दोनों संगीत पद्धतियों के ममज्ञ विद्वान थे, इसीलिए उन्होंने दोनों के मिश्रण से कुछ ऐसे नये रागों का निर्माण किया जो हिंदुस्तानी संगीत की अमूल्य निधि हैं। मजीर, साजगरी, इमन, उश्शाक, मुवाफिक, गनम जिल्फ फरगजा सरपर्दा, बकहरार, फिरदोस्त, मनमू जैसे रागों की उन्होंने सृष्टि की। यही नहीं बल्कि यंत्रों के परिष्कार तथा नये रागों के उपयुक्त वाद्य यंत्रों के निर्माण में भी खुसरो ने अपनी विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया।²

खुसरो अप्रतिम विद्वान और अद्भुत दश भक्त व्यक्ति थे। उन्होंने अपनी रचना 'नुह सिपेहर' में बड़े विस्तार से यह बताया कि वे हिंदुस्तान को प्रेम क्या करते हैं। उन्होंने हिंदुस्तान के गौरव को बढ़ाने वाले दस कारणों का उल्लेख किया है। संगीत, भाषा, जलवायु आदमी, रहन सहन आदि के बारे में विस्तार से बताया कि वे हिंदुस्तान को प्रेम इसीलिए करते थे। भाषा के बारे में खुसरो का कहना है कि दिल्ली में हिंदी भाषा बोली जाती है जो काफी प्राचीन है। हिंदवी का अर्थ सम्भवतः अजमाया है, क्योंकि दूसरी भाषाओं के साथ अज का नाम नहीं लिया है, जबकि सिंधी, बंगला, अवधी आदि का नाम आता है। देशी भाषाओं का उदय की मूचना देने वाला यह अत्यंत महत्वपूर्ण संकेत है। इसी प्रसंग में खुसरो ने भारतीय संगीत की भी चर्चा की है। उसने स्पष्ट लिखा है कि 'हिंदुस्तानी

1 पध्विकाप्रसाद राजपेयी हिंदी पर फारसी का प्रभाव पृष्ठ नुम्बर 9

2 एम. बी. मिरजा तादफ एण्ड बक आक अमीर खुसरो

समीप गुनवर हिरन तमा मग्न हा जाते हैं, य दौटना भूल जाते हैं।” गोपाल नायक, बंजू और तातान का चार म, उनका संगीत के सम्बन्ध में मुसरो ने स्पष्ट विचार दिए हैं।

फारसी हिन्दी का मुनने से ही उन्नत कम नहीं किया, बल्कि फारसी हिन्दी गजल भी लिख सारी। उनकी यह गजल बहुत मशहूर है और जिस समय यह बनी होगी हिन्दी का मुसलमानों का चारों तरफ से बाह-बाहो की मदी सगा बी होगी। वह गजल या है—

‘सिहाले मिसकी मफुन लगाफुल,
दुराय नना बनाय बतियाँ।
कि ताब हिजरा न दारम् ऐ जाँ
न सेहु काह सगाय छतियाँ।
गयाने हिजराँ दराज यू जुल्फो,
रोखे बबलत खु उन्न कोताह ॥”

× × ×

मखी पिषा का जो मैं न देखू।
तो कैसे काटूँ अघेरी रनियाँ ॥”

अकबर के शासन काल में उच्चकाटि का साहित्य निमाण हुआ, क्योंकि साधारण कवि ही नहीं, बादशाह और उनके हिन्दू मुसलमान मन्त्री भी हिन्दी में कविता करते थे। बीरबल अकबर के बड़े मुहसने थे और उनकी मृत्यु पर बादशाह बड़े शोकाकुल हुए थे। उन्होंने अपना मनोभाव इस सोरठे द्वारा व्यक्त किया था—

मय कुछ दीनन दीन, एक दुरायो दुसह दुख।
मोठ दे हमहिं प्रवीन नाहिं राटया कछु बीरबर ॥”

नवाब खानखाना या हिन्दी की अनेक उप भाषाओं का अच्छा जान था। इन्होंने ब्रजभाषा राजपूतानी और खड़ी-बोली में भी कविता की हैं, और तो क्या जहाँ अमीर खुमरो ने फारसी हिन्दी की खिचड़ी पकायी है, वहाँ उन्होंने संस्कृत हिन्दी मिश्रित कविता की है।

हिन्दी खड़ी बोली

“कलित ललित माला बाज बाहिर¹ जडा था।
चपल चलन वाला चान्नी में खडा था ॥

1 विजयी कानून भारत । सैयद अकबर अन्वय रिजवी अलीगढ़ 1954 पृ 179-80
2 * बाज बाहिर — रत्न स ।

कटि तट बिच मला पीत सेला नवेला ।

अलि बन असवेला यार मेरा अकेला ॥”

मुगल सम्राटो के राज्यकाल म ललित कलाओ ने राजाश्रय पाया और वे उत्कृष्ट को प्राप्त होने लगी । अकबर ने फतहपुर सीकरी को जब से राजधानी बनाया, चित्रकला को नया जीवन मिल गया । सम्राट अकबर को चित्रकला से अत्यधिक प्रेम था । उनकी व्यक्तिगत देख रेख म राजपूत शली तथा फारसी शैली के सम्मिश्रण से उत्पन्न मुगल शैली का पूर्ण विकास हुआ । 1588 ई म जब महाभारत का अनुवाद ‘राजमनामा’ के नाम से फारसी मे हुआ । उसका चित्राकन भी पुस्तक के साथ मुगल शैली मे हुआ । ‘हरिवंश पुराण’ के ऊपर आधारित चित्रो का अकन भी इसी प्रकार अकबर काल मे ही हुआ ।¹ इन दोनो ग्रन्थो का सम्बन्ध कृष्ण चरित्र से है । अतः कृष्ण का महाभारत कालीन रूप मध्ययुग म चित्रकला जगत् की पहली देन है ।

सम्राट जहाँगीर के समय ललित कलाओ को आदर एवम् सम्मान प्राप्त था । जहाँगीर रसिक था । अकबर की तरह सबधन समन्वयकारी नहीं था । अतः उसके राज्यकाल मे रामायण तथा महाभारत की चर्चा नहीं हुई । उसके स्थान पर केशव की ‘रसिक प्रिया’² नागरी लिपि मे लिखी गई तथा मुगल शैली मे उसका चित्राकन भी हुआ । पुट्टकर कवि की ‘रसवेलि’³ रचना भी चित्राकित की गई ।

मुगल सम्राट अकबर मुसलमान होते हुए भी हिन्दू धर्म के प्रति उदार थे । उनके समय मे कछवाहा नरेश मानसिंह न अपने दोनो गुरु रूप तथा सनातन व आदेश से वृन्दावन म गोविन्द देव के मन्दिर का निर्माण कराया । वृन्दावन के प्राचीन मन्दिरों मे यह सर्वश्रेष्ठ है ।

औरंगजेब तो नहीं, पर उसकी पुत्री ग़ाहज़ादी ज़ेबुनिसा बगम के हिन्दी म कविता करने का पता लगता है । कहते है कि—“नैन विलास” कविता ग्रन्थ की कर्त्री ये ही है । इस ग्रन्थ का अन्तिम दोहा इस प्रकार बताया जाता है —

“जेबुनिसा जहान मे, दुस्तर आलमगीर ।

नैन विलास विलास मे, धास करी तहरीर ॥”

1 मेट्रोपोलिटन म्यूजियम न्यूयार्क ।

2 बोस्टन म्यूजियम — अमरीका ।

3 राष्ट्रीय संग्रहालय — नई दिल्ली ।

“हिंदू मुस्लिम समन्वय के सेतु जायसी”-

अरबी, फारसी और हिंदी हृदयों को पास पास लाने में अमीर खुसरो का कृत ध्य बड़ा ही महत्वपूर्ण है। 'जायसी' ने इस प्रयाम को बहुत बड़ी शक्ति दी है। ये कहते हैं—

'तुरकी अरबी, हिंदवी भाषा जनी जाहि ।

जेहि मह मारग प्रेम का सर्वे मराहे ताहि ॥

आदि अत अस याषा अहे ।

लिखि भाषा - चीपारु कहै ॥

(पदमावत्)

अइस प्रेम कहानी दासर जग मह नाहि ।

तुरकी, अरबी फारसी सब दखऊँ अजगाहि ॥ ¹

¹ का भाषा का संस्कृत प्रेम चाहिए साँच ॥ ²

मुसलमान शासकों ने हिंदी भाषा के कवियों का संरक्षण दिया, अनेक मुसलमान वादगाहों और नवाबों की हिंदी कविताएँ भी मिलती हैं। मत्तो-भक्तों ने भी अपनी भाषा में फारसी शब्दों का जमकर प्रयोग किया है। जायसी ने भी भावित समन्वय साधना में भारी योग दिया है। वे सच्चे अर्थों में जनकवि थे। उन्होंने ठेठ अवधी को काव्य के उत्तम सिंहासन पर प्रतिष्ठित करने में भी सर्वाधिक योगदान दिया है। भारतीय अद्वैतवादी अवतारवाद और मुस्लिम एकेश्वरवाद के साथ-साथ का सकल प्रयाम जायसी की दार्शनिकता का वैशिष्ट्य है। उन्होंने परम तत्त्व की बड़ी मयूर प्रमथ परिक्ल्पना की है। वे ससार के कण कण में प्रियतम का ही सौंदर्य देखते हैं। लौकिक सौंदर्य और प्रेम को जला करिक सौंदर्य और प्रेम में मडित करके देखने और अभिव्यक्त करने का इनका जसा सामर्थ्य अथवा ही शायद कहीं मिले। जायसी ने अपने दिव्य प्रेम के माध्यम से विश्व प्रेम का संदेश दिया है। मध्यकालीन सांस्कृतिक संकट के विषम समय में यह 'प्रेम संदेश' भारतवर्ष के लिए वरदान स्वरूप रहा है। सूफियों के इस संदेश का व्यापक प्रभाव मीरा कबीर दादू नानक आदि के यहाँ देखा जा सकता है। हिंदू और मुस्लिम दोनों के भीतर के प्रेम या रागात्मक तार को जानने और साधन वाले जायसी सही अर्थों में मानवतावादी थे।

सूफियों ने खण्डन मण्डन की दृष्टि से दूर रहकर हिंदू मुस्लिम एकता दोनों के हृदयों को बड़ी गहराई से स्पष्ट करने का प्रयास किया और उनका व्यापक प्रभाव इन दोनों पर पड़ा। अपनी कथाओं द्वारा इन्होंने प्रेम का शुद्ध माग दिखाते

1 कृष्णवत् - स हाँ शिवमहाय पाठ 12 श्लोक 14।

2 रोहावनी दोहा 572।

हुए जन सामान्य जीवन दशाओ का सामना रखा जिनका मनुष्य मात्र के हृदय पर एक विशेष प्रभाव दिखाई पड़ता है। आचाय शुक्लजी न ठीक ही कहा था - "हिंदू हृदय और मुसलमान हृदय आमन सामने करके अजीबपन मिटाने वाला म इही का नाम लेना पड़ेगा। इ होन मुसलमान होकर हिंदुओ की कहानियाँ, हिंदुओ की बोली मे पूरी सहृदयता से कहकर उनके जीवन की मम-स्पर्शा अवस्थाओ के साथ अपने उदार हृदय का पूरा सामंजस्य दिखा दिया इन कवियो ने यह दिखला लिया कि एक ही गुप्त तार मनुष्य मात्र के हृदयो से होता हुआ गया है जिस छूते ही मनुष्य सारे बाहरी रूप रंग के भेदो की ओर से ध्यान हटा कर एतत्व का अनुभव करने लगता है।"

जायसी न धम और मजहब से बहुत ऊपर उठकर मनुष्यत्व का परिचय दिया है। 'मानुष प्रेम भरउ वैकुठी' का संदेश दिया। सत्-सत्त्व का महालय गायन किया है। इनके काव्या मे प्रेम पीर की स्निग्ध पुकार है विरह की प्रसात गम्भीर तबप है आत्म समर्पण का पुनीत आग्रह है। इही कारणो से इनकी वाणी हृदया को सीधे छू लेती है।

जायसी का उद्देश्य आत्म सकीणताओ से ऊपर उठकर आत्म शुद्धि और जन जन मे प्रेम सम्प्रसार था वे नित्य सृष्टि मे प्रेम को ही देखते थे

'तीनों लोक चादह खण्ड सवे परे मोहि सूक्ति ।
प्रेम छाडि, किछु और न लोना जो देखो मन बुक्ति ॥'¹

सूफियो के जीवन-दशन मे प्रेम ही सत्ता का सबसे सुन्दर और सर्वांगीण विनिष्ट तत्व है, उससे ही मनुष्य जीवन द्वादशवर्षी, वाचन धर्मिता को प्राप्त करता है। जायसी मे बहुत बड़ी विरोधना है कि 'मनुष्यता' उनकी सर्वोपरी साधना रही है।

यही स्थिति अन्य सूफी कवियो भी है। महाकवि जात के पूर्वज हिंदी र-
पूत थे और बाद मे मुसलमान हो गए।

'आलिफखान दीवान को बहुत बडी है गीत ।
चाहुवान की जोट की ओर न जग म होत मे,
जित्ती जात राजपूत की सगर हिंदुस्तान ।
सजमें निहचे जानिए बडी गीत चाहुवान ॥'²

1 'न-हावत (भूमिना) स डों निवसगप पाठर, पृष्ठ

2 'न-हावत (भूमिना) स डों निवसगप पाठर पृष्ठ 8

जाति से मुसलमान हाकर भी व अक्टेटर थे। परम उरार थे। उनका कहना है कि एव ही पिढ से हिंदु और मुसलमान पैदा हुए हैं, उनके रक्त और धर्म में कोई भेद नहीं है, करनी के कारण ही उनके अलग अलग नाम हैं—

“एक पिढ इन दुहुन को, ना अतर रत थाप।

प करनी नाहिन मिले, ताते यारे नाम ॥”

जान मुसलमान थे, पर उनमें हिंदुत्व और चौहानत्व पर गव था। उ होने नयी हजरत मुहम्मद आदि के साथ ही विरचि, ईश्वर आदि की भी वचना की है। वे मानते हैं कि मृत्यु के पश्चात् उनके पिताजी बैकूठ में गए—

“आलिस्क तान बैकूठ गए रोव अट्ठाईन।”

जामसी न भी हिंदू और मुसलमान दोनों की ही एक करतार की सतति कहा है—

तिह सतति उपराजा, भातिहि भाति कुलीन।

हिंदू तुक्क दुवाँ भए, अपने अपन दोन ॥”

वस्तुतः जामसी साधना की उस उदास भूमि पर पढ़े हुए थे, जहाँ मनुष्य इसान या धम मजहब जैसा कोई भेद नहीं जाता। उ होने लोक रक्षा और सोकरजन के आदर्शों को सम्मान की दृष्टि से देता। यानिष्ठ, राजशक्ति सच्ची बीरता, सुख विधायक प्रभुत्व लोकरजनकारी सुखकारी ऐश्वर्य, पानवधक पांडित्य आदि में वे ईश्वर की सोकरक्षिनी कला के दशन करते थे। उ होने ईश्वर, पेम म्वर पण्डित मौलवी किसी की भी निंदा नहीं की, अपन दोनों महाकाव्यों के आरम्भ में उ होने इन सबकी स्तुति की है और अपन को पण्डितों का ‘विद्यलगा’ कहा है। हिंदू मुसलमान दोनों की विधि पर इनकी आस्था थी। वेद, पुराण और कुरान को वे लोक कल्याण माग प्रतिपादक वचन मानते थे। ‘पद्मावत्’ में उ होने राघव चेतन के सद्भ में कहा है

“वेद पय जे नहि चलिहि ते भूलहि बन माझ।”

“पण्डित सोइ वेद मत साचा।”

वेद वचन सुख साच जो कहा। सो जुग जुग अहधिर होइ रहा।

हिंदू धम और हिंदू जीवन का जामसी का पान अगाध था। यह तथ्य उनके दोनों महाकाव्यों को पढ़ने से स्पष्ट रूप से पान होता है। उनके काव्यों में हिंदू धम और पुराणों के ऐसे अनेक सूत्र हैं जिन्हें हिंदी के बड़े बड़े पण्डित भी अभी तक नहीं समझ पाए हैं। हिंदू जीवन का आचार व्यवहार एव कम बाण्ड मूलक उनका पान बड़ा व्यापक और गम्भीर था। भगवत् साधना और लोकपक्ष दोनों की उनकी गूढ़ता और गम्भीरता अद्भुत है।

1 पद्मावत् (भूमिका) स रॉ निवसहाय पाठक पूर

एव 3 पद्मावत् (भूमिका) - स रॉ निवसहाय पाठ

'कहावत' के कवि का उद्देश्य महान है, उसमें शिव या लोक-मंगल का प्राधान्य है, साथ ही काम तत्व भी उसमें विद्यमान है। उसमें अवतारी भगवान की मानवता के उस मन्त्रे रूप का उद्घाटन है जो प्रेम, उदारता, साहस, सहिष्णुता, बलिदान और त्याग की व्यापक भूमिका पर प्रतिष्ठित है। प रामचन्द्र शुक्ल का कथन है कि— "एक ही गुप्ततार मनुष्य मात्र के हृदयों से होता हुआ गया है, जिसे छूते ही मनुष्य सारे बाहरी रूप रंग के भेदा की ओर से ध्यान हटा एकत्व का अनुभव करने लगता है।" जायसी ने अपने महान उद्देश्यों की पूर्ति के लिये वही गुप्ततार को झकृत कर मनुष्य मात्र के हृदय को जागृत और प्रेम प्लावित करने का प्रयत्न किया है।

इस उद्देश्य के लिये उन्होंने मानव की रागात्मक वृत्ति 'काम' को अधिक व्यापक अर्थों में गृहीत किया है। इसी माध्यम से जायसी ने प्रत्यक्ष जीवन की एकता का दृश्य उपस्थित किया है। उन्होंने हिन्दू और मुसलमान के बीच की दूरी को स्नेहामृत से भर कर एकत्व की प्रतिष्ठा की है। इसीलिये जायसी के अध्यात्मवाद के अंतराल में उदार और प्रेम प्रवण मानवतावाद की सरस्वती प्रवाहित हो रही है। मानवतावाद की प्रतिष्ठा जाति, धर्म आदि को तोड़कर मानव मात्र को एक सूत्र में बाधना ही जायसी का उद्देश्य है और जायसी अपन इस उद्देश्य की पूर्ति में पूर्ण सफल हुए हैं।

सांस्कृतिक सङ्गम वाले मध्ययुग में उन्होंने धार्मिक, दार्शनिक सामाजिक और साहित्यिक क्षेत्रों में विराट, समन्वय करके बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है। आधुनिक भारतीय जीवन (और विशेष कर हिन्दू मुस्लिम जीवन) के अनेक सदर्भों में जायसी हिन्दू मुस्लिम संस्कृतियों के अमर सेतु और सर्वश्रेष्ठ समन्वयकर्ता के रूप में उपस्थित हुए हैं। उनका जीवन और मतव्य इन दोनों संस्कृतियों का पावन सङ्गम है —

"परगट भेस गोपाल गोबिन्दू । गुपुत गियान न तुहक न हिन्दू ॥"

— कहावत

महती प्रतिभा सम्पन्न कवि जब किसी महत्त दार्शनिक प्रेरणा से उद्बलित और अभिभूत होता है तो वह महाकाव्य की सजना में प्रवृत्त होता है। महाकवि मार्मिक स्थलों का सुन्दर विधान करता चलता है। वह जीवन के ममस्पर्शी प्रसंगों का पारखी होता है। ये ममस्पर्शी चित्रण मानव हृदय की रागात्मक वृत्ति को जागृत कर देते हैं। महाकवि के प्रबन्ध रस से नीरस पद्यों में भी रसवत्ता आ जाती है।

कहावत के घटना-चक्र के अन्तर्गत ऐसे स्थलों का पूरा सन्निवेश है जो मानव को रागात्मक वृत्ति को उद्बोधित कर देते हैं उसके हृदय को भावमग्न कर देते हैं। जायसी ने वस्तु वर्णन के रूप में और पात्र द्वारा भाव व्यञ्जना के

एक मद्रास प्रशासक का कला प्रयास के रूप में है। यद्यपि कदाचित् कवि गति नहीं है, तब भी एक पद्यकार के रूप में है। वह हाथों में लेगें हाथ अनेक है। गानियों की भाँति ही ही की बीडारों का भावपूर्ण प्रयोग का भाव प्रसंग कुञ्जा प्रसंग उग वध प्रसंग गच्छु पत्नी, बाह्यमाया तथा गच्छु बाह्य गोरण प्रसंग, लेगें स्वप्ना में प्रसंग है। इनमें कवि प्रसंग अन्तर्गत और गच्छु है। उहीन कृष्ण चरित्र के मर्म में स्वप्नो का पुनरावृत्ति करने अर्थात् हृदय का समस्त रस उद्देश्य का हाथों का समस्त वाचा है। वाचा रूप में ही और वाचा गानों विरह चरणों में उगरी वाच्य प्रतिभा के चरित्र आयास मिल जाते हैं। हिन्दी में कदाचित् की कृष्ण विषय प्रथम महाकाव्य होने का गौरव प्राप्त है। उसमें जायसी का गच्छु जीवित गच्छु उगरी गच्छु प्राणवत्ता मौलिकता उनका उत्तम प्रेम मद्रास साक्षात् अथवा का पूर्ण निष्कार उगरी मातृतायाँ एव उगरी साव गच्छु की भाषा का उत्तम रूप मिलता है। इस महत् विवेकताओं के कारण 'कदाचित्' का हिन्दी के श्रेष्ठ महाकाव्य के रूप में समाप्त किया जायगा।

हिन्दी के विकास में मुगलशासक कवियों का योगदान अप्रतिम है। अमीर खुसरो, मुल्ताजाऊँ पुत्रुन जायसी, मन्नत उस्मान नवी, जाय, हुसैनअली खासिम गच्छु नूर मोहम्मद निम्नर श्याजा अहमद रमलान, रसलीन रहीम, नसीर, निजामी यजही, गच्छु मुसामी इब्ननिशातो तबई इनाअलाह खाँ गुलाम अली आदि सैकड़ों मुसलमान कवियों ने हिन्दी साहित्य का समृद्ध करन में अपार योगदान दिया है। हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में इन मुसलमान कवियों के वैभवन्त कृतत्व का महत्त्व निःसंदेह है।

वयामर्यानि वश के महाकवि जान इसी परम्परा के एक श्रेष्ठ कवि हैं। इसी वयामर्यानि वश में हिन्दी की प्रख्यात कवियत्री 'ताज' भी थी। वह इन्हीं उवाचों के परिवार की थी। 'ताज' ने अपनी दिलजानी की सुनात हुए अपने इशक की कहानी कही थी—

'सुनो दिलजानी मर दिल की कहानी तुम
इशक की बिकानी बदनामी भी सहेंगी मैं ।
देव-पूजा ठानी मैं नवाज हूँ भुलानी
तजे कलमा कुरान सार सुन गहेंगी मे ॥
माबला सलोना सिरताज पत्र कुल्हेदार
तेर नेह दाग मे निदाघ हव रहेंगी मैं ।
नद के कुमार कुरवान तोरी सूरत पे,
हूँ तो मुगलानी हिन्दुवानी हव रहेंगी मे ॥

'ताज' का विवाह एक बहुत बड़े अमीर नवाब मुसलमान के साथ हुआ था, किन्तु विवाह के पश्चात् ताज मीराबाई की तरह भगवान श्रीकृष्ण की दीवानी बन गई। यद्यपि वह मुसलमान थी, फिर भी स्वयं को हिन्दुआनी हिन्दू मानती थी और सावले सलौन सिरताज कुल्हेदार पाग पहनने वाले नन्द के कुमार की सूरत पर कुर्बान थी।

हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य के प्रेरणा और प्रोत्साहक स्रोतों में राधा वल्लभी सम्प्रदाय का महत्वपूर्ण स्थान है। इस मत के अनुयायी कविया की सख्या बहुत अधिक है। इसके प्रवक्तव्य स्वामी हित हरिवंश रम सिद्ध भक्त कवि थे। सूरदास के साथ उन्हें भी हिन्दी कृष्ण भक्ति काव्य का प्रवक्तव्य माना जाता है। गोस्वामी हित हरिवंश रसिक और रससिद्ध भाव प्रणव भवन थे। इनके अनुयायियों में कई सिद्धांतवादी विवेचक हुए हैं। इन्हीं में हरिराम व्यास सस्कृत के विद्वान तथा दीक्षा लेने के पूर्व एक प्रसिद्ध गोस्वामी पंडित थे। उन्होंने राधा वल्लभी मत के सिद्धांतों का विवेचन किया है। इसके सिद्धांत प्रतिपादन अत्यंत सरस कवित्व से समंविता हैं। इस सम्प्रदाय में चतुर्भुज दास, ध्रुवदाम हितवृंदावनदाम की वाणियाँ भी महत्वपूर्ण हैं।

कृष्ण भक्ति काव्य के अनन्त परवर्ती कविया ने कृष्ण भक्ति का साम्प्रदायिक भेद भाव रहित रूप अधिक ग्रहण किया। यहाँ तक की अनेक कवियों के विषय में कहना कठिन है कि वे किस सम्प्रदाय के कवि थे। रसखान को पुष्टि-मार्गीय भक्त कहा गया है।

'दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता' में उनका वर्णन भी मिलता है परन्तु उनकी रचनाओं में पुष्टि-मार्गीय साम्प्रदायिक सिद्धांतों को दूटना वेकार चेष्टा है। क्योंकि उनकी सभी रचनाओं को पढ़ने पर स्पष्ट लगता है कि रसखान के हृदय में ब्रज, ब्रजभूमि ब्रजपति के प्रति अगाध थढ़ा प्रेम और भक्ति है। वे उन तीनों के आगे तीनों लोकों के राज्य को भी तुच्छ मानते हैं। वस्तुतः उनके काव्य में ब्रज और कृष्ण प्रेम की पावन गंगा के दर्शन होते हैं।

सैयद इब्राहीम रसखान की सबसे बड़ी उल्लेखनीय चरित्रगत विशेषता उनकी असाम्प्रदायिकता है। मुस्लिम शासनकाल में रसखान ने धार्मिक मतभेदों में सर्वथा दूर रहकर हिन्दू धर्म में भगवान के प्रवक्तार रूप में स्वीकृत श्रीकृष्ण को इष्ट के रूप में अपनाकर धर्म निरपेक्षता का एक अनुकरणीय उदाहरण पेश किया है। यद्यपि सिद्धान्त रूप में प्रसिद्ध सूफी साधक रसिक के शब्दों में 'इसका मजहब सभी मजहबों से असंग है। सुदा के आंगिकी का सुदा के अलावा कोई मजहब नहीं।' मन्ने प्रेमी धार्मिक मराहों से ऊपर होने हैं, परन्तु व्यवहार क्षेत्र में इस सिद्धान्त को सही उतारने वालों में रसखान अग्रगण्य हैं। रसखान के काव्य में कहीं भी धार्मिक मतवाद की गंध नहीं। इस्लाम में अवतार और मूर्तिपूजा

को न मायता प्राप्त है और न ही इसका लिये कोई स्थान है। रसखान न इस्लाम धर्मानुयायी हात हुए भी इन दोनों को सिद्धान्त और व्यवहार में मायता दी। रसखान के सच्चा प्रेम और मान्यता का उच्च आदर्श को देखकर ही भातडु न किम्ब उद्गार प्रकट किये थे—

‘इन मुगलमान हरिजन पर कोटिक हिन्दू चारिय।’

रसखान जिस प्रकार धर्म के क्षेत्र में साम्प्रदायिकता से ऊपर उठे हुए थे उसी प्रकार देश के क्षेत्र में भी किसी सम्प्रदाय विशेष में आवद्ध नहीं थे।

रसखान भी एक ऐसे उदारमना निज धर्मोपासक सहिष्णु कवि थे जिन्होंने मोहम्मद साहब, हजरत अली, इमाम हुसैन, इमाम हसन दोहता पीर और अतिथि के ही साथ साथ राम हनुमान आर लक्ष्मण को भी श्रद्धापूर्वक उपस्थित किया है। इसे देखकर ऐसा लगता है कि वे किया वे किन्तु वस्तुस्थिति यह है कि सत और अतिथि होने के लिये आदमी होता आवश्यक है फिर बुद्ध और। रसखान सच्चे अर्थों में मनुष्य थे और अपने धर्म के श्रद्धालु अनुयायी। इसलिये अन्य धर्मों के प्रति वे परम सहिष्णु थे। यह सहिष्णुता उनके व्यक्तित्व एवं साहित्य को मौलिक मान का अधिकार प्रदान करती है।”

रसखान स्वाभीमानों गुणी और वीर थे। इस रणबाबुरे की मृत्यु युद्ध क्षेत्र में ही हुई। रामचिन्नी के युद्ध में लड़ते हुए सन् 1750 ई में उनकी मृत्यु हुई। मिलग्रामी कविवर जाना इनकी मृत्यु पर लिखा है—

मीर गुलाम नबी हुता सबल गुनन की धाम।

बदुरि धरयो रसखान निज कविताई मो नाम ॥

‘गयो जो वह सुर लोक का प्रभु सामन आधीन।

जान कहयो ‘रसखान मुनि भव रस सर मे सोन।’

रसखान के ‘रस खण’ व ‘रस प्रवाह’ नामक दो ग्रन्थ विख्यात हैं। फारसी लिपि में लिखे हुए इनके कुछ कवित्त सर्वथा व लोकगीत भी मिले हैं।

इस्लाम का जन्म लिए हुए वेबत सिर्फ 80 वर्ष हुए थे, कि उतने ही समय में उसका झण्डा एक ओर तो भारत की सीमा पर पहुँच गया और दूसरी ओर वह अटलांटिक महासागर के किनारे पर जा गया। सात सौ ईसवी लगने लगते इस्लाम ईराक, ईरान और मध्य एशिया में फैल गया। सन् 712 ई में सिंध मुसलमानों के अधिकार में आ गया और इसी वर्ष मुद्गर पति चम स्पत में भी मुसलमानों काय हो गया। हिजरी सन् के सा माल होने होते मुसलमानों के राज्य के समाप्त

1 रसखान काव्यमाला पृ 61

2 रसखान काव्यमाला, पृष्ठ-62

शक्तिशाली राज्य दुनिया में और तोड़ नहीं रह गया था।¹ कालांतर में अनेक मुस्लिम आक्राता भारतवर्ष में आते रहे। संघट लोदी, तुगलक पटान, दास मुगल बादशाहों ने भारतवर्ष पर शासन किया।

1857 के पश्चात् भारतवर्ष में इस्लामी शासन की समाप्ति हुई, किंतु 712 ई. से लेकर 1857 ई. तक लगभग 11-12 सौ वर्षों तक भारतवर्ष इस्लाम के सम्राज्य में रहा। मुस्लिम शासकों ने संस्कृत का संरक्षण किया और हिंदी को भी पूणत अपनाया। तुर्की, फारसी और हिंदी की पास लान में अमीर खुसरो (1255 से 1324 ई.) का व्यक्तित्व एवम् साहित्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। मुस्लिम सूफ़ी सन्तों, व्यापारियों के यहाँ जान जाने और यहाँ बस जाने से तथा अथवा कारणों से बाद में सिंध पर भाषा की दृष्टि से इतना गहरा प्रभाव पड़ा कि सिंधी भाषा की लिपि भी अरबी भाषा के समान बन गई।² इस अरब विजय को सांस्कृतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण बताया गया है।³ उत्तर भारत में इस विजय में मुस्लिम मन्त्रिक का श्रीगणेश निश्चित ही हुआ है।

महमूद गजनवी (998-1030 ई.) की सेना में हिंदू मुसलमान दोनों ही शक्त थे उसका सेनापति तिलक का नाम जगत रियासत है। उनकी हिंदी प्रियता का भी इतिहास में अनुपम उदाहरण मिलता है। उसने पंजाब को अपने राज्य में मिलाकर अपने मुलाम अयास को यहाँ का सूत्रेदार नियुक्त किया। पंजाब में सल्तनत बाद सलमान इस काल का एक विख्यात फारसी कवि था जिसके हिंदी वाक्य का इतिहास में उल्लेख मिलता है। अमीर खुसरो ने भी सलमान के हिंदी दीवान का उल्लेख किया है। पंजाब में गजनवी सम्राट का लगभग पौने दो सौ वर्षों के शासनकाल में अच्छा खासा सांस्कृतिक लेन देन रहा। इस युग के बड़े बड़े फारसी कवियों ने भी अपनी रचनाओं में ही दुस्तानी शब्दा का प्रयोग किया है। बलवन के काल में सूफ़ी गैल शकरगज शैल बहावउद्दीन, शेख बदरुद्दीन और तुलुमुद्दीन बप्तीयार, काकी, बादि सूफ़ी सत थे, जिनकी हिंदी कविता भी मिलती है। बलवन की प्रशंसा में तात्कालीन गिलालय भी मिलता है जिसमें संस्कृत में रूपकात्मक ढंग से उसकी प्रशंशितियाँ अंकित हैं। मिलजो बग के शासनकाल में हजरत निजामुद्दीन औलिया की हिंदी रचनाएँ भी मिलती हैं। अमीर खुसरो निजामुद्दीन के मुरीद थे। वे महान संगीतज्ञ भी थे। तुगलक वंश में मुहम्मद तुगलक हिंदू स्मारकों का जातर करता था और हिंदी कवियों का भी आदर करता था एवं रत्नशेखर नामक कवि फिरोज तुगलक का अत्यन्त प्रिय कवि था।⁴

1 'संस्कृति के चार अध्याय' पृष्ठ-224

2 हिंदी पर फारसी प्रभाव पृष्ठ-16

3 एन एन्वास डिग्री धाफ़ रूग्णिया भाग-2 पृष्ठ-275

4 मन्सिम संपाकत पृष्ठ-193

हिन्दी के सूफ़ी कवि मुल्ला दाउद ने अपना प्रेमाख्यानक काव्य 'चदावन' इसी काल में लिखा। जिसमें फ़िरोजशाह के दिल्ली सुल्तान होने का वर्णन है। सुल्तान सिकन्दर (सोधीवश) स्वयम् कवि था, उसने हिन्दू-मुस्लिम संस्कृति के लिए बड़ा काय किया।¹

सोधीवश के फ़रमान हिन्दी के साथ साथ ग़रीब अक्षरों में भी जारी किये जाते थे। बीजापुर के आदिलशाही वंश के सुल्तान विद्वान थे। वे हिन्दी के कवियों को बड़ा सम्मान देते थे। यूसुफ़ आदिन शाह के शासनकाल में माल विभाग में अनेक हिन्दू अधिकारी नियुक्त किये गये थे। अहमदनगर, गोलकुण्डा, मानवा खानदेश, जोनपुर आदि रियासतों में भी हिन्दी को प्रथम मिला था। फ़रमीरी शासक मुल्तान जैनुल आबदीन बुदशाह का हिन्दू मुस्लिम मेल-जोल और भावनात्मकता के लिए सदैव याद रखा जायेगा। अलाउद्दीन हुसैनशाह (बगाल) के शासन काल में मृगावती की रचना हुई, उसमें कुतुबन ने हुसैनशाह की प्रशंसा की है।²

मुगलकाल में शासकों ने संस्कृत और हिन्दी को संरक्षण दिया। उस काल के हिन्दी कवियों की अनेक ऐसी रचनाएँ मिलती हैं जिनसे तात्कालीन हिन्दू मुस्लिम संस्कृति के सम्पर्क का परिणाम स्पष्ट होता है।³

“बाबर शाह ध्वजपति राजा । राज पाट उन कह विधि साजा ।
मुलुक सुलेमा कर आहि दीहा अदल दुनी उमर जस कीहा ॥
अली केर जस कीहेसी खाडा । लोहसि जगत समुद मरि डाडा ।
'बल हमजा' कर जैसे मभारा । जो बारियार उठा तेहि मारा ॥”⁴

जायसी ने यहाँ पर मुल्क सुलेमा, खलीफा उमर के समान यायी, हमजा के समान बली तथा खलीफा अली के समान खडग धीर, मुस्लिम संस्कृति की उर माओ एव अतकषाओं के द्वारा हिन्दी साहित्य में नवीन स्थापनाएँ की हैं। नरहरि ने बाबर के विषय में फारसी बाहुल शब्दावली मुक्त कीर्तिमान करते हुए कहा कि दुनिया में मने अय कोइ बादशाह बाबर के बराबर नहीं देखा —

‘नेकबख्त दिल पाक सखी जवा मद गेर नर ।
अब्वल अली खुदाई दिया बिसियार मुलक जर ।
खालिक बहुवेश हुकुम आलिया जो आलिव ।
दौलत बख्त बुलन्द जग दुदमन पर गालिव ॥

1 धीरएण्टल कालज मगजीन मई सन् 1933 ई पृष्ठ-116

2 धीरएण्टल काले मैगजीन मई सन् 1933 ई प 203

3 पञ्जाब में उद्ग पृ 145 184 187

4 जायसी प्रभावली (लाघरी कलाम) पृ 341 342

अवसाक तुरा गोयद सबल कवि नरहरि गुफाम चुनी ।

बाबर बरोबर बादशाह दिगर नदीरम दर दुनी ॥¹

हुमायूँ के दरबार में शेख अब्दुल बाहिद बिलग्रामी और शेख गदाई ने बड़े सुन्दर गीतों की रचना की है । नरहरि उसके दरबार के श्रेष्ठ कवि थे और उनके ऊपर बादशाह की वृत्तादृष्टि थी ।² अकबरी दरबार के हिन्दी कवि ग्रन्थ के परिशिष्ट से पता होता है कि मुगलकाल में हिन्दू मुस्लिम मस्जिद का अत्याय सम्भव हो रहा था ।

शेरशाह साहित्य में मज्ज सासक था । मलिक मुहम्मद जायसी ने उसकी भूरी भूरी प्रशंसा की है । शेरशाह ने हिन्दू धर्म के प्रति धार्मिक सहिष्णुता का परिचय दिया । नरहरि ने भी उसकी प्रशंसा की है ।³

अकबर के दरबार के अनेक कवियों के अतिरिक्त उस काल में सूरदास, तुलसीदास और सुन्दरदास हुए । तुलसीदास को रहीम ने सरक्षण दिया था, और मानस की सरचना मुस्लिम सरक्षण में ही हुई । इन्में अधिक अकबर के शासन का श्रेय और बधा ही मकता है ।

अब्दुल रहीम खानखाना अकबरी युग के प्रसिद्ध सेनापति दानशील साहित्यकार एवं प्रसिद्ध कवि थे । कहा जाता है कि खानखाना ने गग को निम्नलिखित छन्द पर प्रस्तन होकर छत्तीस लाख रुपये पारितोषिक के रूप में प्रदान किए थे ।⁴

‘चबिन भवर रहि गय, गमन नहि भरत कमल बन ।

अहि फनि मनि नहि लेत, तेज नहि बहत पवन घन ॥

हम मानसर तज्यो चक्क चक्की न मिले अति ।

बहु सुन्दरि पदिमनि पुरुष न चहै न करै रति ॥

खत मलित सेस गग मन अमित तेज रविरथ सस्यो ।

पाननखाना बैरम सुवन जबहि क्रोध करि तग कस्यो ॥⁵

रहीम हिन्दी के श्रेष्ठ कवि हैं । शज, कनीजी और अबधी की उन्नति में भी मुसलमानों का योगदान महत्वपूर्ण है ।⁶ मुसलमान शासकों में सूफियों एवं साहित्यकारों का अरबी फारसी हिन्दी साहित्य के सरक्षण और प्रसार का वृत्तान्त हिन्दू-मुस्लिम सम्पर्क का सुखद परिणाम है । जहागीर के दरबार में हिन्दी कवियों का

1 अकबरी दरबार के हिन्दी कवि पृ 329

2 शिर्वाह सरोज पृ 102

3 अकबरी दरबार के हिन्दी कवि पृ 329

4 अकबरी दरबार के हिन्दी कवि पृ 119

5 — वही — पृ 119

6 पत्राव में उद्धृ पृ 27

चन्द्रबली पाण्डेय का कथन है कि औरगजेब हिन्दी में कविता करता था और हिन्दी को आदर की दृष्टि से दत्ता ही नहीं प्रत्युत उसका प्रचार भी भरपूर करता था।¹ औरगजेब का भाई दाराशिकोह सरकून एव हिन्दी ज्ञान एव संरक्षण के लिये विद्यमान है। सरकून भाषा एव दशान और तसब्बुफ में उसकी विशेष रुचि थी।²

हिन्दी साहित्य में भारतीय दशान के साथ इस्लाम की भी पूरी पूरी छाप दृष्टिगोचर होती है। मोमीन मुसलमान कुरान उदीस अल्लाह, वाएनात अफ फा फानी, जिह्द, मलाईका इज्जाल, जिब्राईन इम्बाफिरक मोवाईन, इबलीस शतान, नजी, रमूल, पगम्बर, आदम नू इब्राहिम, युसफ, यूनुस मूसल, इसा, खीजर, मोहम्मद, पंगम्बर पीर, खलीफा अबूबकर सिद्दीक उमर फारक, उस्मान अली, हजरत अली, तोहिद कयामत हराम हलाल सजा जजा पुनसिरात् दोजख, जानत, बलमा नमाज अरवान गुस्ल बज अज्ञान तसबीह, मुसल्ला मस्जिद, रोजा, दरवेश, बली, शान दरगाह नूर रक मुर्शिद मुकाम शरीयत तरीकट मारीफत, हकीकत, नफस, जिन्न फिर, प्रभति शब्द जो साहित्य बला दशान और आध्यात्म की दृष्टि से उत्पन्न अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, उन्हीं हिन्दी साहित्य में हिन्दी के मुसलमान कवियों ने सहज सुलभ करा दिया है।

हिन्दी के मुसलमान कवियों ने भारतीय संस्कृति का राजनीतिक दृष्टि से भी इस्लाम के निकट ला दिया। तुलसी के राम, गरीब निवाज ह रक निवाज विभीषण निवाज है। गाहा ते शाह ह सुल्तान या सुल्तान ह। महल दरबार, दरवान गुलाम, खव्वास, बकीब, बजीर काशी दीवान सास, आम अमीन, मोहम्मद, जामूस आदि हिन्दी साहित्य के प्रचलित शब्द मुस्लिम संस्कृति अथवा हिन्दी के मुसलमान कवियों की ही देा है।

दुश्मन, बूच, मुकाम बंदक, फौज, सवार, असवार जन्म, जिरहबतर, सियर, तीर, कमान, तरकश नेजा, तेग, रामशीर बाफद फत्तीला जैसे शब्द मुस्लिम सम्पक से ही आये हैं। कृषि तथा ग्राम सम्बन्धित जीवन में अरबी फारसी के माध्यम से आयी हुई शब्दावली का हिन्दी साहित्य में भी चित्रण मिलता है, जो मुसलमान सम्पक का परिणाम है। बाजार, दुकान, दलाल, भाल, नफा बरामद, तलब, बधाक, बाकी, पेसा, पेशेवर, जुलाहा दरजी जीहरी, रगरेज बाजीगर, कभाई, बागज, बलम, रुक्वा, मसुबदा, पर्चा लफ्फा मानी जिल्द जिल्द-साज, शिक्का, पता, लिफाफा, हरबारा आदि मुस्लिम सम्पक से साहित्य उपकरणों के प्रयोग में वृद्धि हुई है।

1 'मुगल बादशाहा की हिन्दी' पृ 45

2 'मुस्लिम संपाक' पृ 224

अरब और दक्षिण भारत का यद्यपि व्यापारिक सम्बन्ध बहुत प्राचीन था, किन्तु 712 ई. में मुहम्मद बिन नासिम के सिध विजय के पश्चात् उत्तर भारत से भी मुसलमानों का सम्बन्ध स्थापित हो गया था। मुस्लिम शासन की विधिवत् भागत में स्थापना के पश्चात् फारसी भाषा का अध्ययन, अध्यापन भी प्रारम्भ हो गया। शाही दरबारों ने नौकरी पान और राजकीय कर्मचारियों का नैकट्य प्राप्त करने आदि की इच्छुक स्पानीय जनता ने उस भाषा में योग्यता प्राप्त करना प्रारम्भ कर लिया। डॉ. वेलांग के मतानुसार हिन्दी अपने जन्म से ही विदेशी भाषाओं से प्रभावित होती रह गई है।¹ इससे यह परिणाम भी निकाला जाता है कि हिन्दी कवि भी प्रारम्भ से ही फारसी के सम्पर्क में रहे होंगे। अरब से पूर्व प्रशासन सम्बन्धी रिवाज हिन्दी में रस जाते थे, और फारसी को राज्याश्रय प्राप्त था। अरब, ईरानी अफगान, तुर्क, तातार, पठान आदि देशी विदेशी मुसलमान फौजों के कारण भी बाजारों नगरों और देहातों में मुस्लिम सम्पर्क की सम्भावना पाई जाती है। मुसलमान शासकों के दरबारों, दरबारों और अमीर उमरा ने वातावरण से भी भारतीय जनता ने सम्पर्क सूत्र स्थापित किया। मुगल काल में विशेष रूप से मुस्लिम सम्राटों, अमीर उमरा ने हिन्दू स्त्रियाँ से विवाह करके सांस्कृतिक सम्पर्क को बढ़ावा दिया। अनेक कारणों से हिन्दी साहित्य तथा हिन्दी कवियों का मुस्लिम संस्कृति से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित होने के फलस्वरूप हिन्दी के अनेक कवियों ने केवल अरबी, फारसी, तुर्की शब्दों का ही प्रयोग किया। बहुत कम लोग जानते होंगे कि हिन्दी कवियों को अधिकांश प्राचीन पाण्डुलिपियाँ फारसी लिपि में मिलती हैं।

महमूद गजानवी काल के विद्वान अलबीश्नी के बाद अमीर खुसरौ से लेकर अकबरों दरबार के अद्वल फजल, फौजी जैसे मुसलमान अरबी, फारसी के विद्वान संस्कृत और हिन्दी से परिचित थे। ऐसा इससे पूर्व कहा जा चुका है। मनोहर कवि भी फारसी का अच्छा कवि था तथा चन्द्रमानु ब्राह्मण को फारसी ज्ञान भी प्रमाणित है।

नानक द्वारा भी कुरान का उल्लेख है —

'कलि परवाणु कतेब 'कुराण'। पाथी पडित रह पुराण ॥
नानक ताउ भइया रहमाणु। करि एकता तू एके वाणु ॥'²

- 1 आतामोस्ट फ्राय इटल बरी ओरिजिन हिन्दी हेब बिन सक्सेस्ट ट फारिन इण्डियन एण्ड एच एन वेलांग 'ए ग्रामर ऑफ दी हिन्दी लैंग्वेज चेप्टर-3 पेज 36
- 2 मुस्लिम सनाफत, पृ 557-58
- 3 मानक बाणी पृष्ठ 501

तुलसी तत्कालीन राजभाषा से परिचित मालूम होते थे। तुलसी न अनुस्वार के माध्यम से परमात्मा सम्बन्धी गुत्थी को सुलभाया¹ वहाँ निम्न उदाहरण में अरबी, फारसी, यर्णी के माध्यम में फलसफाए ऐनुलयकीन और हम्कुलयकीन का हल तलाश कर दिया है -

“नाम जगत सम जानु जग, वस्तुन करि चित वैन।

बिडु गये जिमि 'गैन' ते रहत ऐन को ऐन ॥”²

भापु ऐन' विचार विधि, सिद्ध विमलमति मान।

भान वासना 'बिडु' सम तुलसी परम प्रमाण ॥”³

“ऐन” और “गैन” अरबी, फारसी, उर्दू वणमाला के अक्षर हैं। कवि आत्म जो ग्राह्यण थे, स्वेच्छा से मुसलमान हुए थे। उन पर तो विशेष रूप से मुस्लिम प्रभाव नजर आता है। फारसी अंदाज का एक सुन्दर दोर प्रस्तुत है—

“अलब मुबारक तिय बदन लहकि परि यो साफ।

खुसनसीब मुनसी मदन लिहया काँच पर 'काफ' ॥”⁴

इसके अतिरिक्त यारी साहब⁵, भीखा साहब⁶ आदि सूफी सत कवियों ने अलिफनामा के अतगत अलिफ⁷ से लेकर ये तब ब्रम म अरबी फारसी वणमाला के प्रत्येक वण से प्रारम्भ करने दोर बड़े हैं। अनेक हिन्दी के कवियों ने अपन काव्य में अरबी, फारसी, तुर्की के शब्दों का इतने सुन्दर और स्वाभाविक एव ठीक रूप से प्रयोग किया है कि देखते ही बनता है -

अत कहा जा सकता है कि आलोच्यकालीन राज्य द्वारा सम्मानित हिन्दी में राजभाषा फारसी के माध्यम से मुस्लिम-संस्कृति एव माहित्य के प्रसार का बहून अवसर मिला है। जिसको हिन्दी कवियों ने उदारता से ग्रहण किया है।

मुस्लिम काल में मकतबों में कुरान और फारसी की शिक्षा दी जाती थी। मुगलकाल में हिन्दी और फारसी दोनों का समावेश हो गया। उस काल में मकतबों और मदरसों में हिन्दी और मुसलमानों के साथ साथ शिक्षा ग्रहण करने के कारण गहरा प्रभाव पड़ा है।⁸ कबीर ने मुस्लिम सूफियों के सम्पर्क में बहुत समय बिताया

1 तुलसी और उनका काव्य पृ-250

2 तुलसी सतसई (चतुर्थ सग दोहा 71), पृ 135

3 वही-दोहा 72। पृष्ठ-136।

4 ऐतिहासिक साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमिका पृष्ठ 11

5 यारी साहब की रत्नावली पृष्ठ 711

6 भीखा साहब की बानी, पृ 73

7 दादू-बानी भाग 1, पृष्ठ 23

8 'परशियन इम्प्लैण्ट्स आन हिन्दी', पृष्ठ 8

उनकी अभिव्यक्ति पर सूफ़ी दरवेशो और फारसी कवियों की पूरी छाप पायी जाती है। इस्तासीना मसूर हुस्नाज तथा इस्ताम के अनेक सिद्धांतों का कबीर पर प्रभाव पड़ा है। सूफ़ी कवियों की मसालियों में स्तुति गण्ड पूजन इस्लाम एवं फारसी साहित्य की परम्परानुबद्ध हैं। हिन्दी-सूफ़ी काव्य फारसी जदाज के प्रेम काव्य हैं। सस्कृत परम्परा के विपरीत इनमें 'औरत को 'माशुक' और मद्य को 'आशिक' बनाया गया है।

हिन्दी के मुगलमान कविया पर जितनी गहरी छाप मुस्लिम परम्पराओं की थी, उतनी गहरी छाप हिन्दू धर्म दर्शन की भी थी। तुलसी और सूर के काव्य में फारसी और इस्लाम का प्रभाव पर्याप्त अंगों में मिलता है।

सगीत कला के क्षेत्र में डफ, गिद्दान, दमाभा रग़ाया, गहनाई, सूर, तबोस्त आदि का हिन्दी साहित्य में आगमन मुस्लिम सस्कृति के सम्पर्क का ही सुन्दर परिणाम था।

वास्तु कला के क्षेत्र में कारीगर, गच्च दरवाजा, दहलीज, कगूरा, मस्जिद, महल हवेली खाना, आदि इस्लाम की ही दान है।

बन्वाली, गजल, बरैवा, बहर, रदोफ, ममावी कसीदा, मुकरी, अलिक नामा ककहरा, रखता दा समुने आदि काव्य रूप मुस्लिम सस्कृति के सम्पर्क के परिणाम हैं।

मुस्लिम सस्कृति के सम्पर्क के परिणाम स्वरूप अनेक भाषागत अलंकरण उपनामों, मुहावरों आदि के रूप में जाय हैं।

इस कदर जुलुकरणन सुलेमान, उमर, हातिम अली, यूनुफ आदि के प्रयोग भक्तिवादी कवियों में मिलते हैं। अरबी फारसी शब्दों द्वारा निर्देशन और परम्परा से चले आते हुए हमजा, तीर, बमान, जजीर, वादवान, वरक, नकीर, गुलबदन माहूर, बघूतर, गुलन, तरकब बसाई, मरतुल, मगब, सुराही, हन्सी चोगान, गरगोस, अभीन, ताजी आदि भी मुस्लिम सस्कृति और कवियों की देन हैं। संकटों में मुहावरे जैसे— 'सिरतापायी, गरदनभारी चित्तलायी, बरमीनत, लगम बरगा, सोदासूत, मुस्लिम सस्कृति की ही दान हैं।

सूरदास, तुलसीदास, कबीर रैदास, नानक, दादू दयाल, मलूकदास, नरहरि आदि काव्यों में हिन्दू मुस्लिम सांस्कृतिक सामाजिकता देखते ही प्रतीत हैं।

भक्तिवादी कवियों द्वारा निरपित सामाजिक जीवन सम्बन्धित अलंकरण लान पान (बयाय तरपारी, तहमुन, चुनदर, पोदीना, प्याज गाजर गतजम,

सब्जी, तरबुज, सेब, अनार, तारगी, जगूर आलतुसारा, पिस्ता, अखराट, वादाम, किशमिश काजू चुरमा, हावा, मलाई १) से भी इस्लाम ने हिन्दी को समृद्ध किया है ।

वशभूषण — मे सम्बद्ध ताफना, जग्गी, जरतारी कुलह चौतनी, दलगी मटनूल, तन मुख कमीदा, जमिशा, कालिन तोपक लिहाक रजाई विस्तरा आदि फारसी शब्द हैं । कफन भी फारसी शब्द है । जाभूषण प्रसाधन मगनी मनो विनाद, खेल बूद आदि से सम्बद्ध अनगिनत शब्द इस्लामी सस्कृति और कवियों की ही देन हैं ।

हिन्दी साहित्य के मुसलमान कवियों ने अपने कृष्ण वाक्यों में प्रायः भारतीय सस्कृति और हिन्दी भाषा का ही उपयोग किया है । किन्तु मुस्लिम सस्कृति के उपरोक्त सूत्र शब्दावली आदि भी उनके काव्यों में प्रयुक्त मिलते हैं ।

इस्लामिक सस्कृति में पली बड़ी ताज कृष्ण भक्ति सागर में मज्जन करन में पदचात् यमुनात्रु हा गई । उन पर दूमरा रंग चढता कसे ? उहोने घापणा ही कर दी कि— 'हि दुवानी' हा के रहुगी मैं । पठान रसखान ब्रज के कण को स्पश कर दीजाने हो गए । देहली को भुला बैठे और करील की कुजो में बूजम लगे । तीनों लोको क्या स्वयं का भी याछावर कर बठे । छछिया भरि छाछ के नृत्य को देखते हुए अपनी सुध दुध सो बठे । रसलीन कृष्ण रस में ही लीन हो गए । नित्य गये 'हावो भावो के हिडोलो में झूलने लगे ।

अकरर, जहागीर और साहजहाँ भी कृष्ण लीला के जादू से अलूते नहीं रहे । आलम और खेख रगरेजन पगडी के खूट क माध्यम से सभी लोक-मर्यादाओं को नकारते हुए एक दूसरे से बंध गए और दोनों पर कृष्ण की रूप माधुरी का ऐसा प्रभाव पडा कि वे कृष्ण वियोग की पीडा का आनन्द भागन लगे । नेवाज ने भी कह ही दिया कि— "जो बनक लग ही गया है, तो 'निसन' होकर (कृष्ण) गले दयो नहीं रागाती "घारी साहब के हृदय में दिन दिन प्रीत अधिब उत्पन्न हाती गई । अब्दुल्लाह और रग, औरे डग धारे छवि की तरण में सो गए । कार खाँ फकीर बार बार पुकार कर "अहीर" की प्रतीशा में रन रहने लग । सैयद बरकत उल्लाह पमी को अपनी कुशलता कृष्ण के दर्शन में ही दिखाई देती है— पमी विफल कुशल नाहि दीखत, गिन गिन अवध टरी ।'

लाहोर वासी सत बुल्लेगाह मनुष्य को मनुष्य मानत हैं । वे हिन्दु तुरक में भेद नहीं करते । वे कहत हैं—

'दुई दूर करो कोई सार नहीं हिन्दु तुरक कोई होर नहीं ।
सब साधु लखी काई चीर नहीं, घट घट में आप समाया है ।
ना में मुल्ला, ना में काजी, ना में मुनी ना में हाजी ॥

मनुष्यत्व की इस रसमय भूमि पर आकर समस्त भेद विभेद समाप्त हो जाते हैं। इस रस जगत में प्रेम प्यासा मानव ही बसता और आनन्द भोग करते हुए आनन्द और कल्याण की वर्षा करता है। लोक भगवत् के आकाश में ऐसे अनेक मेघ-स्रष्टा मद्र मद्र ध्वनि से गरजे और भूमि को रसमिक्त करने रहें। अब्दुल जलील, मीर अब्दुल्लाह मुहम्मद आरिफ, मीर साया, आदिल, सन दाना साहेब, बाबा नबी, बाबा फजल, बाबा गुलशाह, सत यकरण, तासिबशाह, नवरतान बली मोहम्मद, इशाकल्ला नाँ नजीर, दोस्त मुल्लन, अलीमन सयान रोगन आदि अनेक मुसलमान कवियों ने यज्ञ भाषा और यज्ञराज के सम्मोहन स्वयं को गला दिया है। भावात्मक एकता का इसमें सुन्दर समन्वय मानव इतिहास में अन्यत्र दुर्लभ है।

वस्तुतः ये सभी शृंगार भक्त कवि अपने सम्प्रदाय की सकीर्ण परिधि से ऊपर उठकर राधा कृष्ण की व्यापक दृष्टि में उपासना किया करते थे और उन सबका समान रूप से एक ही उद्देश्य था— रस, आनन्द और प्रेम की मूर्ति श्री कृष्ण और राधा कृष्ण की लीला का गायन।

ये सभी कवि समाज के क पाण का भावना से प्रेरित थे। उन्होंने आंतरिक शुद्ध आचरण पर बल देने वाले सब प्रकार के भेद भाव से रहित भावना प्रवण सामान्य लोकधर्म का प्रचार करने के लिये ही अपनी वाणी का उपयोग किया था। इन शृंगार भक्तों को नितांत वैयक्तिक साधना में लीन और सोक सप्रह शून्य नहीं कहा जा सकता।

भाव तो कवि के अंतस्व का एक घम होता है। भाव सम्प्रदाय और जाति निरपेक्ष तथा देशकालातीत होता है।

साह बरकत उल्ला 'पेमी' ने कहा— है

"पेमी हिन्दू तुरक में हरि रंग रहो समाय ।

देवल और मसीत में दीप एक ही भाय ॥

दीप का यह प्रकाश ही महत्वपूर्ण है—यह प्रेम का, भावना का प्रकाश है जो हिन्दू हो या मुसलमान सबके हृदय को समान रूप से आलोकित करता है।

शृंगार भक्ति रस, आनन्द और 'प्रेम' की निवेणी है इसमें अवगाहन करने के पश्चात् त्रिहारी और रसलीन, मीरा और ताज घनानन्द और रसखान, जायसी (पद्मावत्) और जायसी (कहावत्) का भेद समाप्त हो जाता है। सब भक्तों का भाव जगत् एक ही जाता है, और इसी भाव जगत् का परिवर्त्य विवेच्य कवियों में सबत्र उपलब्ध है।

उपसंहार

मध्ययुग की नूतन वैष्णव भक्ति के प्रणेता चार आचार्य रामानुज (सन् 1037 - 1137, स 1090-1290 वि निम्बाक बारहवीं शताब्दी ई (महत) तेरहवीं शताब्दी ई) और विष्णु स्वामी माने जाते हैं। परंतु उत्तर भारत में वृष्ण भक्ति का प्रचार करने वाले सम्प्रदायों का संगठन कदाचित् सोलहवीं शताब्दी में ही हो सका। यह स्वाभाविक है कि यह संगठन कृष्ण लीला की भूमि म्रज प्रदेश—प्राचीन शूरसेन जनपद—के क्षेत्र मथुरा, यदावन से प्रारम्भ हुआ। सोलहवीं शताब्दी में संगठित कृष्ण भक्ति सम्प्रदायों का सम्बंध उपयुक्त तीन आचार्यों निम्बाक, महत और विष्णुस्वामी से जोड़ा जाता है।

सोलहवीं शताब्दी में स्थापित सम्प्रदायों में विशेष रूप से जहां तक हिंदी कृष्ण भक्ति साहित्य का सम्बंध है वल्लभाचार्य का पुष्टिभाग, चैतन्य का गौडीय, गोस्वामी हिन हरिवंश का राधावल्लभी तथा स्वामी हरिदास का सखा नाटटटी सम्प्रदाय प्रमुख हैं। वल्लभाचार्य के पुष्टिभाग को छोड़कर सोलहवीं शताब्दी के उपयुक्त सभी सम्प्रदाय नितांत साधना पथी थे।

प्रायः सभी कृष्ण भक्ति सम्प्रदायों का मूलधार श्रीमद् भागवत है। प्रस्थान पथी (ब्रह्मासूत्र, उपनिषद्—श्रीमद् भगवत गीता) में भागवत को जोड़कर प्रस्थान चतुष्टय की परम्परा चली। निम्बाक महत, गौडीय, राधावल्लभी, सहज आदि में भागवत का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

यहां यह उल्लेख करना सगत होगा कि प्रत्येक सम्प्रदाय में श्रीमद् भागवत की व्याख्याएँ अपनी अपनी दृष्टि से की गई हैं और ऐसा करने का मूल उद्देश्य है अपनी अपनी भक्ति के स्वरूप को प्रमाणिकता देना का प्रयास। जैसे मध्वचार्य ने रासलीला और गोपी प्रेम को महत्व नहीं दिया और दूसरी ओर गौडीय वैष्णव भक्ति में राधा गोपी कृष्ण प्रेम को अत्यन्त व्यापक रूप में प्रतिष्ठित करने के लिए श्रीमद् भागवत के एक एक श्लोक की सहायता ली गयी है। और उनमें राधा का संकेत प्रमाणित किया गया है। आचार्य वल्लभ ने पुष्टि भाग में भक्तगत बाल कृष्ण की लीला भक्ति की प्रतिष्ठा की किन्तु उनके सुपुत्र आचार्य विठ्ठल गुरनद आदि अष्टछापिय कवि की भक्ति में माधुर्य भाव की प्रतिष्ठापना श्रीमद् भागवत के ही आधार पर हुई है।

वस्तुतः श्रीमद् भागवत में जिस प्रेमाभक्ति का निरूपण हुआ है सोलहवीं शताब्दी के कृष्ण भक्तों ने उसी को आधार या स्रोत रूप में ग्रहीत करके अपनी

अपनी पद्धति के अनुसार पराकाष्ठा पर पहुँचा दिया है। इस भक्तता में कृष्ण के साथ ही आराध्य रूप में राधा या कृष्णाराध्य रूप में राधा की प्रतिष्ठापना भी की है। सच तो यह है कि वैष्णव भक्ति के पुनर्निर्माण और पुनरोत्थान में भागवत का योग सर्वाधिक रहा है। वही कृष्ण, भक्ति, मुरा प्रेम भक्ति आदि का अक्षय स्रोत भी रही है।

भारतवर्ष के प्रायः सभी कृष्ण भक्ति सम्प्रदायों में कृष्ण का सगुण रूप को ही दृष्टि में रखा गया है। कृष्ण रसेन, आनन्दमय, साक्षात् पूण ब्रह्म हैं। इन कृष्ण सम्प्रदायों में जीव और जगत को ब्रह्म का अंग माना गया है। सभी कृष्ण सम्प्रदायों ने कृष्ण को ब्रह्म या भगवान् मानते हुए अपने अनेक भाव के अनुसार मानवीय गुणों का आरोप किया है। सभी सम्प्रदायों में कृष्ण के गोलोक या वृन्दावन को नित्य और परम आनन्दमय धाम माना गया है। वहाँ के गोप गोपी यमुना का, वन, लता, वृक्ष आदि सब श्रीकृष्ण से अभिन्न हैं। पारिवर्तक वृन्दावन को नित्य कृष्ण धाम मानकर राधा कृष्ण और गावियों को कृष्ण से अभिन्न माना गया है।

वस्तुतः भक्ति आरम्भ के आवश्यक तत्त्वों और लक्षणों से समन्वित हिंदी कृष्ण काव्य का चरित नामक ब्रजवासी गोपाल कृष्ण ही है, उन्हीं की मधुर लीला का भक्त कवियों ने अपनी अपनी भावना के अनुसार गाया है। गोपाल कृष्ण ब्रजभूमि में केवल अपनी मधुर लीला विस्तार मात्र करते हैं, लीला का अतिरिक्त किसी अन्य उद्देश्य से अवतरित होकर उसके लिए प्रयत्नशील नहीं होते। अतः उनकी कथा में किसी फलागम की उत्सुकता नहीं है, अपितु उनकी लीला का प्रत्येक अंग अपने में पूण है। अतः इस लीला का चणन करने वाले कविमा द्वारा गोति पद्धति का अपनाया जाना स्वाभाविक है। फिर भी कृष्ण लीला गाने वाले कवियों में कृष्ण कथा का किसी न किसी अंग विशेष की प्रशंसा कल्पना पृष्ठ भूमि के रूप में प्रायः पाई जाती है। उदाहरण के लिए हरिवंश और उनके अनुयायियों के पदों की पृष्ठ भूमि में राधा कृष्ण विहार के कथा प्रसंग निरन्तर विद्यमान रहते हैं, रामखान के कवित्त सवयों के बीच कृष्ण कथा की छोटी छोटी प्रसंग कल्पनाएँ रहती हैं जो कृष्ण का सौन्दर्य और माधुर्य की व्यञ्जक हैं और सवस्व बलिदान करने की आकांक्षा रखने वाले प्रेम का रूप उपस्थित करती हैं।

इन दृष्टि से इन समस्त कृष्ण भक्त कवियों द्वारा वर्णित कृष्ण कथा का विविध अंशों को एकत्र करके एक सम्पूर्ण चरित कथा का निर्माण तथा कृष्ण भक्त कवियों की प्रवृत्ति की समीक्षा की जा सकती है।

इस्लाम एक अदृष्ट मजहब है। भारतवर्ष में मुसलमानों का आगमन सूत एसाद और मीरों की तोड़ फोड़ से आरम्भ हुआ है। इस्लाम में सूफी मत

उदार विचारों वाला है। सूफी सतों ने मनुष्य मनुष्य के हृदय के बीच विद्यमान रागात्मक तार को पकड़ लिया, उन्होंने हिन्दू मुस्लिम के बीच की खाई को पाटने का प्रयत्न किया। 'राम' मुसलमानों के हृदय में घर नहीं बन सका। राम के प्रति इनके हृदय में कोई उमंग नहीं उठ सकी, किंतु कृष्ण के माधुर्य भाव के प्रति उनमें सहज भावना जमी जो किसी किसी में मस्ती एवं उमाद में रूप में भी प्रकट हुई। फारस का उमाद प्रेम का चिर अमिलापी मुसलमान हृदय बरसाती गदी की तरह उमड़ कर कृष्ण रूपी सागर की ओर बह चला। कृष्ण का अनुपम रूप, मनोरम शृंगार एवं माधुर्य सभी के हृदय मोहित कर लेगा, हृदय को चाँदोंवर बना के लिये बाध्य करने लगा। कृष्ण तथा राधा कृष्ण के प्रेम में डूबकर बह मदहोश हो गये। इतना जब प्यार किया तो अपने पास कुछ भी नहीं छोड़ा। मुसलमानों ने हिंदी के लिये क्या किया इसके विकास में उन्होंने कितना योगदान दिया? इस सन्दर्भ में विचारणीय है कि यदि मुसलमान और मुस्लिम संस्कृति का संयोग हिंदी, संस्कृत और हिंदी भाषा से न होता तो आधुनिक हिंदी भाषा भी क्या इसी रूप में होती, इसका साहित्य भी क्या इतना ही समृद्ध होता? इस विषय में कहा जा सकता है कि वास्तविक हिंदी, भक्ति कालीन हिंदी का प्रारम्भ ही मुस्लिम आक्रमण की प्रतिक्रिया के कारण हुआ है। इस विचार से कुछ विद्वान प्रायः असहमति प्रकट कर रहे हैं। उनकी मान्यता है कि यदि मुसलमान भारत में न आते, उनकी संस्कृति का आदान प्रदान न भी होता तो भी हिंदी का स्वयं प्रतिगत रूप ऐसा ही होता।

अन्य उदार मुसलमानों ने हिंदी के साथ वही सम्बन्ध स्थापित किया जो हिंदुओं का मदा से है। भक्ति कालीन काव्य में मुसलमानों का अपार योग मिलता है। यदि एक ओर सूर और तुलसी हैं तो दूसरी ओर कबीर और जायसी हैं। राम कृष्ण भावों के साथ ही सूफी और त्रिगुणियाँ सतों का योग भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। एक ने भक्ति तो दूसरे ने प्रेम की पीर को परिवर्तित किया। रीति ञाल में बिहारी और देवदास तो रहीम रसखान रसलील गे हैं। आधुनिक युग में सयद अमीर अली मीर, ईशा अल्लाखाँ और मुशी अजमेरी के बहिष्कार का योगदान भी महा मूल्यवान है। जिस तत्त्वज्ञान से हिंदुओं ने हिंदी की उत्पत्ति में योगदान दिया उसी लगन और तत्त्वज्ञान से मुसलमानों ने भी हिंदी की सेवा की है। अनेक मुसलमान बादशाहों ने भी हिंदी के विकास में योग दिया है। सूफी कवियों की हिंदी सेवा, गानगार्गी सतों की हिंदी सेवा, मुसलमान कृष्ण भक्तों की हिंदी सेवा, रीतिकालीन मुसलमानों की हिंदी सेवा और आधुनिक मुसलमानों की हिंदी सेवा— इन सबका हिंदी के विकास में अपार योग है।

कहा जाता है कि सर्वप्रथम मुसलमान साहित्यकार फ़ुतुबअली (सम्भवतः बारहवीं शताब्दी) हैं। इनकी रचनाएँ आज मोटिस या सूचना रूप में ही प्राप्त होती हैं। इनके परचात अमीर खुशरो की पद्यों की हिंदी का प्रथम नबि हान

का सोभाग्य प्राप्त है, उनकी पहेलियाँ मुक़रियाँ दो सखुन भाषा समक अलवार आदि के उदाहरण आज भी लोगों की जवान पर है। उन्होंने फारसी दाँ लोगों के हिंदी सोला के निमित्त और हिंदी प्रसार के निय पयायवाची कापो का भी निर्माण किया और ये कोप भी पद्य में सिल गये।

मुस्लिम आक्रान्ताओं की नयी तसवारो त जब हिंदू सृष्टि के आग प्रश्न बिह लगाया तब सूफी सतो ने अपनी प्रेम की पीर द्वारा हिंदू मुस्लीम एव्य का महान सन्देश दिया। उनकी हिंदी साहित्य साधना हिंदी साहित्य में एक महत्वपूर्ण धारा के रूप में स्थापित है। गौली, भाषा, सव्य आदि शक्तियों से इनका बड़ा महत्व है मुल्लादाऊद के चत्वार्यन से प्रारम्भ हुई सूफी गैमान्यान परम्परा उन्नीस सौ अठठारह ईसवी तक (कवि नसीर) तक चली आयी है। इसी परम्परा में मलिक मुहम्मद जायसी के अमर काव्य "क हावत" 'पद्मावत" और "चित्ररेखा" आते हैं हिंदी की अवधी बोली को साहित्य के सिंहासन पर प्रतिष्ठित करने का श्रेय इन्हीं सूफी कवियों को है।

प्रेमाशयो साधको के प्रिय में, गानियों के ब्रह्म योगियों के परमात्मा, भक्तों के भगवान में स्थित परम सौंदर्य वाला आश्चर्य मिलता है। ये प्रेमी कवि प्रियतम प्रभु को प्राप्त करने की चेष्टा में प्रवृत्त रहे, उनके मत से पृथ्वी और आकाश का कण कण प्रियतम के तेज से ही प्रकाशमान और गतिशील है। इन प्रेमियों का यह प्रियतम पारस रूप है जो सृष्टि के कण कण को द्वादाशवर्णों कांचन अस्मिता प्रदान कर सकता है। सूफी सत अपने प्रियतम में किसोर वय को और उसके सौ दय को बड़ा महत्व देने आए हैं उसकी छाया को उन्होंने परम आत्ममयी एव गति सम्पन्नता नारी के रूप में देखा और उसके सयोग को पाकर परम माधुर्य का रस प्राप्त किया। सूफियों के यहाँ सहन सयोगी प्रिय के सयोग का कोई बाहरी माध्यम नहीं था इसी कारण उन्होंने इसके एकांत दिग्घ मिलन का अनुभव करते हुए सासारिक वस्तुओं से अपनी आँखें मोड़ ली थी।¹

जायसी की साधना ने प्रेम की गविन से सासारिक पति पत्नी के सयोग में परमात्मा आत्मा के मधुर मिलन की झँकी को प्रत्यक्ष करते हुए प्रेम भागियों को एक नई दिशा भी दी और प्रेम का आलौकिक आदेश का प्रतिमान भी स्थापित किया। सासारिकता से प्रेमी का सम्बन्धन होने के कारण इन प्रेमियों ने ससार को उस परम प्रभु के प्रेम का प्रसार ही मान लिया बार भगवत प्रेम में सराबोर हो गये। इन सूफी भक्तों की दृष्टि में साध्य भी वही प्रेम है और साधन भी। इस प्रेम के कारण अम्ल मधुर, अरूप-रूपवान ताग्र स्वण, अग्नि प्रकाश दुख आनंद श्ली सिंहासन, बाटा फूल और मृत्यु जीवन बन

जाता है। कितना साम्यवान है यह प्रग, जिसने जड़ को चेतन और शुष्क को सरस बनाकर रस सागर में डुबो दिया। गापिया इसी प्रेम में मतवाली हो गई थी, और राधा न इसी प्रेम से श्याम गुन्डर के हृदय का जीतकर उनका नित्य सयाग प्राप्त कर लिया था। भला प्रेम मागियाँ स यह बातें छिपी रह सकती है? उन्हें इसका सब रहस्य पूव से ही शात रहता है और तभी वे अपने लक्ष्य (प्यारे प्रभु) को पान के लिये इसी प्रेम के माग पर बेधड़क चलत है। उनका तो यह अटल विश्वास है कि जिस प्रेम ने उन्हें इस जगत् में लाकर छोड़ा है, वही प्रेम उन्हें उग स्थान पर भी ले जायगा जहाँ उसका परम रूपवान प्यारा रहता है।¹

रागानुभक्ति का यह प्रभु प्रेम लोक मर्यादा की चिन्ता से दूर भागवत पक्ष की मधुर साधना का दिव्य संदेश देता है। पद्मावन में, प्रेममार्गी रसिक जायसी का ईश्वरो मुख प्रेम, अपनी संपूर्ण छवि के साथ उपस्थित हुआ है आर प्रियतम के प्रेम में बसीभूत उनकी आत्मा प्रारम्भ से ही अपने प्यार के वियोग में तड़पती हुयी प्रतीत होती है इस प्रकार 'जायसी की उगासना' माधुय भाव से प्रेमी और प्रिय के भाव से है।²

भक्तों की भाँति जिसके हृदय में उस पाने की तीव्र उत्पन्न हो जाय वही सच्चा साधक है और वही उसे प्राप्त भी कर सकता है। साधक का वह यहाँ समाप्त हो जाता है और प्रिय दर्शन की उत्कट अभिलाषा का उदय हो जाता है। दर्शनों की यह लालसा उसक हृदय में मिलन की आकुलता को पदा कर हृदय में सबस्व त्याग की भावना का समावेश कर देती है। कृष्ण भक्त उस मधुरिमा का आस्वाद करने के लिये इसी कारण विरक्त हो गये थे।

ईश्वर के प्रति पहले प्रेम का उदय भक्त के हृदय में होता है, ज्यों-ज्यों यह प्रेम बढ़ता जाता है त्यों त्यों भगवान् श्रीकृष्ण की कृपा दृष्टि भी होती जाती है, यहाँ तक कि पूण प्रेम दशा को प्राप्त भक्त भगवान् को भी प्रिय हो जाता है, प्रेमी होकर प्रिय होने की पद्धति भक्तों की है। भक्ति की साधना का क्रम यही है कि पहले भगवान् हमें प्रिय लगे, पीछे अपने प्रेम के प्रभाव से हम भी भगवान् को प्रिय लगने लगेंगे।³

1 दो आइडिया आफ़ पर्सनालिटी इन सूफीज़्म पृ 62

2 जायसी प्रथापली-भूमिका पृ 156 - का रामचन्द्र शुक्ल

3 जायसी प्रथापली पद्मावत-भूमिका पृ 54

रक्तमेघ की तरह पद्मावती का प्रेम भी प्रवाह है उमर मात्र प्रियता के लिए प्रवेश द्वार और रम्य उसी प्रियतम का निवास स्थल। इस रमणीय स्थल पर वह अपनी स्वामी मा आने का आग्रह करती है। इस पद्मावती ने जब तक अपना प्रभु का नाम नहीं सुना था तब तक किसी पीर का अनुभव नहीं किया था किंतु प्रियतम का नाम सुना ही धैर्य छूट जाता है और वह भी उसी प्रकार व्याकुल होनी है जिस प्रकार रक्तमेघ। कृष्ण भक्ति के रमिते सत्ता ने भी राधा कृष्ण की इस आधुलता का बड़ा सरस वर्णन किया है।

संतमत मूलरूप में भारतीय का और उमर कृष्ण का प्रभाव ही सकता था। मूर्खीमत में कृष्ण की चर्चा दण्डरत्न उन्नी लोक प्रियता में सदैव रही रह जाती है। मलिक मुहम्मद जायसी ने भारत में हिन्दू धर्म की कतिपय गौरवशालिनी कथाओं का स्मरण किया है। उन कथाओं की चर्चा करने परत कृष्ण की जीवन्त भाषा का स्मरण करो जगत् है—

‘तद्गता कृष्णहिं गच्छ आनापी ।

कठिन विद्याह जिर्वाह बिनि गापी ॥¹

अरबूर के द्वारा कृष्ण की मजुरा ले जाना और गोपिया का उनके कठिन विद्योग में तडपना नागमती की विरह कथा को विद्या का मजुरा रंग देना के लिये कवि वह साम्य चित्र प्रस्तुत करता है।

प्रद्योती छपी छपी गोपिता ।²

‘पद्महरी गतावरी में भक्ति साहित्य ने उद्योग जीवन दृष्टिकोण और नवीन जीवनादर्शन दिया था। चार सौ वर्षों तक उस जादू का प्रभाव भक्ति की प्रेरणा प्रदान की परंतु अन्तिम दिनों में यह प्रेरणा वेग रमण एकाकी और भीषण हो जाता गया। भक्ति साहित्य ने भाषा में उत्तरोत्तर माधुर्य भरा, किंतु अंत तक वह माधुर्य भाग को अतिरहित कर गया।’³

भक्तिकालीन कृष्ण काव्य का एक महत्व वैशिष्ट्य यह है कि कृष्ण की वात्सल्य और प्रेम लीलाओं का उत्तम कोटि का सरस, मनोहर साहित्य कायम दुलभ है। वात्सल्य और प्रेम के इनके सूक्ष्म चित्रण सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य में अत्यंत नहीं मिलते। राज का एक श्रेष्ठ कोटि की काव्य भाषा बोलने में इन कृष्ण भक्त मुसलमान कवियों का अनुपम योग है। इन कवियों में ही प्रस्तुत गीति काव्य का उत्तम विकास और परिष्कार मिलता है। इन भक्तों के ऐकांतिक आत्म समर्पण ने मधुर रस की पावन मदादिनी कोटि तोटि जा के लिए सुलभ कर दी

1 जायसी प्रयागली नागमती विद्योग खण्ड-आना-1

2 वही नखगिण खण्ड दोहा-4

3 भाषायाय प हजारी प्रसाद द्विवेदी हिन्दी साहित्य उद्भव और विकास पृ 213 14

हे। भाव, भाषा अलंकार आदि दृष्टियों से इस काल का साहित्य अनूठा है। राधा कृष्ण की पावन लीला को इन कवियों ने उत्तर भारतीय जनता के लिए सहज ही उपस्थित कर दिया है। लोक भाषा के साहित्यिक पुनरुत्थान की दृष्टि से भी कृष्ण भक्त कवियों का योगदान महात्तम है। लोक प्रचलित काव्य रूपा के साथ जीवन के महत्त्व लक्ष्य और आदर्श का योग हो जान के कारण इस साहित्य में एक अपूर्व तेजस्विता आ गई है। इनके छंदों, गीतों, पदों में कृत्रिमता का बोझ नहीं है। भाषा और भाव के आडंबर के घहन करने में वह पूर्ण रूप से समर्थ है। शुद्ध साहित्यिक जीवन भगवद् भक्ति, भगवान् के निम्न पावन चरित्र का गान और भक्ति इस साहित्य की प्रेरणा देने वाले अंग हैं।

महाकवि जायसी और उनका महाकाव्य व हावत, "ताज", महाकवि जायसी की रसखान, जमात और रहीम के कृष्ण भक्ति के इन्हीं लोक वर्याणकारी स्वरूप की स्थापना की जिसने जनता के मन का एक महान् लक्ष्य और महान् आदर्श का सम्बल प्रदान किया।

भारतीय साहित्य में श्रीकृष्ण पाठक वला अवतार या पूणावतार ग्रह्य मान गये हैं। उन्हें निष्काम काम योग का प्रतीक माना गया है। वे साक्षात् योगेश्वर महाभारत युद्ध के सूत्रधार, महान् कामयोगी, महान् पराक्रमी, महान् राजनीतिज्ञ योगेश्वर, पुरुषोत्तम, रक्षेश्वर सभी रूपों में महान् हैं। कृष्ण का महिमा भक्ति और वैभवा उपलब्धि वैचित्र्यो से समृद्ध विराट् व्यक्तित्व भारतीय मनोपा की एक महान् उपलब्धि है—गोपीजात बल्लभ, राधा माधव राजा नेता कामयोगी, भोगी—सभी रूपों में महान् और दिव्य हैं।

वे रसज्ञ, रसिक और रासस्वरूप हैं। राधा उनकी आदि शक्ति है। वे उनकी जीवन संगिनी रूप में प्रतिष्ठित हैं। कृष्ण बाललीला, रासलीला प्रेमलीला, दश शिरोमणि हैं।

रीतिपालीन कवियों ने कृष्ण की रास लीला और प्रेमलीला का स्थापन अत्यन्त मनोयोग और सम्पूर्ण सुसज्जि के साथ किया है। सच तो यह है कि रीति काल में कृष्ण का 'महाभारत एतन्म श्रीमद्भगवद् गीता' का योगेश्वर रूप प्राप्त ममाप्त ही हो गया है। वेदक कृष्ण रसिता गिनोमणि, राधा रमण, गोपी रमण भोग विलास वृत्ति के प्रधान देवता नायक, रसिया, आनन्द मूर्ति और धना ही हैं। वे श्रु गार रस के प्रधान नायक बने और रीतिकाल के कवि राधा कृष्ण की भक्ति के नाम की सूर सरिता में अपनी श्रु गारिक प्रवृत्ति का दिग्दर्शन कराते रहे। ये कवियों राजा और सामन्तों को रिक्त के लिए उनकी तृप्ति के लिए कविता का सजा करत थे। राधा और कृष्ण का स्मरण तो केवल समाज के प्रतिष्ठित होने का बहाना था। कवि मिलारीशस ने स्पष्ट किया और कवि की शक्ति को पित्त किया

'आग के सुकवि पै रोभी हैं तो तु बवितार्ई
न तु राधिका व'हार्ई सुमिरन को बहानो है।'

श्रीकृष्ण भक्ति साहित्य मनुष्य की सबसे प्रबल भूख का समाधान करता है। वह मनुष्य को बाह्य विषयो की आसक्ति से तो अलग कर देता है, लेकिन उसे शुष्क सत्वपादो और प्रेमहीन कथनी का उपासक नहीं बनाता।

यह मनुष्य की सरसता को उदबुद्ध करता है उसकी अतनिहित रससिक्त अनुराग लालसा को उध्वमुखी करता है। और उसे तिर-तर रस सिक्ल बनाता रहा है। यह प्रेम साधना एकांतिक है।

मनुष्य के मन की प्रक्रिया के ज्ञान, अनुराग अथवा भाव तथा सकल्प क्रिया में रागानुगा भक्तिमाग अनुराग अथवा भाव को सबसे अधिक महत्ता दी है, तथा ज्ञान और कम को इसी के अतगत स्वयसिद्ध मानता है। आत्म ज्ञान की प्राप्ति के उपरा न भले ही अह का विनाश हो जाय साधनावस्था में प्रत्यक्षत अह की स्वीकृति रहती ही है। ज्ञान भक्तों के लिए सहज सुलभ है, ज्ञानियों के लिए कष्ट साध्य और दुलभ। साधारणत ज्ञानमाग का प्रथम सोपान वैराग्य है। भक्त भी वैराग्य को महत्व देता है। अंतर केवल यह है कि वैराग्य भक्ति का अति वाय साधन नहीं, उसका स्वाभाविक अंग या लक्षण है। मनुष्य के हृदय में यदि विरक्ति का अकुर न भी हो तो भी भगवान की कृपा से मन और इन्द्रिया लीला पुरुष परमानन्द रूप श्री कृष्ण रूप की ओर उमुख हो जाती है और भक्त बना यास ससार के विषयो से विरक्त हो जाता है किंतु भक्ति पथ में वैराग्य को किसी प्रकार लक्ष्य और साधन नहीं माना जा सकता। कृष्ण भक्ति के वैराग्य को ही महत्व देती है केवल ऐसा नहीं है सासारिक वस्तुओं को त्यागने वाले विरा गियो का पथय नहीं देती।

कृष्ण भक्तों के निकट प्रेम का पथ ही सबसे बड़ा योग व सबसे बड़ा तप है। प्रेम भक्ति में चितवृत्ति का निरोध और सासारिक विकारों का नाश सहन है।

कृष्ण भक्ति सम्प्रदायो में कालांतर में अनेक प्रकार के कमकण्ड विकसित हो गये, किंतु आरम्भ में भाव पर ही विशेष बल दिया जाता था। इसलिए भक्त कवियो ने अपने काव्य में कर्मकांड का विशेष स्थान नहीं दिया, उन्होंने भक्ति के भाव पक्ष को ही एकांत रूप से चित्रित किया है और उसी में ज्ञान वैराग्य, योग, तप और कम का समाहार दिखलाया है। रागानुगा भक्ति की स्वतः पूणता के कारण ही उसमें धर्म के स्थात विधि निषेध अनावश्यक माने गए हैं। यही नहीं, परिवार, समाज और शास्त्र के नियम यदि भक्ति के सहज परिपासन में बाधक हों तो उनका तिरस्कार भी आवश्यक बताया गया है। इसी भाव से गोपियाँ भक्ति में बाधक लोक वेद और कुल की मर्यादाओं का प्रख्याप्तयान करती

दिखाई गई हैं। धर्म की इस भाव पद्धति में मनुष्य की अच्छी बुरी सभी प्रवृत्तियों में दमन के स्थान पर कृष्णों-मुख करने का विधान तथा सदाचरण के सुलभ भाग का निदर्शन है।

इन रीतियुगीन मुसलमान कविया ने कृष्ण की रूप माधुरी का वणन और कृष्ण चरित का आस्मान ब्रज भाषा में ही किया है। ब्रज भाषा का पूरा सौंदर्य इसी युग में निखर कर चरम उत्कृष्ट पर पहुँचा। कविया ने जादुई पच्चीकानी अलङ्कृति शब्द शक्ति आदि का बड़ा सुंदर और मोहक रूप प्रस्तुत किया है।

शब्दों को काव्य में नगो की तरह जड़कर अद्भुत कलात्मकता का परिचय दिया है। इसमें सादे ही निःशब्द सौंदर्य की अपेक्षा भाषा सौंदर्य पर ही कवियों की रुचि केन्द्रित रही। भाषा स्निग्ध और स्वाभाविक है, समीतात्मकता और ध्वन्यात्मकता के गुणों से ओत प्रोत है, उसमें चित्रमयता भी है। रसलीला में नाद सौंदर्य और चित्रमयता की प्रधानता है, तो आलम शेख, नेवाज में व्यंजना प्रयोग की विचित्रता है। दरवारी सभ्यता के कारण उक्तिया और वाकपटुता ने भाषा सौंदर्य में चार चाद लगा दिये हैं। यमक, अनुप्रास, उपमा, उत्प्रेक्षा, अतिशयोक्ति, प्रभृति अलंकारों ने भाषा सौंदर्य को प्रभविष्णु बनाया है।

वस्तुतः कृष्ण काव्य के अभाव में रीतिकाव्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती पूर्ववर्ती युगों की पार लौकिकता और परवर्ती युगों की इह लौकिक सांस्कृतिक चेतना के बीच में सेतु की तरह कृष्ण काव्य हमारे सामने आते हैं, उसमें हमारी इन्द्रिय गति चेतना को अध्यात्म उ मुख बनाया गया है। सूफियों के प्रेम की पीर की पराकाष्ठा को कृष्ण काव्य में अपने सदर्भों में आत्म सात किया है। इस युग में अनेक मुसलमान कवि कृष्ण भक्ति की ओर आकर्षित हुए। इन कृष्ण प्रेमी मुसलमान भक्तों या कवियों ने सौंदर्य, शृंगार माधुर्य और प्रेम की अत्यंत भाव प्रवण मन मोहक आकर्षक और ललित अभिव्यक्तियों से हमें आंतरिक स्वास्थ्य प्रदान किया है उसमें नतिक और लोक मंगल विधायक आदमों का समारम्भ भले ही नहीं हो, कि तु सौंदर्य के भीतर से एक नये प्रकार की सकल्प बढ़ता जो राम काव्य की मर्यादा वाली सकल्पबद्धता की पूरक है, हमें स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

“बैष्णव सस्कृति को भीतरी माधुरी एवम् अतः सौंदर्य से सम्बन्धित कर काव्य चेतना को नई मार्मिकता देने वाला कृष्ण काव्य मध्ययुगीन रामकाव्य की देन का पूरक है।”¹

रोतिवासीय कवियों की भक्ति भावना में यह कविता गैर नहीं रही जो मूर और मीरा में थी। यम जो भक्तिज्ञान में ही पायगी ग जड़ी का प्रेम की स्थापना की है वही रूप सौन्दर्य के चित्रण में रोतिवासीय कवियों को भी कर्मस्थान पर पीछे छोड़ दिया है। "बहावत" में कुम्हार का सौन्दर्य वषट्क है। रोतिवासीय कवियों ने राधा कृष्ण प्रणय प्रसंग का सभोग चित्रण द्वारा कल्पना किया है कि वे इसी जगत् के जीत जागत् वितामी प्राणी में प्रतीत हो गये हैं। यह स्वामादिक भी था क्योंकि भक्तिवासीय राधा कृष्ण के प्रति कवियों का जो पूज्य भाव तथा श्रद्धा भाव था, वह गम्भीर हो चुका था। शृंगार काल में कवियों ने राधा कृष्ण की अलौकिक प्रेम स्वीलाओ का स्थूल रूप में ग्रहण किया। उनमें राधा कृष्ण के मधुरतम चित्रण में निहित सूक्ष्म भक्ति भावना का निर्वाह हुआ था। इसी कारण यह काव्य मनाविलास और मनोरंजन की वस्तु बनकर रह गया। दोष रंजन ने नारी होने हुए भी दुतिका संदेश और दुतिका पद्य में पश्चात् रमण लीला का ही विनोद चित्रण किया है। "पभी" इस काल के सत्तुलित रचनाकार है जिनके काव्य में भक्तिज्ञान और शृंगारकाल का सम्बन्ध सा प्रतीत होता है। रसलीन तो मुसल एयम् कल्पना सम्पन्न कवि हैं। जिहान अनक स्थानों पर बिहारी की चित्रात्मकता को भी पीछे छोड़ दिया है। नेवाज यारी साहब, अब्दु साह मीर माधो, बारे खाँ, नजीर अकबराबादी ने राधा कृष्ण का स्मरण तो अवश्य किया है परन्तु इन्हें भी लौकिक कृष्ण की लीलाएँ ही अधिक रची हैं।

ब्रजभाषा और मुसलमान कविगण लेख में ब्रजभाषा के लगभग सात सौ कवियों के नाम गिनाये हैं। अलीवान अलीदीन के नाम चल्लभ सम्प्रदाय की सूची में गिनाये गये हैं। इनमें अनेक मुसलमान कवि भी हैं। रोतिवाल की शृंगारिक रचनाओं ने इनका ध्यान आकर्षित किया है। किसी कवि ने शृंगारिक रचनाओं में कृष्ण का नाम तो नहीं लिखा किन्तु अनुमानतः कृष्ण से सम्बन्धित भाव का समावेश जरूर किया है। किसी कवि ने नायक के स्थापन पर कृष्ण के पर्यायनामी नामों में से एक का प्रयोग किया है। यदि इनमें से सौ कवियों में अपनी कविता तथा संगीत में कृष्ण को आलम्बन माना है तो इसका श्रेय कृष्ण की भक्ति को तथा सावप्रियता को दिया जा सकता है।

मुसलमान भक्त और रोतिकवियों के अति प्रिय छंदों में कवित्त, सर्वैया एव दोहा सारठा का नामोल्लेख ही संभव है। सर्वैया छंद मुख्यतया करुण और शृंगार रस के सिद्ध उपयुक्त है, पर कवित्त की अनुकूलता के साथ साथ वीर रस के लक्षण में देखा जाता है। ये दोनों ही छंद अतिम पद प्रधान हैं। 'कवित्त' वीर काव्य के अंतर्गत छप्पम' के अर्थ में भी प्रयुक्त हुआ है। आश्चर्यप्रद है कि प्राचीन संस्कृति प्राकृत साहित्य में वही भी यह छंद व्यक्त नहीं हुआ, लेकिन भक्तिकाल के उत्तरार्ध और सम्पूर्ण रोतिकाल में इसकी घूम है। कवित्त का हम हिन्दी का

निजी छन्द गात समत हैं। मुगलमान कवियों में रसखानि, वारे खाँ फकीर, खादिस, ताज, मुखारक, आलम, शेख, कान्दिर बरक, नगी, जहमदुल्लाह, तालिख अली रमनायक, आजम, अली मुहिय खाँ श्रीतम' आदि इसमें सफल प्रयोजक हैं।

ब्रजभाषा साहित्य में कामल और मधुर भाषा की अभिव्यजना के लिये 'सर्वया' का महत्व होगा रहा है।

पदा का गायन वृष्ण मन्त्रों में बहु प्रचलित था वे किसी न किसी रूप में 'संगीत' का जान भी रखत थे। कवि रसखानि ने परम्परा का निर्वाह न कर पद प्रया को त्याग कर कवित्त और सर्वया को अपन उद्गारा का मायम बनाया। पदों की रचनाएँ साधारणतः सभी मुगल सम्राटों ने की हैं। फारसी और उर्दू की तरह हिन्दी में भी गजने और मसिय विषय मय। जफर और सौदा को ऐसे रचनाकारों में यग्रणी माना जाता है। इसी प्रकार आलम बेगम जल्पर आदि की ठुमरियाँ भी प्रशसनीय हैं।

बुद्ध अपवादों को छोड़कर प्रायः समस्त मुसलमान कवियों (मध्ययुगीन) की काव्य भाषा ब्रजभाषा ही रही है। भक्तिकाल में बोलचाल की भाषा और साधारण भाषा को परिमार्जित करके साहित्यिक भाषा का रूप दिया तो रीतिकाल में उसे तराशकर प्रौढता प्रदान की। ब्रजभाषा इतनी उन्नत नहीं हुई थी। उस व्याकरण बद्ध करने की चेष्टा नहीं की गई। शुक्लजी की धारणा है कि—'इस च्युतसंस्कृति दाप का निवारण होता जा ब्रजभाषा काव्य में थोड़ा बहुत सवन्न पाया जाता है, और नहीं तो काव्य लोपो का पूरणरूप में निरूपण होता जिससे भाषा में बुद्ध और मकाई आती।'।

मुहावरों लोकोक्तियों का स्थानीययुक्त प्रयोग भाषा ममनता का द्योतक है। मुसलमान कवि मुहावरों और लोकोक्तियों के समग्र तथा यथा स्थान बैठाने की कला में निपुण थे।

मुसलमान कवियों की वृष्ण भक्ति साधना शृंगार काल में तो पलवित पुष्पित हुई किन्तु आधुनिक काळ की ओर अप्रसर होते हुए यह क्षीण होती गई। आधुनिक काल में वृष्ण साहित्य में जिस बदलते हुए दृष्टिकोण के दर्शन होते हैं उसका मुसलमान वृष्ण भक्त कवियों में अभाव प्रतीत होता है। बाबा नबी, बाबा फजल, मीर मुराद, तालिबुल्लाह नवखान, नजीर, नेवाज, आलम अलीमन अलीस सैयद रागन, सतीफ ने वृष्ण विषयक रचनाएँ की हैं जो इस परम्परा की महत्वपूर्ण कडियाँ हाते हुए भी भक्ति और शृंगार दोनों ही दृष्टि से पूर्ववर्ती रचनाओं को नहीं छू सकती हैं। हिन्दू कवियों ने आधुनिक काल में भी श्रेष्ठ वृष्ण कथा का य की रचना की है। रत्नाकर भारतेन्दु हरिदचन्द्र, जयध्यासिंह उपाध्याय 'हरिऔध मैथिलीशरण गुप्त दिनकर' प द्वारवाप्रसाद मिश्र, घमवीर भारती तक यह परम्परा निरंतर बनी रही है और इसमें भक्तिकाल तथा

रीतिकाल की कृष्ण विषयक दृष्टि में भी परियतन परिलक्षित होता है। इस काल के रचनाकारों ने नई नई उद्भावनाओं के साथ कृष्ण कथा को ग्रहण किया है। मुसलमान कृष्ण भक्ति कवि रीतिकाल के छोर तक कृष्ण का रूप सींदर की सीताओं का रसमय वर्णन करते रहते हैं। आलम ने आधुनिक काल में मुदामा चरित्र की रचना की परंतु ग़ोतमदास ने मुदामा चरित्र से इसका साम्य स्थापित करवा उचित प्रतीत नहीं होता। अलीमन, सयद रोगन हाफिज, मेहबूब, बली मोहम्मद, इना अल्ता खाँ ने अपनी रचनाओं में कृष्ण का उल्लेख तो किया है परंतु इनके कृष्ण भक्तिवादी के कृष्ण के समान न तो भक्त बरसल बन, न रीतिकालीन कृष्ण के समान रनेदवर आर नही आधुनिक युग के कवियों की नई उद्भावनाओं के प्रणेता। मुसलमान कृष्ण भक्त कवियों का स्रोत प्रमाण क्षीण होता चला गया है।

हिंदी कृष्ण भक्ति काव्य परम्परा में मुसलमान कवियों का योगदान विषय वस्तु काव्य का रूप अलंकरण आदि की दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण है। विषय ध्यान देने योग्य है कि मुस्लिम संस्कृति की प्रवृत्ति प्रारम्भ से विभिन्न संस्कृति के गुणों को इस्लाम के प्रवास में सकारण अपने में समोने की रही है हिंदी साहित्य में समय और हिन्दू मुसलमान के एक होने की भावना को इस सम्पत्ति से बल मिला है हिन्दी के सत कवियों ने इसे आगे बढ़ाया है। दादू दयाल ने कहा है—

- (1) 'सब हम देहया सोधि करि, दूजा नाही आन ।
सब घर एक आतमा, भया हिंदू — मुसलमान ॥'
- (2) 'हिंदू लुक्क का कर्ता एक ताकी गति लखी न जाई ।
- (3) बंद एक खुदाय है, हिंदू मुसलमान ।
दावा राम रसूल का, लहदे बेईमान ॥
मुसलमान है रबी मेरा हिंदू भया खरीक ।
हिंदू भया खरीक दोऊ है कसिल हमारी ॥
दोनों को समझाया पान के पत्तर खोल ।
मुसलमान है रबी मेरा हिंदू भया खरीक ॥

पलदूदास की बानी, पृ 6

सर्वव्यापी एक कोहारा, जाकी महिमा और न पारा ।
हिंदू लुक्क का एक करता, एक ब्रह्म सबन को मरता ॥

मलुकदास

(दादू) दानो भाइ हाथ पग दोनो भाई कान ।
दोनों भाई नैन है हिंदू मुसलमान ॥

मुस्लिम शासका, फकीरो आदि न उदार दृष्टिकोण अपनाया। हिंदी भाषा एवं साहित्य को अपना कर प्रसारित करने में इन शासको, दरबारो और कवियो का बड़ा हाथ रहा है। मुस्लिम संस्कृति के सम्पर्क से हिंदी साहित्य को अमूल्य निधि प्राप्त हुई है।

हिंदी का भक्तिकालिन साहित्य तसब्बुफ से प्रभावित दिखाई देता है। धर्म दशन, राजनीति, सामाजिक रहन सहन, अथ व्यवस्था, सामाज्य जन जीवन आदि की दृष्टि से भी मुसलमान कवियो ने प्रायः भारतीयता को ही अपनाया है। उन्होंने कृष्ण के सिर पर मुस्लिम दौर की तातारी और चोतनियाँ कुलह भी रख दिखाई है। कृष्ण का निरूपण समय उन्होंने तत्कालिन मुस्लिम शासन व्यवस्था की छाया का अनुकरण किया है।

श्रीकृष्ण का चरित इतना आकर्षक, इतना व्यापक, विराट और सम्भोहनकारी रहा है कि जयसी, ताज, जान, रहीम रसखानि प्रभृति पचासो मुसलमान कवियो ने उसे अभिव्यक्ति का वेद्र बनाया।

वस्तुतः श्रीकृष्ण का जीवन चरित और उनकी लीलाएँ रहीम रसखान, आदि कवियो को मा गईं। इसीलिए तो वे सकुटि और कमरिया पर तीनों लीको का राज्य न्यौछावर करने के लिए प्रस्तुत थे।



सदम ग्रथ सूची

क्र	पुस्तक	लेखक
1	अनुरी दरबार क हिंदी कवि	- डॉ सरयूप्रसाद अग्रवाल
2	अनुराग बाँसुरी (प्र मुहम्मद टुन)	- स रामचन्द्र गुप्त
3	आधुनिक साहित्य	- आचार्य आनंदचंद्र वात्सपयी
4	आधुनिक हिन्दी साहित्य की भूमिका	- डॉ नरसीसागर वात्सपयी
5	इस्लाम के सूफी साधक (निबन्धन)	- अनु प रामदत्तवर चतुर्वेदी
6	ईरान के सूफी कवि	- बाबे त्रिहारी भटनागर तथा कहैयालाल
7	उत्तरी भारत की सत परम्परा	- प परपुराम चतुर्वेदी
8	उर्दू साहित्य का इतिहास (भाग 1)	- डॉ रामबाबू सकसेना
9	उद साहित्य का इतिहास	- बजरत्न दास
10	उद् हिन्दी गद्य की	- मुस्तफा साँ मअद्दा प्रकाशक शाखा, सूचना विभाग उ प्रा प्रथम संस्करण 1959 ई
11	कहावन (स मु जायसो कृत)	- स डॉ शिवसहाय पाठक
12	कबीर कचन समूच्य	-
13	काय विषय	- आचार्य भित्तारी दाम
14	कुतुब शतक और उसकी हिन्दुई	- स डॉ माता प्रसाद गुप्त भारतीय ज्ञानपीठ कमकता 1967 ई
15	कुतुब मुश्तरी (मुल्ता वगही कृत)	- स डॉ बाघे नसीरुद्दीन
16	कुरुपेत्र	- प रामधारीनिह दिनकर
17	कृष्णायन (प द्वारका प्रसाद मिश्र कृत)	- लूमिकालेखक डॉ राजेन्द्रप्रसाद
18	कदम जमोत्सव	- प्रीतम
19	कदम चरित	- बकिम चन्द्र
20	खिलजी बालीन भारत	- सपद अत्तर अन्वयास रिजवी
21	गडहबहो (महाकाव्य)	-
22	गोतिबाव्य का विकास	- प लालधर त्रिपाठी प्रवासी
23	घतानन्द	- गुजानहिन

- 24 चित्रावली - उस्मान (प्र स 1912 ई) वाराणसी
- 25 चित्रेरा (जायसी वक्त) - स प शिवसहाय पाठक
- 26 चदावन (मुल्ला दाउद कृत) - स डॉ परमेश्वरीताल गुप्त
- 27 छिनाई वार्ता - स डा मानाप्रसाद गुप्त
- 28 जय भारत -मधिलीशरण गुप्त
- 29 जायसी -प्रा राम पूजन तिवारी
- 30 जायसी ग्रन्थावली -स आचाय रामचन्द्र शुक्ल
- 31 जायसी का पद्मावत काव्य और दर्शन -डॉ गोविन्द निगुणायत
- 32 तम्बुफ अथवा सूफ़ी मत -प उद्दरनी पाण्डेय
- 33 ध्वन्यालोक (आचाय शान प्रबधन)
- 34 दक्खिनी काय धारा -स राहुल साठ्व्यायन
- 35 दक्खिनी हिंदी के प्रेमोत्थानक काव्य -डा दगरथ राज
- 36 नारदीय पुराण -(प्र) बगवासी प्रेस
- 37 नूरजहा -वाजा अहमद
- 38 पद्मावत का काव्य सौंदर्य -प्रो शिवसहाय पाठक
- 39 पद्मावत का ऐतिहासिक आधार -इन्द्रचन्द्र नारग
- 40 पद्मावत सार -इन्द्रचन्द्र नारग
- 41 पद्मावत (मटीक) -स डा मु सीराम गमा
- 42 पद्मावत -स लाल भगवानगौन 1925 ई
- 43 पद्मावन (मूल और सजीवनी व्याख्या) -डा वामुदय गरण अग्रवाल
- 44 पद्मावति -श्री सूर्यनाथ पास्ती
- 45 प्रेमकली -मदनारायण कविरत्न
- 46 प्रेमप्रकाश -गंभी
- 47 प्रिय प्रवास -जयोध्यामिह उपाध्याय 'हृत्त्रिभुव'
- 48 फारसी साहित्य की रूपरेखा -अनु हीरालाल चापडा
- 49 बिहारी मतसई -बिहारी
- 50 बिलग्राम के मुसलमान हिन्दी कवि -डॉ मनेन जैदी
- 51 भारतीय दर्शन -वादेय प्रसाद मिश्र
- 52 भारतीय वाङ्मय में श्रीराधा -प बलदेव उपाध्याय
- 53 मलिक मुहम्मद जायसी और उनका काव्य -डॉ शिवसहाय पाठक
- 54 मलिक मुहम्मद जायसी -मदन कश्यप मुहोपा
- 55 मधुमासनी (मन्नन) -स डॉ निवृत्तनाथ मिश्र

- 56 मध्यकालीन हिंदी कवमिप्रिया -डॉ सावित्री सिन्हा
- 57 मध्ययुगीन सूफी इतर मुसलमान कवि -डॉ उष्यशंकर श्रीवास्तव
- 58 मध्यकालीन घम साधना -डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी
- 59 मध्ययुगीन प्रेमाध्यान -डॉ श्याम मनोहर पाण्डेय
- 60 मिश्र ब धु विनोद (द्वितीय भाग) -मिश्र ब धु
- 61 मुसलमानों की हिंदी सेवा -कमलधारीसिंह दिनकर
- 62 मनासत (साधनावृत्त) -स हरिहर निवास द्विवेदी
- 63 मृगावती -स डॉ शिवगोपाल मिश्र
- 64 रसलीन और उसका साहित्य -डा रामसागरसिंह
- 65 रीतिकालीन साहित्य की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि -डॉ शिवलाल जोशी
- 66 श्रीमद् भगवद् गीता -
- 67 सूफीमत और हिंदी साहित्य -डॉ विमल कुमार जैन
- 68 सूफी काव्य सग्रह -प परशुराम चतुर्वेदी
- 69 सूर पूर्व ब्रज भाषा और उसका साहित्य -डॉ शिव प्रसाद सिंह
- 70 सदेश रासक (अद्दहमाण कृत) -स हजारी प्रसाद द्विवेदी और विश्वनाथ त्रिपाठी
- 71 हमारी परम्परा -प्रो हुमायु कबीर
- 72 हकायके हिंदी -म डा अनहर अन्वास रिजवी
- 73 हिंदी साहित्य का प्रवृत्तिगत इतिहास -डॉ प्रताप नारायण टंडन
- 74 हिंदी साहित्य का बृहद् इतिहास -
- ख 4
- 75 हिंदी साहित्य का बृहद् इतिहास ख 1 -स राजबली पाण्डेय
- 76 हिन्दी साहित्य कोष -डॉ ब्रजेदवर शर्मा
- 77 हिंदी साहित्य का इतिहास -आ रामचन्द्र शुक्ल
- 78 हिंदी साहित्य का उद्भव और विकास -डॉ हजारीप्रसाद द्विवेदी
- 79 हिंदी साहित्य का आलोचनारमक इतिहास -डॉ रामकुमार वर्मा
- 80 हिंदी सूफी काव्य का समग्र अनुशीलन -डॉ शिवसहाय पाठक
- 81 हिंदी प्रेम गायना सग्रह -प गणेशप्रसाद द्विवेदी
- 82 हिंदी और फारसी सूफी काव्य का तुलनात्मक अध्ययन -डॉ निवनिवास बन्ना

- | | | |
|----|--|-------------------------------|
| 83 | हिन्दी पर फारसी का प्रभाव | -अम्बिकाप्रसाद वाजपयी |
| 84 | हिन्दी साहित्य में कृष्ण | -डॉ॰ सरोजिनी कुलश्रेष्ठ |
| 85 | हिन्दी के मुसलमान कवि | -डॉ॰ सरयूप्रसाद अग्रवाल |
| 86 | हिन्दी के मुसलमान कवि | -गंगाप्रसादसिंह |
| 87 | हिन्दी प्रेमाख्यातक काव्य | -डॉ॰ कमल कुलश्रेष्ठ |
| 88 | हिन्दुई साहित्य का इतिहास
(प्राचीन कृत) | अनु डॉ॰ लक्ष्मीसागर धार्ष्ण्य |

11016
19492

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची अंग्रेजी

- 1 आउट साइड आफ इस्लामिक कल्चर - टी ताराचन्द्र
- 2 ए डिक्शनरी ऑफ इस्लाम - हयम टी पी
- 3 आयर दी लव ऑफ कृष्ण
- 4 गीयेंटे बुक ऑव इण्डिया वा 1
- 5 दी कृष्ण प्रावलम - ए उ पत्तिवर
- 6 दी लाइडिया आफ पसनलिटी इन सूफीज्म
- 7 इवाल्यान आय अवधी - डॉ चावूराम सबरीना
- 8 इपतुएस ऑफ इस्लाम आन इण्डियन कल्चर - डॉ ताराचन्द्र
- 9 इनासाइबलोपीडिया आय इस्लाम - एम टी इस्टम आदि ।
- 10 इन साइबलासिडिया आय रिलिजन एण्ड एक्सिज - एडीरेड चाई जैम्स
- 11 हिस्ट्री ऑफ मेडोवल हिंदू इण्डिया - चिंतामणि विनायक वैष
- 12 हिस्ट्री आय अजकुली लिटचर - सुकुमार सेन
- 13 मुगल इमप्रायर इन इण्डिया - एम आर दर्मा
- 14 वेणविज्म सैविज्म एंड थदर रिलिजस सिस्टम आफ इण्डिया - डॉ भंडारकर

सन्दर्भ सूची पत्र-पत्रिकाएँ

- 1 करण्ट, 21 मार्च 1981
- 2 नवभारत टाइम्स बम्बई 3 मार्च 1975
- 3 महाबोधल (रायपुर) 19 अप्रैल 1981
- 4 कर्दान, सतवाणी अंक वर्ष 29
- 5 कन्याण, वय 41, अर, हनुमान प्रसाद पोद्दार का पत्रचन
- 6 घमघुग, 30 मार्च 1980
- 7 परिपद् पत्रिका 1961
- 8 ता प्र पत्रिका, गानी, भाग 57, स 2008
- 9 ता प्र पत्रिका, सम्पूर्णतन्तु स्मृतिचक्र, वय 63, अंक 14 स 2055 वि
- 10 हस्तलिखित प्र यों का अठठारहवाँ पैबाबिन विदरण
- 11 हिंदी अनुशीलन - डॉ धीरेन्द्र वर्मा विशेषांक

